प्रकाशक हिंदी साहित्य भंडार, अमीनाबाद लखनऊ

मुद्रक विद्यामंदिर प्रेस रानीकटरा लखनऊ

तिथि २५ जनवरी १९६१

मूल्य छह रुपया

पुष्प-कांता को
संसार जिसको न सुख समझ सका, न दुख।

निवेदन

प्रस्तुत संकलन में सूरदास के १८०१ पद हैं। इनमें लगभग १५०० तो काव्य-कला की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं शेष कथा-प्रसंग का परिचय देने के लिए संकलित किये गये हैं और इस कारण उनकी भी अपनी उपयोगिता है।

'सूरसागर' के लखनऊ, बंबई और काशी के संस्करण प्राप्त उपलब्ध हैं। प्रस्तुत संकलन का मुख्य आधार यद्यपि सभा का ही संस्करण है तथापि अनेक पदों के पाठ लखनऊ और बंबई के 'सूरसागरों' से भी लिये गये हैं। इन सभी संस्करणों के विद्वान संपादकों के प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

—प्रे० ना० टंडन

सूची

क्रम	प्रसंग	पद	पृष्ठ
१	विनय और आत्मनिवेदन	१—१५०	९
२.	पौराणिक प्रसंग	१५१— १८०	५२
३.	राम चरित	१८१— २५७	६१
४	बाल-लीला	२५८— ५७८	८७
५.	रूप-चित्रण	५७९— ६५३	१७९
६.	राधा-कृष्ण	६५४— ९४१	२ ५
७	मुरली-माधुरी	९४२—१०१२	२८३
८.	गोपी-कृष्ण	१०१३—१२०४	३०३
९.	नेत्रोपालंभ	१२०५—१२५३	३५५
१०	मथुरा-प्रवास	१२५४—१३३७	३६८
११	गोपी-विरह	१३३८—१४६८	३९३
१२.	कृष्ण और उद्धव	१४६९—१४८९	४२१
१३	उद्धव-गोपी-संवाद	१४९०—१७ ४	४३५
१४.	आश्वासन	१७०५—१७३६	४९५
१५.	द्वारिका-चरित	१७३७—१७९१	५ ५
१६	पुनर्मिलन	१७९२—१८०१	५११
	पदानुक्रमणिका		५२५

संक्षिप्त सूरसागर

(क) विनय और आत्मनिवेदन

चरन-कमल बंदौं हरि-राई।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै अंधे कौं सब कछु दरसाई।
बहिरौ सुनै गूँग पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराई।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार बार बंदौं तिहिं पाई ॥१॥

अबिगत-गति कछु कहत न आवै।
ज्यौं गूँगै मीठे फल की रस अंतरगत ही भावै।
परम स्वाद सबही सु निरंतर अमित तोष उपजावै।
मन-बानी कौं अगम अगोचर, सो जानै जो पावै।
रूप-रेख-गुन जाति जुगुति-बिनु निरालंब कित धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातैं सूर सगुन-पद गावै ॥२॥

बासुदेव की बड़ी बड़ाई।
जगत-पिता जगदीस जगत-गुरु निज भक्तनि की सहत ढिठाई।
भृगु को चरन राखि उर ऊपर, बोले बचन सकल सुखदाई।
सिव-बिरंचि मारन कौं धाए यह गति काहू देव न पाई।
बिनु बदले उपकार करत हैं, स्वारथ बिना करत मित्राई।
रावन अरि को अनुज बिभीषन ताकौं मिले भरत की नाई।
बकी कपट करि मारन आई, सो हरि जू बैकुंठ पठाई।
बिनु दीन्हे ही देत सूर प्रभु ऐसे हैं जदुनाथ गुसाई ॥३॥

प्रभु कौ देखौ एक सुभाइ।
अति गंभीर-उदार उदधि हरि, जान सिरोमनि राइ।
तिनका सौं अपने जन कौ गुन मानत मेरु-समान।
सकुचि गनत अपराध-समुद्रहिं बूँद-तुल्य भगवान।
बदन-प्रसन्न कमल सनमुख ह्वै देखत हौं हरि जैसैं।
बिमुख भए अकृपा न निमिषहूँ फिरि चितयौ तौ तैसैं।
भक्त-बिरह-कातर करुनामय डोलत पाछैं लागे।
सूरदास ऐसे स्वामी कौं देहिं पीठ सो अभागे।।४।।

हरि सौ ठाकुर और न जन कौ।
जिहिं जिहिं बिधि सेवक सुख पावै, तिहिं बिधि राखत मन कौ।
भूख भए भोजन जु उदर कौं तृषा तोय पट तन कौं।
लग्यौ फिरत सुरभी ज्यौं सुत-सँग औचट गुनि गृह बन कौं।
परम उदार चतुर चिंतामनि कोटि कुबेर निधन कौं।
राखत हैं जन की परतिज्ञा हाथ पसारत कन कौं।
संकट परैं तुरत उठि धावत परम सुभट निज पन कौं।
कोटिक करैं एक नहिं मानै सूर महा कृतघन कौ।।५।।

राम भक्तवत्सल निज बानौ।
जाति गोत कुल नाम गनत नहिं रंक होइ कै रानौ।
सिव-ब्रह्मादिक कौन जाति प्रभु हौं अजान नहिं जानौ।
हमता जहाँ तहाँ प्रभु नाहीं सो हमता क्यौं मानौ ?
प्रगट खंभ तैं दए दिखाई, जद्यपि कुल कौ दानौ।
रघुकुल राघव कृष्न सदा ही गोकुल कीन्हौ थानौ।
बरनि न जाइ भक्त की महिमा, बारंबार बखानौ।
ध्रुव रजपूत बिदुर दासी-सुत कौन कौन अरगानौ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ भक्तनि हाथ बिकानौ।
राजसूय मैं चरन पखारे स्याम लिए कर पानौ।

रसना एक, अनेक स्याम-गुन कहँ लगि करौं बखानी।
सूरदास-प्रभु की महिमा अति साखी बेद-पुरानी ॥६॥

काहू के कुल तन न बिचारत।
अबिगत की गति कहि न परति है ब्याध-अजामिल तारत।
कौन जाति अरु पाँति बिदुर की ताही कैं पग धारत।
भोजन करत माँगि घर उनकैं राज-मान-मद टारत।
ऐसे जनम करम के ओछे, ओछनि हूँ ब्यौहारत।
यहै सुभाव सूर के प्रभु कौ भक्त-बछल पन पारत ॥७॥

गोबिंद प्रीति सबनि की मानत।
जिहिं जिहिं भाइ करत जन सेवा, अंतर की गति जानत।
सबरी कटुक बेर तजि मीठे चाखि, गोद भरि ल्याई।
जूठनि की कछु संक न मानी, भच्छ किए सत-भाई।
संतन भक्त-मीत हितकारी स्याम बिदुर कैं आए।
प्रेम-बिकल अति आनँद उर धरि कदली छिलुका खाए।
कौरव-काज चले रिषि सापन, साक-पत्र सु अघाए।
सूरदास करुना-निधान प्रभु जुग जुग भक्त बढ़ाए ॥८॥

सरन गए को को न उबारयौ।
जब जब भीर परी संतनि कौं चक्र सुदरसन तहाँ सँभारयौ।
भयौ प्रसाद जु अंबरीष कौं दुरबासा कौ क्रोध निवारयौ।
ग्वालनि हेत धरयौ गोबर्धन, प्रगट इंद्र कौ गर्ब प्रहारयौ।
कृपा करी प्रहलाद भक्त पर खंभ फारि हिरनाकुस मारयौ।
नरहरि रूप धरयौ करुनाकर,छिनक माहिं उर नखनि बिदारयौ।
ग्राह ग्रसत गज कौं जल बूड़त नाम लेत वाकौ दुख टारयौ।
सूर स्याम बिनु और करै को, रंग-भूमि मैं कंस पछारयौ ॥९॥

स्याम गरीबनि हूँ के गाहक।
दीनानाथ हमारे ठाकुर साँचे प्रीति-निबाहक।

अधिक कुरूप कौन कुबिजा तैं, हरि पति पाइ तरै।
अधिक सुरूप कौन सीता तैं, जनम बियोग भरै।
यह गति-मति जानै नहिं कोऊ, किहिं रस रसिक ढरै।
सूरदास भगवंत भजन बिनु फिरि फिरि जठर जरै ॥१३॥

जाकौ दीनानाथ निवाजैं।
भव-सागर मैं कबहुँ न झूकै, अभय निसानै बाजैं।
बिप्र सुदामा कौं निधि दीन्ही अर्जुन रन मैं गाजैं।
लंका राज बिभीषन राजै, ध्रुव आकास बिराजैं।
मारि कंस-केसी मथुरा मैं मेट्यौ सबै दुराजैं।
उग्रसेन-सिर छत्र धरयौ है, दानव दल खिसि भाजैं।
अंबर गहत द्रौपदी राखी पलटि अंध-सुत लाजैं।
सूरदास प्रभु महा भक्ति तैं जाति अजातिहिं साजैं ॥१४॥

जाकौ मनमोहन अंग करै।
ताकौ केस खसै नहिं सिर तैं, जौ जग बैर परै।
हिरनकसिपु परहार थक्यौ प्रहलाद न नैंकु डरै।
अजहूँ लगि उत्तानपाद-सुत, अबिचल राज करै।
राखी लाज द्रुपद-तनया की, कुरुपति चीर हरै।
दुरजोधन कौ मान भंग करि बसन-प्रवाह भरै।
जौ सुरपति कोप्यौ ब्रज ऊपर, क्रोध न कछू सरै।
ब्रज जन राखि नंद कौ लाला गिरिधर बिरद धरै।
जाकौ बिरद है गर्व-प्रहारी सो कैसै बिसरै।
सूरदास भगवंत-भजन करि सरन गए उधरै ॥१५॥

जाकौ हरि अंगीकार कियौ।
ताके कोटि बिघन हरि हरि कै अभै प्रताप दियौ।
दुरबासा अंबरीष सतायौ सो हरि-सरन गयौ ॥
परतिज्ञा राखी मन-मोहन फिरि तापैं पठयौ।

बहुत सासना दई प्रहलादहिं, ताहि निसंक कियौ ।
निकसि खंभ तैं नाथ निरंतर, निज जन राखि लियौ ।
मृतक भए सब सखा जिवाए, विष जल जाइ पियौ ।
सूरजदास भक्तवत्सल हैं, उपमा कौं न बियौ ॥१६॥

कहा कमी जाके राम धनी ।
मनसा-नाथ मनोरथ-पूरन सुख-निधान जाकी मौज धनी ।
अर्थ, धर्म अरु काम, मोच्छ, फल, चारि पदारथ देत गनी ।
इंद्र समान हैं जाके सेवक, नर बपुरे की कहा गनी ।
कहा कृपिन की माया गनियै करत फिरत अपनी अपनी ।
खाइ न सकै खरचि नहिं जानै ज्यौं भुवंग-सिर रहत मनी ।
सूर कहत वे भजत राम कौं, जिनसौं हरि सौं सदा बनी ॥१७॥

बिनती सुनौ दीन की चित दै कैसे तुव गुन गावै ?
माया नटी लकुटि कर लीन्हे कोटिक नाच नचावै ।
दर-दर लोभ लागि लिये डोलति नाना स्वाँग बनावै ।
तुम सौं कपट करावति प्रभु जू मेरी बुधि भरमावै ।
मन अभिलाष-तरंगनि करि करि मिथ्या निसा जगावै ।
सोवत सपने मैं ज्यौं संपति त्यौं दिखाइ बौरावै ।
महा मोहिनी मोहि आतमा अपमारगहिं लगावै ।
ज्यौं दूती पर-बधू भोरि कै लै पर पुरुष दिखावै ।
मेरे तो तुम पति तुमहीं गति तुम समान को पावै ?
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, को मो दुख बिसरावै ॥१८॥

हरि तेरौ भजन कियौ न जाइ ।
कहा करौं तेरी प्रबल माया देति मन भरमाइ ।
जबै आवौं साधु-संगति कछुक मन ठहराइ ।
ज्यौं गयंद अन्हाइ सरिता बहुरि वहै सुभाइ ।

भेष धरि धरि हरयौ पर धन साधु-साधु कहाइ।
जैसे नटवा लोभ कारन करत स्वाँग बनाइ।
करौं जतन, न भजौं तुमकौं कछुक मन उपजाइ।
सूर प्रभू की सबल माया देति मोहिं भुलाइ ॥१६॥

माधौ जू मन माया बस कीन्हौ।
लाभ-हानि कछु समुझत नाहीं ज्यौं पतंग तन दीन्हौ।
गृह-दीपक, धन तेल, तूल तिय, सुत-ज्वाला अति जोर।
मैं मति हीन मरम नहिं जान्यौ, परयौ अधिक करि दौर।
बिवस भयौं नलिनी के सुक ज्यौं, बिन गुन मोहिं गह्यौ।
मैं अज्ञान कछू नहिं समुझ्यौ परि दुख पुंज सह्यौ।
बहुतक दिवस भए या जग मैं भ्रमत फिरयौ मति हीन।
सूर स्यामसुन्दर जौ सेवै, क्यौं होवै गति दीन ॥२०॥

अब हौं माया हाथ बिकानी।
परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-बस भज्यौ न स्रीपति रानी।
हिंसा-मद-ममता-रस भूल्यौ आसाही लपटानी।
याही करत अधीन भयौ हौं निद्रा अति न अघानी।
अपने ही अज्ञान-तिमिर मैं बिसरयौ परम ठिकानौ।
सूरदास की एक आँखि है, ताहू मैं कछु कानौ ॥२१॥

दीन जन क्यौं करि आवै सरन ?
भूल्यौ फिरत सकल जल-थल-मग, सुनहु ताप-त्रय-हरन।
परम अनाथ विवेक-नैन बिनु निगम पैन क्यौं पावै ?
पग पग परत कर्म-तम-कूपहिं, को करि कृपा बचावै ?
नहिं बल लकुटि सुमति-सतसंगति जिहिं अधार अनुसरई
प्रबल अपार मोह-निधि बस बिसि,सु धौं कहा अब करई।
अकुटित रटत सभीत ससंकित, सुकृत सब्द नहिं पावै।
सूर स्याम पद-नख-प्रकास बिनु, क्यौं करि तिमिर नसावै ॥२२॥

यह आसा पापिनी दहै।
तजि सेवा बैकुंठनाथ की नीच नरनि कैं संग रहै।
जिनको मुख देखत दुख उपजत तिनको राजा-राय कहै।
धन-मद-मूढ़नि अभिमानिनि मिलि लोभ लिए दुर्बचन सहै।
भई न कृपा स्यामसुंदर की अब कहा स्वारथ फिरत बहै?
सूरदास सब सुख-दाता प्रभु-गुन बिसारि नहिं चरन गहै ॥२७॥

हरि राखत को कौन बिगोयौ?
हिरनकसिपु, हिरनाच्छ आदि दै रावन कुंभकरन कुल खोयौ।
कंस, केसि चानूर महाबल करि निरजीव जमुन-जल धोयौ।
अंत-समय सिसुपाल सुयोधा अनायास लै जोति समोयौ।
ब्रह्मा-महादेव-सुर-सुरपति नाचत फिरत महा रस मोयौ।
सूरदास सौ चरन-सरन रह्यौ सो जन निपट नींद भरि सोयौ॥२८॥

फिरि फिरि ऐसोई है करत।
जैसैं प्रेम पतंग दीप सौं, पावक हू न डरत।
भव-दुख कूप ज्ञान करि दीपक देखत प्रगट परत।
काल-ब्याल रज-तम बिष-ज्वाला कत जड़ जंतु जरत।
अबिहित बाद-बिबाद सकल मत इन लगि भेष धरत।
इहिं बिधि भ्रमत सकल निसि दिन गत कछू न काज सरत।
अगम सिंधु जतननि सजि नौका हठि क्रम भार भरत।
सूरदास-ब्रत यहै कृष्न भजि, भव जलनिधि उतरत ॥२९॥

माधौ नैंकु हटकौ गाइ।
भ्रमत निसि-बासर अपथ-पथ अगह गहि नहिं जाइ।
छुधित अति न अघाति कबहूँ निगम-द्रुम दलि खाइ।
अष्ट दस घट नीर अँचवति तृषा तउ न बुझाइ।
छहौं रस जौ धरौं आगैं तउ न गंध सुहाइ।
और अहित अभच्छ भच्छति कला बरनि न जाइ।

ब्योम, धर, नद, सैल, कानन इते चरि न अघाइ।
नील खुर अरु अरुन लोचन सेत सींग सुहाइ।
भुवन चौदह खुरनि खूँदति, सु धौं कहाँ समाइ।
ढीठ निठुर, न डरति काहूँ त्रिगुन ह्वै समुहाइ।
हरे खल बल दनुज-मानव-सुरनि सीस चढ़ाइ।
रचि बिरंचि मुख-भौंह-छबि लै चलति चित चुराइ।
नारदादि सुकादि मुनिजन थके करत उपाइ।
ताहि कहु कैसैं कृपानिधि सकत सूर चराइ? ॥२०॥

कहत है आगे जपिहैं राम।
बीचहिं भई और की औरै परयौ काल सौं काम।
गरभ-बास दस मास अधोमुख तहँ न भयौ बिस्राम।
बालापन खेलत ही खोयौ, जोबन जोरत दाम।
अब तौ जरा निपट नियरानी, करयौ न कछुवै काम।
सूरदास प्रभु कौं बिसरायौ बिना लियें हरि-नाम ॥२१॥

रे मन जग पर जानि ठगायौ।
धन-मद कुल-मद, तरुनी कैं मद, भव-मद हरि बिसरायौ।
कलि-मल हरन, कालिमा-टारन रसना स्याम न गायौ।
रसमय जानि सुवा सेमर कौं चोंच घालि पछितायौ।
कर्म-धर्म लीला-जस हरि-गुन इहिं रस-बीच न आयौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु कहु कैसैं सुख पायौ ॥२२॥

रे मन छाँड़ि बिषय कौ रँचिबौ।
कत तू सुवा होत सेमर कौ अंतहिं कपट न बचिबौ।
अंतर गहत कनक-कामिनि कौ हाथ रहैगौ पचिबौ।
तजि अभिमान राम कहि बौरे नतरुक ज्वाला तचिबौ।
सतगुरु कह्यौ, कहौं तोसौं हौं, राम-रतन धन सँचिबौ।
सूरदास प्रभु हरि-सुमिरन बिनु जोगी-कपि ज्यौं नचिबौ ॥२३॥

अब कैसैं पैयत सुख माँगे ?
जैसोइ बोइये तैसोइ लुनिये, कर्मन भोग अभागे।
तीरथ ब्रत कछुवै नहिं कीन्हौं, दान दियौ नहिं आगे।
पछिले कर्म सम्हारत नाहीं करत नहीं कछु आगे।
बोवत बबुर दाख फल चाहत, जोवत है फल लागे।
सूरदास तुम राम न भजि कै, फिरत काल सँग लागे ॥२४॥

रे मन गोविंद के ह्वै रहियै।
इहिं संसार अपार बिरत ह्वै जम की त्रास न सहियै।
दुख, सुख कीरति भाग आपनैं आइ परै सो गहियै।
सूरदास भगवंत भजन करि अंत बार कछु लहियै ॥२५॥

रे मन, अजहूँ क्यौं न सम्हारै।
माया-मद मैं भयौ मत्त कत जनम बादिहीं हारै।
तू तौ बिषया रंग रँग्यौ है बिन धोए क्यौं छूटै।
सान जतन करि देखौ, तैसैं बार-बार बिष घूटै।
रस लै-लै औटाइ करत गुर डारि देत है खोइ।
फिरि औटाए स्वाद जात है गुर तैं खाँड़ न होइ।
सेत हरौ रातौ अरु पियरौ रंग लेत है धोइ।
कारौ अपनौ रंग न छाँड़ै अनरँग कबहुँ न होइ।
कुबिजा भई स्याम-रँग-राती तातैं सोभा पाई।
ताहि सबै कंचन सम तौलैं अरु श्री निकट समाई।
नंद-नँदन पद-कमल छाँड़ि कै माया-हाथ बिकानौ।
सूरदास आपुहिं समुझावै लोग बुरौ जिनि मानौ ॥२६॥

नर तैं जनम पाइ कह कीनौ।
उदर भर्यौ कूकर सूकर लौं प्रभु कौ नाम न लीनौ।
श्री भागवत सुनी नहिं स्रवननि गुरु गोबिंद नहिं चीनौ।
भाव-भक्ति कछु हृदय न उपजी मन बिषया मैं दीनौ।

झूठे सुख अपनी करि जान्यौ परस प्रिया कैं भीनौ।
अघ कौ मेरु बढ़ाइ अधम तू अंत भयौ बलहीनौ।
लख चौरासी जोनि भरमि कै फिरि वाहीं मन दीनौ।
सूरदास भगवंत भजन बिनु ज्यौं अंजलि-जल छीनौ ॥१७॥

नीकैं गाइ गुपालहिं मन रे।
जा गाएँ निर्भय पद पाए अपराधी अनगन रे।
गायौ गीध अजामिल गनिका, गायौ पारथ धन रे।
गायौ स्वपच परम अघ-पूरन सुत पायौ बाम्हन रे।
गायौ ग्राह ग्रसत गज जल मैं खंभ बँधे तैं जन रे।
गाएँ सूर कौन नहिं उबरयौ हरि परिपालन पन रे ॥२८॥

रह्यौ मन सुमिरन कौ पछितायौ।
यह तन राँचि राँचि करि बिरच्यौ कियौ आपनौ भायौ।
मन-कृत दोष अथाह तरंगिनि तरि नहिं सक्यौ, समायौ।
मेल्यौ जाल काल जब खैंच्यौ, भयौ, मीन-जल-हायौ।
कीर पढ़ावत गनिका तारी ब्याध परम पद पायौ।
ऐसौ सूर नाहिं कोउ दूजौ दूरि करै जम-दायौ ॥३९॥

भज सखि भजिए नंद-कुमार।
और भजे तैं काम सरै नहिं, मिटै न भव-जंजार।
जिहिं जिहिं जोनि जन्म धारयौ बहु जोरयौ अघ कौ भार।
तिहिं काटन कौं समरथ हरि कौ तीछन नाम-कुठार।
वेद पुरान, भागवत गीता सब कौ यह मत सार।
भव-समुद्र हरि-पद-नौका बिनु कोउ न उतारै पार।
यह जिय जानि इहीं छिन भजि दिन बीते जात असार।
सूर पाइ यह समौ लाहु लहि दुर्लभ फिरि संसार ॥४०॥

राम न सुमिरयौ एक घरी।
परम भाग सुमिरन के फल तैं सुंदर देह धरी।

जिहिं जिहिं जोनि भ्रम्यौ संकट-बस सोइ-सोइ दुखनि भरी।
काम क्रोध मद लोभ-ग्रसत ह्वै, बिसरयौ स्याम हरी।
भैया बंधु कुटुंब घनेरे, तिनतें कछु न सरी।
लै डेरा घर-बाहर डारी, सिर ठोंकी लकरी।
मरती बेर सम्हारन लागे, जो कछु गाड़ि धरी।
सूरदास तें कछू भली नहिं, परी काल फँसरी ॥४१॥

जनम सिरानौई सो लाग्यौ।
रोम रोम नख-सिख लौं मेरैं महा अघनि बपु पाग्यौ।
पंचनि के हित-कारन यह मन जाइँ तहँ भरमत भाग्यौ।
दीनौ पल ऐसै ही खोए, समय गए पर जाग्यौ।
जौ तुम कोऊ तारयौ नाहीं तौ मोसौं पतित न त्याग्यौ।
हौं स्रवननि सुनि कहत न धर्मौ सूर सुधारौ भाग्यौ ॥४२॥

तौ हरि भक्त निज उर न धरैगौ।
तौ को जनम आला जु सपुन करि कर कुल्हरैं पकरैगौ।
मान देव की भक्ति-भाइ करि, कोटिक जतन करैगौ।
सब वे दिवस चारि मनरंजन, अंत काल बिगरैगौ।
चौरासी लख जोनि भ्रमि भ्रम, जम-बस भ्रमत फिरैगौ।
सूर सुकृत सेवक सोइ साँचौ जो स्यामहिं सुमिरैगौ ॥४३॥

अंत के दिन को हैं घनस्याम।
माता-पिता-बंधु-सुत तौ लगि जौ लगि जिहिं कौ काम।
आमिष-रुधिर-अस्थि अँग जौलौं, तौलौं कोमल चाम।
तौ लगि यह संसार सगौ है जौ लगि लेहि न नाम।
इतनौ जउ जानत मन मूरख, मानत याही धाम।
छाँड़ि न करन सूर मत भव-डर तू रावन सौं ठाम ॥४४॥

जनम तौ ऐसैहिं बीति गयौ।
जैसैं रंक पदारथ पाए लोभ बिसाहि लयौ।

बहुतक जन्म पुरीष-परायन सूकर स्वान भयौ।
अब मेरी-मेरी करि बौरे, बहुरौ बीज बयौ।
नर कौ नाम पारगामी हौ सो तोहिं स्याम दयौ।
तैं जड़ नारिकेलि कपि-कर ज्यौं, पायौ नाहिं पयौ।
रजनी गत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौ न चयौ।
सूर नँद-नंदन जेहिं बिसरयौ, आपुहिं आपु हयौ ॥४५॥

प्रीतम जानि लेहु मन माहीं।
अपने सुख कौं सब जग बाँध्यौ कोउ काहू कौ नाहीं।
सुख मैं आइ सबै मिलि बैठत रहत चहूँ दिसि घेरे।
बिपति परी तब सब सँग छाँड़े, कोउ न आवै नेरे।
घर की नारि बहुत हित जासौं रहति सदा सँग लागी।
जा छन हंस तजी यह काया, प्रेत प्रेत कहि भागी।
या बिधि कौ ब्यौहार बन्यौ जग, तासौं नेह लगायौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, नाहक जनम गमायौ ॥४६॥

जौ अपनौ मन हरि सौं राँचै।
आन उपाय प्रसंग छाँड़ि कै, मन-बच-क्रम अनुसाँचै।
निसि-दिन नाम लेत ही रसना फिरि जु प्रेम-रस माँचै।
इहिं बिधि सकल लोक मैं बाँचै कौन कहै अब साँचै।
सीत उष्न, सुख-दुख नहिं मानै, हर्ष-सोक नहिं खाँचै।
जाइ समाइ सूर वा निधि मैं बहुरि जगत नहिं नाचै ॥४७॥

हरि बिन अपनौ को संसार।
माया-लोभ-मोह हैं चाँड़े काल-नदी की धार।
ज्यौं जन-संगति होति नाव मैं, रहति न परसैं पार।
तैसैं धन-दारा-सुख-संपति, बिछुरत लगै न बार।
मानुष-जनम, नाम नरहरि कौ, मिलै न बारंबार।
इहिं तन छन-भंगुर के कारन, गरबत कहा गँवार।

जैसे अंधौ अंध कूप मैं गनत न खाल पनार।
तैसेहिं सूर बहुत उपदेसैं सुनि सुनि गे कै बार ॥४८॥

हरि बिनु मीत नहीं कोउ तेरे।
सुनि मन, कहौं पुकारि तोसौं हौं भजि गोपालहिं मेरे।
या संसार बिषय-बिष-सागर, रहत सदा सब घेरे।
सूर स्याम बिनु अंतकाल मैं कोउ न आवत नेरे ॥४९॥

जा दिन मन-पंछी उड़ि जैहैं।
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहैं।
या देही कौ गरब न करियै स्यार-काग-गिध खैहैं।
तीननि मैं तन कृमि कै बिष्टा कै ह्वै खाक उड़ैहैं।
कहँ वह नीर कहाँ वह सोभा कहँ रँग-रूप दिखैहैं।
जिन लोगनि सौं नेह करत है, तेई देखि घिनैहैं।
घर के कहत सबारे काढ़ौ भूत होइ धरि खैहैं।
जिन पुत्रनिहिं बहुत प्रतिपाल्यौ, देवी-देव मनैहैं।
तेई लै खोपरी बाँस दै, सीस फोरि बिखरैहैं।
अजहूँ मूढ़ करौ सतसंगति संतनि मैं कछु पैहैं।
नर बपु धारि नाहिं जन हरि कौ जम की मार सो खैहैं।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु बृथा सु जनम गँवैहैं ॥५०॥

अब तौ यहै बात मन मानी।
छाँड़ौं नाहिं स्याम-स्यामा की बृंदाबन रजधानी।
भ्रम्यौ बहुत लघु धाम बिलोकत छन-भंगुर दुखदानी।
सर्वोपरि आनंद अखंडित सूर मरम लपिटानी ॥५१॥

नहिं अस जनम बारंबार।
पुरबलौ धौं पुन्य प्रगट्यौ लह्यौ नर अवतार।
घटै पल पल बढ़ै छिन छिन, जात लागि न बार।
धरनि पत्ता गिरि परे तैं फिरि न लागै डार।

भव-उदधि जमलोक दरसै, निपट ही अँधियार।
सूर हरि कौ भजन करि-करि उतरि पल्ले-पार॥५२॥

अद्भुत राम-नाम के अंक।
धर्म-अँकुर के पावन द्वै दल, मुक्ति-बधू-ताटंक।
मुनि-मन-हंस-पच्छ-जुग जाकैं बल उड़ि ऊरध जात।
जनम-जनम काटन कौं कर्तरि तीछन बहु बिख्यात।
अंधकार अज्ञान हरन कौं रबि-ससि जुगल-प्रकास।
बासर-निसि दोउ करैं प्रकासित महा कुमग अनयास।
दुहूँ लोक सुखकरन-हरनदुख बेद-पुराननि साखि।
भक्ति-ज्ञान के पंथ सूर ये, प्रेम निरंतर भाखि॥५३॥

अब तुम नाम गहौ मन नागर।
जातैं काल-अगिनि तैं बाँचौ सदा रहौ सुखसागर।
मारि न सकै, बिघन नहिं ग्रासै, जम न चढ़ावै कागर।
क्रिया कर्म करतहु निसि-बासर भक्ति कौ पंथ उजागर।
सोचि बिचारि सकल स्रुति-सम्मति, हरि तैं और न आगर।
सूरदास प्रभु इहिं औसर भजि उतरि चलौ भवसागर॥५४॥

बंदौं चरन-सरोज तिहारे।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन ललित त्रिभंगी प्रान-पियारे।
जे पद-पदुम सदा सिव के धन, सिंधु-सुता उर तैं नहिं टारे।
जे पद पदुम तात-रिस त्रासत मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे।
जे पद-पदुम परस जल-पावन सुरसरि-दरस कटत अघ भारे।
जे पद पदुम परस रिषि-पतिनी बलि, मृग ब्याध, पतित बहु तारे।
जे पद पदुम रमत बृंदावन अहि सिर धरि, अगनित रिपु मारे।
जे पद पदुम परसि ब्रज-भामिनि सरबस दै सुत-सदन बिसारे।
जे पद पदुम रमत पांडव दल दूत भए, सब काज सँवारे।
सूरदास तेइ पद पंकज त्रिबिध ताप-दुख हरन हमारे॥५५॥

हरि जू, तुमतें कहा न होई ?
बोलै गुंग, पंगु गिरि लंघै अरु आवै अंधौ जग जोई।
पतित अजामिल दासी कुबिजा तिनके कलिमल डारे धोई।
रंक सुदामा कियौ इंद्र सम पांडव-हित कौरव-दल खोई।
बालक मृतक जिवाइ दए प्रभु, तब गुरु-द्वारें आनँद होई।
सूरदास प्रभु इच्छापूरन, श्रीगुपाल सुमिरौ सब कोइ ॥४६॥

बिनती करत मरत हौं लाज।
नख सिख लौं मेरी यह देही है पाप की जहाज।
और पतित आवत न आँखि-तर देखत अपनौ साज।
तीनौं पन भरि ओर निबाह्यौ तऊ न आयौ बाज।
पाछैं भयौ न आगैं ह्वैहै, सब पतितनि सिरताज।
नरकौ भज्यौ नाम सुनि मेरौ, पीठि दई जमराज।
अबलौं नान्हे-नून्हे तारे ते सब वृथा अकाज।
साँचैं बिरद सूर के तारत लोकनि-लोक अवाज ॥४७॥

अब कै राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह कौन उबारै प्रान ?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं जय जय कृपानिधान ॥४८॥

अब कैं नाथ मोहि उबारि।
मगन हौं भव अंबुनिधि मैं कृपासिंधु मुरारि।
नीर अति गंभीर माया लोभ-लहरि तरंग।
लिए जात अगाध जल कौं गहे ग्राह अनंग।
मीन इंद्री तनहिं काटत मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत, उरझि मोह-सिवार।

अबिगत-गति जानी न परै।
मन-बच-कर्म-अगाध, अगोचर, किहि बिधि बुधि मैं धरै?
अति प्रचंड पौरुष बल पाएँ, केहरि भूख मरै।
अनायास बिनु उद्यम कीन्हैं, अजगर उदर भरै।
रीतै भरै भरे पुनि ढारै, चाहै फेरि भरै।
कबहुँक तृन बूड़ै पानी मैं, कबहुँक सिला तरै।
बागर तैं सागर करि डारै, चहुँ दिसि नीर भरै।
पाहन-बीच कमल बिगसावै, जल मैं अगिनि जरै।
राजा रंक, रंक तैं राजा, लै सिर छत्र धरै।
सूर पतित तरि जाइ छिनक मैं, जौ प्रभु नैंकु ढरै॥६३॥

कीजै प्रभु अपने बिरद की लाज।
महापतित कबहूँ नहिं आयौ, नैंकु तिहारैं काज।
माया सबल धाम धन-बनिता, बाँध्यौ हौं इहिं साज।
देखत-सुनत सबै जानत हौं, तऊ न आयौ बाज।
कहियत पतित बहुत तुम तारे, स्रवननि सुनी अवाज।
दई न जाति खेवट उतराई, चाहत चढ़यौ जहाज।
लीजै पार उतारि सूर कौं, महाराज ब्रजराज।
नई न करन कहत प्रभु, तुम हौ सदा गरीब निवाज॥६४॥

अपने जान मैं बहुत करी।
कौन भाँति हरि कृपा तुम्हारी, सो स्वामी समुझी न परी।
दूरि गयौ दरसन के ताईं, ब्यापक प्रभुता सब बिसरी।
मनसा-बाचा कर्म अगोचर, सो मूरति नहिं नैन धरी।
गुन बिन गुनी, सुरूप रूप बिन, नाम बिना श्री स्याम हरी।
कृपा सिंधु अपराध अपरिमित, छमौ सूर तैं सब बिगरी॥६५॥

माधौ जू, जौ जन तैं बिगरै।
तउ कृपालु करुनामय केसव, प्रभु नहिं जीय धरै।

जैसैं जननि-जठर अंतरगत सुत अपराध करै।
तौऊ जतन करै अरु पोषै निकसैं अंक भरै।
जद्यपि मलय-बृच्छ जड़ काटै कर कुठार पकरै।
तऊ सुभाव न सीतल छाँड़ै, रिपु-तन-ताप हरै।
धर बिधंसि नल करत किरषि हल बारि बीज बिथरै।
सहि सम्मुख तउ सीत उष्न कौं, सोई सुफल करै।
रसना द्विज दलि दुखित होति बहु तउ रिस कहा करै।
छमि सब लोभ जु छाँड़ि छवौं रस लै समीप सँचरै।
करुन करन दयालु दयानिधि निज भय दीन डरै।
इहिं कलिकाल ब्याल-मुख-ग्रासित सूर सरन उबरै॥६६॥

दीनानाथ अब बारि तुम्हारी।
पतित-उधारन बिरद जानि कै, बिगरी लेहु सँवारी।
बालापन खेलत ही खोयौ, जुवा बिषय-रस मातैं।
बृद्ध भए सुधि प्रगटी मोकौं, दुखित पुकारत तातैं।
सुतनि तज्यौ, तिय तज्यौ, भ्रात तज्यौ, तन तैं त्वच भई न्यारी।
स्रवन न सुनत, चरन-गति थाकी, नैन भए जलधारी।
पलित केस, कफ कंठ बिरुंध्यौ, कल न परति दिन-राती।
माया-मोह न छाँड़ै तृष्ना ये दोऊ दुख-दाती।
अब यह बिथा दूरि करिबे कौं और न समरथ कोई।
सूरदास प्रभु करुनासागर, तुमतैं होइ सो होई॥६७॥

मेरी कौन गति ब्रजनाथ?
भजन बिमुखऽरु सरन नाहीं फिरत बिषयनि साथ।
हौं पतित अपराध-पूरन भर्‌यौ कर्म-बिकार।
काम क्रोधऽरु लोभ चितवौ, नाथ तुमहिं बिसार।
उचित अपनी कृपा करिहौ तबै तौ बनि जाइ।
सोइ करहु जिहिं चरन सेवै सूर जूठनि खाइ॥६८॥

मोहि कछु कीजै दीन-दयाल।
जातें जन छन चरन न छाँड़ै करुना-सागर भक्त रसाल।
इंद्री अजित, बुद्धि बिषयारत, मन की दिन-दिन उलटी चाल।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह-भय अहनिसि नाथ! रहत बेहाल।
जोग-जुगति, जप-तप, तीरथ-ब्रत इनमैं एकौ अंक न भाल।
कहा करौं किहिं भाँति रिझावौं हौं तुमकौं सुंदर नँदलाल।
सुनि समरथ सरबज्ञ कृपानिधि असरन-सरन, हरन जग-जाल।
कृपानिधान सूर की यह गति कासौं कहै कृपन इहिं काल॥६९॥

कृपा अब कीजिए बलि जाउँ।
नाहिंन मेरैं और कोउ, बलि, चरन-कमल बिनु ठाउँ।
हौं असौच, अकृत, अपराधी, सनमुख होत लजाउँ।
तुम कृपाल, करुनानिधि केसव, अधम-उधारन नाउँ।
काकैं द्वार जाइ होउँ ठाढ़ौ, देखत काहि सुहाउँ।
असरन-सरन नाम तुम्हारौ, हौं कामी कुटिल निभाउँ।
कलुषी अरु मन मलिन बहुत मैं सेंत-मेंत न बिकाउँ।
सूर पतित-पावन पद-अंबुज, सो क्यौं परिहरि जाउँ॥७०॥

नाथ सकौ तौ मोहिं उधारौ।
पतितनि मैं बिख्यात पतित हौं, पावन नाम तुम्हारौ।
बड़े पतित पासंगहु नाहीं, अजामिल कौन बिचारौ।
भाजै नरक नाम सुनि मेरौ, जम दीन्यौ हठि तारौ।
छुद्र पतित तुम तारि रमापति, अब न करौ जिय गारौ।
सूर पतित कौं ठौर नहीं, तौ बहत बिरद कत भारौ॥७१॥

पतित-पावन हरि, बिरद तुम्हारौ कौनैं नाम धर्यौ?
हौं तौ दीन, दुखित अति दुरबल, द्वारैं रटत पर्यौ।
चारि पदारथ दिए सुदामा, तंदुल भेंट धर्यौ।
द्रुपद-सुता की तुम पति राखी, अंबर दान कर्यौ।

संदीपन सुत तुम प्रभु दीने, विद्या पाठ करयौ।
बेर सूर की निठुर भए प्रभु मेरौ कछु न सरयौ ॥७२॥

आजु हौं एक-एक करि टरिहौं।
कै तुमहीं कै हमहीं माधौ अपने भरोसैं लरिहौं।
हौं तौ पतित सात पीढ़िनि कौ, पतितै ह्वै निस्तरिहौं।
अब हौं उघरि नचन चाहत हौं तुम्हैं बिरद बिन करिहौं।
कत अपनी परतीति नसावत मैं पायौ हरि हीरा।
सूर पतित तबहीं उठिहै प्रभु, जब हँसि दैहौ बीरा ॥७३॥

मोसौं बात सकुच तजि कहिए।
कत ब्रीड़त, कोउ और बतावौ ताही कैं ह्वै रहिए।
कैधौं तुम पावन प्रभु नाहीं कै कछु मोमैं झोलौ।
तौ हौं अपनी फेरि सुधारौं, बचन एक जौ बोलौ।
तीन्यौ पन मैं ओर निबाहे इहै स्वाँग कौ काछे।
सूरदास कौं यहै बड़ौ दुख, परत सबनि कै पाछे ॥७४॥

प्रभु, हौं बड़ी बेर कौ ठाढ़ौ।
और पतित तुम जैसे तारे, तिनहीं मैं लिखि काढ़ौ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ टेरि कहत हौं यातैं।
मरियत लाज पाँच पतितनि मैं, हौं अब कहौ घटि कातैं।
कै प्रभु हारि मानि कै बैठौ कै करौ बिरद सही।
सूर पतित जौ झूठ कहत है, देखौ खोजि बही ॥७५॥

प्रभु, हौं सब पतितनि कौ टीकौ।
और पतित सब दिवस चारि के, हौं तौ जनमत ही कौ।
बधिक, अजामिल गनिका तारी और पूतना ही कौ।
मोहिं छाँड़ि तुम और उधारे मिटै सूल क्यौं जी कौ?
कोउ न समरथ अघ करिबे कौं खैंचि कहत हौं लीकौ।
मरियत लाज सूर पतितनि मैं मोहूँ तैं को नीकौ। ॥७६॥

हरि, हौं सब पतितनि कौ राजा।
पर-निंदा मुख पूरि रह्यौ जग, यह निसान नित बाजा।
तृष्ना देसऽरु सुभट मनोरथ, इंद्री खड्ग हमारी।
मंत्री काम कुमति दैबे कौं क्रोध रहत प्रतिहारी।
गज अहँकार चढ्यौ दिग-विजयी लोभ छत्र धरि सीस।
फौज असत संगति की मेरैं ऐसौ हौं मैं ईस।
मोह-मया बंदी गुन गावत मागध दोष अपार।
सूर पाप कौ गढ़ दृढ़ कीन्हौं मुहकम लाइ किंवार ॥७३॥

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
तुम सौं कहा छिपी करुनामय सबके अंतरजामी।
जिन तन दियौ ताहि बिसरायौ ऐसौ नोनहरामी ?
भरि भरि द्रोह बिषै कौं धावत जैसैं सूकर ग्रामी।
सुनि सतसंग होत जिय आलस बिषयिनि सँग बिसरामी।
श्रीहरि चरन छाँड़ि बिमुखन की निसि दिन करत गुलामी।
पापी परम अधम अपराधी, सब पतितनि मैं नामी।
सूरदास प्रभु अधम उधारन सुनियै श्रीपति स्वामी ॥७८॥

माधौ जू, मोहिं काहे की लाज।
जनम जनम यौं ही भरमायौ, अभिमानी बेकाज।
जल-थल जीव जिते जग जीवन निरखि दुखित भए देव।
गुन अवगुन की समुझ न संका, परि आई यह टेव।
अब अनगाइ कहौं घर अपनें राखौ चौंपि बिचारि।
सूर स्वान के पालनहारैं आवत है निज गारि ॥८१॥

थोरे जीवन भयौ तन भारी।
कियौ न संत-समागम कबहूँ, लियौ न नाम तुम्हारौ।
अति उनमत्त मोह माया बस नहिं कछु बात बिचारी।
करत उपाय न पूछत काहू गनत न खोटी-खारी।

इंद्री-स्वाद बिबस निसि-बासर, आप अपुनपौ हारौ।
जल औंड़े मैं चहुँ दिसि पैरयौ, पाउँ कुल्हारौ मारौ।
बाँधी मोट पसारि त्रिबिध गुन, नहिं कहुँ बीच उतारौ।
देख्यौ सूर बिचारि सीस परी, तब तुम सरन पुकारौ ॥८०॥

अब मैं नाच्यौ बहुत गुपाल।
काम क्रोध कौ पहिरि चोलना कंठ बिषय की माल।
महामोह के नूपुर बाजत, निंदा सब्द रसाल।
भ्रम-भोयौ मन भयौ पखावज चलत असंगत चाल।
तृष्ना नाद करति घट भीतर, नाना बिधि दै ताल।
माया कौ कटि फैंटा बाँध्यौ लोभ तिलक दियौ भाल।
कोटिक कला काछि दिखराई जल-थल सुधि नहिं काल।
सूरदास की सबै अबिद्या दूरि करौ नँदलाल ॥८१॥

जनम तौ बादिहिं गयौ सिराइ।
हरि सुमिरन नहिं गुरु की सेवा, मधुबन बस्यौ न जाइ।
अब की बार मनुष्य-देह धरि, कियौ न कछू उपाइ।
भटकत फिरयौ स्वान की नाईं नैंकु जूठ के चाइ।
कबहुँ न रिझए लाल गिरिधरन बिमल-बिमल जस गाइ।
प्रेम सहित पग बाँधि घूँघुरू सक्यौ न अंग नचाइ।
श्रीभागवत सुनी नहिं स्रवननि नैंकहु रुचि उपजाइ।
आनि भक्ति करि, हरि-भक्तनि के कबहुँ न धोए पाइ।
अब हौं कहा करौं करुनामय, कीजै कौन उपाइ।
भव-अंबोधि नाम-निज-नौका, सूरहिं लेहु चढ़ाइ ॥८२॥

जैसैं राखहु तैसैं रहौं।
जानत हौ दुख सुख सब जन के, मुख करि कहा कहौं ?
कबहुँक भोजन लहौं कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौं।
कबहुँक चढ़ौं तुरंग महा गज, कबहुँक भार बहौं।

कमल-नयन घन स्याम मनोहर अनुचर भयौ रहौं।
सूरदास-प्रभु भक्त-कृपानिधि तुम्हरे चरन गहौं ॥८३॥

ऐसे साहब कृपा तुम्हारी।
जिनकैं बस अनिमिष अनेक गन अनुचर आज्ञाकारी।
बहत पवन भरमत ससि दिनकर, फनपति सिर न डुलावै।
दाहक गुन तजि सकत न पावक, सिंधु न सलिल बढ़ावै।
सिव-बिरंचि-सुरपति-समेत सब सेवत प्रभु-पद चाए।
जो कछु करन कहत सोइ सोइ कीजत अति अकुलाए।
तुम अनादि अविगत अनंत गुन-पूरन परमानंद।
सूरदास पर कृपा करौ प्रभु, श्रीवृंदावन चंद ॥८४॥

तुम तजि और कौन पै जाउँ ?
काकैं द्वार जाइ सिर नाऊँ, पर-हथ कहाँ बिकाउँ।
ऐसौ को दाता है समरथ, जाके दियैं अघाउँ।
अंत काल तुम्हरैं सुमिरन गति, अनत कहूँ नहिं दाउँ।
रंक सुदामा कियौ अजाची, दियौ अभय-पद ठाउँ।
कामधेनु, चिंतामनि दीन्हौ, कलपबृच्छ-तर छाउँ।
भव-समुद्र अति देखि भयानक मन मैं अधिक डराउँ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनौ प्रन सूरदास बलि जाउँ ॥८५॥

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज कौ पंछी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ क्यौं करील-फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ॥८६॥

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान।
छूटि गऐं कैसैं जन जीवत, ज्यौं पानी बिनु प्रान।

जैसैं मगन नाद-रस सारँग, बधत बधिक तिन बान।
ज्यौं चितवत ससि ओर चकोरी देखत ही सुख मान।
जैसैं कमल होत अति प्रफुलित देखत दरसन भान।
सूरदास प्रभु हरिगुन मीठे, नितप्रति सुनियत कान ॥८७॥

जौ हम भले-बुरे तौ तेरे।
तुम्हैं हमारी लाज बड़ाई बिनती सुनि प्रभु मेरे।
सब तजि तुम सरनागत आयौ दृढ़ करि चरन गहे रे।
तुम प्रताप-बल बदत न काहूँ, निडर भए घर चेरे।
और देव सब रंक-भिखारी त्यागे बहुत अनेरे।
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा तैं पाए सुख जु घनेरे ॥८८॥

हमैं नँदनंदन मोल लिये।
जम के फंद काटि मुकराए अभय अजाद किये।
भाल तिलक स्रवननि तुलसीदल, मेटे अंक बिये।
मूँड्यौ मूँड़ कंठ बनमाला, मुद्रा चक्र दिये।
सब कोउ कहत गुलाम स्याम कौ, सुनत सिरात हिये।
सूरदास कौं और बड़ौ सुख, जूठनि खाइ जिये ॥८९॥

तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत।
लालच लागि कोटि देवन के फिरत कपाटनि खोलत।
जब लगि सरबस दीजै उनकौं, तबही लगि यह प्रीति।
फल माँगत फिरि जात मुकर ह्वै, यह देवन की रीति।
एकनि कौं जिय-बलि दै पूजे पूजत नैंकु न तूठे।
तब पहिचानि सबनि कौं छाँड़े नख-सिख लौं सब झूठे।
कंचन मनि तजि काँचहिं सैंतत या माया के लीन्हे।
चारि पदारथ हूँ कौ दाता, सु तौ बिसर्जन कीन्हे।
तुम कृतज्ञ करुनामय केसव, अखिल लोक के नायक।
सूरदास हम दृढ़ करि पकरे, अब ये चरन सहायक ॥९०॥

जौ प्रभु मेरे दोष बिचारैं।
करि अपराध अनेक जनम कौ, नख-सिख भरी बिकारैं।
पुहुमि पत्र करि सिंधु मसानी गिरि-मसि क्यौं लै डारैं।
सुर-तरुवर की साख लेखिनी लिखत सारदा हारैं।
पतित उधारन बिरद पुरातन चारौ बेद पुकारैं।
सूर स्याम हौं पतित-सिरोमनि तारि सकौ तौ तारैं ॥९१॥

हमारी तुमकौं लाज हरी।
जानत हौ प्रभु, अंतरजामी जो मोहिं माँझ परी।
अपने औगुन कहँ लौं बरनौं पल पल, घरी घरी।
अति प्रपंच की मोट बाँधिकै अपनैं सीस धरी।
खेवनहार न खेवट मेरैं अब मो नाव अरी।
सूरदास प्रभु तव चरननि की आस लागि उबरी ॥९२॥

ऐसी कब करिहौ गोपाल।
मनसा-नाथ मनोरथ-दाता हौ प्रभु दीनदयाल।
चरननि चित्त निरंतर अनुरत रसना चरित-रसाल।
लोचन सजल प्रेम पुलकित तन, गर अंचल कर माल।
इहि बिधि लखत झुकाइ रहै जम अपनैं ही भय भाल।
सूर सुजस-रागी न डरत मन, सुनि जातना कराल ॥९३॥

तौ लगि बेगि हरौ किन पीर?
जौ लगि आन न आनि पहूँचै फेरि परैगी भीर।
अबहिं निबहुरी समय सुचित ह्वै हम तौ निपरक कीजै।
औरौ आइ निकसिहैं तातैं आगे है सो लीजै।
जहाँ तहाँ तैं सब आवैंगे सुनि सुनि सस्तौ नाम।
अब लौं परयौ रहैगौ दिन-दिन तुमकौं ऐसौ काम।
यह तौ बिरद प्रसिद्ध भयौ जग लोक-लोक जस कीन्हौ।
सूरदास प्रभु समुझि देखियौ मैं तौहिं बड़ौ कर दीन्हौ ॥९४॥

जिन जिनहीं केसव उर गायी।
तिन तिन तुम पै गोबिंद-गुसाईं सबनि अभै-पद पायी।
सेवा यहै नाम सर अवसर जो काहूँहिं कहि आयी।
कियी बिलंब न कितहूँ कृपानिधि, सोइ-सोइ निकट बुलायी।
मुख्य अजामिल मित्र हमारी, सो मैं चलत बुलायी।
कहौं कहाँ लौं कही कृपन की तिनहुँ न स्रवन सुनायी।
ब्याध गीध, गनिका जिहिं कागर, हौं तिहिं चिठि न चढ़ायी।
मरियत लाज पाँच पतितनि मैं सूर सबै बिसरायी ॥१५॥

अपुने कौं को न आदर देइ ?
ज्यौं बालक अपराध कोटि करै मातु न मानै तेइ।
ते बेली कैसैं दहियत हैं जे अपनैं रस भेइ।
श्री संकर बहु रतन त्यागि कै, बिषहिं कंठ धरि लेइ।
माता-अछत छीर बिन सुत मरै, अजा-कंठ-कुच सेइ ?
जद्यपि सूरज महा पतित है, पतित-पावन तुम तेइ ॥१६॥

अब मोहिं मज्जत क्यौं न उबारी ?
दीनबंधु, करुनानिधि स्वामी जन के दुःख निवारी।
ममता-घटा मोह की बूँदैं, सरिता मैन अपारी।
बूड़त कतहुँ थाह नहिं पावत गुरुजन-ओट अधारी।
गरजत क्रोध-लोभ कौ नारी सूझत कहुँ न उतारी।
तृष्ना-तड़ित चमकि छनहीं-छन अह निसि यह तन जारी।
यह भव-जल कलिमलहिं गहे है, बोरत सहस प्रकारी।
सूरदास पतितनि के संगी, बिरदहिं नाथ सम्हारी ॥१७॥

हमारे प्रभु औगुन चित न धरी।
समदरसी है नाम तुम्हारी सोई पार करी।
इक लोहा पूजा मैं राखत इक घर बधिक परी।
सो दुबिधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरी।

इक नदिया इक नार कहावत, मैलौ नीर भरौ।
जब मिलि गए तब एक बरन ह्वै, गंगा नाम परौ।
तन माया, ज्यौं ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि बिगरौ।
कै इनको निरधार कीजियै, कै प्रन जात टरौ ॥९८॥

बड़ी है राम-नाम की ओट।
सरन गयें प्रभु काढ़ि देत नहिं, करत कृपा कैं कोट।
बैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ौ को छोट ?
सूरदास पारस के परसैं मिटति लोह की खोट ॥९९॥

काहू के बैर कहा सरै।
ताकी सरबरि करै सो झूठौ, जाहि गुपाल बड़ौ करै।
ससि सन्मुख जो धूरि उड़ावै, उलटि ताहि कैं मुख परै।
चिरिया कहा समुद्र उलीचै, पवन कहा परबत टरै ?
जाकी कृपा पतित ह्वै पावन, पग परसत पाहन तरै।
सूर केस नहिं टारि सकै कोउ, दाँत पीसि जौ जग मरै ॥१०॥

है हरि भजन कौ परमान।
नीच पावै ऊँच पदवी, बाजते नीसान।
भजन कौ परताप ऐसौ, जल तरै पाषान।
अजामिल अरु भील गनिका, चढ़े जात बिमान।
चलत तारे सकल मंडल, चलत ससि अरु भान।
भक्त ध्रुव कौं अटल पदवी, राम कै दीवान।
निगम जाकौं सुजस गावत, सुनत संत सुजान।
सूर हरि की सरन आयौ, राखि लै भगवान ॥१०१॥

करी गोपाल की सब होइ।
जो अपनौ पुरुषारथ मानत, अति झूठौ है सोइ।
साधन मंत्र जंत्र, उद्यम बल, ये सब डारौ धोइ।
जो कछु लिखि राखी नँदनंदन, मेटि सकै नहिं कोइ।

दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम, कतहिं मरत हौ रोइ।
सूरदास स्वामी करुनामय स्याम चरन मन पोइ ॥१०३॥

होत सो जो रघुनाथ ठटै।
पचि-पचि रहैं सिद्ध, साधक, मुनि, तऊ न बढ़ै घटै।
जोगी जोग धरत मन अपनैं, सिर पर राखि जटै।
ध्यान धरत महादेवऽरु ब्रह्मा तिनहूँ पै न छटै।
जती सती तापस आराधैं, चारौं बेद रटैं।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, करम फाँस न कटै ॥१०३॥

भावी काहू सौं न टरै।
कहँ वह राहु, कहाँ वै रवि ससि आनि सँजोग परै।
मुनि वसिष्ठ पंडित अति ज्ञानी, रचि-पचि लगन धरै।
तात-मरन सिय हरन, राम बन बपु धरि बिपति भरै।
रावन जीति कोटि तैंतीसी त्रिभुवन राज करै।
मृत्युहिं बाँधि कूप मैं राखै, भावी-बस सो मरै।
अरजुन के हरि हुते सारथी, सोऊ बन निकरै।
द्रुपद-सुता कौ राजसभा, दुस्सासन चीर हरै।
हरीचंद सा को जगदाता, सो घर नीच भरै।
जो गृह छाँड़ि देस बहु धावै, तउ वह संग फिरै।
भावी कैं बस तीन लोक हैं सुर नर देह धरै।
सूरदास प्रभु रची सु ह्वै है, को करि सोच मरै ॥१०४॥

तातैं सेइयै श्री जदुराइ।
संपति बिपति बिपति तैं संपति, देह कौ यहै सुभाइ।
तरुवर फूलै फरै पतझरै अपने कालहिं पाइ।
सरवर नीर भरै भरि उमड़ै, सूखै खेह उड़ाइ।
दुतिया चंद बढ़त ही बाढ़ै, घटत-घटत घटि जाइ।
सूरदास संपदा आपदा, जिनि कोऊ पतिआइ ॥१०५॥

इहिं बिधि कहा घटैगी तेरौ ?
नंदनँदन करि घर कौ ठाकुर, आपुन ह्वै रहु चेरौ।
कहा भयौ जौ संपति बाढ़ी, कियौ बहुत घर घेरौ।
कहुँ हरि-कथा कहूँ हरि-पूजा, कहुँ संतनि कौ डेरौ।
जो बनिता-सुत-जूथ सकेले, हय-गय-बिभव घनेरौ।
सबै समर्पौ सूर स्याम कौ, यह साँचौ मत मेरौ ॥१०६॥

इत उत देखत जनम गयौ।
या झूठी माया कैं कारन, दुहुँ दृग अंध भयौ।
जनम-कष्ट तैं मातु दुखित भई, अति दुख प्रान सह्यौ।
वै त्रिभुवनपति बिसरि गए तोहिं, सुमिरत क्यौं न रह्यौ।
श्रीभागवत सुन्यौ नहिं कबहूँ, बीचहिं भटकि मर्‌यौ।
सूरदास कहै, सब जग बूड़्यौ, जुग-जुग भक्त तर्‌यौ ॥१०७॥

जनम सिरानौ अटकैं-अटकैं।
राज-काज, सुत-बित की डोरी, बिनु बिबेक फिर्‌यौ भटकैं।
कठिन जो गाँठि परी माया की, तोरी जाति न झटकैं।
ना हरि-भक्ति न साधु समागम, रह्यौ बीचहीं लटकैं।
ज्यौं बहु कला काछि दिखरावै, लोभ न छूटत नट कैं।
सूरदास सोभा क्यौं पावै, पिय बिहीन धनि मटकैं ॥१०८॥

बिरथा जन्म लियौ संसार।
करी कबहुँ न भक्ति हरि की, मारी जननी भार।
जज्ञ, जप, तप नाहिं कीन्हौ, अल्प मति बिस्तार।
प्रगट प्रभु नहिं दूरि हैं, तू देखि नैन पसार।
प्रबल माया ठग्यौ सब जग, जनम जूआ हार।
सूर हरि कौ सुजस गावौ, जाहि मिटि भव-भार ॥१०९॥

माया हरि कैं काम न आई।
भाव-भक्ति जहँ हरि जस सुनियत, तहाँ जात अलसाई।

लोभातुर ह्वै काम मनोरथ, तहाँ सुनत उठि धाई।
चरन-कमल सुंदर जहँ हरि के, क्यौंहुँ न जात नवाई।
जब लगि स्याम अंग नहिं परसत, अंधे ज्यौं भरमाई।
सूरदास भगवंत-भजन तजि विषय परम विष खाई ॥११०॥

सबै दिन गए विषय के हेत।
तीनौं पन ऐसैं ही खोए, केस भए सिर सेत।
आँखिनि अंध स्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत।
गंगा-जल तजि पियत कूप जल, हरि तजि पूजत प्रेत।
मन-बच-क्रम जौ भजै स्याम कौं, चारि पदारथ देत।
ऐसौ प्रभू छाँड़ि क्यौं भटकै, अजहूँ चेति अचेत।
राम नाम बिनु क्यौं छूटौगे, चंद गहे ज्यौं केत।
सूरदास कछु खरच न लागत राम-नाम मुख लेत ॥१११॥

जौ तू राम-नाम-धन धरतौ।
अबकौ जनम आगिलौ तेरौ, दोऊ जनम सुधरतौ।
जम कौ त्रास सबै मिटि जातौ भक्त नाम तेरौ परतौ।
तंदुल घिरत समर्पि स्याम कौ संत-परोसौ करतौ।
होतौ नफा साधु की संगति मूल गाँठि नहिं टरतौ।
सूरदास बैकुंठ पैठ मैं कोउ न फैंट पकरतौ ॥११२॥

सबनि सनेही छाँड़ि दयौ।
हा जदुनाथ! जरा तन ग्रास्यौ, प्रतिभौ उतरि गयौ।
सोइ तिथि-बार-नछत्र-लगन-ग्रह, सोइ जिहिं ठाट ठयौ।
न बंधनि कोउ फिरि नहिं चितवत, गत स्वारथ समयौ।
सोइ धन-धाम नाम सोई कुल सोई जिहिं बिढ़यौ।
अब सबही कौ बदन स्वान ज्यौं चितवत दूरि भयौ।
बरष दिवस करि होत पुरातन, फिरि फिरि लिखत नयौ।
निज छबि-दोष बिचारि सूर प्रभु तुम्हरी सरन गयौ ॥११३॥

द्वै मैं एकौ तौ न भई।
ना हरि भज्यौ, न गृह-सुख पायौ, वृथा बिहाइ गई।
ठानी हुती और कछु मन मैं, औरै आनि ठई।
अविगत-गति कछु समुझि परत नहिं, जो कछु करत दई।
सुत-सनेहि तिय सकल कुटुँब मिलि निसि-दिन होत खई।
पद-नख-चंद चकोर बिमुख मन, खात अँगार मई।
विषय-विकार-दवानल उपजी, मोह-बयारि लई।
भ्रमत भ्रमत बहुतै दुख पायौ, अजहुँ न टेव गई।
होत कहा अबकैं पछिताएँ, बहुत बेर बितई।
सूरदास सेये न कृपानिधि जो सुख सकल मई ॥११४॥

यह सब मेरीयै आइ कुमति।
अपनैं ही अभिमान दोष दुख पावत हौं मैं अति।
जैसैं केहरि उझकि कूप जल देखत अपनी प्रति।
कूदि परयौ कछु मरम न जान्यौ भई आइ सोइ गति।
ज्यौं गज फटिक सिला मैं देखत, दसननि डारत हति।
जौ तू सूर सुखहिं चाहत है तौ करि विषय-बिरति ॥११५॥

झूठेही लगि जनम गँवायौ।
भूल्यौ कहा स्वप्न के सुख मैं हरि सौं चित न लगायौ।
कबहुँक बैठ्यौ रहसि-रहसि कै, ढोटा गोद खिलायौ।
कबहुँक फूलि सभा मैं बैठ्यौ मूँछनि ताव दिखायौ।
टेढ़ी चाल पाग सिर टेढ़ी, टेढ़ैं-टेढ़ैं धायौ।
सूरदास प्रभु क्यौं नहिं चेतत, जब लगि काल न आयौ ॥११६॥

जग मैं जीवत ही कौ नातौ।
मन बिछुरैं तन छार होइगौ, कोउ न बात पुछातौ।
मैं-मेरी कबहूँ नहिं कीजै, कीजै पंच-सुहातौ।
विषयासक्त रहत निसि-बासर, सुख सियरौ दुख तातौ।

साँच-झूठ करि माया जोरी, आपुन रूखौ खातौ।
सूरदास कछु थिर न रहैगी, जो आयौ सो जातौ ॥११७॥

बिषयनि ही लागे दिन जात।
सजल देह, कागद तैं कोमल किहि बिधि राखै प्रान ?
जोग न जज्ञ ध्यान नहिं सेवा, संत-संग नहिं ज्ञान।
जिह्वा-स्वाद इंद्रियनि-कारन, आयु घटति दिन मान।
और उपाइ नहीं रे बौरे, सुनि तू यह दै कान।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपान ॥११८॥

अब मैं जानी, देह बुढ़ानी।
सीस, पाउँ, कर कह्यौ न मानत, तन की दसा सिरानी।
आन कहत आनै कहि आवत नैन-नाक बहै पानी।
मिटि गइ चमक-दमक अँग-अँग की, मति अरु दृष्टि हिरानी।
नाहिं रही कछु सुधि तन-मन की भई जु बात बिरानी।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपानी ॥११९॥

रे मन, राम सौं करि हेत।
हरि-भजन की बारि करि लै उबरै तेरौ खेत।
मन सुवा तन पींजरा, तिहिं माँझ राखै चेत।
काल फिरत बिलार-तनु धरि, अब धरी तिहिं लेत।
सकल बिषय-बिकार तजि तू उतरि सागर-सेत।
सूर भजि गोबिंद के गुन, गुर बताए देत ॥१२०॥

तिहारौ कृष्न कहत कह जात ?
बिछुरैं मिलन बहुरि न ह्वै है, ज्यौं तरवर के पात।
सीत-बात कफ कंठ बिरोधै, रसना टूटै बात।
प्रान लए जम जात मूढ़-मति देखत जननी-तात।
छन इक माहिं कोटि जुग बीतत नर की केतिक बात ?
यह जग-प्रीति सुवा-सेमर ज्यौं, चाखत ही उड़ि जात।

जम कैं फंद परयौ नहिं जब लगि, चरननि किन लपटात ?
कहत सूर बिरथा यह देही, एतौ कत इतरात ॥१२१॥

हरि की सरन महँ तू आउ।
काम-क्रोध बिषाद-तृष्ना सकल जारि बहाउ।
काम कैं बस जो परै जमपुरी ताकौं बास।
ताहि निसि दिन जपत रहि जो सकल-जीव-निवास।
कहत यह बिधि भली तासौं जो तू छाँड़ै देहि।
सूर स्याम सहाइ हैं तौ आठहूँ सिधि लेहि ॥१२२॥

दिन दस लेहि गोबिंद गाइ।
छिन न चितवत चरन-अंबुज, बादि जीवन जाइ।
दूरि जब लौं जरा रोगऽरु चलति इंद्री भाइ।
आपुनौ कल्यान करि लै, मानुषी तन पाइ।
रूप जौबन सकल मिथ्या देखि जनि गरबाइ।
ऐसेहीं अभिमान आलस काल ग्रसिहै आइ।
कूप खनि कत जाइ रे नर, जरत भवन बुझाइ।
सूर हरि कौ भजन करि लै, जनम-मरन नसाइ ॥१२३॥

दिन द्वै लेहु गोबिंद गाइ।
मोह-माया-लोभ लागे काल घेरै आइ।
बारि मैं ज्यौं उठत बुदबुद लागि बाइ बिलाइ।
यहै तन-गति जनम झूठौ स्वान काग न खाइ।
कर्म कागद बाँचि देखौ, जौ न मन पतियाइ।
अखिल लोकनि भटकि आयौ लिख्यौ मेटि न जाइ।
सुरति के दस द्वार रूँधे, जरा घेरयौ आइ।
सूर हरि की भक्ति कीन्हैं, जन्म पातक जाइ ॥१२४॥

मन, तोसौं किती कही समुझाइ।
नंदनंदन के चरन कमल भजि तजि पाखँड-चतुराइ।

सुख-संपति, दारा-सुत, हय-गय, झूठ सबै समुदाइ।
छनभंगुर ये सबै स्याम बिनु, अंत नाहिं सँग जाइ।
जनमत-मरत बहुत जुग बीते, अजहूँ लाज न आइ।
सूरदास भगवंत भजन बिनु बैरे जनम गँवाइ ॥१२५॥

भोरे मन रहन अटल करि जान्यौ।
धन-दारा सुत-बंधु-कुटुँब कुल, निरखि निरखि बौरान्यौ।
जीवन जन्म अल्प सपनौ सौ, समुझि देखि मन माहीं।
बादर छाहँ धूम धौराहर, जैसे थिर न रहाहीं।
जब लगि डोलत बोलत चितवत धन-दारा हैं तेरे।
निकसत हंस, प्रेत कहि तजिहैं, कोउ न आवै नेरे।
मूरख, मुग्ध अजान, मूढ़मति नाहीं कोऊ तेरौ।
जो कोऊ तेरौ हितकारी, सो कहै काढ़ि सबेरौ।
घरी इक सजन-कुटुँब मिलि बैठैं रुदन-बिलाप कराहीं।
जैसैं काग काग के मूएँ, काँ-काँ करि उड़ि जाहीं।
कृमि-पावक तेरौ तन भखिहैं, समुझि देखि मन माहीं।
दीनदयाल सूर हरि भजि लै यह औसर फिरि नाहीं ॥१२६॥

रे सठ, बिनु गोबिंद सुख नाहीं।
तेरौ दुःख दूरि करिबे कौं रिधि सिधि फिरि फिरि जाहीं।
सिव बिरंचि सनकादिक, मुनिजन इनकी गति अवगाहीं।
जगत पिता जगदीस सरन बिनु, सुख तीनौं पुर नाहीं।
और सकल मैं देखे ढूँढ़े बादर की सी छाहीं।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, दुख कबहूँ नहिं जाहीं ॥१२७॥

धोखैं ही धोखैं डहकायौ।
समुझि न परी बिषय-रस गीध्यौ हरि-हीरा घर माँझ गँवायौ।
ज्यौं कुरंग जल देखि अवनि कौ, प्यास न गई चहूँ दिसि धायौ।
जनम जनम बहु करम किए हैं, तिनमैं आपुन आपु बँधायौ।

ज्यौं सुक सेमर सेव आस लगि, निसि-बासर हठि चित्त लगायौ।
रीतौ पर्‌यौ जबै फल चाख्यौ, उड़ि गयौ तूल, ताँबरौ आयौ।
ज्यौं कपि डोरि बाँधि बाजीगर, कन-कन कौं चौहटैं नचायौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, काल-ब्याल पै आपु खवायौ ॥१२८॥

भक्ति कब करिहौ, जनम सिरानौ।
बालापन खेलतहीं खोयौ, तरुनाई गरबानौ।
बहुत प्रपंच किए माया के, तऊ न अधम अघानौ।
जतन जतन करि माया जोरी, लै गयौ रंक न रानौ।
सुत-बित-बनिता प्रीति लगाई, झूठे भरम भुलानौ।
लोभ-मोह तैं चेत्यौ नाहीं, सुपनैं ज्यौं डहकानौ।
बिरध भऐं कफ कंठ बिरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितानौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम कैं हाथ बिकानौ ॥१२९॥

तजौ मन, हरि-बिमुखनि कौ संग।
जिनकैं संग कुमति उपजति है, परत भजन मैं भंग।
कहा होत पय पान कराऐं, बिष नहिं तजत भुजंग।
कागहिं कहा कपूर चुगाऐं, स्वान न्हवाऐं गंग।
खर कौं कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन अंग।
गज कौं कहा सरित अन्हवाऐं, बहुरि धरै वह ढंग।
पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग।
सूरदास कारी कामरि पै, चढ़त न दूजौ रंग ॥१३०॥

रे मन मूरख जनम गँवायौ।
करि अभिमान बिषय-रस गीध्यौ, स्याम सरन नहिं आयौ।
यह संसार सुवा-सेमर ज्यौं, सुंदर देखि लुभायौ।
चाखन लाग्यौ रुई गई उड़ि, हाथ कछू नहिं आयौ।
कहा होत अब के पछिताऐं, पहिलैं पाप कमायौ।
कहत सूर भगवंत-भजन बिनु, सिर धुनि-धुनि पछितायौ ॥१३१॥

चकई री चलि चरन-सरोवर जहाँ न प्रेम बियोग।
जहँ भ्रम-निसा होति नहिं कबहूँ सोइ सायर सुख जोग।
जहाँ सनक-सिव हंस, मीन मुनि, नख रवि-प्रभा प्रकास।
प्रफुलित कमल निमिष नहिं ससि-डर, गुंजत निगम सुवास।
जिहिं सर सुभग मुक्ति-मुक्ताफल, सुकृत अमृत-रस पीजै।
सो सर छाँड़ि कुबुधि बिहंगम, इहाँ कहा रहि कीजै।
लछिमी-सहित होति नित क्रीड़ा सोभित सूरजदास।
अब न सुहात बिषय-रस-छीलर, वा समुद्र की आस ॥१३२॥

चलि सखि तिहिं सरोवर जाहिं।
जिहिं सरोवर कमल कमला रवि बिना बिगसाहिं।
हंस उज्ज्वल पंख निर्मल, अंग मलि-मलि न्हाहिं।
मुक्ति-मुक्ता अनगिने फल तहाँ चुनि-चुनि खाहिं।
अतिहिं मगन महा मधुर रस, रसन मध्य समाहिं।
पदुम-बास सुगंध-सीतल, लेत पाप नसाहिं।
सदा प्रफुल्लित रहैं, जल बिनु निमिष नहिं कुम्हिलाहिं।
सघन गुंजत बैठि उन पर भौंरहू बिरमाहिं।
देखि नीर जु छिलछिलौ जग, समुझि कछु मन माहिं।
सूर क्यौं नहिं चलै उड़ि तहँ बहुरि उड़िबौ नाहिं ॥१३३॥

सुवा चलि ता बन कौ रस पीजै।
जा बन राम-नाम अमित-रस स्रवन-पात्र भरि लीजै।
को तेरौ पुत्र पिता तू काकौ घरनी, घर को तेरौ ?
काग-सृगाल-स्वान कौ भोजन, तू कहै मेरौ-मेरौ।
बन बारानसि मुक्ति-क्षेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ।
सूरदास साधुनि की संगति बड़े भाग्य जौ पाऊँ ॥१३४॥

जो सुख होत गुपालहिं गाऐं।
सो सुख होत न जप तप कीन्हैं, कोटिक तीरथ न्हाऐं।

दिएँ सेत महिं धारि पदारथ, चरन-कमल चित लावैं।
तीनि लोक तृन-सम करि लेखत नंद-नँदन उर आवैं।
बंसीबट, बृंदावन, जमुना तजि बैकुंठ न जावै।
सूरदास हरि कौ सुमिरन करि, बहुरि न भव-जल आवै ॥१३५॥

सोइ रसना, जो हरि-गुन गावै।
नैननि की छबि यहै चतुरता जौ मुकुंद-मकरंदहिं ध्यावै।
निर्मल चित तौ सोई साँचौ, कृष्न बिना जिहिं और न भावै।
स्रवननि की जु यहै अधिकाई सुनि हरि-कथा सुधा-रस पावै।
कर तेई जे स्यामहिं सेवैं, चरननि चलि बृंदावन जावै।
सूरदास जैयै बलि ताकी जो हरि जू सौं प्रीति बढ़ावै ॥१३६॥

अपनेमी इन लोगनि को भावै।
छाँड़ि स्याम-नाम अमृत फल माया-बिष फल भावै।
निंदत मूढ़ मलय चंदन कौं, राख अंग लपटावै।
मानसरोवर छाँड़ि हंस तट, काग-सरोवर न्हावै।
पग तर जरत न जानै मूरख, घर तजि घूर बुझावै।
चौरासी लख जोनि स्वाँग धरि, भ्रमि भ्रमि जमहिं हँसावै।
मृगतृष्ना आचार-जगत-जल, ता सँग मन ललचावै।
कहत जु सूरदास संतनि मिलि, हरि जस काहे न गावै ॥१३७॥

भजन बिनु कूकर-सूकर जैसी।
जैसैं घर बिलाव कै मूसा रहत बिषय-बस वैसी।
बग-बगुली अरु गीध-गीधिनी, आइ जनम लियौ तैसी।
उनहूँ कै गृह, सुत, दारा हैं, उन्हैं भेद कहु कैसी ?
जीव मारि कै उदर भरत हैं, तिनकौ लेखौ ऐसी।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनौ ऊँट बृष-भैंसी ॥१३८॥

जा दिन संत पाहुने आवत।
तीरथ कोटि सनान करै फल जैसी दरसन पावत।

मयौ नेह दिन-दिन प्रति उनकैं चरन-कमल चित लावत।
मन-बच-कर्म और नहिं जानत, सुमिरत औ सुमिरावत।
मिथ्यावाद-उपाधि रहित ह्वै बिमल-बिमल जस गावत।
बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत।
संगति रहे साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत।
सूरदास संगति करि तिनकी जे हरि-सुरति करावत ॥१३६॥

हरि-रस तौऊ जाइ कहुँ लहियै।
गऐं सोच आऐं नहिं आनँद ऐसौ मारग गहियै।
कोमल बचन, दीनता सब सौं सदा अनंदित रहियै।
बाद बिबाद हर्ष-आतुरता, इतौ द्वंद जिय सहियै।
ऐसी जो आवै या मन मैं, तौ सुख कहँ लौं कहियै।
अष्ट सिद्धि नव निधि, सूरज प्रभु, पहुँचै जो कछु चहियै ॥१४०॥

जौ लौं मन कामना न छूटै।
तौ कहा जोग-जज्ञ-व्रत कीन्हैं, बिनु कन तुस कौं कूटै।
कहा सनान कियैं तीरथ के अंग भस्म जट-जूटै?
कहा पुरान जु पढ़े अठारह, ऊर्ध्व धूम के घूँटै।
जग सोभा की सकल बड़ाई, इनतैं कछू न खूटै।
करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि टूटै।
काम क्रोध, मद, लोभ सत्रु हैं, जो इतननि सौं छूटै।
सूरदास तबहीं तम नासै, ग्यान-अगिनि-झर फूटै ॥१४१॥

सबै दिन एकै से नहिं जात।
सुमिरन-भजन कियौ करि हरि कौ, जब लौं तन कुसलात।
कबहूँ कमला चपल पाइ कै, टेढ़ैं टेढ़ैं जात।
कबहुँ मग-मग धूरि बटोरत, भोजन कौं बिललात।
या देही कौ गरब करत, धन-जोबन के मदमात।
ह्वै मद ही बड़ बहुत कहावत, सूधैं कहत न बात।

पान-पियाद भयौ दिन बीतें योवन ही मद मात।
जाग न जुगति ध्यान नहिं पूजा बिरध भएँ पछितात।
ताते कहत सँभारहि रे नर काहे कौं इतरात?
सूरदास भगवंत भजन बिनु कहूँ नाहिं सुख गात ॥१४२॥

विषया जात हरष्यौ गात।
ऐसे अंध जानि निधि लूटत परतिय संग लपटात।
बरजि रहे सब कह्यौ न मानत करि-करि जतन उड़ात।
परै अचानक त्यौं रस-लंपट, तनु तजि जमपुर जात।
यह तौ सुनी व्यास के मुख तें पर-दारा दुखदात।
रुधिर-मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर गंध गंधात।
तन-धन जोबन ता हित खोवत नरक की पाछें बात।
जौ नर भलौ चहत तौ सो तजि सूर स्याम गुन गात ॥१४३॥

जौ लौं मन-मन्मथ नहिं सूझत।
तौ लौं मृग-मद नाभि बिसारे फिरत सकल बन सूंघत।
अपनौ मुख मसि-मलिन मंदमति देखत दर्पन माहीं।
ता कालिमा मेटिबे कारन पचत पखारत छाहीं।
तेल-तूल पावक पुट भरि धरि बनै न बिना प्रकासत।
कहत बनाइ दीप की बतियाँ कैसे धौं तम नासत।
सूरदास यह मति आए बिन सब दिन गए अलेखे।
कहा जानै दिनकर की महिमा अंध नैन बिन देखे ॥१४४॥

अपुनपौ आपुन ही बिसर्यौ।
जैसे स्वान काँच-मंदिर मैं भ्रमि भ्रमि भूँकि मर्यौ।
ज्यौं सौरभ मृग-नाभि बसत है द्रुम तृन सूँघि फिर्यौ।
ज्यौं सपने मैं रंक भूप भयौ तसकर अरि पकर्यौ।
ज्यौं केहरि प्रतिबिंब देखि कै आपन कूप पर्यौ।
जैसे गज लखि फटिकसिला मैं दसननि जाइ अर्यौ।

मर्कट मूँठि छाँड़ि नहीं दीनी घर-घर-द्वार फिरयौ।
सूरदास नलिनी कौ सुवटा, कहि कौनैं पकरयौ ॥१४५॥

हरि जू की आरती बनी।
अति विचित्र रचना रचि राखी परति न गिरा गनी।
कच्छप अध आसन अनूप अति, डाँड़ी सहस फनी।
मही सराव सप्त सागर घृत बाती सैल घनी।
रवि-ससि-ज्योति जगत परिपूरन, हरति तिमिर रजनी।
उड़त फूल उड़गन नभ अंतर अंजन घटा घनी।
नारदादि सनकादि प्रजापति सुर-नर-असुर-अनी।
काल-कर्म-गुन-ओर अंत नहिं, प्रभु इच्छा रचनी।
यह प्रताप दीपक सुनिरंतर, लोक सकल भजनी।
सूरदास सब प्रगट ध्यान मैं, अति विचित्र सजनी ॥१४६॥

सकल तजि भजि मन चरन मुरारि।
स्रुति-सुम्रिति मुनि जन सब भाषत, मैं हूँ कहत पुकारि।
जैसैं सुपनैं सोइ देखियत तैसे यह संसार।
जात बिलै ह्वै छिनक मात्र मैं उघरत नैन किवार।
बारंबार कहत मैं तोसौं जनम-जुआ जनि हारि।
पाछैं भई सु भई सूर जन, अजहूँ समुझि सँभारि ॥१४७॥

अजहूँ सावधान किन होहि।
माया विषम भुजंगिनि कौ विष, उतरयौ नाहिंन तोहि।
कृष्न सुमंत्र जियावन मूरी, जिन जन मरत जिवायौ।
बारंबार निकट स्रवननि ह्वै गुरु गारुड़ी सुनायौ।
बहुतक जीव देह अभिमानी देखत ही इन खायौ।
कोउ-कोउ उबरयौ साधु-संग जिन स्याम सँजीवनि पायौ।
जाकौ मोह मैर अति छूटै सुजस गीत के गायैं।
सूर मिटै अज्ञान-मूरछा ज्ञान-सुभेषज खायैं ॥१४८॥

अपुनपौ आपुन ही मैं पायौ।
सब्दहि सब्द भयौ उजियारौ सतगुरु भेद बतायौ।
ज्यौं कुरंग-नाभी कस्तूरी ढूँढ़त फिरत भुलायौ।
फिरि चितयौ जब चेतन ह्वै करि, अपनै ही तन छायौ।
राजकुमारि कंठ-मनि-भूषन भ्रम भयौ कहूँ गँवायौ।
दियौ बताइ और सखियनि तब, तनु कौ ताप नसायौ।
सपने माहिं नारि कौं भ्रम भयौ, बालक कहूँ हिरायौ।
जागि लख्यौ, ज्यौं को त्यौं ही है ना कहुँ गयौ न आयौ।
सूरदास समुझे की यह गति, मनहीं मन मुसुकायौ।
कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौं गूँगे गुर खायौ ॥१५६॥

गुरु बिनु ऐसी कौन करै।
माला-तिलक मनोहर बाना लै सिर छत्र धरै।
भवसागर तैं बूड़त राखै, दीपक हाथ धरै।
सूर स्याम गुरु ऐसो समरथ छिन मैं लै उधरै ॥१५७॥

— ० —

(ख) पौराणिक प्रसंग

भक्त जमुने सुगम अगम अपारै।
प्रात ही न्हात अघ जात जाकै मध्य
माहिं जमहू रहत हाथ जोरैं।
अनुभवी जानहीं, बिना अनुभव कहा
प्रिया जाकौं नहीं चित्त चोरैं।
प्रेम के सिंधु कौ मर्म जान्यौ नहीं
सूर कहि कहा भयौ देह बोरैं।।१५१।।

कह्यौ सुक श्री भागवत बिचार।
जाति-पाँति कोउ पूछत नाहीं श्रीपति कैं दरबार।
श्री भागवत सुनै जो हित करि तरै सो भव-जल पार।
सूर सुमिरि सो रटि निसि-बासर राम-नाम निज सार।।१५२

'सुनि राजा दुर्जोधना हम तुम पै आए।
पांडव-सुत जीवत मिले दै कुसल पठाए।
छेम-कुसल अरु दीनता दंडवत सुनाई।
कर जोरे बिनती करी दुरबल-सुखदाई।
पाँच गाउँ पाँचौ जननि, किरपा करि दीजै।
ये तुम्हरे कुल-बंस हैं, हमरी सुनि लीजै।'
उनकी सौंसी दीनता कोउ कहि न सुनावै।
'पांडव-सुत अरु द्रौपदी कौ मारि गड़ावौ।

'राजनीति जानौ नहीं गो-सुत चरवारे।
पीवौ छाँछ अघाइ कै कब के रयवारे।
'बाप-बड़ाई के परसला मेरे नाहिं सहाई।
इनकी अवज्ञा नहिं हमैं तुम राज-बड़ाई।
भीषम-द्रोन करन सुनैं कोउ मुख्यहु न बोलै।
ए पोषक क्यों गारियै धरनी-धर डोलै।
हम कछु लिये न देत हैं ए आप निहारे।'
सूरदास प्रभु उठि चले कौरव-सुत हारे ॥१३३॥

हरि आइ रथ चढ़े दुआरे।
'तुम दारुक, आगे ह्वै देखौ भक्त भवन किधौं भवन सिधारे।'
सुनि सुंदरि उठि उत्तर दीन्हौ 'पारथ-सुत कछु काज हँकारे।
तहँ आए जदुपति सुनियत हैं, कमल-नयन हरि हितू हमारे।'
जिनकी भक्ति गए पति मेरे सो ठाकुर ए विदित तुम्हारे।
सूर सुनत सभ्रम उठि धाई प्रेम मगन, तन दसा बिसारे ॥१३४॥

'क्यों दासी-सुत कैं पग धारे?
भीषम करन द्रोन-मंदिर तजि मम गृह तजे मुरारे।
सुनियत हीन कुल दासी-सुत, जाति-पाँति तैं न्यारे।
जिनकैं आइ कियौ तुम भोजन, मधु-भूख लाजनि मारे।
हरि जू कह्यौ "सुनौ दुरजोधन, सत्य सुभाव हमारे।
सोइ निरधन सोइ हृदय बसत है जिन मम चरन बिसारे।
तुम मातुर ह्वै मगन भागवत राग-द्वेष तैं न्यारे।"
सूरदास प्रभु नंदनँदन कहैं हम भक्तनि-जुटिहारे ॥१३५॥

हम तै बिदुर कहा है नीको?
जाकैं रुचि सौं भोजन कीन्हौ कहियत सुत दासी कौ।
कहै बिधि भोजन कीजै राजा बिपति परैं कै प्रीति।
तेरे प्रीति न मोहि आपदा यहै बड़ी बिपरीति।

'ऊँचे मंदिर कौन काम के, कनक-कलस जो चढ़ाए।
'भक्त-भवन मैं हौं जु बसत हौं जद्यपि तृन करि छाए।
अंतरजामी नाउँ हमारौ हौं अंतर की जानौं।
तदपि सूर मैं भक्त बछल हौं भक्तनि हाथ बिकानौ' ॥१५६॥

हरि तुम क्यौं न हमारैं आए?
षट-रस व्यंजन छाँड़ि रसोई, साग बिदुर घर खाए।
ताकी झुगिया मैं तुम बैठे, कौन बड़प्पन पायौ?
'जाति पाँति कुलहू तैं न्यारौ है दासी कौ जायौ।'
"मैं तोहि सत्य कहौं दुरजोधन सुनि तू बात हमारी।
बिदुर हमारौ प्रान पियारौ तू बिषया अधिकारी।
जाति-पाँति सबकी हौं जानौं बाहिर छाक मँगाई।
ग्वालनि कैं सँग भोजन कीन्हौ कुल कौ लाज लगाई।
जहँ अभिमान तहाँ मैं नाहीं यह भोजन बिष लागै।
सत्य पुरुष सो दीन गहत है अभिमानी कौ त्यागै।
जहँ जह भीर परै भक्तनि कौ, तहाँ तहाँ उठि धाऊँ।
भक्तनि के हौं संग फिरत हौं भक्तनि हाथ बिकाऊँ।
भक्तबछल है बिरद हमारौ बेद सुमृतियौं गावैं"।
सूरदास प्रभु यह निज महिमा, भक्तनि काज बढ़ावै ॥१५७॥

राखौ पति गिरिधर गिरि-धारी।
अब तौ नाथ, रह्यौ कछु नाहिन उघरत माथ अनाथ पुकारी।
बैठी सभा सकल भूपनि की भीषम-द्रोन-करन ब्रतधारी।
कहि न सकत कोउ बात बदन पर, इन पतितनि सौं अपति बिचारी
पांडुकुमार पवन से डोलत, भीम गदा कर तैं महि डारी।
रही न पैज प्रबल पारथ की, जब तैं धरम-सुत धरनी हारी।
अब तौ नाथ न मेरौ कोई बिनु श्रीनाथ मुकुंद-मुरारी।
सूरदास अवसर के चूकैं फिरि पछितैहौ देखि उघारी ॥१५८॥

जब गहि राजसभा मैं आनी।
द्रुपद-सुता पट-हीन करन कौं दुस्सासन अभिमानी।
परै बज्र या नृपति-सभा पै कहति प्रजा अकुलानी।
बैठे हँसत करन दुर्योधन रोवति द्रौपदि रानी।
चित देखति चित कोउ नाहीं टेरि कहति मृदु बानी।
हा जदुनाथ कमल दल-लोचन करुनामय सुखदानी।
गरुड़ चढ़े देखे नँदनंदन ध्यान चरन-लपटानी।
सूरदास प्रभु कठिन बिपति तैं राखि लियौ जग जानी ॥२५९॥

प्रभु, मोहिं राखियै इहिं ठौर।
केस गहत कलेस पाऊँ करि दुसासन जोर।
करन भीषम द्रोन मानत नाहिं कोउ निहोर।
पाँच पति हित हारि बैठे रावरै हित मोर।
धनुष-बान सिधान कैधौं गरुड़ वाहन जोर।
पल काहु चोरायौ देखौ मुखनि पल भयौ थोर।
सूर के प्रभु कृपा सागर चितै लोचन-कोर।
बढ़यौ बसन प्रवाह जल ज्यौं होत जय जय सोर ॥२६०॥

जौ मेरे दीनदयाल न होते।
तौ मेरी अपत करत कौरव-सुत होत पंडवनि ओते।
कहा भीम के गदा धरैं कर कहा धनुष धरैं पारथ।
काहु न बराहरि करी हमारी कोउ न आयौ स्वारथ।
समुझि-समुझि गुरु-आरति अपनी धर्मपुत्र मुख जोवै।
सूरदास प्रभु नँद-नंदन-गुन गावत निसि-दिन रोवै ॥२६१॥

हम भक्तनि के भक्त हमारे।
सुनि अर्जुन परतिज्ञा मेरी, यह ब्रत टरत न टारे।
भक्तनि काज लाज हिय धरि कै, पाइ पियादे धाऊँ।
जहँ-जहँ भीर परै भक्तनि कौं, तहँ तहँ जाइ छुड़ाऊँ।

जो भक्तनि सौं बैर करत है सो बैरी निज मेरौ।
देखि बिचारि भक्त हित कारन हाँकत हौं रथ तेरौ।
जीतैं जीति भक्त अपने कैं हारैं हारि बिचारौं।
सूरदास सुनि भक्त-बिरोधी चक्र सुदरसन जारौं ॥१६२॥

गोबिंद कोपि चक्र कर लीन्हौ।
छाँड़ि आपनौ प्रन जादवपति जन कौ भायौ कीन्हौ।
रथ तैं उतरि अवनि आतुर ह्वै चले चरन अति धाए।
मनु संचित भू भार उतारन चपल भए अकुलाए।
कंपुक अंग तैं उड़त पीतपट, उन्नत बाहु बिसाल।
स्रवत स्रोनकन तन सामा छबि-घन बरसत मनु लाल।
सूर सु भुजा समेत सुदरसन देखि बिरंचि भ्रम्यौ।
मानौ आन सृष्टि करिबे कौं अंबुज नाभि जम्यौ ॥१६३॥

बरु मेरी परतिज्ञा जाउ।
इत पारथ कोप्यौ है हम पर उत भीषम भटराउ।
रथ तैं उतरि चक्र कर लीन्हौ सुभट सामुहैं आए।
ज्यौं कंदर तैं निकसि सिंह झुकि गज-जूथनि पर धाए।
आइ निकट श्रीनाथ निहारे, परी तिलक पर दीठि।
सीतल भई चक्र की ज्वाला हरि हँसि दीन्ही पीठि।
जय जय जय चिंतामनि स्वामी सांतनु-सुत यौं भाखै।
तुम बिनु ऐसौ कौन दूसरौ, जो मेरौ प्रन राखै।
साधु-साधु सुरसरी-सुवन तुम मैं प्रन लागि डराऊँ।
सूरजदास भक्त दोऊ दिसि का पर चक्र चलाऊँ ॥१६४॥

वा पट पीत की फहरानि।
कर धरि चक्र, चरन की धावनि नहिं बिसरति वह बानि।
रथ तैं उतरि अवनि आतुर ह्वै कच रज की लपटानि।
मानौ सिंह सैल तैं निकस्यौ, महा मत्त गज जानि।

जिन गोपाल मेरौ प्रन राख्यौ, मेटि बेद की कानि।
सोइ सूर सहाइ हमारे निकट भए हैं आनि ॥१६५॥

प्रभु जू बिपदा भली बिचारी।
धिक यह राज्य बिमुख चरननि तैं कहति पाँडु की नारी।
लाक्षा-मंदिर कौरव रचियौ तहँ राखे धनधारी।
अंबर हरत सभा मैं कृष्णा, सोक-सिंधु तैं तारी।
अतिथि रिषीस्वर सापन आए, सोच भयौ जिय भारी।
स्वल्प साग तैं तृप्त किए सब, कठिन आपदा टारी।
जन अर्जुन की रच्छा कारन सारथि भए मुरारी।
सोई सूर सहाइ हमारे संतनि के हितकारी ॥१६६॥

अब वै बिपदा हू न रहीं।
मनसा करि सुमिरत है जब-जब मिलते तब तबहीं।
अपने दीन दास कैं हित लगि फिरते सँग-सँगहीं।
लेते राखि पलक गोलक ज्यौं संतत तिन सबहीं।
रन अरु बन बिग्रह डर आगैं आवत जहीं-तहीं।
राखि लियौ तुमहीं जग-जीवन त्रासनि तैं सबहीं।
कृपा-सिंधु की कथा एकरस, क्यौं करि जाति कही।
कीजै कहा सूर सुख संपति जहँ जदुनाथ नहीं ? ॥१६७॥

हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ ?
मीड़त हाथ, सीस धुनि ढोरत रुदन करत नृप, पारथ।
थाके हस्त चरन-गति थाकी अरु थाक्यौ पुरुषारथ।
पाँच बान मोहिं संकर दीन्हे, तेऊ गए अकारथ।
जाकैं संग सेत-बँध कीन्हौ, अरु जीत्यौ महभारथ।
गोपी हरी सूर के प्रभु बिनु रहत प्रान किहिं स्वारथ ॥१६८॥

कह्यौ सुक श्रीभागवत बिचारि।
हरि की भक्ति जुगे जुग बिरधै आन धर्म दिन चारि।

पिता यह्यौ परीच्छित राजा सुनि सिख मानि हमार ।
कमल-नैन की लीला गावत, कटत अनेक बिकार ।
सतजुग सत, त्रेता तप कीजै द्वापर पूजा चारि ।
सूर भजन कलि केवल कीजै लज्जा कानि निवारि ॥१६९॥

नमो नमो हे कृपानिधान ।
चितवत कृपा कटाच्छ तुम्हारैं मिटि गयौ तम अज्ञान ।
मोह निसा कौ लेस रह्यौ नहिं, भयौ बिवेक-बिहान ।
आतम-रूप सकल घट दरस्यौ उदय कियौ रबि ज्ञान ।
मैं-मेरी अब रही न मेरैं छुट्यौ देह अभिमान ।
भावै परौ आजुही यह तन भावै रहौ अमान ।
मेरैं जिय अब यहै लालसा लीला श्री भगवान ।
स्रवन करौं निसि-बासर हित सौं सूर तुम्हारी आन ॥१७०॥

पढ़ौ भाइ राम-मुकुंद-मुरारि ।
चरन कमल मन-सन्मुख राखौ कहूँ न आवै हारि ।
कहै प्रहलाद सुनौ रे बालक लीजै जनम सुधारि ।
को है हिरनकसिप अभिमानी तुम्हैं सकै जो मारि ।
जनि डरपौ जड़मति काहू सौं भक्ति करौ इकसारि ।
राखनहार अहै कोउ औरै, स्याम धरे भुज चारि ।
सत्य स्वरूप देव नारायन देखौ हृदय बिचारि ।
सूरदास प्रभु सबमैं ब्यापक, ज्यौं धरनी मैं बारि ॥१७१॥

तब लगि हौं बैकुंठ न जैहौं ।
सुनि प्रहलाद प्रतिज्ञा मेरी जब लगि तब सिर छत्र न दैहौं ।
मन-बच-कर्म जानि जिय अपने जहाँ-जहाँ जन तहँ-तहँ ऐहौं ।
निरगुन-सगुन होइ सब देख्यौ तोसौं भक्त कहूँ नहिं पैहौं ।
मो देखत मो दास दुखित भयौ, यह कलंक हौं कहाँ गँवैहौं !
हृदय कठोर कुलिस तैं मेरौ, अब नहिं दीनदयाल कहैहौं ।

गहि नख हिरनकसिप की पीठी फारि उदर तिहिं रुधिर नहैहौं।
यह हित मनै कहत सूरज प्रभु, इहिं कृत को फल तुरत चखैहौं ।१७२

हरबर चक्र धरे हरि धावत।
गरुड़ समेत सकल सेनापति, पाछैं लागे आवत।
चलि नहिं सकत गरुड़ मन हरषत बुधि बल बलहिं बढ़ावत।
मनहूँ न अति बेग अधिक करि, हरिजू चरन चलावत।
को जानै प्रभु कहाँ चले हैं, काहूँ कछु न जनावत।
अति व्याकुल गति देखि देव-गन सोचि सकल दुख पावत।
गज हित धावत जन-सुखदायक बेद बिमल जस गावत।
सूर समुझि समुझाइ अनाथनि इहिं बिधि नाथ छुड़ावत ॥१७३॥

ग्राह न बिटन पाइ, आप हरि आतुर ह्वै,
आस्यो जब गज ग्राह लिए जात जल मैं।
नारीपति जदुनाथ छाँड़ि खगपति-साथ
आनि जन बिह्वल, छुड़ाइ लीन्हौ पल मैं।
गीरहू तें न्यारो कानो चक्र नक्र-सीस छीनी
देवकी के प्यारे लाल ऐंचि लाए थल मैं।
कहै सूरदास, देखि नैननि की बिदी स्याम
कृपा कीन्ही गोपीनाथ आप सुत-जल मैं ॥१७४॥

अब ही सब त्रिभि देखि गयौ।
गगन मांहि कोउ करुनानिधि अति पग भाइ गयौ।
सुर, नर सब स्वारथ के गाहक, जन ग्रस आनि चढ़ै।
उडुगन उदित तिमिर नहिं नासत बिन रवि रूप धरै।
इतनी चाल सुनत करुनामय चक्र गहे कर धाए।
हरि गज-सत्रु सूर के स्वामी, तनछन सुरग पठाए ॥१७५॥

हारे हाहे हैं द्विज धावत।
चारौ बेद पढ़त सुख आगर अति सुकंठ-सुर गावत।

बानी सुनी बलि पूजन लागी, इहा विप्र कत आवन ?
परसित पंदन नील कलेवर, बरसति बूँदनि सावन।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, कह्यौ माँगु मन-भावन।
तीनि पैंड बसुधा हौं चाहौं, पर्नकुटी कौं छावन।
इतनी कहा विप्र तुम माँग्यौ, बहुत रतन देउँ गौवन।
सूरदास प्रभु बोलि लसे बलि, धरयौ पीठि पद पावन ॥१७६॥

जन की हौं आधीन सदाई।
दुरवासा बैकुंठ गए जब, तब यह कथा सुनाई।
विदित बिरद अनन्य देव तुम करुनामय सुखदाई।
आरत है मोहिं चक्र सुदरसन, हा प्रभु लेहु बचाई।
जिन तन-धन मोहिं प्रान समरपे सीस सुभाव, बड़ाई।
ताकौ विषम विषाद कह्यो मुनि मोपै सह्यौ न जाई।
उलटि जाहु नृप चरन-सरन मुनि वहै राखिहै भाई।
सूरजदास दास की महिमा श्रीपति श्रीमुख गाई ॥१७७॥

पिउ पद-कमल को मकरंद।
मलिन-मति मन-मधुप परिहरि, विषय नीरस मंद।
अमृत हूँ तें अमल अति गुन, स्रवत निधि आनंद।
परम सीतल जानि संकर, सिर धरयौ हिम चंद।
नाग-नर-पसु सबनि चाख्यौ सुरसरी कौ बुंद।
सूर दीनी लीक परस्यौ सुरसरी जस-छंद ॥१७८॥

जय जय, जय जय माधव बेनी।
जग हित प्रगट करी करुनामय अगतिनि की गति दैनी।
जानि कठिन कलिकाल कुटिल नृप संग सजी अघ-सैनी।
जनु ता लागि तरवारि त्रिविक्रम, धरि करि कोप उपैनी।
मेरु मूठि, वर-बारि पाल-छिति, बहुत बित्त की सैनी।
सोभित अंग तरंग त्रिसंगम धरी धार अति पैनी।

जा परसैं भीतें जम-सैनी जमन कपालिक, जैनी।
एकै नाम लेत सब भाजैं पीर भी भव-भय-सैनी।
या जस सुत निरखि सन्मुख ह्वै, सुन्दरि सरसिज-नैनी।
सूर परसपर करत कुलाहल, गर मृग पहरावैनी ॥१७९॥

गंग-तरंग बिलोकत नैन

सुरसरि पुनीत बिष्णु पादोदक, महिमा निगम कहत गुनि बैन।
परम पवित्र, मुक्ति की दाता भागीरथिहिं भव्य बर दैन।
ध्यावत जप तप निसिबासर, तब संकर भाषी है बैन।
त्रिभुवन हार सिंगार भगवती सलिल चराचर आके ऐन।
सूरदास बिधाता के तप प्रगट भई संतनि सुख दैन ॥१८०॥

—:(※):—

दसरथ कौसिल्या के आगैं, लसत सुमन की छहियाँ।
मानौ चारि हंस सरबर तैं बैठे आइ सदेहियाँ।
रघुकुल कुमुद चंद चिंतामनि प्रगटे भूतल महियाँ।
आए ओप दैन रघुकुल कौं आनँद-निधि सब कहियाँ।
यह सुख तीन लोक मैं नाहीं जो पाए प्रभु पहियाँ।
सूरदास हरि बोलि भगत कौं निरबाहत गहि बहियाँ ॥१८३॥

धनुही-बान लए कर डोलत।
चारौ बीर संग इक सोभित बचन मनोहर बोलत।
लछिमन भरत सत्रुहन सुंदर, राजिवलोचन राम।
अति सुकुमार, परम पुरुषारथ मुक्ति-धर्म-धन धाम।
कटि-तट पीत पिछौरी बाँधे काकपच्छ धरे सीस।
सर-क्रीड़ा दिन देखन आवत, नारद सुर तैंतीस।
सिव-मन सकुच इंद्र-मन आनँद सुख-दुख बिधिहिं समान।
दिति दुर्बल अति अदिति हृष्टचित देखि सूर संधान ॥१८४॥

कर काँपै, कंकन नहिं छूटै।
राम सिया कर परस मगन भए, कौतुक निरखि सखी सुख लूटै।
गावत नारि गारि सब दै दै तात भ्रात की कौन चलावै।
तब कर-डोरि छुटै रघुपति जू जब कौसिल्या माइ बुलावै।
पूँगी-फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जो कनक की ॥
खेलत जूप सकल जुवतिनि मैं हारे रघुपति जिती जनक की ॥
धरे निसान अजिर गृह मंगल, बिप्र बेद-अभिषेक करायौ।
सूर अमित आनंद जनकपुर सोइ सुखदेव पुराननि गायौ ॥१८५॥

परसुराम तेहिं औसर आए।
कठिन पिनाक कहौ किन तोरयौ क्रोधित बचन सुनाए।
बिप्र जानि रघुबीर धीर दोउ, हाथ जोरि सिर नायौ।
बहुत दिननि कौ हुतौ पुरातन हाथ छुअत उठि आयौ।

तुम तौ द्विज कुल-पूज्य हमारे, हम तुम कौन लराई ?
क्रोधवंत कछु सुन्यौ नहीं लियौ सायक धनुष चढ़ाई।
तबहूँ रघुपति क्रोध न कीन्हौ धनुष न बान सँभारयौ।
सूरदास प्रभु-रूप समुझि, तब परसुराम पग धारयौ ॥१८६॥

महाराज दसरथ मन धारी।
अवधपुरी कौ राज राम दै कीजै व्रत बनधारी।
यह सुनि बोली नारि कैकई अपनौ बचन सँभारौ।
चौदह बर्ष रहैं बन राघव छत्र भरत सिर धारौ।
यह सुनि नृपति भयौ अति व्याकुल, कहत कछू नहिं आई।
सूर रहे समुझाइ बहुत पै कैकइ-हठ नहिं जाई ॥१८७॥

महाराज दसरथ यौं सोचत।
हा रघुनाथ लछन वैदेही सुमिरि नीर दृग मोचत।
त्रिया चरित मतिमंत न समुझत उठि प्रछालि मुख धोवत।
अति बिपरीत रीति कछु औरै बार-बार मुख जोवत।
परम कुबुद्धि कह्यौ नहिं समुझति राम-लखन हँकराए।
कौसिल्या सुनि परम दीन ह्वै नैन नीर ढरकाए।
बिह्वल तन-मन, चकृत भई सो यह प्रतच्छ सुपनाए।
गदगद कंठ सूर कोसलपुर सोर सुनत दुख पाए ॥१८८॥

रघुनाथ पियारे, आजु रहौ।
चारि जाम बिस्राम हमारैं छिन-छिन मीठे बचन कहौ।
वृथा होहु वर बचन हमारौ कैकइ जीव कलेस सहौ।
आतुर ह्वै अब छाँड़ि अवधपुर, प्रान जिवन कित चलन कहौ।
बिछुरत प्रान पयान करैंगे, रहौ आजु पुनि पंथ गहौ।
अब सूरज दिन दरसन दुरलभ कलित कमल कर कंठ गहौ ॥१८९॥

तुम जानकी जनकपुर जाहु।
कहा आनि हम संग भरमिहौ गहवर बन दुख सिंधु अथाहु।

तजि वह जनक-राज-भोजन-सुख, कत तृन-तलप, बिपिन फल खाहु ।
ग्रीषम कमल-बदन कुम्हिलैहै, तजि सर निकट दूरि कित न्हाहु ।
जनि कछु प्रिया सोच मन करिहौ मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु ।
तुम घर रहौ सीख मेरी सुनि नातरु बन चलिकै पछिताहु ।
हौं पुनि मानि करौं छग रेखा करिहौं ताल-भवन निरबाहु ।
सूर सत्य जौ पतिब्रत राखौ, चलौ संग जनि, उतहीं जाहु ॥१६०॥

ऐसी जिय न धरौ रघुराइ ।
तुम-सौ प्रभु तजि मो-सी दासी अनत न कहूँ समाइ ।
तुम्हरौ रूप अनूप भानु ज्यौं जब नैननि भरि देखौं ।
ता छिन हृदय कमल प्रफुलित ह्वै जनम सफल करि लेखौं ।
तुम्हरैं चरन कमल सुख-सागर यह ब्रत हौं प्रतिपलिहौं ।
सूर सकल सुख छाँड़ि आपनौ बन-बिपदा-सँग चलिहौं ॥१६१॥

तुम लछिमन निज पुरहिं सिधारौ ।
बिछुरन-भेंट देहु लघु बंधू जियत न जैहै सूल तुम्हारौ ॥
यह भावी कछु और काज है को जो याकौ मेटनहारौ ।
याकौ कहा परेखौ निरखौ मधु छीलर सरितापति खारौ ।
तुम मति करौ अवज्ञा नृप की यह दुख ही आगे कौ मारौ ।
सूर सुमित्रा अंक दीजियौ कौसिल्याहि प्रनाम हमारौ ॥१६२॥

फिरि-फिरि नृपति चलावत बात ।
कहु री ! सुमति कहा तोहिं पलटी, प्रान-जिवन कैसैं बन जात !
ह्वै बिरक्त, सिर जटा धरैं, द्रुम चम भस्म सब गात ।
[illegible] हा राम लछन अरु सीता, फल भोजन जु हमारैं पात ।
बिन रथ रहै, दुसह दुख मारग, बिन पद त्रान चलैं दोउ भ्रात ।
इहि बिधि सोच करत अतिही नृप जानकि-ओर निरखि बिलखात ।
इतनी सुनत सिमिटि सब आए प्रेम सहित धारे अँसुपात ।
ता दिन सूर सहर सब चकित नगर-सनेह तज्यौ पितु मात ॥१६३॥

आजु रघुनाथ पयानो देत।
विह्वल भए स्रवन सुनि पुरजन, पुत्र पिता को हेत।
ऊँचे चढ़ि दसरथ लोचन भरि सुत-मुख देखे लेत।
रामचंद्र से पुत्र बिना मैं भूँजब क्यौं यह खेत।
देखत गमन नैन भरि आए गात गह्यौ ज्यौं केत।
तात-तात कहि बैन उचारत ह्वै गए भूप अचेत।
कटि पट तून हाथ सायक-धनु सीता बंधु समेत।
सूर गमन गहरु को कीन्हौ जानत पिता अचेत ॥१६४॥

नौका हौं नाहीं लै आऊँ।
प्रगट प्रताप चरन को देखौ, ताहि कहाँ पुनि पाऊँ।
कृपासिंधु पै केवट आयौ, कंपत करत सो बात।
चरन परसि पाषान उड़त है, कत मेरी उड़ि जात ?
जौ यह बधू होइ काहू की दारु स्वरूप धरै।
छूटै देह, जाइ सरिता तजि पग सौं परस करै।
मेरी सकल जीविका यामैं रघुपति मुक्त न कीजै।
सूरजदास चढ़ौ प्रभु पाछैं रेनु पखारन दीजै ॥१६५॥

मेरी नौका जनि चढ़ौ त्रिभुवनपति राई।
मो देखत पाहन तरे मेरी काठ की नाई।
मैं खेई ही पार कौं तुम उलटि मँगाई।
मेरी जिय यौंही डरै, मति होहि सिलाई।
मैं निरबल बित-बल नहीं, जो और गढ़ाऊँ।
मो कुटुम्ब याही लग्यौ ऐसी कहँ पाऊँ ?
मैं निर्धन, कछु धन नहीं, परिवार घनेरौ।
सेमर डाढ़ी काटि कै, बाँधौ तुम बेरौ।
बार बार श्रीपति कहैं, धीवर नहिं मानै।
मन प्रतीत नहिं आवई, उड़िबी ही जानै।

मेरे ही अधार है, अली तुम्हैं बताऊँ।
सूरदास की बिनती नीकैं पहुँचाऊँ ॥१६६॥

धनी धनी सुन्दरि नारि सुहागिनि लागौं तेरे पाउँ।
किहिँ गाँ के तुम बीर बटाऊ, कौन तुम्हारौ गाउँ।
उत्तर दिसि हम-नगर अजोध्या है सरजू के तीर।
नर कुल बरे भूप दसरथ सखि बसौ नगर गँभीर।
कौनैं गुन बन चली बधू तुम कहि मोसौं सखि आइ।
यह घर-द्वार छाँड़ि के सुन्दरि चली पियारे पाउँ।
सासु की सौति सुहागिनि सो सखि, अतिही पिय की प्यारी।
अपने सुत को राज दिवायौ हमकौं देस निकारी।
यह बिपरीति सुनी जब सबही, नैननि ढार्यौ नीर।
आजु सखी बसु भवन हमारैं, सहित दोउ रघुबीर।
बरष चतुर्दस भवन न पैठिहैं आज्ञा दीन्ही राइ।
इनके बचन सत्य करि सजनी बहुरि मिलैंगे आइ।
बिनती बिहँसि सरस मुख सुंदरि सिय सौं पूछी गाथ।
कौन बरन तुम देवर सखि री, कौन तिहारौ नाथ?
कटि तट पट पीतांबर काछे, धारे धनु-तूनीर।
गौर बरन मेरे देवर री सखि, पिय मम स्याम सरीर।
तीनि बने सोभा त्रिलोक की, छाँड़ि सबल पुरधाम।
सूरदास-प्रभु-रूप चकित भए, पंथ चलत नर बाम ॥१६७॥

काहि की सखी बटाऊ को हैं ?

अद्भुत बधू सिय सँग सोहत, देखत त्रिभुवन माहीं।
परम सुसील सुलच्छन जोरी बिधि की रची न होई।
काकी तिनकी उपमा दीजै, देह धरे धौं कोई।
इनमें को पति आहि तिहारे, पुरजनि पूछैं आइ।
राजिवनैन मैन की मूरति, नैननि दियौ बताइ।

गई सकल मिलि संग दूरि लौं, मन न फिरत पुर बास।
सूरदास स्वामी के बिछुरत, भरि भरि लेति उसाँस ॥१९८॥

रामहिं राखौ कोऊ जाइ।
जब लगि भरत अयोध्या आवैं, कहति कौसिल्या माइ।
पठवौ दूत भरत कौं ल्यावन, बचन कह्यौ बिलखाइ।
दसरथ बचन राम बन गवने, यह कहियौ अरथाइ।
आए भरत, दीन ह्वै बोले, कहा कियौ कैकइ माइ?
हम सेवक वै त्रिभुवन के पति, कत स्वान सिंह-बलि खाइ
आजु अयोध्या जल नहिं अँचवौं, मुख नहिं देखौं माइ।
सूरदास राघव बिछुरन तैं मरन भलौ दुख जाइ ॥१९९॥

तैं कैकई कुमंत्र कियौ।
अपने कर करि काल हँकारयौ, हठ करि नृप अपराध लियौ।
श्रीपति चलत रह्यौ कहि कैसैं तेरौ पाहन कठिन हियौ।
मो अपराधी के हित कारन, तैं रामहिं बनबास दियौ।
कौन काज यह राज हमारैं इहिं पावक परि कौन जियौ?
लोटत सूर धरनि दोउ बंधु, मनौ तपत बिष-बिषम पियौ ॥२००

राम जू कहाँ गए री माता?
सूनौ भवन, सिंहासन सूनौ, नाहीं दसरथ ताता।
धृग तब जन्म जियन धृग मेरौ, कही कपट मुख बाता।
सेवक राम भाव बन पठए यह कह लिखी बिधाता।
मुख अरबिंद देखि हम जीवत ज्यौं चकोर ससि राता।
सूरदास श्रीरामचंद्र बिनु कहा अयोध्या नाता ॥२०१॥

भरत-मुख निरखि राम बिलखाने।
मुँडित केस सीस, बिहबल दोउ उमँगि कंठ लपटाने।
तात-मरन सुनि स्रवन कृपानिधि धरनि परे मुरझाइ।
मोह मगन लोचन जल धारा, बिपति न हृदय समाइ।

लोटति धरनि परी सुनि सीता समुझति नहिं समुझाई।
दारुन दुख दवारि ज्यौं तृन-बन, नाहिंन बुझति बुझाई।
दुरलभ भयौ दरस दसरथ कौ, सो अपराध हमारे।
सूरदास स्वामी करुनामय नैन न जात उघारे ॥२०२॥

तुमहिं बिमुख रघुनाथ कौन बिधि जीवन कहा बनै।
चरन-सरोज बिना अवलोके, को सुख धरनि गनै।
हठ करि रहे, चरन नहिं छाँड़े नाथ तजौ निठुराई।
परम दुखी कौसल्या जननी, चलौ सदन रघुराई।
चौदह बरष तात की आज्ञा मोपै मेटि न जाई।
सूर स्वामि की पाँवरि सिर धरि, भरत चले बिलखाई ॥२०३

बंधु, करियौ राज सँभारे।
राजनीति अरु गुरु की सेवा गाइ-बिप्र प्रतिपारे।
कौसल्या कैकई सुमित्रा दरसन साँझ सवारे।
गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं परजा-हेतु बिचारे।
भरत गात सीतल ह्वै आयौ, नैन उमँगि जल ढारे।
सूरदास प्रभु दई पाँवरी अवधपुरी पग धारे ॥२०४॥

काम बिबस ब्याकुल-उर-अंतर, राच्छसि एक तहाँ चलि आई।
हँसि कहि कछू राम सीता सौं तिहिं लछिमन के निकट पठाई।
भृकुटी कुटिल अरुन अति लोचन अगिनि-सिखा-मुख कहौ फिराई
री बौरी, सठ भई मदन-बस मेरैं स्याम चरन रघुराई।
बिरह बिथा तन गई लाज छुटि, बारंबार उठै अकुलाई।
रघुपति कह्यौ निर्लज्ज निपट तू, मारि राच्छसी ह्याँ तें जाई।
सूरदास प्रभु इक पतिनीब्रत, काटी नाक गई खिसिआई ॥२०५॥

राम धनुष अरु सायक साँधे।
सिय हित मृग पाछैं उठि धाए, बलकल बसन, फेंट दृढ़ बाँधे।

नव घन, नील-सरोज बरन बपु बिपुल बाहु केहरि-कन्ध काँधे।
इंदु-बदन राजीव-नैन बर, सीस जटा सिव-सम सिर बाँधे।
पावन सुजस सहारत, मैंतन बाँह बनेक बवधि पग बाधे।
सूर भजन-महिमा विस्तारक्त, इमि बति सुगम बरन बाराधे।२०६

इहिं बिधि बन बसे रघुराइ।
बासि कै तृन भूमि सोवत द्रुमनि के फल खाइ।
जगत-जननी करी बाती मृगा बरि बरि बाइ।
कोपि कै प्रभु बान लीन्हौं, तबहिं धनुष चढ़ाइ।
जनक-तनया धरी अगिनि मैं, छाया-रूप बनाइ।
यह न कोऊ भेद जानै बिना श्री रघुराइ।
कह्यौ बनुज सौं रहौ ह्याँ तुम कोऊ बनि कहुँ बाइ।
कनक-मृग मारीच मार्यौ, गिरयौ लखन सुनाइ।
गयौ सौ दै रेख सीता कह्यौ सो कहि नहिं बाइ।
तबहिं निसिचर गयौ छल करि, लई सीय चुराइ।
गीध ताकौं देखि धायौ बर्यौ सूर बनाइ।
पंख काटैं गिर्यौ असुर तब गयौ लंका धाइ।।२०७।।

सीता पुहुप-बाटिका लाई।
बारंबार सराहत तरुवर प्रेम-सहित सींचे रघुराई।
बंकुर मूल भए सी पोपे क्रम-क्रम भरे फूल फल बाई।
नाना भाँति भाँति सुंदर बनी कंचन की है लता बनाई।
मृग-स्वरूप मारीच धरयौ तब फेरि बस्यौ वा रक यौ दिखाई।
श्रीरघुनाथ धनुष कर लीन्हौ, लागत बान देव-गति पाई।
■ लछिमन सुनि टेर जानकी, बिकल भई, आतुर उठि धाई।
रेखा खैंचि बारि बंधन भय, हा रघुबीर कहाँ ही भाई।
रावन तुरत बिभूति लगाए, कहत बाइ भिच्छा दै माई।
दीन जानि सुधि बामि भजन की, प्रेम सहित भिच्छा लै आई।

हरि सीता सों पत्री हरत सिय, मानौ रंक महानिधि पाई।
सूर सीय पहिरावति यहै कहि, करम-रेख मेटी नहिं जाई ॥२०८॥

सुनौ अनुज इहिं बन इतननि मिलि जानकी प्रिया हरी।
कछु इक अंगनि की सहिदानी मेरी दृष्टि परी।
कटि केहरि, कोकिल कल बानी ससि मुख प्रभा धरी।
मृग मूसी नैननि की सोभा जाति न गुप्त करी।
चंपक-बरन, चरन-कर कमलनि, दाड़िम दसन लरी।
गति मराल अरु बिंब अधर-छवि अहि अनूप कबरी।
अति करुना रघुनाथ गुसाईं, जुग ज्यौं जाति घरी।
सूरदास प्रभु प्रिया प्रेम-बस, निज महिमा बिसरी ॥२०९॥

फिरत प्रभू पूछत बन-द्रुम-बेली।
अहो बंधु, काहूँ अवलोकी इहिं मग बधू अकेली ?
अहो बिहंग पन्नग-नृप, या कंदर के राइ !
अबकैं मेरी बिपति मिटावौ जानकि देहु बताइ।
चंपक-पुहुप-बरन-तन-सुंदर, मनौ चित्र अवरेखी।
हो रघुनाथ निसाचर कैं सँग अबै जात हौं देखी।
यह सुनि धावत धरनि चरन की प्रतिमा पथ मैं पाई।
नैन-नीर रघुनाथ सानि सो सिव ज्यौं गात चढ़ाई।
कहुँ हिय हार, कहूँ कर कंकन कहुँ नूपुर कहुँ चीर।
सूरदास बन-बन अवलोकत, बिलखत बदन रघुबीर ॥२१०॥

तुम लछिमन या कुंज-कुटी मैं देखौ जाइ निहारि।
कोउ इक जीव नाम मम लै-लै उठत पुकारि-पुकारि।
इतनी कहत कंध तैं कर गहि लाम्हौ धनुष सँभारि।
कृपानिधान नाम हित धाए, अपनी बिपति बिसारि।
अहो बिहंग, कहौ अपनौ दुख, पूछत ताहि खरारि।
किहिं मतिमूढ़ हत्यौ तनु तेरौ, किधौं बिछोही मारि ?

सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोरयौ निमिष मांहीं।
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं।
जिन रघुनाथ-हाथ खर-दूषन प्रान हरे सरहीं।
कै रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ जोगिनि दसा गही।
कै रघुनाथ दुखित कानन तैं कै नृप भए रघुकुलहीं।
कै रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकंधर डरहीं।
छाँड़ी नारि बिचारि पवन सुत लंक बाग बसहीं।
कै हौं कुटिल कुचील कुलच्छनि, तजी कंत तबहीं।
सूरदास स्वामी सौं कहियौ अब बिरमाहिं नहीं ॥२१९॥

यह गति देखे जात, सँदेसौ कैसैं कै जु कहौं ?
सुनु कपि अपने प्रान कौ पहरौ, कब लगि देति रहौं ?
ए अति चपल चल्यौ चाहत हैं करत न कछू बिचार।
कहि धौं प्रान कहाँ लौं राखौं रोकि देह दुख द्वार ?
इतनी बात जनावति तुमसौं, सकुचति हौं हनुमंत।
नाहीं सूर सुन्यौ दुख कबहूँ प्रभु करुनामय कंत ! ॥२२०॥

मैं परदेसिनि नारि अकेली।
बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु पिता न सहेली।
रावन भेष धरयौ तपसी कौ, कत मैं भिच्छा मेली।
अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी राम रेख पग पेली।
बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसैं दव द्रुम-बेली।
सूरदास प्रभु बेगि मिलावौ प्रान जात हैं खेली ॥२२१॥

तू जननी जब दुख जनि मानहि।
रामचंद्र नहिं दूरि कहूँ पुनि सूझिहु चित चिंता नहिं आनहि।
अबहिं मिलाइ आउँ सब रिपु हति करषत ही आज्ञा-परमानहि।
राख्यौ सुजस मँवारि सान पै कैसैं निफल कहौ या पानहिं ?

हैं कोटिक ये तिमिर निसाचर उदित एक रघुकुल के भानहिं।
काटन दै दस सीस बीस भुज अपनौ कृत येउ जो भानहिं।
देहिं दरस सुभ नैननि कहुँ प्रभु रिपु कौं नासि सहित संतानहिं।
सूर सपथ मोहिं इनहिं बिननि मैं लै जु आइहौं कृपानिधानहिं ॥२२२

मंत्रिनि नीकौ मंत्र बिचारयौ

रावन कह्यौ दूत काहू कौ कौन नृपति है मारयौ ?
इतनी सुनत बिभीषन बोले बंधु पाइ परौ।
यह अनरीति सुनी नहिं स्रवननि, अब नई कहा करौ ?
हरी बिधाता बुद्धि सबनि की, अति आतुर ह्वै आप।
सन अरु सूत चीर-पाटंबर लै लंगूर बँधाए।
तेल तूल पावक पुट भरि कै देखन चहैं जरौ।
कपि मन कह्यौ, भली मति दीनी रघुपति-काज करौ।
बंधन तोरि मोरि मुख असुरनि ज्वाला प्रगट करी।
रघुपति चरन प्रताप सूर तब, लंका सकल जरी ॥२२३॥

सोचि हिय पवन-पूत पछिताइ।
अगम अपार सिंधु दुस्तर तरि, कहा कियौ मैं आइ ?
सेवक कौ सेवापन यहौ आज्ञाकारी होइ।
बिन आज्ञा मैं भवन पजारे अपजस करिहै कोइ।
वै रघुनाथ चतुर कहियत हैं, अंतरजामी सोइ।
या भयभीत देखि लंका मैं सीय जरी मति होइ।
इतनी कहत गगनबानी भई हनू सोच कत करई ?
चिरंजीवि सीता तरुवर तर, अटल न कबहूँ टरई।
फिरि अवलोकि सूर सुख लीजै, पुहुमी रोम न परई।
जाकैं हिय अंतर रघुनंदन, सो क्यौं पावक जरई ॥२२४॥

मेरी कैसी बिनती करनी

पहिलैं करि परनाम, पाइनि परि, मनि रघुनाथ हाथ लै धरनी।

श्री रघुनाथ रमनि जग-जननी जनक-नरेस कुमारि।
ताकौ हरन कियौ दसकंधर हौं तिहिं लाग्यौ गुहारि।
इतनी सुनि कृपालु कोमल प्रभु दियौ धनुष कर डारि।
मानौ सूर प्रान सौ रावन गयौ देह कौ झारि ॥२११॥

मिले हनु पूछी प्रभु यह बात।
महा मधुर प्रिय बानी बोलत साखामृग तुम किहिं के तात ?
अंजनि कौ सुत केसरि कै कुल पवन गवन उपजायौ गात।
तुम को बीर, नीर भरि लोचन, मीन हीन-जल ज्यौं मुरझात ?
दसरथ-सुत कोसलपुर-बासी, त्रिया हरी तातैं अकुलात।
इहिं गिरि पर कपिपति सुनियत है, बालि त्रास कैसैं दिन जात !
महाहीन, बलहीन बिकल अति पवन-पूत देखे बिललात।
सूर सुनत सुग्रीव चले उठि, चरन गहे पूछी कुसलात ॥२१२॥

बिछुरी मनौ संग तैं हिरनी।
चितवत रहत चकित चारौं दिसि, उपजी बिरह तन जरनी।
तरुवर-मूल अकेली ठाढ़ी, दुखित राम की घरनी।
बसन कुचील, चिहुर लपटाने, बिपति जाति नहिं बरनी।
लेति उसाँस नयन जल भरि-भरि, धुकि सो परै धरि धरनी।
सूर सोच जिय पोच निसाचर, राम नाम का सरनी ॥२१३॥

सो दिन त्रिजटी, कहु कब ऐहै ?
जा दिन चरनकमल रघुपति के हरषि जानकी हृदय लगैहै।
कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा माइ-माइ कहि मोहिं सुनैहै।
कबहुँक कृपावंत कौसिल्या बधू-बधू कहि मोहिं बुलैहै।
जा दिन कंचनपुर प्रभु ऐहैं बिमल ध्वजा रथ पर फहरैहैं।
ता दिन जनम सफल करि मानौं। मेरी हृदय-कालिमा जैहै।
जा दिन राम रावनहिं मारैं ईसहिं लै दस सीस चढ़ैहैं।
ता दिन सूर राम पै सीता सरबस वारि बधाई दैहै ॥२१४॥

मैं तो राम चरन चित दीन्हौं।
मनसा वाचा और कर्मना बहुरि मिलन की आगम कीन्हौं।
डुलै सुमेरु सेष-सिर कंपै पच्छिम उदै करै वासर-पति।
सुनि त्रिजटी तौहूँ नहिं छाँड़ौं मधुर मूर्ति रघुनाथ-गात-रति।
सीता करति बिचार मनहिं मन आजु काल्हि कौसलपति आवैं।
सूरदास स्वामी करुनामय सो कृपालु मोहिं क्यौं बिसरावैं॥२१५॥

जननी हौं अनुचर रघुपति कौ।
मति माता करि कोप सरापै, नहिं दानव ठग मति कौ।
आज्ञा होइ देउँ कर-मुँदरी कहौं सँदेसौ पति कौ।
मति हिय बिलख करौ सिय रघुबर हतिहैं कुल दैत्यन कौ।
कहौ तौ लंक उखारि डारि देउँ, जहाँ पिता संपति कौ।
कहौ तौ मारि-सँहारि निसाचर, रावन करौं अगति कौ।
सागर-तीर भीर बनचर की, देखि कटक रघुपति कौ।
अबै मिलाऊँ तुम्हैं सूर प्रभु राम-रोष डर अति कौ॥२१६॥

तुम्हैं पहिचानति नाहीं बीर।
इन नैननि कबहूँ नहिं देख्यौ, रामचंद्र के तीर।
लंका बसत दैत्य अरु दानव उनके अगम सरीर।
तोहिं देखि मेरौ जिय डरपत, नैननि आवत नीर।
तब करि काढ़ि अँगूठी दीन्ही, जिहिं जिय उपज्यौ धीर।
सूरदास प्रभु लंका कारन, आए सागर-तीर॥२१ ॥

बनचर, कौन देस तैं आयौ?
कहाँ वै राम कहाँ वै लछिमन क्यौं करि मुद्रा पायौ?
हौं हनुमंत राम कौ सेवक तुम सुधि लैन पठायौ।
रावन मारि तुम्हैं लै जातौ रामाज्ञा नहिं पायौ।
तुम जनि डरपौ मेरी माता, राम जोरि दल ल्यायौ।
सूरदास रावन कुल-खोवन सोवत सिंह जगायौ॥२१८॥

सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोरयौ निमिष माहीं।
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं।
जिन रघुनाथ-हाथ खर-दूषन प्रान हरे सरहीं।
के रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ, जोगिनि दसा गही।
के रघुनाथ दुखित कानन तैं के नृप भए रघुकुलहीं।
कै रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकंधर डरहीं।
छाँड़ी मारि बिचारि पवन सुत लंक बाग बसहीं।
कै हौं कुटिल, कुचील, कुलच्छनि तजी कंत तबहीं।
सूरदास स्वामी सौं कहियौ अब बिरमाहिं नहीं ॥२१६॥

यह गति देखी जात, सँदेसौ कैसैं कै जु कहीं ?
सुनु कपि अपने प्रान कौ पहरौ कब लगि देति रहीं ?
ये अति चपल चल्यौ चाहत हैं करत न कछू बिचार।
कहि धौं प्रान कहाँ लौ राखौं रोकि देह दुख द्वार ?
इतनी बात जनावति तुमसौं, सकुचति हौं हनुमंत।
नाहीं सूर सुन्यौ दुख कबहूँ प्रभु करुनामय कंत ! ॥२२०॥

मैं परदेसिनि नारि अकेली।
बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु पिता न सहेली।
रावन भेष धरयौ तपसी कौ कत मैं भिच्छा मेली।
अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी राम रेख पग पेली।
बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसैं दव द्रुम-बेली।
सूरदास प्रभु बेगि मिलावौ, प्रान जात हैं खेली ॥२२१॥

तू जननी जिय दुख जनि मानहि।
रामचंद्र नहिं दूरि कहूँ पुनि भूमिहु चित चिंता नहिं आनहि।
अबहिं मिलाइ जाउँ सब रिपु हति करपत ही आज्ञा-अपमानहि।
राख्यौ सुजस सँवारि तात दै कैसैं निफल करौं वा पानहि ?

है केतिक यं तिमिर निसाचर उदित एक रघुकुल के मानहिं।
कानन दै दस सीस बीस भुज अपनी कुल येरु ओ जानहिं।
बैठि बरस सुभ नैननि कहुँ प्रभु रिपु को नामि सहित संतानहिं।
सूर सपथ मोहिं इनहि दिननि मैं लै जु आवहौं कृपानिधानहिं २२२

मंत्रिनि नीकौ मंत्र बिचार्यौ
राजन कहौ, दूत काहू कौ कौन नृपति है मार्यौ ?
इतनी सुनत बिभीषन बोले, बंधू पाइ परौ।
यह अनरीति सुनी नहिं स्रवननि अब नई कहा करौ ?
हरी बिधाता बुद्धि सबनि की, अति आतुर ह्वै पाप।
सन अरु सूत चीर पाटंबर लै लंगूर बँधाए।
तेल तूल पावक पुट भरिकै, देखन कहैं जरौ।
कपि मन कह्यौ, भली मति दीनी रघुपति-काज करौ।
कंचन कोटि कोटि मुख असुरनि ज्वाला प्रगट करी।
रघुपति चरन प्रताप सूर तब, लंका सकल जरी ॥२२३॥

सोचि जिय पवन-पूत पछिताइ।
अगम अपार सिंधु दुस्तर तरि कहा कियौ मैं आइ ?
सेवक को सेवापन एती आज्ञाकारी होइ।
बिन आज्ञा मैं भवन पजारे अपजस करिहै लोइ।
वे रघुनाथ चतुर कहियत हैं, अंतरजामी सोइ।
या भयभीत देखि लंका मैं सीय जरी मति होइ।
इतनी कहत गगनबानी भई हनू सोच कत करई ?
चिरंजीवि सीता तरुवर तर, अटल न कबहूँ टरई।
फिरि अवलोकि सूर सुख कीजै पुहुमी रोम न परई।
जाके हिय अंतर रघुनंदन सो क्यौं पावक जरई ॥२२४॥

मेरी कैंती बिनती करनी
पहिलैं करि परनाम पाइनि परि भनि रघुनाथ हाथ लै धरनी।

मंदाकिनि-तट फटिक-सिला पर, मुख-मुख जोरि तिलक की करनी।
कहा कहौं, कछु कहत न आवै सुमिरत प्रीति होइ उर भरनी।
तुम हनुमंत पवित्र पवन-सुत कहियौ जाइ जोइ मैं बरनी।
सूरदास प्रभु आनि मिलावहु मूरति दुसह दुःख-भय-हरनी।।१२५।

कैसैं पुरी जरी कपिराइ।
बड़े दैत्य कैसैं कै मारे, औसर आप बचाइ ?
प्रगट कपाट बिकट दीन्हे हे बहु जोधा रखवारे।
तेंतिस कोटि देव बस कीन्हे ते तुमसौं क्यौं हारे ?
तीन लोक डर जाकैं काँपैं, तुम हनुमान न ऐसे ?
तुम्हरैं कोप श्राप सीता कैं, दूरि करत हम देखे।
हौं जगदीस कहा कहौं तुमसौं, तुम बल-तेज मुरारी।
सूरजदास सुनौ सब संतौ अबिगत की गति न्यारी।।१२६।।

जौ प्रभु जू की आयसु पाऊँ।
अबहीं जाइ उपारि लंक गढ़, उदधि-पार लै आऊँ।
अबहीं लंक द्वीप यहाँ तें लै लंका पहुँचाऊँ।
सोखि समुद्र उतारौं कपि-दल छिनक बिलंब न लाऊँ।
अब आवैं रघुबीर जोति दल तौ हनुमंत कहाऊँ।
सूरदास सुभ पुरी अजोध्या, राघव सुबस बसाऊँ।।१२७।।

रघुपति बेगि जतन अब कीजै।
बाँधै सिंधु सकल सैना मिलि आपुन आयसु दीजै।
तब लौं तुरत एक तौ बाँधौं, द्रुम-पाषाननि छाइ।
द्वितीय सिंधु सिय-नैन-नीर ह्वै, जब लौं मिलै न आइ।
यह बिनती हौं करौं कृपानिधि बार बार अकुलाइ।
सूरजदास अकाल प्रलय प्रभु मेटौ दरस दिखाइ।।१२८।।

तब ही नगर अजोध्या जैहौं।
एक बात सुनि निस्चय मेरी राज बिभीषण दैहौं।

कपि-दल जोरि और मग सेना, सागर-सेतु बँधैहौं।
काटि दसौं सिर, बीस भुजा तब दसरथ-सुत जु कहैहौं।
छिन इक माहिं लंक गढ़ तोरौं, कंचन-कोट ढहैहौं।
सूरदास प्रभु कहत बिभीषन, रिपु हति सीता लैहौं ॥२२१॥

काहे कैं परतिय हरि आनी ?
यह सीता जो जनक की कन्या रमा आपु रघुनंदन-रानी।
रावन ! मुग्ध करम कौ हीनी, जनक-सुता तैं तिय करि मानी !
जिनकैं क्रोध पुहुमि नभ पलटैं, सूखैं सकल सिंधु कर पानी।
मूरख सुख निद्रा नहिं आवै, लैहैं लंक बीस भुज मानी।
सूर न मिटै भाल की रेखा अल्प मृत्यु तुव आइ तुलानी ॥२२०॥

रे पिय लंका बनचर आयौ।
करि परपंच हरी तैं सीता कंचन कोट ढहायौ।
तब तैं मूढ़ मरम नहिं जान्यौ, जब मैं कहि समुझायौ।
बेगि न मिलो जानकी लै कै, रामचंद्र चढ़ि आयौ।
ऊँचा धुजा देखि रथ ऊपर, लछिमन धनुष चढ़ायौ।
गहि पद सूरदास कहै भामिनि राज बिभीषन पायौ ॥ ३१॥

सिंधु-तट उतरे राम उदार।
रोष बिषम कीन्हौ रघुनंदन, सिय की बिपति बिचार।
सागर पर गिरि गिरि पर अंबर कपि घन के आकार।
गरज-किलक आघात उठत मनु दामिनि पावक झार।
परत फिराइ पयोनिधि भीतर, सरिता उलटि बहाई।
मनु रघुपति भयभीत सिंधु पत्नी ल्यौसार पठाई।
बाला बिरह दुसह सबही कौं जानी राजकुमार।
बानवृष्टि, स्रोनित करि सरिता, ब्यापत लगी न बार।
सुबरन लंक-बसन आभूषन मनि-मुक्ता-गन हार।
सेतु-बंधु करि [illegible]

मूरख रघुपति-सत्रु कहावत ?
जाके नाम, ध्यान, सुमिरन तैं कोटि जज्ञ-फल पावत।
नारदादि सनकादि महामुनि सुमिरत मन-बच ध्यावत।
असुर तिलक प्रह्लाद भक्तवर, निगम नेति जस गावत।
जाकी घरनि हरी छल-बल करि लायौ बिलँब न लावत।
दस अरु आठ पदुम बनचर लै लीला सिंधु बँधावत।
जाइ मिलौ कौसल नरेस कौं मन अभिलाष बढ़ावत।
दै सीता अवधेस पाइँ परि रहु लंकेस कहावत।
तू मूरख दससीस बीस भुज मोहिं गुमान दिखावत।
कंध उपारि डारिहै भूतल, सूर सकल सुख पावत ॥१३३॥

रे कपि क्यौं पितु-बैर बिसारयौ ?
तौ समतुल कन्या जिन जनमी, जो कुल-सत्रु न मारयौ!
ऐसौ सुभट नहीं महिमंडल देख्यौ बालि-समान।
तासौं बैर कियौ मैं हारयौ कीन्ही पैज प्रमान।
ताकौ बध कीन्हौ इहिं रघुपति, तुम देखत बिदमान।
ताकौ मरन रही क्यौं भावै, सत्य न सुनिये कान।
"रे दसकंध, अंध-मति, मूरख क्यौं भूल्यौ इहिं रूप ?
सूझत नहीं बीसहूँ लोचन परयौ तिमिर कैं कूप!
धन्य पिता आपर परफुल्लित राघव भुजा अनूप।
जा प्रताप की मधुर बिलोकनि पर वारौं सब भूप"।
"जौ तोहिं नाहिं बाहु बल-पौरुष, अर्ध राज देउँ लंक।
मौ समेत ए सकल निसाचर अरत न मानैं संक।
अब रथ साजि चढ़ौ रन सन्मुख जीय न आनौ संक।
राघव सैन समेत सँहारौ, करौं रुधिरमय पंक"।
"श्रीरघुनाथ चरन-मन उर धरि क्यौं नहिं लागत पाइ ?
सबके ईस परम करुनामय, सबही कौं सुखदाइ।

हौं जु कहत, सो चली जानकी औंधी सबै निदान।
सनमुख होइ सूर के स्वामी, भक्तनि कृपा निधान' ॥१३४॥

लंकपति इंद्रजित कौं बुलायौ।
कह्यौ तिहिं जाइ रनभूमि दल साजि कै, कहा भयौ राम कपि जोरि ल्यायौ।
कोपि अंगद कह्यौ धर्यौ धर चरन मैं नाहिं जो सकै कोऊ उठाई।
तौ बिना जुद्ध किये जाहिं रघुबीर फिरि सुनत यह उठे जोधा रिसाइ।
रह पचि हारि, नहिं टारि काऊ सक्यौ, उठ्यौ तब आपु रावन खिस्याइ।
कह्यौ अंगद कहा मम चरन कौं गहत, चरन रघुबीर गहि क्यौं न जाइ।
सुनत यह सकुचि कियौ गवन निज भवन कौं, बालि-सुतहू तहाँ तैं सिधायौ।
सूर के प्रभू कौ नाइ सिर यौं कह्यौ बंध दसकंध कौ काल आयौ ॥१३५॥

रघुपति जौ न इंद्रजित मारौं।
तौ न होउँ चरननि कौ चेरौ जौ न प्रतिज्ञा पारौं।
यह दृढ़ बात जानियै प्रभु जू, एकहिं बान निवारौं।
सपथ राम परताप तिहारैं खंड खंड करि डारौं!
कुंभकरन दससीस बीसभुज दानव-दलहिं बिदारौं।
तबै सूर संधान सफल हौं रिपु कौ सीस उतारौं ॥१३६॥

मेघनाद ब्रह्मा बर पायौ।
आहुति अगिनि जिवाइ संतोषी, निकस्यौ रथ बहु रतन बनायौ।
आयुध धरे समस्त कवच सजि, गरजि चढ़्यौ रन-भूमिहिं आयौ।
मनौ मेघनायक रितु पावस बान-वृष्टि करि सैन कँपायौ।

कीन्हौ कोप कुँवर कौसलपति, पंथ अकास सायकनि छायौ।
हँसि-हँसि नाग-फाँस सर साँधत, बंधु-समेत बँधायौ।
नारद स्वामी कह्यौ निकट ह्वै गरुड़ासन काहैं बिसरायौ?
भयौ तोष दसरथ के सुत कौं सुनि नारद कौ ज्ञान सम्हायौ।
सुमिरन ध्यान आनि कै अपनौ नाग फाँस तैं सेन छुड़ायौ।
सूर बिमान चढ़े सुरपुर सौं आनँद अभय-निसान बजायौ ॥२३७

रावन अरयौ गुमान भरयौ।
श्रीरघुनाथ अनाथबंधु सौं सनमुख खेत लर्‍यौ।
कोप करयौ रघुबीर धीर तब, लछिमन पाइ परयौ।
तुम्हरैं तेज प्रताप नाथ जू, मैं कर धनुष धरयौ।
सारथि सहित अस्व बहु मारे, रावन कोप भरयौ।
इंद्रजीत लीन्हौ तब सक्ती, देवनि हहा करयौ।
छूटी बिज्जु-रासि वह मानौ, भूतल बंधु परयौ।
करुना करत सूर कौसलपति नैननि नीर ढरयौ ॥२३८॥

निरखि मुख राघव धरत न धीर।
भए अति अरुन बिसाल कमल-दल-लोचन मोचन नीर।
बारह बरष नींद है साधी तातैं बिकल सरीर।
बोलत नहीं मौन कहा साध्यौ बिपति-बँटावन बीर।
दसरथ-मरन हरन सीता कौ रन बैरिनि की भीर।
दूजौ सूर सुमित्रा-सुत बिनु, कौन धरावै धीर? ॥२३९॥

अब हौं कौन कौ मुख हेरौं?
रिपु-सैना-समूह जल उमड्यौ काहि संग लै फेरौं?
दुख-समुद्र जिहिं वार-पार नहिं तामैं नाव चलाई।
केवट थक्यौ रही अधबीचहिं कौन आपदा आइ?
नाही भरत-सत्रुघन सुंदर जिनसौं चित्त लगायौ।
सोपहिं भई बीर की औरैं भयौ सत्रु कौ भायौ।

मैं निज प्रान तजौंगौ सुनि कपि तजिहि जानकी सुनिकै।
ह्वै है कहा बिभीषन की गति यहै सोच जिय गुनि कै।
बार बार सिर लै लछिमन कौ, निरखि गोद पर राखै।
सूरदास प्रभु दीन बचन यौं हनूमान सौं भाखै ॥१५०॥

कहाँ गयौ मारुत पुत्र कुमार।
ह्वै अनाथ रघुनाथ पुकारे, संकट मित्र हमार।
इतनी बिपति भरत सुनि पावैं आवैं साजि बरूथ।
कर गहि धनुष जगत कौं जीतैं कितिक निसाचर जूथ।
नाहिंन और बियौ कोउ समरथ जाहि पठावौं दूत।
को अब है पौरुष दिखरावै बिना पौन के पूत ?
इतनौ बचन स्रवन सुनि हरष्यौ फूल्यौ अंग न मात।
लै-लै चरन रेनु निज प्रभु की रिपु कैं स्रोनित न्हात।
अहो पुनीत मीत केसरि सुत तुम हित बंधु हमारे।
जिह्वा रोम-रोम प्रति नाहीं पौरुष गनौं तुम्हारे।
जहाँ जहाँ जिहिं काल सँभारे तहँ-तहँ त्रास निवारे।
सूर सहाइ कियौ बन बसि कै, बन बिपदा दुख टारे ॥१५१॥

रघुपति मन संदेह न कीजै।
मो देखत लछिमन क्यों मरिहैं मोकौं आज्ञा दीजै।
कहौ तौ सूरज उगन देउँ नहिं, दिसि दिसि बाढ़ै ताम।
कहौ तौ गन समेत ग्रसि खाऊँ, जमपुर जाइ न राम।
कहौ तौ कालहिं खंड-खंड करि टूक टूक करि काटौं।
कहौ तौ मृत्युहिं मारि डारि कै खोदि पतालहिं पाटौं।
कहौ तौ चंद्रहिं लै अकास तैं लछिमन मुखहिं निचोरौं।
कहौ तौ पैठि सुधा के सागर जल समस्त मैं घोरौं।
स रघुबीर, सौंसौ जस आवैं, ताहि करौं सँहराई।
सूरदास मिथ्या नहिं भाषत, मोहिं रघुनाथ-दुहाई ॥ ४ ॥

कही कपि रघुपति कौ संदेस।
कुसल बंधु लछिमन, बैदेही, श्रीपति सकल-नरेस।
जनि पूछौ तुम कुसल नाथ की, सुनौ भरत बलबीर।
बिलख-बदन दुख भरे सिया के, हैं जलनिधि कैं तीर।
बन मैं बसत निसाचर छल करि हरी सिया मम मात।
ता कारन लछिमन सर लाग्यौ भए राम बिनु भ्रात।
यह सुनि कौसिल्या सिर ढोरयौ सबनि पुहुमि तन जोयौ।
त्राहि त्राहि करि पुत्र-पुत्र कहि, मातु सुमित्रा रोयौ।
धन्य सुपुत्र पिता पन राख्यौ धनि सुबंधु कुल लाज।
सेवक धन्य अंत अवसर जो आवै प्रभु कैं काज।
पुनि धरि धीर कह्यौ धनि लछिमन राम काज जो आवै।
सूर जियै तौ जग जस पावै, मरि सुरलोक सिधावै ॥२४३॥

धनि जननी जो सुभटहिं जावै।
भीर परैं रिपु कौ दल दलि-मलि कौतुक करि दिखरावै।
कौसिल्या सौं कहति सुमित्रा जनि स्वामिनि दुख पावै।
लछिमन जनि हौं भई सपूती, राम काज जो आवै।
जीवै तौ सुख बिलसै जग मैं कीरति लोकनि गावै।
मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै।
लोह गहैं लालच करि जिय कौ औरौ सुभट लजावै।
सूरदास प्रभु जीति सत्रु कौं कुसल-छेम घर आवै ॥२४४॥

सुनौ कपि कौसिल्या की बात।
इहिं पुर जनि आवहिं मम बत्सल बिनु लछिमन लघु भ्रात।
छाँड़यौ राज-काज माता-हित तुव चरननि चित लाइ।
ताहि बिमुख जीवन धिक रघुपति, कहियौ कपि समुझाइ।
लछिमन सहित कुसल बैदेही आनि राज पुर कीजै।
नातरु सूर सुमित्रा-सुत पर वारि अपुनपौ दीजै ॥२४५॥

बिनती कहियौ जाइ पवनसुत तुम रघुपति के आगे।
या पुर जनि आवहु बिनु लछिमन जननी लाजनि भागे।
मारुतसुतहिं सँदेस सुमित्रा ऐसे कहि समुझाये।
सेवक जूझि परै रन भीतर ठाकुर तउ घर आवै।
जब तैं तुम गवने कानन कौं भरत भोग सब छाँड़े।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु दुख समूह उर गाड़े ॥१४६॥

दूसरैं कर बान न लैहौं।
सुनि सुग्रीव प्रतिज्ञा मेरी एकहिं बान असुर सब हैहौं।
सिव-पूजा जिहिं भाँति करी है सोइ पद्धति परतच्छ दिखैहौं।
दैत्य प्रहारि पाप फल प्रेरित सिर माला सिव-सीस चढ़ैहौं।
मनौ तूल-गन परत अगिनि मुख जारि जड़नि जम-पंथ पठैहौं।
करिहौं नाहिं बिलंब कछू अब उठि रावन सन्मुख ह्वै धैहौं।
इमि दमि दुष्ट दैत्य द्विज मोचन लंक बिभीषन तुमकौं दैहौं।
लछिमन सिया समेत सूर कपि सब सुख सहित अजोध्या जैहौं।

रघुपति अपनौ प्रन प्रतिपारयौ।
तोरयौ कोपि प्रबल गढ़ रावन टूक-टूक करि डारयौ।
कहुँ भुज कहुँ धर कहुँ सिर लोटत मानौ मद-मतवारौ।
भभकत तरफत स्रोनित मैं तन नाहीं परत निहारौ।
डोरे बीर सकल सुख-सागर कोपि उदधि भ्रम भारौ।
सुर-नर-मुनि सब सुजस बखानत दुष्ट दसासन मारौ।
हरषत बरुन कुबेर इंद्र-जम महा सुभट पन धारौ।
रह्यौ मांस कौ पिंड प्रान लै गयौ बान अनियारौ।
सब मद पी रहे पाटी-तर कुटिल काम उभारौ।
सो रावन रघुनाथ छिनक मैं कियौ गीध कौ चारौ।
सिर सँभारि लै गयौ उमापति, रह्यौ रुधिर कौ गारौ।
दियौ बिभीषन राज सूर प्रभु कियौ सुरनि निस्तारौ ॥१४८॥

लछिमन सीता देखी आइ।
अति कृस दीन छीन तन प्रभु बिन, नैननि नीर बहाइ।
जामवंत सुग्रीव बिभीषन करी दंडवत आइ।
आभूषन बहुमोल पटंबर पहिरी मातु बनाइ।
बिनु रघुनाथ मोहिं सब फीके, आज्ञा मेटि न जाइ।
पुहुप बिमान बैठी बैदेही त्रिजटी सब पहिराइ।
देखत दरस राम मुख मोरयौ सिया परी मुरझाइ।
सूरदास स्वामी तिहुँ पुर के जग उपहास डराइ॥ ४६॥

लछिमन, रचौ हुतासन भाई।
यह सुनि हनूमान दुख पायौ मोपै लख्यौ न जाई।
आसन एक हुतासन बैठे ज्यौं कुंदन अरुनाई।
जैसैं रवि इक पल घन भीतर बिनु मारुत दुरि जाई।
लै उछंग उपसंग हुतासन निहकलंक रघुराई।'
लई बिमान चढ़ाइ जानकी कोटि मदन छबि छाई।
दसरथ कह्यौ देखु आयौ ब्योम बिमान दिखाई।
सिया राम लै चले अवध कौं सूरदास बलि जाई॥२२०॥

बैठी जननि करति सगुनौती।
लछिमन राम मिलैं अब मोकौं दोउ अमोलक मोती।
इतनी कहत सुकाग उहाँ तैं हरी डार उड़ि बैठ्यौ।
अंचल गाँठि दई, दुख भाज्यौ सुख जु आनि उर पैठ्यौ।
जब लौं हौं जीवौं जीवन भर, सदा नाम तव जपिहौं।
दधि ओदन दौना भरि देहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं।
अबकैं जौ परचौ करि पावौं अरु देखौं भरि आँखि।
सूरदास सोनें कैं पानी मढ़ौं चोंच अरु पाँखि॥२२१॥

हमारी जन्मभूमि यह गाउँ।
सुनहु सखा सुग्रीव-बिभीषन अवनि अजोध्या नाउँ।

देखत बन-उपबन-सरिता-सर, परम मनोहर ठाउँ।
अपनी प्रकृति लिए बोलत हौं सुरपुर[१] में न रहाउँ।
ह्याँ के बासी अवलोकत हौं, आनँद उर न समाउँ।
सूरदास जौ बिधि न सँकोचै तौ बैकुंठ न जाउँ ॥२५२॥

देखौ कपिराज भरत वै आए।
मम पाँवरी सीस पर जाकैं, कर अँगुरी रघुनाथ बताए।
छीन सरीर बीर के बिछुरैं, राज-भोग चित तैं बिसराए।
तप अरु लघु-दीरघता सेवा, स्वामि-धर्म सब जगहिं सिखाए।
पुहुप बिमान दूरिहीं छाँड़े, चपल चरन आवत प्रभु धाए।
आनँद-मगन पगनि कैकइ-सुत कनक-दंड ज्यौं गिरत उठाए।
भेंटत आँसू परे पीठि पर, बिरह अगिनि मनु जरत बुझाए।
ऐसैंहिं मिले सुमित्रा-सुत कौं, गदगद गिरा नैन जल छाए।
जथाजोग भेंटे पुरबासी, गए सूल, सुख सिंधु नहाए।
सिया-राम-लछिमन मुख निरखत सूरदास के नैन सिराए ॥२५३॥

अति सुख कौसिल्या उठि धाई।
उदित बदन मन मुदित सदन तैं, आरति साजि सुमित्रा ल्याई।
जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु, परबस, पसुपति की बहराई।
चली साँझ समुहाइ स्रवत थन उमँगि मिलन जननी दोउ आई।
दधि-फल-दूब कनक-कोपर भरि, साजत सौंज बिचित्र बनाई।
अमी-बचन सुनि होत कुलाहल देवनि दिवि दुंदुभी बजाई।
बरन बरन पट परत पाँवड़े, बीथिनि सकल सुगंध सिंचाई।
पुलकित रोम, हरष-गदगद-स्वर, जुवतिनि मंगल-गाथा गाई।
निज मंदिर मैं आनि तिलक दै, द्विज-गन मुदित असीस सुनाई।
सिया-सहित सुख बसौ इहाँ तुम, सूरदास नित उठि बलि जाई।

देखन कौं मंदिर आनि चढ़ी।
रघुपति-पूरनचंद बिलोकत मनु पुर-जलधि-तरंग बढ़ी।

प्रिय-दरसन-प्यासी अति आतुर, निसि बासर गुन-ग्राम रटी ।
रही न लोक-लाज मुख निरखत सीस नाइ आसीस पढ़ी ।
मई देह को मोह करम-बस जमु तट गंगा अनल डढ़ी ।
सूरदास प्रभु दृष्टि सुधानिधि मानौ फेरि बनाइ गढ़ी ।।१५५।।

मनिमय आसन आनि धरे ।
दधि मधु-नीर कनक के कोपर आपुन भरत भरे ।
प्रथम भरत बैठाइ बंधु कौं यह कहि पाइ परे ।
हौं पापी प्रभु-पाइ पखारन रुचि करि सो पकरे ।
निज कर चरन पखारि प्रेम-रस आनँद आँसु ढरे ।
अनु सीतल सौं गात सलिल दै सुमित्र समोइ धरे ।
परसत पानि चरन पावन दुख अँग-अँग सकल हरे ।
सूर सहित आमोद चरन-जल लै करि सीस धरे ।।१५६।।

बिनती किहिं बिधि प्रभुहिं सुनाऊँ ।
महाराज रघुबीर धीर कौ समय न कबहूँ पाऊँ ।
जाम रहत जामिनि के बीतें, तिहिं औसर उठि धाऊँ ।
सकुच होत सुकुमार नींद मैं कैसें प्रभुहिं जगाऊँ ।
दिनकर-किरन-उदित ब्रह्मादिक-रुद्रादिक इक ठाऊँ ।
अगनित भीर अमर-मुनिगन की, तिहिं तैं ठौर न पाऊँ ।
उठत सभा दिन मध्य सियापति भीर देखि फिरि आऊँ ।
न्हात-खात सुख करत साहिबी कैसें करि अनखाऊँ ।
रजनी-मुख आवत गुन-गावत नारद तुंबुर नाऊँ ।
तुमही कहौ कृपानिधि रघुपति किहिं गिनती मैं आऊँ ।
एक उपाउ करौं कमलापति, कहौ तौ कहि समुझाऊँ ।
पतित उधारन नाम सूर प्रभु यह रुक्का पहुँचाऊँ ।।१५७।।

— ❀ —

(घ) बाल-लीला

हरि-मुख देखि हो बसुदेव।
कोटि-काम-स्वरूप सुंदर, कोउ न जानत भेव।
चारि भुज जिहिं चारि आयुध, निरखि कै न पत्याउ।
अजहुँ मन परतीति नाहीं नंद-घर लै जाउ।
स्वान सूते पहरुवा सब, नींद उपजी गेह।
निसि अँधेरी, बीजु चमकै, सघन बरषै मेह।
बंदि बेरी सबै छूटी, खुले बज्र कपाट।
सीस धरि श्रीकृष्न लीने, चले गोकुल-बाट।
सिंह आगैं, सेष पाछैं, नदी भई भरिपूरि।
नासिका लौं नीर बाढ़यौ, पार पैलौ दूरि।
सीस तैं हुंकार कीनी, जमुन जान्यौ भेव।
चरन परसत थाह दीन्ही, पार गए बसुदेव।
महरि-ढिग उन जाइ राखे, अमर अति आनंद।
सूरदास बिलास ब्रज-हित प्रगटे आनँद-कंद ॥२५८॥

आनँदे आनँद बढ़्यौ अति।
देवनि दिवि दुंदुभी बजाई, सुनि मथुरा प्रगटे जादवपति।
बिद्याधर-किंनर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति।
गावत गुन गंधर्ब पुलकि तन, नाचति सब सुर-नारि रसिक अति।

बरषत सुमन सुदेस सूर सुर जय-जयकार करत, मानत रति।
सिव-बिरंचि इंद्रादि अमर-मुनि फूले सुख न समात मुदित मति।

देवकी मन-मन चकित भई।
देखहु आइ पुत्र-मुख काहे न ऐसी कहूँ देखी न दई।
सिर पर मुकुट पीत उपरैना भृगु पद उर, भुज चारि धरे।
पूरब कथा सुनाइ कही हरि तुम माँग्यौ इहिं भेष करे।
छोरे निगड़ सोआए पहरू, द्वारे कौ कपाट उघरयौ।
तुरत मोहिं गोकुल पहुँचावहु यह कहिकै सिसु भेष धरयौ।
तब बसुदेव उठे यह सुनतहिं हरषवंत नँद भवन गए।
बालक धरि लै सुरदेवी कौ आइ सूर मधुपुरी ठए ॥२६०॥

कहौ पति सौं, उपाइ कछु कीजै।
जिहिं उपाइ अपनौ यह बालक राखि कंस सौं लीजै।
मनसा बाचा, कहत कर्मना, नृप कबहूँ न पतीजै।
बुधि, बल छल कैसेहुँ करिकै, काढ़ि अनतहीं दीजै।
नाहिन इतनी भाग जो यह रस नित लोचन पुट पीजै।
सूरदास ऐसे सुत कौ जस, स्रवननि सुनि-सुनि जीजै। ६१।

सुनि देवकी को हितू हमारे।
असुर कंस अपबंस बिनासन, सिर ऊपर बैठे रखवारे।
ऐसौ को समरथ त्रिभुवन मैं, जो यह बालक नैकु उबारे।
खड्ग धरे आवै सुत छीनत आनैं कर छिन माहँ पछारै।
यह सुनतहिं अकुलाइ गिरी धर नैन नीर भरि-भरि दोउ ढारे।
दुखित देखि बसुदेव-देवकी प्रगट भए धरि कै भुज चारे।
बोलि उठे परतिग्या करि प्रभु, मातैं डरपै तब मोहिं मारे।
अति दुखमैं सुखदै पितु-मातहिं सूरज प्रभु नँद-भवन सिधारे।

भादौं की अधरात अँध्यारी।
द्वार कपाट कोटि भट रोके दस दिसि कंत कंस भय भारी।

छिरकत हरद-दही, हिय हरषत, गिरत अंक भरि लेत उठाई ।
सूरदास सब मिलत परस्पर, दान देत नहिं नंद अघाई ॥२६६॥

आजु बन कोउ बै जनि जाइ ।
सब गाइनि बछरनि समेत लै आनहु चित्र बनाइ ।
ढोटा है रे भयौ महर कैं, कहत सुनाइ सुनाइ ।
सबहिं घोष मैं भयौ कुलाहल, आनँद उर न समाइ ।
कत हौ गहरु करत बिन काजैं, बेगि चलौ उठि धाइ ।
अपने अपने मन कौ चीत्यौ, नैननि देखौ आइ ।
एक फिरत दधि-दूध भरत सिर, एक रहत गहि पाइ ।
एक परस्पर देत बधाई, एक उठत हँसि गाइ ।
बालक-बृद्ध तरुन नरनारिनि बढ्यौ चौगुनौ चाइ ।
सूरदास सब प्रेम-मगन भए, गनत न राजा-राइ ॥२६७॥

हौं सखि नई चाह इक पाई ।
ऐसे दिननि नंद कैं सुनियत उपज्यौ पूत कन्हाई ।
बाजत पनव निसान पंचविधि, रुंज मुरज सहनाई ।
महर महरि ब्रज-हाट लुटावत, आनँद उर न समाई ।
चली सखी हमहूँ मिलि जैये, नैंकु करौ अतुराई ।
कोउ भूषन पहिरयौ कोउ पहिरति कोउ वैसहिं उठि धाई ।
कंचन थार दूब दधि रोचन, गावति चारु बधाई ।
भाँति-भाँति बनि चलीं जुवतिजन, उपमा बरनि न जाई ।
अमर बिमान चढ़े सुख देखत, जै धुनि-सब्द सुनाई ।
सूरदास प्रभु भक्त हेत हित, दुष्टनि के दुखदाई ॥२६८॥

सखि री काहैं गहरु लगावति ?
सब कोऊ ऐसौ सुख सुनिकै, क्यौं नाहिंन उठि धावति ।
आजु सौ बात विधाता कीन्ही मन जो हुती अति भावति ।
सुत कौ जन्म जसोदा कैं गृह ता लगि तुम्हैं बुलावति ।

कनक थार भरि, दधि-रोचन लै, बेगि चली मिलि गावति।
मोंपैहिं सुत भयौ नन्द-नायक कैं, हौं नाहीं बौरावति।
आनँद उर अंचल न सम्हारति सीस सुमन बरषावति।
सूरदास सुनि जहाँ तहाँ तैं आवत सोभा पावति ॥२६९॥

आजु नँद के द्वारैं भीर।
एक आवत, इक जात बिदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर कैं तीर।
कोउ केसरि कौ तिलक बनावति कोउ पहिरति कंचुकी सरीर।
एकनि कौं गौ-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर।
एकनि कौं भूषन-पाटंबर, एकनि कौं जु देत नग-हीर।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर।
एकनि माथैं दूब रोचना एकनि कौं बोधति दै धीर।
सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य सरीर ॥२७०॥

सोभा-सिंधु न अंत रही री।
नंद-भवन भरिपूरि उमँगि चलि ब्रज की बीथिनि फिरति बही री।
देखौ जाइ आजु गोकुल मैं घर-घर बेंचति फिरति दही री।
कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत बिधि कहत न मुख सहसहुँ निबही री
जसुमति उदर अगाध उदधि तैं उपजी ऐसी सबनि कही री।
सूरस्याम प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री ॥ २७१॥

(माई) आजु तौ बधाइ बाजै मंदिर महर के,
फूले फिरैं गोपी ग्वाल ठहर ठहर के।
फूली फिरैं धेनु धाम फूली गोपी अँग अँग।
फूले फले तरुवर आनँद लहर के।
फूले बंदीजन द्वारे, फूले फूले बंदनवारे,
फूले जहाँ जोइ सोइ गोकुल सहर के।
फूले फिरैं जादौकुल आनँद समूल मूल
अंकुरित पुन्य फूले पाछिले पहर के।

उमँगी जमुन-जल प्रफुलित कुंज पुंज
गरजत कारे भारे जूथ जलधर के।
नृत्यत मदन फूले, फूली रति अँग अँग
मन के मनोज फूले हलधर वर के।
फूले द्विज संत वेद, मिटि गयौ कंस खेद
गावत बधाई सूर भीतर बाहर के।
फूली है जसोदा रानी सुत जायौ सारँगपानी
भूपति उदार फूले भाग फरे घर के ॥७२॥

जसोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै।
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं बेगहिं आवै तोकौं कान्ह बुलावै।
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि करि करि सैन बतावै।
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरैं गावै।
जो सुख सूर अमर-मुनि दुरलभ सो नँद-भामिनि पावै ॥७३॥

रूप मोहिनी धरि ब्रज आई।
अद्भुत रुचि सिंगार मनोहर असुर कंस दै पान पठाई।
कुच विष बाँटि लगाइ कपट करि बाल घातिनी परम सुहाई।
बैठी हुती जसोदा मंदिर, दुलरावति सुत कुँवर कन्हाई।
प्रगट भई तहँ आइ पूतना, प्रेरित काल अवधि नियराई।
आवत पीढ़ा बैठन दीनी कुसल बूझि अति निकट बुलाई।
पौढ़ाए हरि सुभग पालनैं, नंद घरनि कछु काम सिधाई।
बालक लियौ उछंग दुष्टमति, हरषित अस्तन पान कराई।
बदन निहारि प्रान हरि लीनौ परी राच्छसी जोजन ताइ।
सूरज दै जननी-गति ताकौं, कृपा करी निज धाम पठाई ॥ ७४॥

नैंकु गोपालहिं मोकौं दै री।
देखौं कमल बदन नीकैं करि, ता पाछैं तू कनियाँ लै री।
अति कोमल कर चरन-सरोरुह, अधर दसन-नासा सोहै री।
लटकन सीस कंठ मनि भ्राजत मनमथ कोटि वारनैं गै री।
बासर निसा बिचारति हौं सखि यह सुख कबहुँ न पायौ मैं री।
निगमनि धन सनकादिक-सरबस बड़े भाग्य पायौ है तैं री।
जाकौ रूप जगत के लोचन कोटि चंद्र-रबि लाजत भै री।
सूरदास बलि जाइ जसोदा गोपिनि प्रान पूतना बैरी॥७५५॥

कन्हैया हालरौ हलरोइ।
हौं वारी तव इंदु बदन पर, अति छबि अलग भरोइ।
कमल-नयन कौं कपट किए माई इहिं ब्रज आवै जोइ।
पालागौं बिधि ताहि बकी ज्यौं तू तिहिं तुरत बिगोइ।
सुनि देवता बड़े जग पावन, तू पति या कुल कोइ।
पद पूजिहौं बेगि यह बालक करि दै मोहिं बड़ोइ।
दुतिया के ससि लौं बाढ़ै सिसु, देखै जननि जसोइ।
यह सुख सूरदास कैं नैननि, दिन-दिन दूनौ होइ॥७५६॥

काग-रूप इक दनुज धर्यौ।
नृप-आयसु लै धरि माथे पर, हरषवंत उर गरब भर्यौ।
कितिक बात प्रभु तुम आयसु तैं यह जानी मो जात मर्यौ।
इतनी कहि गोकुल उड़ि आयौ, आइ नंद-घर-छाज रह्यौ।
पलना पर पौढ़े हरि देखे तुरत आइ नैननिहिं अर्यौ।
कंठ चापि बहु बार फिरायौ गहि पटक्यौ नृप पास पर्यौ।
तुरत कंस पूछन तिहिं लाग्यौ, क्यौं आयौ नहिं अचरज कर्यौ।
बीतैं जाम चेति तब आयौ, सुनहु कंस तब आइ सर्यौ।
धरि अवतार महाबल कोऊ एकहिं कर मेरौ गर्ब हर्यौ।
सूरदास प्रभु कंस-निकंदन भक्त-हेत अवतार धर्यौ॥७५८॥

मथुरापति जिय अतिहिं डरान्यौ ।
सभा माँझ असुरनि के आगैं, सिर धुनि-धुनि पछितान्यौ ।
ब्रज-भीतर उपज्यौ मेरौ रिपु, मैं जानी यह बात ।
दिनहीं दिन यह बढ़त जात है, मोकौं करिहै घात ।
दनुज-सुता पूतना पठाई, छिनकहिं माँझ सँहारी ।
बीच मरोरि दियौ कागासुर, मेरैं जिय खटकारी ।
अबहीं तैं यह हाल करत है, दिन दिन होत प्रकास ।
सेनापतिनि सुनाइ बात यह, नृप मन भयौ उदास ।
ऐसौ कौन मारिहै ताकौं मोहिं कहै सो आइ ।
ताकौं मारि अपुनपौ राखै, सूर सबहिं सो आइ ॥७५८॥

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत ।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले हरषि-हरषि अपनैं रँग खेलत ।
सिव सोचत बिधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़यौ सागर-जल झेलत ।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत ।
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित सेष सकुचि सहसौ फन पेलत ।
उन ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत ॥७५

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत ।
नंद घरनि गावति हलरावति पलना पर हरि खेलत ।
जे चरनारबिंद श्री भूषन उर तैं नैंकु न टारति ।
देखौं धौं का रस चरननि मैं मुख मेलत करि आरति ।
जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद ।
सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ, तातैं लेत सवाद ।
उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ ।
सेष सहसफन डोलन लागे हरि पीवत जब पाइ ।
बढ़यौ बृच्छ बट, सुर अकुलाने गगन भयौ उतपात ।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात ।

करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस।
सूरदास प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस ॥७८०॥

जसुदा मदन गुपाल सोवावै।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै।
असित अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि आवै।
जनु रबि गत संकुचित कमल जुग निसि अलि उड़न न पावै।
स्वाँस उदर उरसति यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै।
नाभि-सरोज प्रगट पदुमासन उतरि नाल पछितावै।
कर सिर-तर करि स्याम मनोहर अलक अधिक सोभावै।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै ॥७८१॥

अजिर प्रभातहिं स्याम कौं, पलिका पौढ़ाए।
आप चली गृह-काज कौं, तहँ नंद बुलाए।
निरखि हरषि मुख चूमि कै, मंदिर पग धारी।
आतुर नँद आए तहाँ जहँ ब्रह्म मुरारी।
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग-चतुराई।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई।
सो छबि नँद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई।
निरखि चरित गोपाल के सूरज बलि जाई ॥२८२॥

महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी।
एक मास त्रय-मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई।
पटकि रान उलटौ परयौ, मैं करौं बधाई।
नंद घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी।
यह सुख सुनि आईं सबै सूरज बलिहारी ॥२८३॥

जो सुख ब्रज मैं एक घरी।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं धनि यह घोष-पुरी।

मथुरापति जिय अतिहिं डरान्यौ ।
सभा माँझ असुरनि के आगैं, सिर धुनि-धुनि पछितान्यौ ।
ब्रज-भीतर उपज्यौ मेरौ रिपु, मैं जानी यह बात ।
दिनहीं दिन यह बढ़त जात है, मोकौं परिहै घात ।
बकुम-सुता पूतना पठाई, छिनकहिं माँझ सँहारी ।
चीच मरारि दियौ कागासुर, मेरैं ढिग फटकारी ।
अबहीं तैं यह हास करत है, दिन दिन होत प्रकास ।
सेनापतिनि सुनाइ बात यह, नृप मन भयौ उदास ।
ऐसौ कौन, मारिहै ताकौं मोहिं कहै सो आइ ।
ताकौं मारि अपुनपौ राखौ, सूर अबहिं सो जाइ ॥ ५८॥

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत ।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले हरषि हरषि अपनैं रँग खेलत ।
सिव सोचत बिधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़्यौ सागर-जल झेलत ।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत ।
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सेष सकुचि सहसौ फन पेलत ।
उन ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत ॥७५८

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत ।
नंद घरनि गावति हलरावति, पलना पर हरि खेलत ।
जे चरनारबिंद श्री भूषन, उर तैं नैकु न टारति ।
देखौं धौं का रस चरननि मैं मुख मेलत करि आरति ।
जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद ।
सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ तातैं लेत सवाद ।
उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ ।
सेष सहसफन डोलन लागे हरि पीवत जब पाइ ।
बढ़्यौ बृच्छ बट सुर अकुलाने गगन भयौ उतपात ।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात ।

करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस।
सूरदास प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस ॥२८०॥

जसुदा मदन गुपाल सोवावै।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै।
असित अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि आवै।
जनु रबि गत संकुचित कमल जुग निसि अलि उड़न न पावै।
स्वाँस उदर उससित यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै।
नाभि-सरोज प्रगट पद्मासन उतरि नाल पछितावै।
कर सिर-तर करि स्याम मनोहर, अलक अधिक सोभावै।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै ॥२८१॥

अजिर प्रभातहिं स्याम कौं पलिका पौढ़ाए।
आप चली गृह-काज कौं तहँ नंद बुलाए।
निरखि हरषि मुख चूमि कै मंदिर पग धारी।
आतुर नंद आए तहाँ जहँ ब्रह्म मुरारी।
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग-चतुराई।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई।
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई।
निरखि चरित गोपाल के, सूरज बलि जाई ॥ २८२॥

महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी।
एक पाख त्रय-मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई।
पटकि रान उलटौ पर्यौ, मैं करौं बधाई।
नंद-घरनि आनंद भरी, बोलीं ब्रजनारी।
यह सुख सुनि आईं सबै सूरज बलिहारी ॥२८३॥

जो सुख ब्रज मैं एक घरी।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं, धनि यह घोष-पुरी।

अष्टसिद्धि नवनिधि कर जोरे, द्वारैं रहति खरी।
सिव-सनकादि-सुकादि अगोचर, ते अवतरे हरी।
धन्य धन्य बड़भागिनि जसुमति, निगमनि सही परी।
ऐसैं सूरदास के प्रभु कौं लीन्हौ अंक भरी ॥२८४॥

जसुमति भाग सुहागिनी हरि कौं सुत जानै।
मुख-मुख जोरि बत्यावई, सिसुताई ठानै।
सो निगमनी कौ धन रहै त्रिभुवन मन मोहन।
बलिहारी छबि पर भई ऐसी बिधि जोहन।
लटकति बेसर जननि की इकटक चख लावै।
फरकत बदन उठाइ कै, मनही मन भावै।
महरि मुदित हित उर भरै यह कहि मैं वारी।
नंद-सुवन के चरित पर, सूरज बलिहारी ॥२८५॥

गोद लिए हरि कौं नँदरानी अस्तन पान करावति है।
बार-बार रोहिनि कौं कहि कहि, पलिका अजिर मँगावति है।
प्रात समय रवि किरनि कौंवरी सो कहि सुतहिं बतावति है।
आइ घाम मेरैं लाल कैं आँगन, बाल-केलि कौं गावति है।
रुचिर सेज लै गइ मोहन कौं भुजा उछंग सोवावति है।
सूरदास प्रभु सोए कन्हैया, हलरावति मल्हरावति है ॥२८६॥

कान्हरिया गोपाल लाल तू बेगि बड़ौ किन होहि।
इहिं मुख मधुर बचन हँसि कै धौं जननि कहै कब मोहि।
यह लालसा अधिक मेरैं जिय जो जगदीस कराहिं।
मो देखत कान्हर इहिं आँगन, पग द्वै धरनि धराहिं।
खेलहिं हलधर-संग रंग रुचि, नैन निरखि सुख पाऊँ।
छिन-छिन छुधित जानि पय कारन हँसि-हँसि निकट बुलाऊँ।
जाकौ सिव बिरंचि सनकादिक मुनिजन ध्यान न पावै।
सूरदास जसुमति ता सुत-हित, मन अभिलाष बढ़ावै ॥२८७॥

जसुमति मन अभिलाष करै ।
कब मेरी लाल घुटुरुवनि रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरै ।
कब द्वै दाँत दूध के देखौं कब तोतरैं मुख बैन झरै ।
कब नंदहिं बाबा कहि बोलै कब जननी कहि मोहिं ररै ।
कब मेरी अँचरा गहि मोहन जोइ सोइ कहि मोसौं झगरै ।
कब धौं तनक-तनक कछु खैहै अपने कर सौं मुखहिं भरै ।
कब हँसि बात कहैगौ मोसौं जा छबि तैं दुख दूरि हरै ।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े आपु गई कछु काज घरै ।
इहिं अंतर अँधवाह उठ्यौ इक गरजत गगन सहित घहरै ।
सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि जो जहँ-तहँ सब अतिहिं डरै ।

अति बिपरीत तृनावर्त आयी ।
बात चक्र मिस ब्रज ऊपर परि नंद-पौरि कैं भीतर धायी ।
पौढ़े स्याम अकेले आँगन, लेत उड़यौ, आकास चढ़ायौ ।
अंधाधुंध भयौ सब गोकुल जो जहँ रह्यौ सो तहीं छपायौ ।
जसुमति धाइ आइ जो देखै, स्याम-स्याम कहि टेर लगायौ ।
धावहु नंद गोहारि लगौ किन तेरौ सुत अँधवाह उड़ायौ ।
इहि अंतर अकास तैं आवत परबत सम कहि सबनि बतायौ ।
मारयौ असुर सिला सौं पटक्यौ आपु चढ्यौ ता ऊपर आय ।
दौरे नंद, जसोदा दौरी तुरतहिं लै हित कंठ लगायौ ।
सूरदास यह कहति जसोदा भा आगौ बिपिनहिं [illegible] मायौ ।२८८

उबर्यौ स्याम, महरि बड़भागी ।
बहुत दूरि तैं आइ पर्यौ धर धौं कहुँ चोट न लागी ।
रोग लेउँ धपि आउँ कन्हैया यह कहि कंठ लगाइ ।
तुमही हौ ब्रज के जीवन-धन देखत नैन सिराइ ।
भली भई यह महरि जसोदा छाँड़ि करैगौ आनि ।
गृह कौ काम इनहूँ तैं प्यारौ नैकहुँ भावै ठानि ।

मसी मइ अबकैं हरि बाँधे, अब तौ सुरति सम्हारि।
सूरदास जिमि कहति ग्वालिनी, मन में महरि बिचारि।२६०

हरि किलकत जसुदा की कनियाँ।
निरखि निरखि मुख कहति लाल सौं मो निधनी के धनियाँ।
अति कोमल तन चितै स्याम कौ बार बार पछितात।
कैसैं बच्यौ, जाउ बलि तेरी तृनावर्त कैं घात।
ना जानौ धौं कौन पुन्य तैं को करि लेत सहाइ।
वैसौ काम पूतना कीन्हौ, इहिं ऐसौ कियौ आइ।
माता दुखित जानि हरि बिहँसे, नान्ही दँतुलि दिखाइ।
सूरदास प्रभु माता चित तैं दुख डारयौ बिसराइ॥२६१॥

सुत-मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ, प्रेममगन तन की सुधि भूली।
बाहिर तैं तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुन्दर सुखदाई।
तनक-तनक सी दूध-दँतुलियाँ, देखौ नैन सफल करौ आई।
आनँद सहित महर तब आए मुख चितवत दोउ नैन अघाई।
सूर स्याम किलकत द्विज देख्यौ मनौ कमल पर बिज्जु जमाई।

हरि किलकत जसुमति की कनियाँ।
मुख मैं तीनि लोक दिखराए चकित भई नँद-रनियाँ।
घर घर हाथ दिवावति डोलति, बाँधति गरैं बघनियाँ।
सूर स्याम की अद्भुत लीला नहिं जानत मुनिजनियाँ॥२६३॥
कान्ह कुँवर की करहु पासनी, कछु दिन घटि षट मास गए।
नंद महर यह सुनि पुलकित जिय, हरि अन्नप्रासन जोग भए।
बिप्र बुलाइ नाम लै बूझ्यौ रासि सोधि इक सुदिन धरयौ।
आछौ दिन सुनि महरि जसोदा सखिनि बोलि सुभ गान करयौ।
जुवति महरि कौं गारी गावति और महर कौ नाम लिए।
ब्रज घर घर आनँद बढ़यौ अति प्रेम पुलक न समात हिए।

जाकौं नेति-नेति स्रुति गावति ध्यावत सुर-मुनि ध्यान धरे ।
सूरदास तिहिं कौं ब्रज बनिता, झकझोरति उर अंक भरे ॥७६४॥

आजु भोर तमचुर के रोल ।
गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल धुनि महराने ढोल ।
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ हरषि मँगावत फूल-तमोल ।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल ।
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर तनक चरन, पोंछति पट झोल ।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला अंग अभूषन अँगुरिनि गोल ।
सिर चौतनी, डिठौना दीन्हौ आँखि आँजि पहिराइ निचोल ।
स्याम करत माता सौं झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल ।
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति बरष-दिवस कहि करति कलोल ।
सूर स्याम ब्रज-जन-मोहन बरष-गाँठि कौ डोरा खोल ॥७६५॥

खीझत जात माखन खात ।
अरुन लोचन भौंह टेढ़ी, बार बार जँभात ।
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात ।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत नैन जल भरि जात ।
कबहुँ तोतर बोल बोलत कबहुँ बोलत तात ।
सूर हरि की निरखि सोभा निमिष तजत न मात ॥७६६॥

भरी, मेरे लालन की आजु बरष-गाँठि, सबै
सखिनि कौं बुलाइ मँगल-गान करावौ ।
चंदन आँगन लिपाइ मुतियनि चौकैं पुराइ,
उमँगि अंगनि आनँद सौं तूर बजावौ ।
मेरे कहैं बिप्रनि बुलाइ एक सुभ घरी धराइ
बागे चीरे बनाइ, भूषन पहिरावौ ।
अछत-दूब दल बँधाइ लालन की गाँठि जुराइ,
इहै मोहिं लाहौ नैननि दिखरावौ ।

पँचरँग सारी मँगाइ, बधू जननि पहराइ,
नाचैं सब उमँगि अंग, आनँद बढ़ावौ।
नँदरानी ग्वारिनि बुलाइ इहै रीति कहि सुनाइ
बेगि करौ किन बिलँब काहैं लगावौ।
जसुमति तब नँद बुलावति, लाल लिए कनियाँ खिलावति,
मंगल घरी आवति पावैं भवाइ बनावौ।
सूर स्याम छबि निहारति तन-मन जुवतिजन वारति
मनहीं सुख पावति, बरष गाँठि जुरावौ ॥२१७॥

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए।
चारु कपोल, लोल लोचन गोरोचन-तिलक दिए।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिं पिए।
कठुला कंठ, बज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख का सत कल्प जिए ॥२१८॥

(गाई) बिहरत गोपाल राइ, मनिमय रचे अँगनाइ,
लरकत परिंगनाइ घुटुरुनि डोलै।
निरखि निरखि अपनौ प्रतिबिंब, हँसत किलकत औ,
पाछैं चितै फेरि फेरि मैया मैया बोलै।
ज्यौं अलिगन सहित बिमल जलज जलहिं धाइ रहै,
कुटिल अलक बदन की छबि अवनी परि लोलै।
सूरदास छबि निहारि, थकित रहीं घोष नारि
तन मन धन देति वारि, बार-बार ओलै ॥२१९॥

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन बिंब पकरिबैं धावत।
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कौं कर सौं पकरन चाहत।
किलकि हँसत राजत द्वै दँतियाँ, पुनि पुनि तिहिं अवगाहत।

कनक-भूमि पर कर-पग छाया, यह उपमा इक राजति।
प्रति कर प्रति पद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति।
बाल दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति।
अँचरा तर लै ढाँकि सूर के प्रभु कौं दूध पियावति ॥२००॥

हरि का बिमल जस गावति गोपंगना।
मनिमय आँगन नंदराइ को बाल गोपाल करैं तहँ रगना।
गिरि गिरि परत घुटुरुवनि टेकत खेलत हैं दोउ छगना-मगना।
धूसरि धूरि दुहूँ तन मंडित मातु जसोदा लेति उछँगना।
बसुधा त्रिपद करत नहिं आलस तिनहिं कठिन भयौ देहरी उलँघना
सूरदास प्रभु ब्रज-बधु निरखति रुचिर हार हिय सोहत बघना २०१

सिखवति चलन जसोदा मैया।
अरबराइ कर पानि गहावत डगमगाइ धरनी धरै पैया।
कबहुँक सुंदर बदन बिलोकति उर आनँद भरि लेति बलैया।
कबहुँक कुल देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर कन्हैया।
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति इहिं आँगन खेलौ दोउ भैया।
सूरदास स्वामी की लीला अति प्रताप बिलसत नँदरैया ॥२०२

चलि गइ बाल-रूप मुरारि।
पाइ पैंजनि रटति रुन-झुन, नचावति नंद-नारि।
कबहुँ हरि कौं लाइ अँगुरी चलन सिखावति ग्वारि।
कबहुँ हृदय लगाइ हित करि, लेति अंचल ढारि।
कबहुँ हरि कौं चितै चूमति, कबहुँ गावति गारि।
कबहुँ लै पाछैं दुरावति, ह्याँ नहीं बनवारि।
कबहुँ अँग भूषन बनावति, राइ-लोन उतारि।
सूर सुर-नर सबै मोहे, निरखि यह अनुहारि ॥२०३॥

कान्ह चलत पग द्वै-द्वै धरनी।
जो मन मैं अभिलाष करति ही सो देखति नँद घरनी।

रुनुक झुनुक नूपुर पग बाजत, धुनि अतिहीं मन-हरनी ।
बैठि जात पुनि उठत तुरतहीं सो छबि जाइ न बरनी ।
ब्रज-जुवती सब देखि थकित भईं, सुंदरता की सरनी ।
चिरजीवहु जसुदा कौ नंदन, सूरदास कौं तरनी ॥२०४॥

भीतर तैं बाहर लौं आवत ।
घर-आँगन अति चलत सुगम भए, देहरि अँटकावत ।
गिरि-गिरि परत, जात नहिं उलँघी, अति स्रम होत नँघावत ।
अहुँठ पैग बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत ।
मनहीं मन बलबीर कहत हैं, ऐसे रंग बनावत ।
सूरदास-प्रभु अगनित महिमा, भगतनि कैं मन भावत ॥२०५॥

चलत देखि जसुमति सुख पावै ।
ठुमुकि ठुमुकि पग धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावै ।
देहरि लौं चलि जात, बहुरि फिरि फिरि इतहीं कौं आवै ।
गिरि-गिरि परत बनत नहिं नाँघत सुर-मुनि सोच करावै ।
कोटि ब्रह्मंड करत छिन भीतर, हरत बिलंब न लावै ।
ताकौं लिए नंद की रानी, नाना खेल खिलावै ।
तब जसुमति कर टेकि स्याम कौ, क्रम क्रम करि उतरावै ।
सूरदास प्रभु देखि-देखि सुर-नर-मुनि-बुद्धि भुलावै ॥२०६॥

हरि हरि हँसत मेरौ माधैया ।
देहरि चढ़त परत गिरि गिरि कर पल्लव गहति जु मैया ।
भक्ति-हेत जसुदा के आगैं, धरनी चरन धरैया ।
जिनि चरननि छलियौ बलि राजा, नख गंगा जु बहैया ।
जिहिं सरूप मोहे ब्रह्मादिक, रबि-ससि कोटि उगैया ।
सूरदास तिन प्रभु चरननि की बलि-बलि मैं बलि जैया ॥२०७

रुनुक स्याम की पैजनियाँ ।
जसुमति-सुत कौं चलन सिखावति, अँगुरी गहि-गहि दोउ जनियाँ

स्याम करन पर पीत अँगुलियाँ, सीस कुलहिया चौतनियाँ।
जाकौ ब्रह्मा पार न पावत ताहि खिलावति ग्वालिनियाँ।
दूरि न जाहु निकटहीं खेलौ मैं बलिहारी रेंगनियाँ।
सूरदास जसुमति बलिहारी, सुतहिं खिलावति लै कनियाँ ॥१०८॥

आँगन स्याम नचावहीं जसुमति नँदरानी।
तारी दै दै गावहीं, मधुरी मृदु बानी।
पाइनि नूपुर बाजई, कटि किंकिनि कूजै।
नान्ही एड़ियनि अरुनता, फल-बिंब न पूजै।
जसुमति गान सुनै स्रवन, तब आपुन गावै।
तारि बजावति देखई पुनि आपु बजावै।
केहरि-नख उर पर रुरै सुठि सोभाकारी।
मनौ स्याम घन मध्य है, नव ससि-उजियारी।
गभुआरे सिर केस हैं, बर घूँघरवारे।
लटकन लटकत भाल पर, बिधु मधि गन तारे।
कठुला कंठ चिबुक-तरैं मुख दसन बिराजैं।
खंजन बिच सुक आनि कै मनु परयौ दुराजैं।
जसुमति सुतहिं नचावई छबि देखति जिय तैं।
सूरदास प्रभु स्याम कौ मुख टरत न हिय तैं ॥१०९॥

जसोदा तेरौ चिरजीवहु गोपाल।
बेगि बढ़ै बल सहित बिरध लट महरि मनोहर बाल।
उपजि परयौ सिसु कर्म-पुन्य-फल, समुद सीप ज्यौं लाल।
सब गोकुल कौ प्रान-जीवन धन, बैरिनि कौ उर साल।
सूर कितौ सुख पावत लोचन, निरखत घुटुरुनि चाल।
झारति रज लागै मेरी अँखियनि रोग-दोष-जंजाल ॥११०॥

जब दधि-मथनी टेकि अरै।
आरि करत मटुकी गहि मोहन बासुकि संभु डरैं।

मंदर डरत, सिंधु पुनि काँपत फिरि जनि मथन करै ।
प्रलय होइ जनि गहौ मथानी प्रभु मरजाद टरै ।
सुर अरु असुर ठाढ़े सब चितवत, नैननि नीर ढरै ।
सूरदास मन मुग्ध जसोदा, मुख दधि बिंदु परै ॥२११॥

नंद जू के बारे कान्ह, छाँड़ि दै मथनियाँ ।
बार-बार कहति मातु जसुमति नँदरनियाँ ।
नैकु रहौ माखन देउँ मेरे प्रान धनियाँ ।
आरि जनि करौ बलि-बलि जाउँ हौं निधनियाँ ।
जाकौ ध्यान धरैं सबै, सुर-नर-मुनिजनियाँ ।
ताकौ नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ ।
सेष सहस आनन गुन गावत नहिं बनियाँ ।
सूर स्याम देखि सबै भूली गोप-धनियाँ ॥२१२॥

जसुमति दधि मथन करति बैठी बर धाम अजिर,
ठाढ़े हरि हँसत नान्ह दँतियनि छबि छाजै ।
चितवत चित लै चुराइ सोभा बरनी न जाइ,
मनु मुनि-मन-हरन काज मोहनि दल साजै ।
जननि कहति नाचौ तुम दैहौं नवनीत मोहन,
रुनुक-झुनुक चलत पाइ, नूपुर धुनि बाजै ।
गावत गुन सूरदास बढ़यौ जस भुव-अकास,
नाचत त्रैलोकनाथ माखन के काजै ॥२१३॥

(माधव) तनक सी बदन तनक से चरन-भुज
तनक से कर पर तनक सौ माखन ।
तनक सी बात कहै तनक तनकि रहै,
तनक सौं रीझि रहै तनक से साधन ।
तनक कपोल, तन तनक सी दँतुली,
तनक हँसनि पर दरत सबनि मन ।

तनर्हि तनक जु सुर निकट आवै
तनक कृपा कै दीजै तनर्हि सरन ॥ १४॥

छोटी-छोटी गोड़ियाँ अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-ज्योति, मोती मानों कमल-दलनि पर।
ललित आँगन खेलैं, ठुमुकि-ठुमुकि डोलैं,
झुनुक-झुनुक बोलैं पैंजनी मृदु मुखर।
किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि
मृदु कर कमलनि पहुँची रुचिर बर।
पियरी पिछौरी झीनी और उपमा न भीनी,
बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारौ बारि-धर।
उर बघ-नहाँ कंठ कठुला, झँडूले बार
बेनी लटकन मसि बुंदा मुनि-मनहर।
अंजन रंजित नैन, चितवनि चित चोरै,
मुख-सोभा पर वारौ अमित असम सर।
चुटकी बजावति नचावति जसोदा रानी,
बाल-केलि गावति मल्हावति सुप्रेम भर।
किलकि-किलकि हँसै द्वै-द्वै दँतुरियाँ लसैं
सूरदास मन बसैं तोतरे बचन बर ॥१९५॥

कहन लगे मोहन मैया-मैया।
नंद महर सौं बाबा-बाबा अरु हलधर सौं भैया।
ऊँचे चढ़ि चढ़ि कहति जसोदा लै-लै नाम कन्हैया।
दूरि खेलन जनि जाहु लला रे मारैगी काहु की गैया।
गोपी-ग्वाल करत कौतूहल घर घर बजति बधैया।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं चरननि की बलि जैया ॥११६॥

माखन खात हँसत किलकत हरि, पकरि स्वच्छ घट देख्यौ।
निज प्रतिबिंब निरखि रिस मानत जानत आन परेख्यौ।

मन मैं माप करत, कछु बोलत, नंद बाबा पै आयौ।
वा घट मैं काहू कै लरिका, मेरौ माखन खायौ।
महर कंठ लावत मुख पोंछत चूमत तिहिं ठौं आयौ।
हिरदै दिए लख्यौ वा सुत कौं, तातैं अधिक रिसायौ।
कह्यौ जाइ जसुमति सौं ततछन, मैं जननी सुत तेरौ।
आजु नंद सुत और कियौ, कछु कियौ न आदर मेरौ।
जसुमति बाल बिनोद जानि जिय उहीं ठौर लै आई।
दोउ कर पकरि डुलावन लागी घट मैं नहिं छवि पाई।
कुँवर हँस्यौ आनंद प्रेम बस सुख पायौ नँदरानी।
सूरज प्रभु की अद्भुत लीला जिन जानी तिन जानी ॥११७॥

लाल गुपाल खेलौ मेरे तात।
बलि-बलि जाउँ मुखारबिंद की अमिय बचन बोलौ तुतरात।
दुहुँ कर माट गह्यौ नँदनंदन छिटकि बूँद-दधि परत अघात।
मानौ गज-मुक्ता मरकत पर सोभित सुभग साँवरे गात।
जननी पै माँगत जग-जीवन, दै माखन-रोटी उठि प्रात।
लोटत सूर स्याम पुहुमी पर चारि पदारथ जाकैं हाथ ॥११८॥

पलना झूलौ मेरे लाल पियारे।
सुसुकनि की वारी हौं बलि बलि हठ न करहु तुम नंद दुलारे।
काजर हाथ भरौ जनि मोहन ह्वै हैं नैना अति रतनारे।
सिर कुलही पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नंद बबा रे।
देखत यह बिनोद धरनीधर, मात पिता बलभद्र ददा रे।
सुर-नर-मुनि कौतूहल भूले देखत सूर सबै जु कहा रे ॥११९॥

खीझत प्रात समय दोउ बीर।
माँखन माँगत बात न मानत, झँखत जसोदा जननी-तीर।
जननी मधि सनमुख संकर्षन खैंचत कान्ह खस्यौ सिर चीर।
मनहुँ सरस्वति संग उभय दुज, कल मराल अरु नील कँठीर।

सुंदर स्याम गही कबरी कर, मुक्ता माल गही बलबीर।
सूरज भए ठेके अप अपनी मानहुँ लेत निबेरे सीर ॥१२०॥

गोपालराइ दधि माँगत अरु रोटी।
माखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक सुकोमल मोटी।
कत हो आरि करत मेरे मोहन तुम आँगन में लोटी?
जो चाहौ सौ लेहु तुरतहीं छाँड़ौ यह मति खोटी।
करि मनुहारि कलेऊ दीन्हौ मुख चुपर्यौ अरु चोटी।
सूरदास को ठाकुर ठाढ़ौ हाथ लकुटिया छोटी ॥१२१॥

कजरी को पय पियहु लाल जासी तेरी बेनि बढ़ै।
जैसें देखि और ब्रज बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै।
यह सुनि के हरि पीवन लागे ज्यौं त्यौं लयौ लढ़ै।
अँचवत पय तातो जब लाग्यौ रोवत जीभि डढ़ै।
पुनि पीवत ही कच टकटोरत झूठहिं जननि रढ़ै।
सूर निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै ॥१२२॥

मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी?
किती बार मोहिं दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं ह्वै है लाँबी-मोटी।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै नागिनि सी भुइँ लोटी।
काचो दूध पियावति पचि पचि देति न माखन-रोटी।
सूरज चिरजीवौ दोउ भैया हरि-हलधर की जोटी ॥१२३॥

मैया मोहिं बड़ौ करि लै री।
दूध-दही घृत-माखन-मेवा जो माँगौं सो दै री।
कछू हौस राखै जनि मेरी, जोइ-जोइ मोहिं रुचै री।
होउँ बेगि मैं सबल सबनि मैं सदा रहौं निरभै री।
रंगभूमि मैं कंस पछारौं घीसि बहाऊँ बैरी।
सूरदास स्वामी की लीला मथुरा राखौं जै री ॥१२४॥

हरि अपनैं आँगन कछु गावत।
तनक-तनक चरननि सौं नाचत, मनहीं मनहिं रिझावत।
बाहँ उठाइ काजरी धौरी गैयनि टेरि बुलावत।
कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत।
माखन तनक आपनैं कर लै, तनक बदन मैं नावत।
कबहुँ चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए खवावत।
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढ़ावत।
सूर स्याम के बाल चरित नित नितही देखत भावत ॥१२५॥

बलि बलि जाउँ मधुर सुर गावहु।
अबकी बार मेरे कुँवर कन्हैया नंदहि नाचि दिखावहु।
तारी देहु आपने कर की परम प्रीति उपजावहु।
आन जंतु-धुनि सुनि कत डरपत मो भुज कंठ लगावहु।
जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु।
बाहँ उचाइ कालि की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु।
नाचहु नैंकु, जाउँ बलि तेरी मेरी साध पुरावहु।
रतन-जटित किंकिनि पग-नूपुर, अपनैं रंग बजावहु।
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु।
सूर स्याम मेरे उर तैं कहुँ टारे नैंकु न भावहु ॥१२६॥

कान्ह कुँवर की कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की।
बिधि बिहँसत,हरि हँसत हेरि हरि,जसुमति की धुकधुकी सु उर की।
रोचन भरि लै देत सींक सौं, स्रवन निकट अतिही चातुर की।
कंचन के द्वै दुर मँगाइ लिए कहौ कहा छेदनि आतुर की।
लोचन भरि-भरि दोऊ माता कनछेदन देखत जिय मुरकी।
रोवत देखि जननि अकुलानी, दियौ तुरत नौआ कौं घुरकी।
हँसत नंद, गोपी सब बिहँसीं, झमकि चलीं सब भीतर दुरकी।
सूरदास नँद करत बधाई, अति आनँद बाल ब्रज-पुर की ॥१२७॥

जसुमति अबहिं कह्यौ अन्हवावन रोइ गए हरि लोटत री।
तेल उबटनौ लै आगैं धरि, लालहिं चोटत-पोटत री।
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन कत रोवत बिनु काजैं री।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कै उबटन तेल समाजैं री।
महरि बहुत बिनती करि राखति मानत नहीं कन्हैया री।
सूर स्याम अतिहीं बिरुझाने, सुर-मुनि अंत न पैया री॥१८८॥

देखि माई हरि जू की लोटनि।
यह छबि निरखि रही नँदरानी अँसुवा ढरि-ढरि परत करोटनि।
परसत आनन मनु रवि कुंडल अंबुज स्रवत सीप-सुत जोटनि।
चंचल अधर चरन-कर चंचल मंचल अंचल गहत बकोटनि।
लेति छुड़ाइ महरि कर सौं कर धूरि भई बकसति दुरि ओटनि।
सूर निरखि मुसुकाइ जसोदा मधुर-मधुर बोलति मुख होटनि॥

ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैं हरिहिं लिए चंदा दिखरावति।
रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी देखौ धौं भरि नैन जुड़ावत।
चितै रहे तब आपुन ससि-तन अपने कर लै-लै जु बतावत।
मीठौ लगत किधौं यह खाटौ देखत अति सुन्दर मन भावत।
मनहीं मन हरि बुद्धि करत हैं माता सौं कहि ताहि मँगावत।
लागी भूख चंद मैं खैहौं देहि देहि रिस करि बिरुझावत।
जसुमति कहति कहा मैं कीनी, रोवत मोहन, अति दुख पावति।
सूर स्याम कौं जसुमति बोधति गगन चिरैया उड़त दिखावति॥

(आछे मेरे) लाल हो ऐसी आरि न कीजै।
मधु मेवा पकवान मिठाई जोइ भावै सोइ लीजै।
सद माखन घृत दह्यौ सजायौ, अरु मीठौ पय पीजै।
पा लागौं हठ अधिक करौ जनि, अति रिस तैं तन छीजै।
आन बतावति, आन दिखावति बालक तउ न पतीजै।
खसि-खसि परत कान्ह कनियाँ तैं, सुसुकि सुसुकि मन खीजै।

जल-पुट आनि धरयौ आँगन मैं मोहन नैकु तौ लीजै।
सूर स्याम हठि चंदहि माँगै सु तौ कहाँ तैं दीजै ॥२२१॥

(मेरी माई) ऐसौ हठी बाल गोबिंदा।
अपने कर गहि गगन बतावत खेलन कौं माँगै चंदा।
बासन मैं जल धरयौ जसोदा हरि कौं आनि दिखावै।
रुदन करत, ढूँढ़त नहिं पावत चंद धरनि क्यौं आवै।
मधु मेवा पकवान मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना।
चकई-डोरि पाटि के लटकन, लेहु मेरे लाल खिलौना।
संत-उबारन असुर-सँहारन, दूरि करन दुख-दंदा।
सूरदास बलि गई जसोदा उपज्यौ कंस निकंदा ॥२२२॥

मैया मैं तौ चंद-खिलौना लैहौं।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं तेरी गोद न ऐहौं।
सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं।
ह्वैहौं पूत नंद बाबा कौ तेरौ सुत न कहैहौं।
आगैं आउ बात सुनि मेरी, बलदेवहि न जनैहौं।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं।
तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं।
सूरदास ह्वै कुटिल बराती, गीत सुमंगल गैहौं ॥२२३॥

लै लै मोहन, चंदा लै।
कमलनैन बलि जाउँ सुचित ह्वै, नीचैं नैकु चितै।
जा कारन तैं सुनि सुत सुंदर कीन्ही इती अरै।
सोइ सुधाकर देखि कन्हैया, भाजन माहिं परै।
नभ तैं निकट आनि राख्यौ है जल-पुट जतन जुगै।
लै अपनै कर काढ़ि चंद कौं, जो भावै सो कै।
गगन मँडल तैं गहि आन्यौ है पंछी एक पठै।
सूरदास प्रभु इती बात कौं, कत मेरौ लाल हठै ॥२२४॥

जसुमति लै पलिका पौढ़ावति ।
मेरौ आजु अतिहिं बिरुझानौ, यह कहि कहि मधुरैं सुर गावति ।
पौढ़ि गई हरुएँ करि आपुन, अंग मोरि तब हरि जँभुआने ।
कर सौं ठोंकि सुतहिं दुलरावति, चटपटाइ बैठे अतुराने ।
पौढ़ौ लाल कथा इक कहिहौं, अति मीठी, स्रवननि कौं प्यारी ।
यह सुनि सूर स्याम मन हरषे, पौढ़ि गए हँसि देत हुँकारी ।।३२५।।

सुनि सुत, एक कथा कहौं प्यारी ।
कमल-नैन मन आनँद उपज्यौ चतुर सिरोमनि देत हुँकारी ।
दसरथ नृपति हुती रघुबंसी, ताकैं प्रगट भए सुत चारी ।
तिनमैं मुख्य राम जो कहियत जनक-सुता ताकी बर नारी ।
तात-बचन लगि राज तज्यौ तिन अनुज घरनि सँग गए बनचारी
धावत कनक-मृगा के पाछैं राजिवलोचन परम उदारी ।
रावन हरन सिया कौ कीन्हौ सुनि नँदनंदन नींद निवारी ।
चाप चाप करि उठे सूर प्रभु लछिमन देहु, जननि भ्रम भारी ।

जसुमति मन-मन यहै बिचारति ।
झझकि उठ्यौ सोवत हरि अबहीं कछु पढ़ि-पढ़ि तन-दोष निवारति ।
लोचन मैं काहू दीठि लगाई, लै लै राइ लोन उतारति ।
साँझहिं तैं अतिहीं बिरुझानौ, चंदहिं देखि करी अति आरति ।
बार-बार कुलदेव मनावति, दोउ कर जोरि सिरहिं लै धारति ।
सूरदास जसुमति नँदरानी, निरखि बदन, त्रय ताप बिसारति ।३३७।

जागिए, ब्रजराज कुँवर, कमल-कुसुम फूले ।
कुमुद-बृंद सँकुचित भए भृंग लता भूले ।
तमचुर खग-रोर सुनहु, बोलत बनराई ।
राँभति गौ खरिकनि मैं बछरा हित धाई ।
बिधु मलीन रबि प्रकास गावत नर नारी ।
सूर स्याम प्रात उठौ अंबुज कर धारी ।।३३८।।

प्रात भयौ जागौ गोपाल ।
नवल सुंदरी आई बोलति तुमहिं सबै ब्रजबाल ।
प्रगट्यौ भानु, मंद भयौ उडपति फूले तरुन तमाल ।
दरसन कौं ठाढ़ी ब्रजवनिता गूँथि कुसुम बनमाल ।
मुखहिं धोइ सुंदर बलिहारी, करहु कलेऊ लाल ।
सूरदास प्रभु आनँद के निधि अंबुज-नैन बिसाल ॥२३९॥

जागौ जागौ हो गोपाल ।
नाहिंन इतौ सोइयति सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल ।
फिरि-फिरि जात निरखि मुख छिन छिन सब गोपनि के बाल ।
बिन बिकसे कल कमल कोष तैं मनु मधुपनि की माल ।
जो तुम मोहिं न पत्याहु सूर प्रभु, सुंदर स्याम तमाल ।
तौ तुमहीं देखौ आपुन तजि निद्रा नैन बिसाल ॥२४०॥

खेलत स्याम ग्वालनि संग ।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा करत नाना रंग ।
हाथ तारी देत भाजत सबै करि करि होड़ ।
बरजै हलधर स्याम तुम जनि, चोट लागै गोड़ ।
तब कह्यौ मैं दौरि जानत बहुत बल मो गात ।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात ।
उठे बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि ।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा धरयौ स्याम हँकारि ।
जानिकै मैं रह्यौ ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहिं ।
सूर हरि खीझत सखा सौं मनहिं कीन्हौ कोह ॥२४१॥

सखा कहत हैं, स्याम खिसाने ।
आपुहिं आपु बलकि भए ठाढ़े अब तुम कहा रिसाने ?
बीचहिं बोलि उठे हलधर तब, याके माइ न बाप ।
हारि-जीति कछु नैंकु न समुझत, लरिकनि लावत पाप ।

आपुन हारि सखनि सौं झगरत, यह कहि दियौ पठाइ।
सूर स्याम उठि चले रोइ कै, जननी पूछति धाइ ॥२४७॥

मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझायौ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तोहिं जसुमति कब जायौ ?
कहा करौं इहि रिस के मारें खेलन हौं नहिं जात।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात।
गोरे नंद जसोदा गोरी, तू कत स्यामल सरीर।
चुटकी दै-दै हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलबीर।
तू मोहीं कौं मारन सीखी, दाउहिं कबहुँ न खीझै।
मोहन-मुख रिस की ये बातैं जसुमति सुनि-सुनि रीझै।
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।
सूर स्याम मोहिं गोधन की सौं, हौं माता तू पूत ॥२४८॥

मोहन, मानि मनायौ मेरौ।
हौं बलिहारी नंदनँदन की नैंकु इतै हँसि हेरौ।
कारौ कहि कहि तोहिं खिझावत बरजत खरौ अनेरौ।
इंद्रनील मनि तैं तन सुंदर, कहा कहै बल चेरौ।
न्यारौ जूथ हाँकि लै अपनौ न्यारी गाइ निबेरौ।
मेरौ सुत सरदार सबनि कौ बहुतै कान्ह बड़ेरौ।
बन मैं जाइ करौ कौतूहल यह अपनौ है खेरौ।
सूरदास द्वारैं गावत है बिमल-बिमल जस तेरौ ॥२४९॥

खेलन अब मेरी जाइ बलैया।
जबहिं मोहिं देखत लरिकनि सँग तबहिं खिजत बल भैया।
मोसौं कहत तात बसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया।
मोल लियौ कछु दै करि तिनकौं करि-करि जतन बढ़ैया।
अब बाबा कहि कहत नंद सौं जसुमति सौं कहै मैया।
ऐसैं कहि सब मोहिं खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया।

पाछैं नंद सुनत हे ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैया।
सूर नंद बलरामहिं धिरयौ, तब मन हरष कन्हैया ॥२४५॥

खेलन कौं हरि दूरि गयौ री।
संग-संग धावत डोलत हैं, कह धौं बहुत अबेर भयौ री।
पलक ओट भावत नहिं मोकौं, कहा कहौं तोहि बात।
नंदहिं तात-तात कहि बोलत, मोहिं कहत हैं मात।
इतनी कहत स्यामघन आए, ग्वाल सखा सब चीन्हे।
दौरि जाइ उर लाइ सूर प्रभु हरषि जसोदा लीन्हे ॥२४६॥

खेलन दूरि जात कत कान्हा ?
आजु सुन्यौ बन हाऊ आयौ तुम नहिं जानत नान्हा।
इक लरिका अबहीं भजि आयौ रोवत देख्यौ ताहि।
कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि।
चलौ न बेगि सवारैं जैये भाजि आपनैं धाम।
सूर स्याम यह बात सुनत ही बोलि लिए बलराम ॥२४७॥

जसुमति कान्हहिं यहै सिखावति।
सुनहु स्याम अब बड़े भये तुम, कहि स्तन पान छुड़ावति।
ब्रज-लरिका तोहिं पीवत देखत हँसत लाज नहिं आवति।
जैहैं बिगरि दाँत ये आछे तातैं कहि समुझावति।
अजहूँ छाँड़ि कह्यौ करि मेरौ, ऐसी बात न भावति।
सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहिं लुकावत ॥२४८॥

नंद बुलावत हैं गोपाल।
आवहु बेगि बलैया लेउँ हौं सुंदर नैन बिसाल।
परस्यौ थार धर्यौ मग जोवत बोलत बचन रसाल।
मात रिसाति, तात दुख पावत, बेगि चलौ मेरे लाल।
हौं वारी नान्हे पाइन की, दौरि दिखावहु चाल।
छाँड़ि देहु तुम लाल अटपटी, यह गति-मंद-मराल।

सो राजा जो अगमन पहुँचै, सूर सु भजन उजास।
जो जैहैं बलवीर पहिलैं ही, तौ हँसिहैं सब ग्वाल ॥१४९॥

जेंवत कान्ह नंद इकठौरे।
कछुक खात लपटात दोउ कर, बाल-केलि अति भोरे।
बरा कौर मेलत मुख भीतर, मिरिच दसन टकटोरे।
तीछन लगी नैन भरि आए, रोवत बाहर दौरे।
फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी, लिए लगाइ अँकोरे।
सूर स्याम कौं मधुर कौर दै कीन्हें तात निहोरे ॥१५०॥

जेंवत स्याम नंद की कनिया।
कछुक खात कछु धरनि गिरावत छबि निरखति नँद-रनिया।
बरी बरा बेसन बहु भाँतिनि, व्यंजन बिबिध, अगनिया।
डारत खात लेत अपनैं कर, रुचि मानत दधि-दोनियाँ।
मिस्री दधि माखन मिस्रित करि, मुख नावत छबि धनिया।
आपुन खात, नंद-मुख नावत सो छबि कहत न बनिया।
जो रस नंद जसोदा बिलसत सो नहिं तिहूँ भुवनिया।
भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ, माँगत सूर जुठनिया ॥१५१॥

बोलि लेहु हलधर भैया कौं।
मेरे आगैं खेल करौ कछु, सुख दीजै मैया कौं।
मैं मूँदौं हरि आँखि तुम्हारी, बालक रहैं लुकाई।
हरषि स्याम सब सखा बुलाए खेलन आँखि मुँदाई।
हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै हरि कह्यौ मातु जसोदा।
सूर स्याम लिए जननि खिलावति, हरष सहित मन-मोदा ॥१५२

खेलत बनै घोष निकास।
सुनहु स्याम चतुर सिरोमनि, इहाँ है घर पास।
कान्ह हलधर बीर दोऊ, भुजा बल अति जोर।
सुबल श्रीदामा सुदामा वै भए इक ओर।

और सखा बँटाइ लीन्हें, गोप-बालक-बृंद।
चले ब्रज की खोरि खेलत अति उमँगि नँद-नंद।
बटा धरनी डारि दीनौ लै चले ढरकाइ।
आपु अपनी घात निरखत, खेल जम्यौ बनाइ।
सखा जीतत स्याम जाने तब करी कछु पेल।
सूरदास कहत श्रीदामा कौन ऐसी खेल ॥३२३॥

खेलत मैं को काकौ गुसैयाँ।
हरि हारे, जीते श्रीदामा, बरबस ही कत करत रिसैया।
जाति-पाँति हमतें बड़ नाहीं नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातें हैं कछु अधिक तुम्हारें गैयाँ।
रुहठि करै तासौं को खेलै, रहे बैठि जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ।
सूरदास प्रभु खेल्यौइ चाहत दाऊँ दियौ करि नंद-दुहैया ॥३२४

आँगन मैं हरि सोइ गए री।
दोउ जननी मिलि कै हरुएँ करि, सेज सहित तब भवन लए री।
नैंकु नहीं घर मैं बैठत हैं खेलहि के अब रंग रए री।
इहिं बिधि स्याम कबहुँ नहिं सोए बहुत नींद के बसहिं भए री।
कहति रोहिनी सोवन देहु न, खेलत दौरत हारि गए री।
सूरदास प्रभु कौ निरखति हरषति जिय नित नेह नए री ॥३२५॥

मोहन काहैं न उगिलौ माटी।
बार-बार अनरुचि उपजावति, महरि हाथ लिए साँटी।
महतारी सौं मानत नाहीं कपट चतुरई ठाटी।
बदन उघारि दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी।
बड़ी बार भई लोचन उघरे भरम जवनिका फाटी।
सूर निरखि नँदरानि भ्रमित भई, कहति न मीठी-खाटी ॥३२६

नंदहिं कहति जसोदा रानी।
माँटी कैं मिस मुख दिखरायौ तिहूँ लोक रजधानी।

स्वर्ग, पताल, धरनि, बन, पर्वत बदन माँझ रहे आनी।
नदी सुमेर देखि चकित भई, याकी अकथ कहानी।
चितै रहे तब नंद घरनि-मुख मन-मन करत बिनानी।
सूरदास तब कहति जसोदा गर्ग कही यह बानी ॥२५७॥

कहत नंद जसुमति सौं बात।
कहा जानिये कह तैं देख्यौ मेरे कान्ह रिसात।
पाँच बरष को मेरौ नन्हैया अचरज तेरी बात।
बिनहीं काज साँटि लै धावति ता पाछैं बिललात।
कुसल रहैं बलराम स्याम दोउ, खेलत-खात अन्हात।
सूर स्याम कौं कहा लगावति, बालक कोमल गात ॥२५८॥

देख्यौ री, जसुमति बौरानी।
घर-घर हाथ दिखावति डोलति गोद लिए गोपाल बिनानी।
जानत नाहिं, जगतगुरु माधौ, इहिं आए आपदा नसानी।
जाकौ नाउँ, सक्ति पुनि जाकी, ताकौ देति मंत्र पढ़ि पानी।
अखिल ब्रह्मांड उदर गत जाकैं, जोति जल-थलहिं समानी।
सूर सकल साँची मोहिं लागति जो कछु कही गर्ग मुख बानी २५९

नंद करत पूजा हरि देखत।
घंट बजाइ देव अन्हवायौ, दल चंदन लै भेंटत।
पट अंतर दै भोग लगायौ, आरति करी बनाइ।
कहत कान्ह, बाबा तुम अरप्यौ देव नहीं कछु खाइ।
चितै रहे तब नंद महरि-मुख, सुनहु कान्ह की बात।
सूर स्याम देवनि कर जोरहु कुसल रहैं जिहिं गात ॥२६०॥

जसुदा देखनि दै हित ठाढ़ी।
बाल-दसा अवलोकि स्याम की, प्रेम-मगन चित बाढ़ी।
पूजा करत नंद रहे बैठ, ध्यान समाधि लगाइ।
गुपतहिं जानि बाम भुज मेल्यौ, देखी देव-बड़ाई।

देखी आइ मटुकिया रीतो मैं राखयौ कहुँ हेरि।
चकित भई ग्वालिनि मन अपनैं ढूँढ़ति घर फिरि फेरि।
देखति पुनि पुनि घर के बासन मन हरि लियौ गोपाल।
सूरदास रस भरी ग्वालिनी जानै हरि कौ ख्याल ॥२६८॥

ब्रज घर घर प्रगटी यह बात।
दधि-माखन चोरी करि लै हरि, ग्वाल-सखा सँग खात।
ब्रज बनिता यह सुनि मन हरषित, सदन हमारैं आवैं।
माखन खात अचानक पावैं भुज भरि उरहिं छुपावैं।
मनहीं मन अभिलाष करति सब हृदय धरति यह ध्यान।
सूरदास प्रभु कौं घर तैं लै, दैहौं माखन खान ॥२६६॥

चली ब्रज घर-घरनि यह बात।
नंद-सुत, सँग सखा लीन्हे, चोरि माखन खात।
कोउ कहति मेरे भवन भीतर, अबहिं पैठे धाइ।
कोउ कहति, मोहिं देखि द्वारैं, उतहिं गए पराइ।
कोउ कहति किहिं भाँति हरि कौं देखौं अपनैं धाम।
हेरि माखन देउँ आछौ, खाइ जितनौ स्याम।
कोउ कहति मैं देखि पाऊँ भरि धरौं अँकवारि।
कोउ कहति, मैं बाँधि राखौं, को सकै निरवारि!
सूर प्रभु के मिलन कारन, करति बुद्धि विचार।
जोरि कर बिधि कौं मनावति पुरुष नंद-कुमार ॥२७०॥

गोपालहिं माखन खान दै।
सुनि री सखी मौन ह्वै रहिऐ, बदन दही लपटान दै।
गहि बहियाँ हौं लैके जैहौं नैननि तपनि बुझान दै।
याकौ जाइ चौगुनौ लैहौं मोहिं जसुमति लौं जान दै।
तू जानति हरि कछू न जानत सुनत मनोहर कान दै।
सूर स्याम ग्वालिनि बस कीन्हौं राखति तन-मन-प्रान दै ॥२७१

जसुदा कहँ लौं कीजै कानि।
दिन-प्रति कैसैं सही परति है, दूध-दही की हानि।
अपने या बालक की करनी, जौ तुम देखौ आनि।
गोरस खाइ, खवावै लरिकनि, भाजत भाजन भानि।
मैं अपने मंदिर के कोनैं राख्यौ माखन छानि।
सोई जाइ तिहारैं ढोटा, लीन्हौ है पहिचानि।
बूझि ग्वालि निज गृह मैं आयौ, नैकु न संका मानि।
सूर स्याम यह उतर बनायौ, चींटी काढ़त पानि ॥२० ॥

आपु गए हरुएँ सूनैं घर।
सखा सबै बाहिर ही छाँड़े, देख्यौ दधि-माखन हरि भीतर।
तुरत मथ्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै खात धरत अधरनि पर।
दैन देइ सब सखा बुलाए तिनहिं देत भरि-भरि अपनैं कर।
छिटकि रही दधि-बूँद हृदय पर, इत-उत चितवत करि मन मैं डर।
उठत ओट लै लखत सबनि कौं, पुनि लै खात देत ग्वालनि कर।
अंतर भई ग्वालि यह देखति मगन भई अति उर आनँद भरि।
सूर स्याम मुख निरखि थकित भई कहत न बनै रही मन दै हरि॥

गोपाल दुरे हैं माखन खात।
देखि सखी सोभा जु बनी है, स्याम मनोहर गात।
उठि अवलोकि ओट ठाढ़े ह्वै, जिहिं बिधि हैं लखि लेत।
चकित नैन चहुँ दिसि चितवत, और सखनि कौं देत।
सुंदर कर आनन समीप अति राजत इहिं आकार।
जलरुह मनौ बैर बिधु सौं तजि मिलत लए उपहार।
गिरि-गिरि परत बदन तैं उर पर हैं दधि-सुत के बिंदु।
मानहुँ सुभग सुधा-कन बरषत प्रियजन आगम इंदु।
बाल-बिनोद बिलोकि सूर प्रभु सिथिल भई ब्रजनारि।
फुरै न बचन बरजिबैं कारन, रहीं बिचारि-बिचारि ॥२०४॥

जौ तुम सुनहु जसोदा गोरी !
नंद-नँदन मेरे मंदिर में आजु करन गए चोरी ।
हौं भई जाय अचानक ठाढ़ी, कह्यौ, भवन मैं को री ।
रहे छपाइ, सकुचि रंचक ह्वै भई सहज मति भोरी ।
मोहिं भयौ माखन पछितावौ रीती देखि कमोरी ।
जब गहि बाँह कुलाहल कीनो तब गहि चरन निहोरी ।
लागे लैन नैन जल भरि-भरि, तब मैं कानि न तोरी ।
सूरदास प्रभु देत दिनहिं दिन ऐसियै लरिक-सलोरी ॥१५५॥

महरि तुम मानौ मेरी बात ।
ढूँढ़ि-ढाँढ़ि गोरस सब घर कौ हरयौ तुम्हारैं तात ।
कैसे कहति लियौ छींके तैं ग्वाल कंध दै लात ।
घर नहिं पियत दूध धौरी कौ कैसैं तेरैं खात ।
असंभाव बोलन आई है, ढीठ ग्वालिनी प्रात ।
ऐसौ नाहिं अचगरौ मेरौ कहा बनावति बात ।
का मैं कहौं कहत सकुचति हौं कहा दिखाऊँ गात ।
हैं गुन बड़े सूर के प्रभु के, ह्याँ लरिका ह्वै जात ॥१५६॥

साँवरेहिं बरजति क्यौं जु नहीं ?
कहा करौं, दिन प्रति की बातैं नाहिन परतिं सही ।
माखन खात, दूध लै डारत लेपत देह दही ।
ता पाछै घरहू के लरिकनि भाजत छिरकि मही ।
जौ कछु धरहिं दुराइ, दूरि लै जानत ताहि तहीं ।
सुनहु महरि तेरे या सुत सौं हम पचि हारि रहीं ।
चोरी अधिक चतुराई सीखी जाय न कथा कही ।
ता पर सूर बछरुवनि ढीलत बन-बन फिरत बही ॥१५७॥

अब ये झूठहु बोलत लोग ।
पाँच बरष अरु कछुक दिननि कौ कब भयौ चोरी जोग ।

इहिं मिस देखन आवति ग्वालिनि मुँह फारे जु गँवारि।
अनदोषा कौ दोष लगावति दई देइगी टारि।
कैसैं करि याकौ भुज पहुँची, कौन बेग ह्याँ आयौ?
ऊखल ऊपर आनि पीठि दै तापर सखा चढ़ायौ।
जौ न पत्याहु चलौ सँग जसुमति देखौ नैन निहारि।
सूरदास प्रभु नैंकु न बरजौ मन मैं महरि बिचारि॥२७८॥

इन अँखियनि आगैं तैं मोहन, एकौ पल जनि होहु निनारे।
हौं बलि गई दरस देखैं बिनु तलफत हैं नैननि के तारे।
औरौ सखा बुलाइ आपने इहिं आँगन खेलौ मेरे बारे।
निरखति रहौं फनिग की मनि ज्यौं सुंदर बाल-बिनोद तिहारे।
मधु, मेवा पकवान मिठाई व्यंजन खाटे मीठे, खारे।
सूर स्याम जोइ-जोइ तुम चाहौ सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे॥२७९

चोरी करत कान्ह धरि पाए।
निसि-बासर मोहिं बहुत सतायौ अब हरि हाथहिं आए।
माखन-दधि मेरौ सब खायौ बहुत अचगरी कीन्हीं।
अब तौ घात परे हौ लालन, तुम्हें भलैं मैं चीन्हीं।
दोउ भुज पकरि कह्यौ कहँ जैहौ माखन लेउँ मँगाइ।
तेरी सौं मैं नैंकु न खायौ सखा गए सब खाइ।
मुख तन चितै बिहँसि हरि दीन्हौ रिस तब गई बुझाइ।
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी सूरदास बलि जाइ॥२८०॥

कत हो कान्ह काहु कैं जात।
वे सब ढीठ गरब गोरस कैं मुख सँभारि बोलति नहिं बात।
जोइ-जोइ रुचै सोइ तुम मोपै माँगि लेहु किन तात।
ज्यौं-ज्यौं बचन सुनौं मुख अमृत त्यौं-त्यौं सुख पावत सब गात।
कैसी टेव परी इन गोपिनि, उरहन कैं मिस आवति प्रात।
सूर सु कत हठि दोष लगावति घरही कौ माखन नहिं खात॥२८१

घर गोरस जनि जाहु पराए।
दूध भात भोजन घृत अमृत, अरु आछौ करि दह्यौ जमाए।
नव लख धेनु खरिक घर तेरैं, तू कत माखन खात पराए।
निलज ग्वालिनी देति उराहनौ, वै झूठैं करि बचन बनाए।
लघु दीरघता कछू न जानैं, कहुँ बछरा कहुँ धेनु चराए।
सूरदास प्रभु मोहन नागर, हँसि-हँसि जननी कंठ लगाए॥३८२॥

कान्हहिं बरजति किन नँदरानी।
एक गाउँ के बसत कहाँ लौं करैं नंद की कानी।
तुम जो कहति हौ मेरौ कन्हैया, गंगा जैसौ पानी।
बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट घाट कौ दानी।
बचन बिचित्र कमल-दल-लोचन कहत सरस बर बानी।
अचरज महरि तुम्हारे आगैं अबै जीभ तुतरानी।
कहँ मेरौ कान्ह कहाँ तुम ग्वारिनि यह बिपरीति न जानी।
आवति सूर उराहने कैं मिस, देखि कुँवर मुसुकानी॥३८३॥

मथुरा जाति हौ बेचन दहियौ।
मेरे घर कौ द्वार, सखी री, तब लौं देखति रहियौ।
दधि-माखन द्वै माट अछूते तोहिं सौंपति हौं सहियौ।
और नहीं या ब्रज मैं कोऊ नंद-सुवन सखि लहियौ।
ते सब बचन सुने मनमोहन चले राह मन गहियौ।
सूर पौरि लौं गई न ग्वालिनि, कूदि परे दै पहिली॥३८४॥

गए स्याम ग्वालिनि घर सूनैं।
माखन खाइ डारि सब गोरस, बासन फोरि किए सब चूनै।
बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि कियौ दस टूक।
सोवत लरिकनि छिरकि मही सौं, हँसत चले दै कूक।
आइ गई ग्वालिनि तिहिं औसर, निकसत हरि धरि पाए।
देखे घर बासन सब फूटे, दूध दही ढरकाए।

दोउ भुज भरि गाढ़ैं करि लीन्हे, गई महरि कैं आगें।
सूरदास अब बसे कौन ह्याँ पति रहिहै ब्रज त्यागें ॥२८४॥

करत कान्ह ब्रज-घरनि अचगरी।
खीझति महरि कान्ह सौं पुनि-पुनि उरहन लै आवति हैं सगरी।
बड़े बाप के पूत कहावत, हम वै बास बसत इक बगरी।
नंदहु तैं ये बड़े कहैहैं, फेरि बसैहैं यह ब्रज नगरी।
जननी कैं खीझत हरि रोए, झूठहिं मोहिं लगावति अगरी।
सूर स्याम मुख पोंछि जसोदा कहति सबै जुवती हैं लँगरी ॥२८६

मेरौ माई कौन कौ दधि चोरै।
मेरैं बहुत दई कौ दीन्हौ लोग पियत हैं औरै।
कहा भयौ तेरे भवन गये जो पियौ तनक लै भोरैं।
ता ऊपर काहैं गरजति है, मनु आई चढ़ि घोरैं।
माखन खाइ मह्यौ सब डारै बहुरौ भाजन फोरै।
सूरदास यह रसिक ग्वालिनी नेह नवल सँग जोरै ॥२८७

अपनी गाइँ खेल नँदरानी।
बड़े बाप कौ बेटा पूतहिं भली पढ़ावति बानी।
सखा-भीर लै पैठत घर मैं आपु खाइ तौ सहिये।
मैं जब चली सामुहैं पकरन, तब के गुन कहा कहिये।
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ मैं घर पौढ़ी आइ।
हरैं-हरैं बेनी गहि पाछैं बाँधी पाटी लाइ।
सुनु मैया, याके गुन मोसौं इन मोहिं लयौ बुलाई।
दधि मैं पड़ी सेंत की मोपै चींटी सबै कढ़ाई।
टहल करत मैं याके घर की यह पति सँग मिलि सोई।
सूर बचन सुनि हँसी जसोदा ग्वालि रही मुख गोई ॥२८८॥

महरि तैं बड़ी कृपन है माई।
दूध-दही बहु बिधि कौ दीनौ, सुत सौं धरति छपा

बालक बहुत नहीं री तेरैं एकै कुँवर कन्हाई।
सोऊ तौ घर ही घर डोलतु, माखन खात चोराई।
वृद्ध बयस पूरे पुन्यनि तैं तैं बहुतै निधि पाई।
ताहू के खैबे-पीबे कौं, कहा करति चतुराई।
सुनहु न बचन चतुर नागरि के, जसुमति नंद सुनाई।
सूर स्याम कौं चोरी कैं मिस, देखन है यह आई॥३४९॥

चलत सुत गोरस की कत आस ?

घर सुरभी कारी धौरी कौ माखन माँगि न खात।
दिन प्रति सबै उरहने कैं मिस आवति हैं उठि प्रात।
अनसमुझे अपराध लगावति, बिकट बनावति बात।
निपट निसंक बिबादहिं सम्मुख, सुनि सुनि नंद रिसात।
मोसौं कहति कृपन तेरैं घर ढोटाहू न अघात।
करि मनुहारि उठाय गोद लै, बरजति सुत कौं मात।
सूर स्याम नित सुनत उरहनौ दुख पावत तेरौ तात॥३५०॥

हरि सब माखन चोरि पराने।

हौंक देत पैठे दै पेला नैकु न मनहिं डराने।
सीके छोरि मारि लरिकनि कौं माखन-दधि सब खाइ।
भवन मच्यौ दधि-काँदौ लरिकनि रोवत पाए जाइ।
सुनहु-सुनहु सबहिनि के लरिका, तेरौ सौ कहुँ नाहिं।
हाटनि बाटनि-गलिनि, कहूँ कोउ चलत नहीं डरपाहिं।
रितु आए कौ खेल कन्हैया सब दिन खेलत फाग।
रोकि रहत गहि गली साँकरी, टेढ़ी बाँधत पाग।
बारे तैं सुत ये ढँग लाए, मनहीं मनहिं सिहाति।
सुने सूर ग्वालिनि की बातैं, सकुचि महरि पछिताति॥३५१॥

कन्हैया तू नहिं मोहिं डरात।

षटरस धरे छाँड़ि कत पर घर चोरी करि करि खात।

बकत-बकत तासों पचि हारी नैकहुँ कान न ल्याई।
ब्रज-परगन-सिकदार महर, तू ताकी करत नन्हाई।
पूत सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बात।
सूर स्याम अब लौं तुहिं बकस्यौ, तेरी जानी घात ॥३६२॥

सुनु री ग्वारि, कहौं इक बात।
मेरी सौं तुम याहि मारियौ जबहीं पावौ घात।
अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी, बहुतै मोहिं खिझायौ।
साटिनि मारि करौं पहुनाई चितवत कान्ह डरायौ।
अजहूँ मानि कह्यौ करि मेरौ, घर घर तू जनि जाहि।
सूर स्याम कह्यौ कहूँ न जैहौं, माता मुख तन चाहि ॥३६३॥

मैया, मैं नहिं माखन खायौ।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि मेरैं मुख लपटायौ।
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचैं धरि लटकायौ।
हौं जु कहत नान्हें कर अपनें मैं कैसैं करि पायौ।
मुख दधि पोंछि बुद्धि इक कीन्ही दोना पीठि दुरायौ।
डारि साँटि, मुसुकाइ जसोदा स्यामहिं कंठ लगायौ।
बाल-बिनोद-मोद मन मोह्यौ भक्ति-प्रताप दिखायौ।
सूरदास जसुमति कौ यह सुख सिव बिरंचि नहिं पायौ ३६४

तेरी सौं सुनु-सुनु मेरी मैया।
आवत उबटि परयौ ता ऊपर, मारन कौं दौरी इक गैया।
ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति हौं पय पियत पतूखिनि लैया।
यहै देखि मोकौं बिजुकानी भाजि चल्यौ कहि दैया दैया।
दोउ सींग बिच ह्वै हौं आयौ जहाँ न कोऊ हो रखवैया।
तेरौ पुन्य सहाय भयौ है, उबरयौ बाबा नंद-दुहैया।
याके चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया।
सूरदास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि लेति बलैया ॥३६५॥

जसुमति तेरौ बारौ कान्ह अतिहीं जु अचगरौ।
दूध-दही-माखन लै डारि देत सगरौ।
भोरहिं नित प्रतिहीं उठि, मोसौं करत झगरौ।
ग्वाल-बाल संग लिए घेरि रहै डगरौ।
हम-तुम सब बैस एक, कातैं को अगरौ।
लियौ दियौ सोई कछु, डारि देहु झगरौ।
सूर स्याम तेरौ अति गुननि माँहिं अगरौ।
चोली अरु हार तोरि छोरि लियौ सगरौ ॥२९६॥

सुनि-सुनि री तैं महरि जसोदा, तैं सुत बड़ौ लड़ायौ।
इहिं ढोटा लै ग्वाल भवन मैं कछु बिथरयौ कछु खायौ।
काहूँ नहीं अनोखौ ढोटा, किहिं न कठिन करि जायौ।
मैं हूँ अपनैं औरस पूतैं बहुत दिननि मैं पायौ।
तैं जु गँवारि, पकरि भुज याकी बदन दह्यौ लपटायौ।
सूरदास ग्वालिनि अति झूठी बरबस कान्ह बँधायौ ॥२९७॥

नंद-घरनि सुत भलौ पढ़ायौ।
ब्रज-बीथिनि, पुर-गलिनि, घरैं-घर, घाट-बाट सब सोर मचायौ।
लरिकनि मारि भजत काहू के, काहू कौ दधि-दूध लुटायौ।
काहू के घर करत भँड़ाई मैं ज्यौं त्यौं करि पकरन पायौ।
अब तौ इन्हैं जकरि धरि बाँधौं, इहिं सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ।
सूर स्याम भुज गहि नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनैं ढँग लायौ २९८

ऐसी रिस मैं जौ धरि पाऊँ।
कैसे हाल करौं धरि हरि के, तुमकौं प्रगट दिखाऊँ।
साँटिया लिए हाथ नँदरानी, थरथरात रिस गात।
मारे बिनु आजु जौ छाँड़ौं लागै मेरैं तात।
इहिं अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति।
भली महरि, सूधौ सुत जायौ, चोली-हार बतावति।

रिस मैं रिस अतिहीं उपजाई जानि जननि अभिलाष ।
सूर स्याम भुज गहे जसोदा, अब बाँधौं कहि माय ॥३९९॥

जसोदा एती कहा रिसानी ।
कहा भयौ जौ अपने सुत पै, महि ढरि परी मथानी ?
रोषहिं रोष भरे दृग तेरे, फिरत पलक पर पानी ।
मनहुँ सरद के कमल-कोष पर मधुकर मीन सकानी ।
स्रम जल किंचित निरखि बदन पर, यह छबि अति मन मानी ।
मनौ चंद नव उमँगि सुधा भुव ऊपर बरषा ठानी ।
गृह-गृह गोकुल गई जाँवरी बाँधति भुज नँदरानी ।
आपु बँधावत भक्तनि छोरत बेद बिदित भइ बानी ।
गुन लघु करषि करति स्रम जितनी निरखि बदन मुसुकानी ।
सिथिल अंग सब देखि सूर प्रभु-सोभा-सिंधु-बिरानी ॥४००॥

बाँधौं आजु, कौन तोहिं छोरै ।
बहुत लँगरई कीन्ही मोसौं भुज गहि रजु ऊखल सौं जोरै ।
जननी अति रिस जानि बँधायौ निरखि बदन, लोचन जल ढोरै ।
यह सुनि ब्रज-जुवती सब आईं कहति कान्ह अब क्यौं नहिं छोरै ।
ऊखल सौं गहि बाँधि जसोदा, मारन कौं साँटी कर तोरै ।
साँटी देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरै ।
सुनहु महरि ऐसी न बूझिऐ सुत बाँधति माखन दधि थोरैं ।
सूर स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक परी हम तैं यह भोरैं ॥४०१॥

जाहु चली अपनैं अपनैं घर ।
तुमहीं सबनि मिलि ढीठ करायौ अब आईं छोरन बर ।
मोहिं अपने बाबा की सौंहैं कान्हहिं अब न पत्याउँ ।
भवन जाहु अपनैं-अपनैं सब लागति हौं मैं पाउँ ।
मोकौं जनि बरजौ जुवती कोउ, देखौ हरि के ख्याल ।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा बड़े नंद के लाल ॥४०२॥

जसुदा, तेरौ मुख हरि जोवै।
कमल नैन हरि हिचिकिनि रोवै, बंधन छोरि जसोवै।
जौ तेरौ सुत खरौ अचगरौ, तउ कोखि कौ जायौ।
कहा भयौ जो घर कैं ढोटा, चोरी माखन खायौ।
कोरी मटुकी दह्यौ जमायौ जाख न पूजन पायौ।
तिहिं घर देव-पितर काहे कौं जा घर कान्हर आयौ।
जाकौ नाम लेत भ्रम छूटै, कर्म-फंद सब काटै।
सोई इहाँ जेंवरी बाँधे जननि साँटि लै डाँटै।
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के ऊखल आपु बँधायौ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत ही देह धारि कै आयौ॥४०३॥

देखी माई, कान्ह हिलकियनि रोवै।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ डरनि आँसुवनि धोवै।
माखन लागि उलूखल बाँध्यौ सकल लोग ब्रज जोवै।
निरखि कुरुख उन बालनि की दिसि लाजनि अँखियनि गोवै।
ग्वाल कहैं धनि जननि हमारी सुकर सुरभि नित नोवै।
बरबस ही बैठारि गोद मैं, धारैं बदन निचोवै।
ग्वालि कहैं या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै?
आनि देहिं अपने घर तैं हम चाहति जितौ जसोवै।
जब जब बंधन छोर्‌यौ चाहति सूर कहै यह को वै।
मन माधौ-तन चित गोरस मैं इहिं बिधि महरि बिलोवै।४०४

कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत।
बालक बदन बिलोकि जसोदा कत रिस करति अचेत।
छोरि उदर तैं दुसह दाँवरी डारि कठिन कर बेंत।
कहि धौं री तोहिं क्यौं करि आवै सिसु पर तामस एत।
मुख आँसू अरु माखन कनुका निरखि नैन छबि देत।
मानौ स्रवत सुधानिधि मोती उडुगन अवलि समेत।

सो जानौं किहिं पुन्य प्रगट भए इहिं ब्रज नँद-निकेत ।
तन-मन धन न्यौछावरि कीजै सूर स्याम कैं हेत ॥४०५॥

मुख-छबि देखि हो नँद-घरनि ।
सरद निसि कौ अंसु अगनित इंदु आभा हरनि ।
ललित श्री गोपाल-लोचन-लोल-आँसू-ढरनि ।
मनहुँ वारिज बिथकि बिभ्रम, परे पर बस परनि ।
कनक-मनि-मय-जटित-कुंडल-जोति जगमग करनि ।
मित्र-मोचन मनहुँ आए, तरल गति द्वै तरनि ।
कुटिल कुंतल मधुप मिलि मनु, कियौ चाहत लरनि ।
बदन कांति बिलोकि सोभा सकै सूर न बरनि ॥४०६॥

हरि-मुख देखि हो नँद-नारि ।
महरि ऐसे सुभग सुत सौं, इतौ कोह निवारि ।
सरद-मंजुल-जलज-लोचन लोल, चितवनि दीन ।
मनहुँ खेलत हैं परस्पर मकरध्वज द्वै मीन ।
ललित कन-संजुत कपोलनि लसत कज्जल अंक ।
मनहुँ राजत रजनि पूरन कलापति सकलंक ।
बेगि बंधन छोरि, तन-मन वारि लै हिय लाइ ।
नवल स्याम किसोर ऊपर, सूर जन बलि जाइ ॥४०७॥

कही न माखन ल्यावै घर तैं ।
जा कारन तू छोरति नाहीं लकुट न डारति कर तैं ।
सुनहु महरि ऐसी न बूझियै सकुचि गयौ मुख डर तैं ।
ज्यौं जलरुह ससि-रस्मि पाइ कै, फूलत नाहिन सर तैं ।
ऊखल लाइ भुजा धरि बाँधी, मोहनि मूरति वर तैं ।
सूर स्याम-लोचन जल बरसत जनु मुकुता हिमकर तैं ॥४०८॥

कहन लगी अब बढ़ि-बढ़ि बात ।

अब मोहिं माखन देति मँगाए, मेरैं घर कछु नाहिं।
उरहन कहि-कहि साँझ सवारैं, तुमहिं बँधायौ याहि।
रिसहीं मैं मोहीं गहि दीन्हौ, अब लागी पछितान।
सूरदास अब कहति जसोदा बूझ्यौ सबको ज्ञान ॥४०८॥

कहा भयौ जौ घर कैं लरिका चोरी माखन खायौ।
अहो जसोदा, कत त्रासति हौ यहै कोखि कौ जायौ।
बालक अजौं अजान न जानैं केतिक दह्यौ लुटायौ।
तेरौ कहा गयौ ? गोरस कौ गोकुल अंत न पायौ।
हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन पास बँधायौ।
रुदन करत दोउ नैन रचे हैं, मनहुँ कमल-कन छायौ।
पौढ़ि रहे धरनी पर तिरछैं बिलखि बदन मुरझायौ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि हँसि करि कंठ लगायौ।

जसुदा देखि सुत की ओर।
बाल बैस रसाल पर रिस इती कहा कठोर।
बार बार निहारि तुव तन नमित मुख दधि चोर।
तरनि किरनहिं परसि मानौ, कुमुद सकुचत भोर।
त्रास तैं अति चपल गोलक सजल सोभित छोर।
मीन मानौ बेधि बंसी, करत जल झकझोर।
देत छबि अति गिरत उर पर अंबु-कन कै जोर।
ललित हिय जनु मुक्त-माला, गिरत टूटैं डोर।
नंद-नंदन जगत-बंदन करत आँसू कोर।
दास सूरज मोहि सुख-हित निरखि नंदकिसोर ॥४११॥

कब के बाँधे ऊखल दाम।
कमल-नैन बाहिर करि राखे तू बैठी सुखधाम।
है निरदई दया कछु नाहीं, लागि रही गृह काम।
देखि छुधा तैं मुख कुम्हिलानी अति कोमल तन स्याम।

छोरहु बेगि भई बड़ी बिरियाँ, बीति गए जुग जाम ।
तेरैं त्रास निकट नहिं आवत, बोलि सकत नहिं राम ।
जन-कारन भुज आपु बँधाए, बचन कियौ रिषि ताम ।
ता दिन तैं प्रगट सूर प्रभु यह दामोदर नाम ॥४१२॥

(जसोदा) तेरौ भलौ हियौ है माई ।
कमल-नैन माखन कैं कारन, बाँधे ऊखल ल्याई ।
जो संपदा देव-मुनि-दुर्लभ सपनैंहु देइ न दिखाई ।
याही तैं तू गर्ब भुलानी घर बैठें निधि पाई ।
जो मूरति जल-थल मैं व्यापक निगम न खोजत पाई ।
सो मूरति तैं अपनैं आँगन, चुटकी दै जु नचाई ।
तब काहू सुत रोवत देखति दौरि लेति हिय लाई ।
अब अपने घर के लरिका सौं इती करति निठुराई ।
बारंबार सजल लोचन करि चितवत कुँवर कन्हाई ।
कहा करौं बलि जाउँ छोरि तू, तेरी सौंह दिखाई ।
सुर पालक, असुरनि उर सालक, त्रिभुवन जाहि डराइ ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाई ॥४१३॥

देखि री नँद-नंदन-ओर ।
त्रास तैं तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर ।
बार बार डरात तोकौं बरन बदलहिं थोर ।
मुकुर-मुख दोउ नैन ढारत छनहिं छन छबि-छोर ।
सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसे डोर (क) ।
रस भरे अंबुजनि भीतर भ्रमत मानौ भौंर ।
लकुट कैं डर देखि जैसे भए स्रोनित कोर ।
लाइ उरहिं, बहाइ रिस जिय तजहु प्रकृति कठोर ।
कछुक करुना करि जसोदा करति निपट निहोर ।
सूर स्याम त्रिलोक की निधि भलैंहिं माखन-चोर ॥४१४॥

अमुदा यह न बूझि कौ काम ।
कमल-नैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैं दाम ।
पुत्रहु तैं प्यारी कोउ है री, कुल-दीपक मनि-धाम ।
हरि पर वारि डारि सब तन, मन, धन गोरस अरु ग्राम ।
देखियत कमल बदन कुम्हिलानौ, तू निरमोही बाम ।
बैठी है मंदिर सुख छहियाँ सुत दुख पावत घाम ।
येई हैं सब ब्रज के जीवन सुख पावत लिएँ नाम ।
सूरदास प्रभु भक्तनि कैं बस यह ठानी घनस्याम ॥४१७॥

ऐसी रिस तोकौं नँदरानी ।
भली बुद्धि तेरैं जिय उपजी, बड़ी बैस अब भई सयानी ।
ढोटा एक भयौ, सोऊ करि कौन-कौन करबर बिधि भानी ।
क्रम-क्रम करि अब लौं उबरयौ है, ताकौं मारि पितर दै पानी ।
को निरदई रहै तेरैं घर, को तेरैं सँग बैठे आनी ।
सुनहु सूर कहि-कहि पचिहारी, जुबती चलीं घरहिं बिरुझानी ॥४१८॥

हलधर सौं कहि ग्वालि सुनायौ ।
प्रातहिं तें तुम्हरौ लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ ।
काहू के लरिकहिं हरि मारयौ भोरहिं आनि तिनहिं गुहरायौ ।
तबही तें बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकौं आनि जनायौ ।
हम बरजी, बरज्यौ नहिं मानति, सुनतहिं बल आतुर ह्वै धायौ ।
सूर स्याम बैठे ऊखल लगि माता उर तनु अतिहिं त्रसायौ ॥४१९॥

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए ।
देखि स्याम ऊखल सौं बाँधे तबही दोउ लोचन भरि आए ।
मैं बरज्यौ कै बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए ।
अजहूँ छाँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए ।
स्यामहिं छोरि मोहिं बाँधे बरु, निकसत सगुन भले नहिं पाए ।
मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा तिनके भुज मोहिं बँधे दिखाए ।

माता सौं कछु करी ढिठाई सो सरूप कहि नाम सुनाए।
सूरदास तब कहति जसोदा दोउ भैया तुम इक मत पाए ॥४१८

काहे कौं कलह नाथ्यौ, दारुन दाँवरि बाँध्यौ
कठिन लकुट लै तैं त्रास्यौ मेरैं भैया।
नाहीं कसकत मन निरखि कोमल तन
तनिक से दधि-काज भली री तू मैया।
हौं तौ न भयौ री घर देखत्यौ तेरी यौं अर
फोरतौ बासन सब जानति बलैया।
सूरदास हित हरि लोचन आए हैं भरि,
बलहू कौ बल जाकौ सोई री कन्हैया ॥४१९॥

काहे कौं हरि इतनौ त्रास्यौ।
सुनि री मैया, मेरैं भैया कितनौ गोरस नास्यौ।
जब रजु सौं कर गाढ़े बाँधे, छर-छर मारी साँटी।
सूनैं घर बाबा नँद नाहीं ऐसैं करि हरि डाँटी।
और नैंकु छूवै देखौ स्यामहिं, ताकौ करौं निपात।
तू जो करै बात सोइ साँची, कहा कहौं तोहिं मात।
ठाढ़े सकल ग्वाल सब हलधर, माखन प्यारौ तोहिं।
ब्रज-प्यारौ, जाकौं मोहिं गारी, छोरत काहे न मोहिं।
काकौ ब्रज माखन-दधि काकौ, बाँधे जकरि कन्हाई।
सुनत सूर हलधर की बानी जननी सैन बताई ॥४२०॥

सुनहु बात मेरी बलराम।
करन देहु इनकौं मोहिं पूजा चोरी प्रगटत नाम।
तुमहीं कहौ कमी काहे की, नव-निधि मेरैं धाम।
मैं बरजति सुत जाहु कहूँ जनि, कहि हारी दिन याम।
तुमहुँ मोहिं अपराध लगायौ माखन प्यारौ स्याम।
सुनि मैया तोहिं छाँड़ि कहौं किहिं, को राखै तेरैं ताम।

तेरी सौं उरहन लै आवति, झूठहिं ब्रज की बाम ।
सूर स्याम अतिहीं अकुलाने कब के बाँधे दाम ॥४२१॥

तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई ।
जुवती गईं घरनि सब अपनैं, गृह कारज जननी अटकाई ।
आपु गए जमलार्जुन-तरु-तर, परसत पात उठे झहराई ।
दिए गिराइ धरनि दोऊ तरु सुत कुबेर के प्रगटे आई ।
दोउ कर जोरि करत दोउ अस्तुति चारि भुजा तिन्ह प्रगट दिखाई
सूर धन्य ब्रज जनम लियौ हरि, धरनी की आपदा नसाई ॥४२२

मोहन हौं तुम ऊपर वारी ।
कंठ लगाइ लिए मुख चूमति, सुंदर स्याम बिहारी ।
काहे कौं ऊखल सौं बाँध्यौ कैसी मैं महतारी ।
अतिहिं उतंग बयारि न लागत, क्यौं टूटे तरु भारी ।
बारंबार बिचारति जसुमति, यह लीला अवतारी ।
सूरदास स्वामी की महिमा कापै जाति बिचारी ॥४२३॥

अब घर काहू कै जनि जाहु ।
तुम्हरैं आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिं खाहु ।
बरै जेंवरी जिहिं तुम बाँधे परैं हाथ भहराइ ।
नंद मोहिं अतिही त्रासत हैं, बाँधे कुँवर कन्हाइ ।
रोग जाउ मेरे हलधर के छोटत हौ तब स्याम ।
सूरदास प्रभु खात फिरौ जनि माखन-दधि तुव धाम ॥४२४

ब्रज-जुवती स्यामहिं उर लावति ।
बारंबार निरखि कोमल तनु कर जोरति बिधि कौं जु मनावति ।
कैसैं बचे अगम तरु कैं तर, मुख चूमति यह कहि पछितावति ।
उरहन लै आवति जिहिं कारन सो सुख फल पूरन करि पावति ।
सुनौ महरि, इनकौं तुम बाँधति, भुज गहि बंधन चिन्ह दिखावति
सूरदास प्रभु अति रति नागर गोपी हरषि हृदय लपटावति ।४२५

भूखौ भयौ आजु मेरौ बारौ।
भोरहिं ग्वारि चरावनौ ल्याई, उहिं यह किन्ही पसारी।
पहिलैहिं रोहिनि सौं कहि राख्यौ तुरत करहु जेवनार।
ग्वाल-बाल सब बोलि लिए, मिलि बैठे नंद-कुमार।
भोजन बेगि ल्याउ कछु मैया, भूख लगी मोहिं भारी।
आजु सवारें कछु नहिं खायौ, सुनत हँसी महतारी।
रोहिनि चितै रही जसुमति-तन सिर धुनि धुनि पछितानी
परसहु बेगि बेर कत लावति, भूखे सारँगपानी।
बहु ब्यंजन बहु भाँति रसोई षट-रस के परकार।
सूर स्याम हलधर दोउ भैया और सखा सब ग्वार ॥४२६॥

मोहिं कहत जुवती सब चोर।
खेलत कहूँ रहौं मैं बाहिर, चितै रहति सब मेरी ओर।
बोलि लेति भीतर घर अपनें मुख चूमति, भरि लेति अँकोर।
माखन हेरि देति अपनें कर कछु कहि बिधि सौं करति निहोर।
जहाँ मोहिं देखति तहँ टेरति, मैं नहिं जात दुहाई तोर।
सूर स्याम हँसि कंठ लगायौ वै तरुनी कहँ बालक मोर ।४२७।

जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपनैं ही आँगन तुम खेलौ।
बोलि लेहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ।
ब्रज-बनिता सब चोर कहति तोहिं, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ
आजु मोहिं बलराम कहत हे, झूठहिं नाम धरति हैं तेरौ।
जब मोहिं रिस लागति तब त्रासति बाँधति मारति जैसें चेरौ।
सूर हँसति ग्वालिनि दै तारी चोर नाम कैसैंहु सुत फेरौ ।४२८।

महर-महरि कैं मन यह आई।
गोकुल होत उपद्रव दिन प्रति बसिऐ बृंदावन मैं जाई।
सब गोपिनि मिलि सकटा साजे सबहिनि के मन मैं यह भाई।
सूर जमुन-तट डेरा दीन्हे, पाँच बरस के कुँवर कन्हाई ।४२९।

जननि मथति दधि दुहत कन्हाइ।
सखा परस्पर कहत स्याम सौं, हमहूँ सौं तुम करत चँड़ाई।
दुहन देहु कछु दिन अरु मोकौं तब करिहौ मो समसरि धाई।
जब लौं एक दुहौगे तब लौं चारि दुहौगो नंद दुहाई।
झूठहिं करत दुहाई प्रातहिं, देखहिंगे तुम्हरी अधिकाई।
सूर स्याम कह्यौ कालि दुहैंगे, हमहूँ तुम मिलि होड़ लगाई ।४१४

आजु मैं गाइ चरावन जैहौं।
बृंदावन के भाँति-भाँति फल अपने कर मैं खैहौं।
ऐसी बात कहौ जनि बारे देखौ अपनी भाँति।
तनक-तनक पग चलिहौ कैसैं आवत ह्वै है राति।
प्रात जात गैया लै चारन घर आवत हैं साँझ।
तुम्हरौ कमल बदन कुम्हिलैहै, रेंगत घामहिं माँझ।
तेरी सौं मोहिं घाम न लागत भूख नहीं कछु नेक।
सूरदास प्रभु कह्यौ न मानत परयौ आपनी टेक ।४१५।

मैया हौं गाइ चरावन जैहौं।
तू कहि महर नंद बाबा सौं बड़ौ भयौ न डरैहौं।
रैता पैता मना मनसुखा हलधर संगहिं रैहौं।
बंसीवट तर ग्वालनि कैं सँग, खेलत अति सुख पैहौं।
ओदन भोजन दै दधि काँवरि, भूख लगे तैं खैहौं।
सूरदास है साखि जमुन-जल सौंह देहु जु नहैहौं ।४१६।

चले सब गाइ चरावन ग्वाल।
हेरी टेर सुनत लरिकनि की, दौरि गए नँदलाल।
फिरि इत-उत जसुमति जौ देखै दृष्टि न परे कन्हाई।
जान्यौ जात ग्वाल सँग दौरयौ टेरति जसुमति धाई।
जात चल्यौ गैयन के पाछैं, बलदाऊ कहि टेरत।
पाछैं आवति जननी देखी, फिरि-फिरि इत कौं हेरत।

बन देख्यौ मोहन कौ आवत सखा किए सब ठाढ़े।
पहुँची आइ जसोदा रिस भरि, दोउ भुज पकरे गाढ़े।
हलधर कह्यौ, जान दे मो सँग, आवहिं आज सवारे।
सूरदास बल सौं कहै जसुमति, देखे रहियौ प्यारे ॥४३७॥

सीखत कान्ह चले ग्वालनि सँग।
जसुमति यहै कहत घर आई हरि कीन्हे कैसे रँग।
प्रातहिं तैं लागे याही ढँग अपनी टेक करयौ है।
देखौ जाइ आजु बन कौ सुख कहा परोसि धरयौ है।
माखन-रोटी अरु सीतल जल, जसुमति दियौ पठाइ।
सूर नंद हँसि कहत महरि सौं, आवत कान्ह चराइ ॥४३८॥

वृंदावन देख्यौ नँद-नंदन अतिहिं परम सुख पायौ।
जहँ-जहँ गाइ चरति, ग्वालनि सँग तहँ तहँ आपुन धायौ।
बलदाऊ मोकौं जनि छाँड़ौ, संग तुम्हारैं ऐहौं।
कैसेहुँ आजु जसोदा छाँड्यौ काल्हि न आवन पैहौं।
सोवत मोकौं टेरि लेहुगे बाबा नंद-दुहाई।
सूर स्याम बिनती करि बल सौं, सखनि समेत सुनाई ॥४३९॥

जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ।
मो कारन कछु आन्यौ है बलि बन-फल तोरि नन्हैया।
तुमहिं मिलैं मैं अति सुख पायौ, मेरे कुँवर कन्हैया।
कछुक खाहु जो भावै मोहन, दै री माखन-रोटी।
सूरदास प्रभु जीवहु जुग-जुग हरि-हलधर की जोटी ॥४४०॥

मैं अपनी सब गाइ चरैहौं।
प्रात होत बल कै सँग जैहौं तेरे कहैं न रैहौं।
ग्वाल-बाल गाइनि के भीतर, नैकहुँ डर नहिं लागत।
आजु न सोवौं नंद-दुहाई, रैनि रहौंगी जागत।

और ग्वाल सब गाइ चरैहैं मैं घर बैठी रैहौं ?
सूर स्याम तुम सोइ रही अब प्रात जान मैं दैहौं ॥४४१॥

मैया री, मोहिं दाऊ टेरत।
मोकौं बन-फल तोरि देत हैं, आपुन गैयनि घेरत।
और ग्वाल संग कबहुँ न जैहौं वे सब मोहिं खिझावत।
मैं अपने दाऊ संग जैहौं बन देखैं सुख पावत।
आगैं दै पुनि ल्यावत घर कौं तू मोहिं जान न देति।
सूर स्याम जसुमति मैया सौं हा-हा करि कहै केति ॥४४२॥

बोलि लियौ बलरामहिं जसुमति।
लाल सुनौ हरि के गुन, काल्हिहिं तैं लँगराइ करत अति।
स्यामहिं जान देहि मेरैं सँग तू काहैं डर मानति।
मैं अपने ढिग तैं नहिं टारौं जियहिं प्रतीति न आनति।
हँसी महरि बल की बतियाँ सुनि बलिहारी या मुख की।
जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौं, कहति बीर के रुख की ॥४४३॥

ब्रज मैं को उपज्यौ यह भैया।
संग सखा सब कहत परस्पर, इनके गुन अगमैया।
जब तैं ब्रज अवतार धरयौ इन, कोउ नहिं घात करैया।
तृनावर्त्त पूतना पछारी तब अति हे नन्हैया।
कितिक बात यह बका बिदारयौ, धनि जसुमति जिनि जैया।
सूरदास प्रभु की यह लीला हम कत जिय पछितैया ॥४४४॥

आजु जसोदा जाइ कन्हैया महा दुष्ट इक मारयौ।
पन्नग-रूप गसे सिसु गो-सुत इहिं सब साथ उबारयौ।
गिरि-कंदरा समान भयानक जब अघ-बदन पसारयौ।
निडर गोपाल पैठि मुख-भीतर, खंड-खंड करि डारयौ।
याकैं बल हम बदत न काहूहिं, सकल भूमि तृन चारयौ।
जीते सबै असुर हम आगैं हरि कबहूँ नहिं हारयौ।

हरषि गए सब कहत महरि सौं अघहिं अघासुर मारयौ ।
सूरदास प्रभु की यह लीला ब्रज कौ काज सँवारयौ ॥४४४॥

जसुमति सुनि-सुनि चकित भई ।
मैं बरजति बन जात कन्हैया का धौं करै दई ।
कहाँ-कहाँ तैं उबरयौ मोहन नैकु न तरु डरात ।
आपुन कहा जनक सौं, बन मैं सुनी बहुत मैं घात ।
मेरौ कह्यौ सुनौ धौं सबननि कहति जसोदा खीझत ।
सूर स्याम कहौ बन नहिं जैहौं, यह कहि मन-मन रीझत ॥४४६

बन पहुँचत सुरभी लई जाइ ।
जैहौ कहा सखनि कौं टेरत, हलधर संग कन्हाइ ।
जेंवत परखि लियौ नहिं हमकौं, तुम अति करी चँडाइ ।
अब हम जैहैं दूरि चरावन, तुम सँग रहैं बलाइ ।
यह सुनि ग्वाल धाइ तहँ आए स्यामहिं अंकम लाइ ।
सखा कहत यह नँद-सुवन सौं, तुम सब के सुखदाइ ।
आजु चलौ बृंदावन जैये, गैया चरैं अघाइ ।
सूरदास प्रभु सुनि हरषित भए, घर तैं छाँक मँगाइ ॥४४५॥

आजु चरावन गाइ चलौ जू कान्ह, कुमुद बन जैये ।
सीतल कुंज कदम की छहियाँ, छाक तहाँ रस खैये ।
अपनी-अपनी गाइ ग्वाल सब, आनि करौ इकठौरी ।
धौरी, धूमरि, राती रौंछी बोल बुलाइ चिन्हौरी ।
पियरी, मौरी गौरी गैनी, खैरी, कजरी जेती ।
दुलही फुलही, भौरी भूरी हाँकि ठिकाई तेती ।
बाबा नँद बुरौ मानेंगे और जसोदा मैया ।
सूरजदास जनाइ लियौ है, यह कहिके बल भैया ॥४४८॥

चरावत बृंदावन हरि धेनु ।
ग्वाल सखा सब संग लगाए, खेलत हैं करि चैनु ।

कोउ गावत, कोउ मुरलि बजावत, कोउ विषान, कोउ बेनु।
कोउ निरतत कोउ उघटि तार दै जुरी ब्रज बालक-सैनु।
त्रिबिध पवन जहँ बहत निसादिन सुमग कुंज घन ऐनु।
सूर स्याम निज धाम बिसारत, आवत यह सुख लैनु ॥४४५॥

वृंदावन मोकौं अति भावत।

सुनहु सखा तुम सुबल, श्रीदामा ब्रज तैं बन गौ-चारन आवत।
कामधेनु सुरतरु सुख जितने रमा सहित बैकुंठ भुलावत।
इहिं वृंदावन, इहिं जमुना-तट, ये सुरभी अति सुखद चरावत।
पुनि पुनि कहत स्याम श्रीमुख सौं तुम मेरैं मन अतिहिं सुहावत।
सूरदास सुनि ग्वाल चकृत भए यह लीला हरि प्रगट दिखावत ॥
ग्वाल सखा कर जोरि कहत हैं, हमहिं स्याम तुम जनि बिसरावहु।
जहाँ-जहाँ तुम देह धरत हौ तहाँ-तहाँ जनि चरन छुड़ावहु।
ब्रज तैं तुमहिं कहूँ नहिं टारौं यहै पाइ मैं हूँ ब्रज आवत।
यह सुख नहिं कहुँ भुवन चतुर्दस, इहिं ब्रज यह अवतार बतावत।
और गोप जे बहुरि चले घर तिनसौं कहि ब्रज छाक मँगावत।
सूरदास प्रभु गुप्त बात सब, ग्वालनि सौं कहि कहि सुख पावत ॥

छाक लेन जे ग्वाल पठाए।

तिनसौं पूछति महरि जसोदा, कौंहि कान्ह कित आए।
हमहिं पठाइ दिए नँद-नंदन, भूखे अति अकुलाए।
धेनु चरावत हैं वृंदावन, हम इहिं कारन आए।
यह कहि ग्वाल गए अपनें गृह, मन की खबरि सुनाए।
सूर स्याम बलराम प्रातहीं अपनेंबल उठि धाए ॥४५२॥

मही की इक ग्वारि बुलाई।

छाक सामग्री सबै जोरि कै काँधें कर दै तुरत पठाई।
कह्यौ जाहि वृंदावन जैयौ, तू जानति सब प्रकृति कन्हाई।
प्रेम सहित लै चली छाक वह कहँ हैं भूखे दोउ भाई।

तुरत जाइ बृंदावन पहुँची, ग्वाल-बाल कहुँ कोउ न पाई ।
सूर स्याम कौं टेरत डोलति, फिरत द्वौ लाल, छाक मैं लाई ॥४२३॥

बहुत फिरी तुम काज कन्हाई ।
टेरि टेरि मैं भई बावरी दोउ भैया तुम रहे लुकाई ।
जो सब ग्वाल गए ब्रज घर कौं तिनसौं कहि तुम छाक मँगाई ।
लवनी दधि मिष्ठान्न ओरि कै जसुमति मेरैं हाथ पठाई ।
ऐसी भूख माँझ तू ल्याई तेरी किहिं बिधि करौं बड़ाई ।
सूर स्याम सब सखनि पुकारत आवत क्यौं न छाक है आई ॥४२४

बिहारी लाल आवहु, आई छाक ।
भई अबार गाइ बहुरावहु उलटावहु दै हाँक ।
अर्जुन भोज अरु सुबल, सुदामा, मधुमंगल इक ताक ।
मिलि बैठे सब जेवन लागे बहुत बने कहि पाक ।
अपनी पत्रावलि सब देखत जहँ-तहँ फेनि पिराक ।
सूरदास प्रभु खात ग्वाल सँग, ब्रह्मलोक यह धाक ॥४२५॥

ग्वालनि संग जेंवत हरि छाक ।
प्रेम सहित मैया दै पठाइ, सबै बनाई है इक ताक ।
सुबल सुदामा श्रीदामा मिलि, सब सँग भोजन रुचि करि खात ।
ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत, मुख लै मेलि सराहत जात ।
जो सुख स्याम करत बृंदावन सो सुख नाहीं लोकहुँ सात ।
सूर स्याम भक्तनि बस ऐसे ब्रज कहावत हैं नँद तात ॥४२६॥

ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत ।
जूठौ लेत सबनि के मुख कौ अपनैं मुख लै नावत ।
षटरस के पकवान धरे सब, तिनमैं रुचि नहिं लावत ।
हा-हा करि-करि माँगि लेत हैं कहत मोहिं अति भावत ।
यह महिमा येई पै जानत जातैं आपु बँधावत ।
सूर स्याम सपनैं नहिं दरसत मुनिजन ध्यान लगावत ॥४२७

ब्रज-बासी पटतर कोउ नाहिं।

ब्रह्म सनक सिव, ध्यान न पावैं, इनकी जूठनि लै-लै खाहिं।
धन्य नंद धनि जननि जसोदा धन्य जहाँ अवतार कन्हाइ।
धन्य धन्य बृंदावन के तरु जहँ बिहरत त्रिभुवन के राइ।
हलधर कहत छाक जेंवत सँग मीठी लगत सराहत जाइ।
सूरदास प्रभु बिस्वंभर हरि, सो ग्वालनि के कौर अघाइ ।४५८।

ब्रजहिं चलौ, आई अब साँझ।

सुरभी सबै लेहु आगैं करि, रैनि होइ बनि बनहीं माँझ।
भली कही यह बात कन्हाई अतिहीं सघन अरन्य उजारि।
गायौ हाँकि चलाई ब्रज कौं और ग्वाल सब लए पुकारि।
निकसि गए बन तैं जब बाहिर अति आनंद भए सब ग्वाल।
सूरदास प्रभु मुरलि बजावत ब्रज आवत नटवर गोपाल ।४५९।

सुनि माधौ ये बड़भागी मोर।

जिन पाँखनि कौ मुकुट बनायौ, सिर धरि नंदकिसोर।
ब्रह्मादिक सनकादि महामुनि, कमलापति होत कर जोर।
बृंदावन के तृन न भए हम, लगत चरन के कोर।
बड़ौ भाग नंद-जसुमति कौ है कोऊ ठहर न और।
सूरदास गोपिनि हित-कारन, कहियत माखन चोर ।४६०।

आजु बने बन तैं ब्रज आवत।

नाना रंग सुमन की माला नंद-नंदन उर पर छबि पावत।
संग गाए गोधन-गन लीन्हे, नाना गति कौतुक उपजावत।
कोउ गावत, कोउ नृत्य करत कोउ उघटत कोउ करताल बजावत।
राँभति गाइ बच्छ हित सुधि करि प्रेम उमँगि थन दूध चुवावत।
जसुमति बोलि उठी हरषित ह्वै, कान्हा धेनु चराए आवत।
इतनी कहत आइ गए मोहन, जननी दौरि हिए लै लावत।
सूर स्याम के कृत्य, जसोमति ग्वाल-बाल कहि प्रगट सुनावत ४६१

मैया बहुत बुरौ बलदाऊ।
कहन लग्यौ बन बड़ौ तमासौ, सब मौड़ा मिलि आऊ।
मोहूँ कौं चुचुकारि गयौ लै, जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चलौ कहि, गयौ उहाँ तैं काटि खाइ रे हाऊ।
हौं डरपौं काँपौं अरु रोवौं कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौं, नहिं भागि सकौं, वै भागे जात अगाऊ।
मोसौं कहत मोल कौ लीनौ, आपु कहावत साऊ।
सूरदास बल बड़ौ चवाई, तैसेहिं मिले सखाऊ।४६२।

ब्रह्मा बालक-बच्छ हरे।
आदि-अंत प्रभु अंतरजामी, मनसा तैं जु करे।
सोइ रूप वै बालक गो-सुत, गोकुल जाइ भरे।
एक बरष निसि-बासर रहि सँग, काहु न जानि परे।
त्रास भयौ अपराध आपु लखि, अस्तुति करत खरे।
सूरदास स्वामी मनमोहन, तामैं मन न धरे।४६३।

मैं तौ वे हरे हैं ते तौ सोवत परे हैं, ये करे हैं कौनैं आन,
अँगुरीनि दंत दै रह्यौ।
पुरुष पुरान जानि कियौ चतुरानन, कै सोई प्रभु पूरन प्रगट ह्याँ
ह्वै रह्यौ ?
उतै देखि आवै, इत आवै, अचरज पावै, सूर सुरलोक ब्रह्मलोक
एक ह्वै रह्यौ।
बिबस ह्वै हार मानी आपु जान्यौ मंदगामी, देखि गोप मंडली
कमंडली चकित रह्यौ।४६४।

बिनवै चतुरानन कर जोरे।
तुव प्रताप जान्यौ नहिं प्रभु जू करौं अस्तुति कर जोरे।
अपराधी मति हीन नाथ हौं, चूक परी निज भोरे।
हम कृत दोष छमौ करुनामय ज्यौं भू बरसत ओरे।

जुग-जुग बिरद यहै चलि आयौ, सत्य कहत अब होरे ।
सूरदास प्रभु पछिली सोभा अब न बनै मुख मोरे ।४६४।

माधौ मोहिं करौ वृंदावन-रेनु ।
जिहिं चरननि डोलत नँद-नंदन दिन प्रति बन-बन चारत धेनु ।
कहा भयौ यह देव-देह धरि, अरु ऊँचे पद पायें ऐनु ।
सब जीवनि कैं उदर माँझ प्रभु महा प्रलय-जल करत ही सैनु ।
हम तैं धन्य सदा वे द्रुम-तृन, बालक-बच्छ-बिषानउरु धेनु ।
सूर स्याम जिनकैं सँग डोलत, हँसि बोलत, मथि पीवत फेनु ।४६५

ऐसैं बसिये ब्रज की बीथिनि ।
ग्वारनि के पनवारे चुनि-चुनि उदर भरीजै सीथिनि ।
पैंड़े के सब कुंज बिराजत छाया परम पुनीतनि ।
कुंज-कुंज-प्रति लोटि-लोटि, ब्रज-रज लागै रँग रीतनि ।
निसिदिन निरखि जसोदानंदन, अरु जमुना-जल पीवनि ।
परसत सूर होत तन पावन दरसन करत अतीतनि ।४६७।

धनि यह वृंदावन की रेनु ।
नंद-किसोर चरावत गैयाँ मुखहिं बजावत बेनु ।
मन-मोहन कौ ध्यान धरै जिय अति सुख पावत चैनु ।
चलत कहाँ मन और पुरी तन जहाँ कछु लेनु न देनु ।
इहाँ रहहु जहँ जूठनि पावहु, ब्रजबासिनि कै ऐनु ।
सूरदास ह्याँ की सरवरि नहिं, कल्पवृच्छ सुर-धेनु ।४६८।

सुनि मैया मैं तौ पय पीवौं मोहिं अधिक रुचि आवै री ।
आजु सवारें धेनु दुही मैं, वहै दूध मोहिं प्यावै री ।
और धेनु कौ दूध न पीवौं, जौ करि कोटि बनावै री ।
जननी कहति, दूध धौरी कौ, पुनि-पुनि सौंह करावै री ।
तुम तैं मोहिं और को प्यारौ बारंबार मनावै री ।
सूर स्याम कौं पय धौरी कौ माता हित सौं ल्यावै री ।४

पाई पाई है रे भैया, कुंज पुंज मैं टाकी।
अबकैं अपनी हटकि चरावहु, जैहैं भटकी घाकी।
आवहु बेगि सकल घर दिसि तैं कत डोलत अकुलाने ?
सुनि मृदु बचन हेरि बदन कर, हरषि सबै समुझाने।
तुम तौ फिरत बनत ही ढूँढ़त, ये बन फिरहिं अकेली।
हाँकी गाइ कौन पै कीही, सघन बहुत द्रुम बेली।
सूरदास प्रभु मधुर बचन कहि, हरषित सबहिं बुलाए।
नृत्य करत आनंद गो चारत सबै कृष्न पै आए ॥४७०॥

आनँद सहित सबै ब्रज आए।
धन्य जसोदा तेरौ बारौ हम सब मरत जिवाए।
नर-बपु धरे देव यह कोऊ, आइ लियौ अवतार।
गोकुल-ग्वाल-गाइ-गोसुत के येई रखनहार।
पय पीवत पूतना निपाती, तृनावर्त इहिं भाँति।
बृषभासुर-बच्छासुर मारयौ, बक-मोहन दोउ भ्रात।
जब तैं जनम लियौ ब्रज-भीतर, तब तैं यहै उपाइ।
सूर स्याम के बल-प्रताप तैं, बन-बन चारत गाइ ॥४७१॥

तुम कत गाइ चरावन जात।
पिता तुम्हारौ नंद महर सौ अरु जसुमति सी जाकी मात।
खेलत रहौ आपने घर मैं माखन दधि भावै सो खात।
अमृत बचन कहौ मुख अपने, रोम-रोम पुलकित सब गात।
अब काहू के जाहु कहूँ जनि, आवति हैं जुवती इतरात।
सूर स्याम मेरे नैननि आगे तैं, कत कहूँ जात हौ तात ॥४७२॥

मैया हौं न चरैहौं गाइ।
सिगरे ग्वाल घिरावत मोसौं मेरे पाइ पिराइ।
जौ न पत्याहि पूँछि बलदाऊहिं, अपनी सौंह दिवाइ।
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि, गारी देत रिसाइ।

मैं पठवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ ।
सूर स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ ॥४७३॥

अंग अभूषन जननि उतारति ।
दुलरी ग्रीव माल मोतिनि की, लै केयूर भुज स्याम निहारति ।
छुद्रावली उतारति कटि तैं सौंति धरति मनहीं मन वारति ।
रोहिनि, भोजन करौ चँडाई बार-बार कहि-कहि करि आरति ।
भूखे भए स्याम हलधर दोउ, यह कहि अंतर प्रेम बिचारति ।
सूरदास प्रभु-मातु जसोदा पट लै, दुहुनि अंग-रज झारति ॥४७४

ये दोउ मेरे गाइ चरैया ।
मोल बिसाहि लियौ मैं तुमकौं जब दोउ रहे नन्हैया ।
तुमसौं टहल करावति निसि-दिन और न टहल करैया ।
यह सुनि स्याम हँसे कहि दाऊ, झूठ कहति है मैया ।
जानि परत नहिं साँच मुठाई चारत धेनु झुरैया ।
सूरदास जसुदा मैं चेरी कहि-कहि लेति बलैया ॥४७५॥

सोवत नींद आइ गई स्यामहिं ।
महरि उठी पौढ़ाइ दुहुँनि कौं, आपु लगी गृह कामहिं ।
बरजति है घर के लोगनि कौं, हरुवें लै लै नामहिं ।
गाढ़ैं बोलि न पावत कोऊ डर मोहन बलरामहिं ।
सिव सनकादि अंत नहिं पावत ध्यावत अह निसि-जामहिं ।
सूरदास-प्रभु ब्रह्म सनातन, सो सोवत नँद-धामहिं ॥४७६॥

देखत नंद कान्ह अति सोवत ।
भूखे भए आजु बन-भीतर, यह कहि-कहि मुख जोवत ।
कह्यौ नहीं मानत काहू कौ, आपु हठी दोउ बीर ।
बार-बार तनु पोंछत कर सौं, अतिहिं प्रेम की पीर ।
सेज मँगाइ लई तहँ अपनी, जहाँ स्याम-बलराम ।
सूरदास प्रभु कैं ढिग सोए, सँग पौढ़ी नँद-बाम ॥४७७॥

जागि उठे तब कुँवर कन्हाई।
मैया कहाँ गई मो ढिग तैं, सँग सोवत बल भाई।
जागे नंद, जसोदा जागी, बोलि लिए हरि पास।
सोवत झझकि उठे काहे तैं, दीपक कियौ प्रकास।
सपनैं कूदि परयौ जमुना-दह, काहूँ दियौ गिराइ।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, जनि हो लाल डराइ ॥४७९॥

मैं बरज्यौ जमुना-तट जात।
सुधि रहि गई न्हात की तेरैं, जनि डरपौ मेरे तात।
नंद उठाइ लियौ कोरा करि, अपनैं सँग पौढ़ाइ।
वृंदावन मैं फिरत जहाँ-तहँ, किहिं कारन तू जाइ।
अब जनि जैहौ गाइ चरावन, कहूँ कौ छवति बलाइ।
सूर स्याम दंपति बिच सोए, नींद गई तब आइ ॥४८०॥

सपनौ सुनि जननी अकुलानी।
दंपति बात करत आपुस मैं, सोवत सारँगपानी।
या ब्रज कौ जीवन यह ढोटा, कहा देख्यौ हरि आजु।
गाइ चरावन जान न दैहौं, याकौ है कह काजु।
गृह-संपति है जनक कुटौना, इनहीं कौ सुख-भोग।
सूर स्याम जब जात चरावन, हँसी करत सब लोग ॥४८१॥

नारद रिषि नृप सौं यौं भाषत।
वै हैं काल तुम्हारे प्रगटे, काहैं उनकौं राखत।
काली उरग रहै जमुना मैं, तहँ तैं कमल मँगावहु।
दूत पठाइ देहु ब्रज ऊपर, नंदहि अति डरपावहु।
यह सुनि कै ब्रज लोग डरैंगे, वै सुनिहैं यह बात।
पुहुप लेन जैहैं नँद-ढोटा, उरग करै तहँ घात।
यह सुनि कंस बहुत सुख पायौ, भली कही यह मोहिं।
सूरदास प्रभु कौं मुनि जानत, ध्यान धरत मन जोहि ॥४८२॥

कंस बुलाइ दूत इक लीन्हौ।
कालीदह के फूल मँगाए, पत्र लिखाइ ताहि कर दीन्हौ।
यह कहियौ ब्रज जाइ नंद सौं, कंस राज अति काज मँगायौ।
तुरत पठाइ दिएँ ही बनिहै, भली भाँति कहि कहि समुझायौ।
यह अंतरजामी जानी जिय, आपु रहे, बन ग्वाल पठाए।
सूर स्याम, ब्रज-जन-सुखदायक, कंस-काल जिय हरष बढ़ाए ॥४८२

पाती बाँचत नंद डराने।
कालीदह के फूल पठावहु, सुनि सबही घबराने।
जौ मोकौं नहिं फूल पठावहु, तौ ब्रज देहुँ उजारि।
महर गोप, उपनंद न राखौं सबहिनि डारौं मारि।
पुहुप देहु तौ बनै तुम्हारी, मातरु गए बिलाइ।
सूर स्याम-बलराम तिहारे, माँगौं उनहिं धराइ ॥४८३॥

नंद सुनत मुरझाइ गए।
पाती बाँची, सुनी दूत मुख यह सुनि चकित भए।
बल मोहन उन्मत्त वाके मन, आजु कही यह बात।
कालीदह के फूल कही धौं को आनै, पछितात।
और गोप सब नंद बुलाए, कहत सुनी यह बात।
सुनहु सूर नृप इहिं ढँग आयौ बल मोहन पर घात ॥४८४॥

आपु चढ़े ब्रज ऊपर काल।
कहौं निकसि जैये, को राखै नंद कहत बेहाल।
मोहिं नहीं जिय को डर नैकहुँ, दोउ सुत को डरपाउँ।
गाउँ तजौं कहुँ जाउँ निकसि लै, इनहीं काज पराउँ।
अब उबार नहिं दीसत कतहूँ, सरन राखि को लेइ।
सूर स्याम को बरजति माता, बाहिर जान न देइ ॥४८५॥

नंद घरनि ब्रज-नारि बिचारति।
ब्रजहिं बसत सब जनम सिरानौ ऐसी करी न आरति।

धाइ गहो तब फेंट स्याम की, देहु न मेरी गेंद मँगाई ।
और सखा जनि मोकौं जानौ, मोसौं तुम जनि करौ ढिठाई ।
जानि-बूझि तुम गेंद गिराई, अब दीन्हें ही बनै कन्हाई ।
सूर सखा सब हँसत परसपर, भली करी हरि गेंद गँवाई ॥४६०॥

फेंट छाँड़ि मेरी देहु श्रीदामा ।
काहे कौं तुम रारि बढ़ावत, तनक बात कैं कामा ।
मेरी गेंद लेहु ता बदलैं, बाँह गहत हौ धाइ ।
छोटौ बड़ौ न जानत काहूँ, करत बराबरि आइ ।
हम काहे कौं तुमहिं बराबर, बड़े नंद के पूत ।
सूर स्याम दीन्हें ही बनिहै, बहुत कहावत धूत ॥४६१॥

तोसौं कहा धुताई करिहौं ।
जहाँ करी तहँ देखी नाहीं, अब तोसौं मैं लरिहौं ।
मुँह सम्हारि तू बोलत नाहीं, कहत बराबरि बात ।
पावहुगे अपनी कियौ अबहीं, रिसनि कँपावत गात ।
सुनहु स्याम, तुमहूँ सरि नाहीं, ऐसे गए बिलाइ ।
हमसौं सतर होत सूरज प्रभु, कमल देहु अब जाइ ॥४६२॥

रिस करि लीन्ही फेंट छुड़ाइ ।
सखा सबै देखत हैं ठाढ़े, आपुन चढ़े कदम पर धाइ ।
तारी दै-दै हँसत सबै मिलि, स्याम गए तुम भाजि डराइ ।
रोवत चले श्रीदामा घर कौं, जसुमति आगैं कहिहौं जाइ ।
सखा-सखा कहि स्याम पुकारयौ, गेंद आपनी लेहु न आइ ।
सूर स्याम पीतांबर काछे, कूदि परे दह मैं भहराइ ॥४६३॥

हाय हाय करि सखनि पुकारयौ ।
गेंद काज यह करी श्रीदामा, नंद कौ ढोटा मारयौ ।
जसुमति चली रसोई भीतर, तबहिं ग्वालि इक छींकी ।
ठठकि रही द्वारे पर ठाढ़ी, बात नहीं कछु नीकी ।

आइ अजिर निकसी नँदरानी, बहुरी दोप मिटाइ।
मँजारी आगे ह्वै आई, पुनि फिरि आँगन आइ।
व्याकुल भई, निकसि गई बाहिर कहँ धौं गए कन्हाई।
बाएँ काग दाहिनैं खर-स्वर, व्याकुल घर फिरि आई।
छन भीतर, छन बाहिर आवति छन आँगन इहिं भाँति।
सूर स्याम कौं टेरति जननी, नैंकु नहीं मन साँति ॥४८४॥

ऐसे नंद चले घर आवत।
पैठत पौरि छींक भइ बाएँ, दाहिनैं धाह सुनावत।
फटकत स्रवन स्वान द्वारे पर गररी करति लराई।
माथे पर ह्वै काग उड़ान्यौ कुसगुन बहुतक पाई।
आए नंद घरहिं मन मारे, व्याकुल देखी नारि।
सूर नंद जसुमति सौं बूझत, बिनु छबि बदन निहारि ॥४८५॥

नंद घरनि सौं पूछत बात।
बदन झुराइ गयौ क्यौं तेरौ, कहाँ गए बल-मोहन तात?
भीतर चली रसोई कारन छींक परी तब आँगन आइ।
पुनि आगैं ह्वै गई मँजारी, और बहुत कुसगुन मैं पाइ।
मोहिं भए कुसगुन पर पैठत आजु कहा यह समुझि न जाइ।
सूर स्याम गए आजु कहाँ धौं बार-बार पूँछत नँदराइ ॥४८६॥

महर-महरि-मन गई जनाइ।
छन भीतर, छन आँगन ठाढ़े छन बाहिर देखत हैं जाइ।
इहिं अंतर सब सखा पुकारत रोवत आए ब्रज कौं धाइ।
आतुर गए नंद घर ही कौं महर-महरि सौं बात सुनाइ।
चकित भए दोउ बूझन लागे कहौ बात हमकौं समुझाइ।
सूर स्याम खेलत हीं कदम चढ़ि, कूदि परे कालीदह जाइ ॥४८७॥

ब्रज-बासी यह सुनि सब धाए।
कहाँ परयौ गिरि कुँवर कन्हैया, बालक तैं सो ठौर दिखाए।

सूनौ गोकुल कियौ स्याम तुम, यह कहि लोग उठे सब रोइ ।
नंद उरत सबहिनि धरि राख्यौ, पोंछत बदन नीर लै धोइ ।
ब्रज बासी सब कहत महर सौं मरन भयौ सब ही कौ आइ ।
सूर स्याम बिनु को बसिहै ब्रज धिक जीवन बिनु सुबन कन्हाइ ॥

महरि पुकारति कुँवर कन्हाई ।
माखन धरयौ तिहारैहि कारन आजु कहाँ अबसेरि लगाई ।
अति कोमल तुम्हरे मुख लायक, तुम देखहु मेरे नैन जुड़ा ।
धौरी-दूध औटि है राख्यौ अपनैं कर दुहि गए बनाई ।
बरजति ग्वारि जसोदा की सब, यह कहि कहि नीकैं बहुराई ।
सूर स्याम सुत बीच आजु के, यह बियोग बरन्यौ नहिं जाई ।४६६

चौंकि परी तन की सुध आई ।
आजु कहा ब्रज सोर मचायौ तब जान्यौ दह गिरयौ कन्हाइ ।
पुत्र-पुत्र कहिकै उठि दौरी, ब्याकुल जमुना-तीरहिं धाई ।
ब्रज-बनिता सब संगहिं लागी आइ गए बल, अमज भाई ।
जननी ब्याकुल देखि प्रबोधत धीरज करि नीकैं बहुराई ।
सूर स्याम कौं नैकु नहीं डर, जनि तू रोवै जसुमति माई ।५००।

अति कोमल तनु धरयौ कन्हाई ।
गए तहाँ जहँ काली सोवत उरग-नारि देखत अकुलाई ।
कह्यौ, कौन कौ बालक है तू, बार-बार कही, भागि न जाई ।
छनकहिं मैं जरि भस्म होइगौ जब देखै उठि जाग जम्हाई ।
उरग-नारि की बानी सुनि कै, आपु हँसे मन मैं मुसुकाई ।
मोकौं कंस पठायौ देखन तू याकौं अब देहि जगाई ।
कहा कंस दिखरावत इनकौं एक फूँकही मैं जरि जाई ।
पुनि-पुनि कहत सूर के प्रभु कौं तू अब काहे न जाइ पराई ।५०१

झिरकि कै नारि, दै गारि गिरिधारि तब, पूँछ पर लात दै अहि जगायौ।
उठ्यौ अकुलाइ, डर पाइ खगराइ कौ, देखि बालक गरब अति बढ़ायौ।
पूँछ लीन्ही झटकि, धरनि सौं गहि पटकि, फुंकरयौ लटकि करि क्रोध फूले।
पूँछ राखी चाँपि, रिसनि काली काँपि, देखि सब साँपि-अवसान भूले।
करत फन-घात विष जात उतरात अति, नीर जरि जात नहिं गात परसै।
सूर के स्याम प्रभु लोक-अभिराम बिनु जान अहिराज विष ज्वाल बरसै ।५०२।

उरग लियौ हरि कौं लपटाइ।
गर्व-बचन कहि कहि मुख भाषत, मोकौं नहिं जानत अहिराइ।
लियौ लपेटि चरन तैं सिर लौं, अति इहिं मोसौं करी ढिठाइ।
चाँपी पूँछ लुकावत अपनी, जुवतिनि कौं नहिं सकत दिखाइ।
प्रभु अंतरजामी सब जानत अब डारौं इहिं सकुचि मिटाइ।
सूरदास प्रभु तन बिस्तारयौ काली बिकल भयौ तब जाइ ।५०३।

जबहिं स्याम तन, अति बिस्तारयौ।
पटपटात टूटत अँग जान्यौ सरन-सरन सु पुकारयौ।
यह बानी सुनतहिं करुनामय तुरत गए सकुचाइ।
यहै बचन सुनि द्रुपद-सुता-मुख दीन्ही बसन बढ़ाइ।
यहै बचन गजराज सुनायौ गरुड़ छाँड़ि तहँ धाए।
यहै बचन सुनि लाखा-गृह मैं पांडव जरत बचाए।
यह बानी सहि जात न प्रभु सौं ऐसे परम कृपाल।
सूरदास प्रभु अंग सकोरयौ ब्याकुल देख्यौ ब्याल ।५०४।

नायक ब्याल बिलंब न कीन्हौ।
पग सौं चाँपि धीच बल तोरयौ, नाक फोरि गहि लीन्हौ।
कूदि परे ताकै माथे पर काली करत बिचार।
स्रवननि सुनी रही यह बानी, ब्रज ह्वैहै अवतार।
तेइ अवतरे आइ गोकुल मैं मैं जानी यह बात।
अस्तुति करन लग्यौ सहसौ मुख, धन्य धन्य जगतात।
बार-बार कहि सरन पुकारयौ राखि-राखि गोपाल।
सूरदास प्रभु प्रगट भए जब, देख्यौ ब्याल बिहाल॥२०५॥

जसुमति टेरति कुँवर कन्हैया।
आगैं देखि कहत बलरामहिं, कहाँ रह्यौ तुव भैया।
मेरौ भैया आवत अबहीं तोहिं दिखाऊँ मैया।
धीरज करहु नैंकु तुम देखहु, यह सुनि लेति बलैया।
पुनि यह कहति मोहिं परमोधत धरनि गिरी मुरझैया।
सूर बिना सुत भई अति ब्याकुल, मेरौ बाल कन्हैया॥२०६॥

जमुना तोहिं बही क्यौं भावै।
तोमैं कृष्ण हेलुवा खेलै, सो सुरत्यौ नहिं आवै।
तेरौ नीर सुधौ जो मन सौं, क्यार पनार कहावै।
हरि-बियोग कोउ पार्ड न दैहै, को तट बेनु बजावै।
भरि भादौं जो रावि अष्टमी, सो दिन क्यौं न सनावै।
सूरदास की ऐसी आतुर, कमल-फूल लै आवै॥२०७॥

आवत उरग नाथे स्याम।
नंद, जसुदा, गोप-गोपी, कहत हैं बलराम।
मोर-मुकुट, बिसाल लोचन, स्रवन कुंडल लोल।
कटि पितंबर, बेष नटवर, नरतत फन प्रति डोल।
देव दिवि दुंदुभि बजावत सुमन-गन बरषाइ।
सूर स्याम बिलोकि ब्रज जन, मातु पितु सुख पाइ॥२०८॥

फन-फन प्रति निरतत नँदनंदन।
जल-भीतर जुग जाम रहे, कहुँ मिट्यौ नहीं तन-चंदन।
उहै काछनी कटि, पीतांबर, सीस-मुकुट अति सोहत।
मानौ गिरि पर मोर अनंदित, देखत ब्रज-जन मोहत।
अंबर थके अमर ललना सँग, जै जै धुनि तिहुँ लोक।
सूर स्याम काली पर निरतत आवत हैं ब्रज-ओक ॥५०४॥

गोपाल राइ निरतत फन-प्रति ऐसे।
गिरि पर आए बादर देखत, मोर अनंदित जैसे।
डोलत मुकुट सीस पर हरि कैं, कुंडल-मंडित गंड।
पीत बसन दामिनि मनु घन पर तापर सुर-कोदंड।
उरग-नारि आगैं सब ठाढ़ीं मुख-मुख अस्तुति गावैं।
सूर-स्याम अपराध छमहु अब, हम माँगैं पति पावैं ॥५१ ॥

ठाढ़ देखत हैं ब्रजबासी।
कर जोरे अहि-नारि बिनय करि कहति धन्य अबिनासी।
जे पद-कमल रमा उर-राजति परसि सुरसरी आई।
जे पद-कमल संभु की संपति फन प्रति धरे कन्हाई।
जे पद-परसि सिला उधरि गई पांडव गृह फिरि आए।
जे पद कमल-भजन महिमा तैं, जन प्रहलाद बचाए।
जे पद ब्रज-जुवतिनि सुखदायक तिहूँ भुवन धरे पावन।
सूर स्याम ते पद फन फन-प्रति, निरतत आदि दियौ पावन ॥५११

गरुड़ त्रास तैं जौ ह्याँ आयौ।
तौ प्रभु-चरन-कमल फन-फन-प्रति अपनैं सीस धरायौ।
धनि रिषि साप दियौ खगपति कौं, ह्याँ तब रह्यौ छपाइ।
प्रभु-बाहन-डर भाजि बच्यौ अहि, नातरु लेतौ खाइ।
यह सुनि कृपा करी नँद-नंदन चरन-चिह्न प्रगटाए।
सूरदास प्रभु अभय ताहि करि, उरग-द्वीप पहुँचाए ॥५१५॥

भयौ ब्रज है जमुना कैं तीर।
कालिनाग के फन पर निरतत संकर्षन कौ बीर।
लाग मान थेइ-थेइ करि उघटत ताल मृदंग गँभीर।
प्रेम-मगन गावत गंधर्वगन व्योम बिमाननि भीर।
उरग-नारि आगैं भईं ठाढ़ी, नैननि ढारति नीर।
हमकौं दान देहु पति छाँड़हु सुंदर स्याम सरीर।
आय निकसि पहिरि मनि-भूषन, पीत-बसन कटि चीर।
सूर स्याम कौं भुज भरि भेंटत, धन्य देत अहीर ॥२१३॥

(तुम) आहु बालक, छाँड़ि जमुना स्वामि मेरौ जागिहै।
अंग कारौ, मुख बिषारी दृष्टि परें तोहिं लागिहै।
(तुम) केहि बालक जुवा खेल्यौ केंहि दुरव दुराइयौं।
लेहु तुम हीरा पदारथ जागिहै मेरौ साँइयौं।
नाहिं नागिनि जुवा खेल्यौ नाहिं दुरव दुराइयौं।
कंस कारन गेंद खेलत कमल-कारन आइयौं।
(तब) धाइ धायौ भारि जगायौ मनौं छूटे हाथियौं।
सहस फन फुफकार छाँड़े आइ बसी नाथियौं।
जब कान्ह काली लै चले, तब नारि बिनवै देव हो।
फेरि दी अहिवात दीजै करै तुम्हारी सेव हो।
(तब) नाथि पंकज कढ़यौ बाहिर, भयौ ब्रज-मन-भावनौ।
मथुरा नगरी कृष्न राजा, सूर मनहिं बधावनौ ॥२१४॥

जय जय धुनि अमरनि नभ कीन्ही।
धन्य-धन्य जगदीस गुसाईं अपनी करि गहि लीन्ही।
अभय कियौ फन चरन-चिन्ह धरि जानि आपुनौ दास।
रमन तैं ताहि कृपा करि पठयौ, मेटि गरुड़ कौ त्रास।
अस्तुति करत अमर-गन पहुँचे, गए आपनैं लोक।
सूर स्याम मिलि मातु पिता कौ दूरि कियौ मनु सोक ॥२१५॥

सहस सकट भरि कमल पठाए।
अपनी समसरि और गोप जे, तिनकौं साथ पठाए।
और बहुत काँवरि दधि-माखन, अहिरनि पै जोरि।
नृप के हाथ पत्र यह दीजौ, बिनती कीजौ मोरि।
मेरौ नाम नृपति सौं लीजौ, स्याम कमल लै आए।
कोटि कमल आपुन नृप माँगे, तीनि कोटि हैं पाए।
नृपति हमहिं अपनौ करि जानौ, तुम लायक हम नाहिं।
सूरदास कहियौ नृप आगैं, तुमहिं छाँड़ि कहँ जाहिं॥२१६॥

दसहुँ दिसा तैं करत दवानल, आवत है ब्रज-जन पर धायौ।
ज्वाला उठी अकास बराबरि, घात आपनी सब करि पायौ।
धीर लै आयौ सन्मुख तैं आदर करि नृप कंस पठायौ।
चारि करी परलय छिन भीतर, ब्रज चहुँघाँ घेरिक झरहायौ।
धरनि अकास भयौ परिपूरन, नैंकु नहीं कहुँ संधि बचायौ।
सूर स्याम बलरामहिं मारन गर्व-सहित आतुर ह्वै आयौ॥२१७॥

ब्रज के लोग उठे अकुलाइ।
ज्वाला देखि अकास बराबरि दसहुँ दिसा कहूँ पार न पाइ।
झहरात बन-पात गिरत तरु धरनी तरकि तराकि सुनाइ।
जल बरषत गिरिवर-तर बाँचे, अब कैसैं गिरि होत सहाइ।
लपटि जात जरि-जरि द्रुम-बेली, पटकत बाँस काँस कुस, ताल।
उचटत भरि अंगार गगन लौं सूर निरखि ब्रज-जन बेहाल॥२१८॥

अब कैं राखि लेहु गोपाल।
दसहूँ दिसा दुसह दावागिनि उपजी है इहिं काल।
पटकत बाँस, काँस कुस चटकत, लटकत ताल तमाल।
उचटत अति अंगार, फुटत फर, झपटत लपट कराल।
धूम धूँधि बाढ़ी धर अंबर, चमकत बिच-बिच ज्वाल।
हरिन, बराह, मोर चातक, पिक, जरत जीव बेहाल।

अति प्रिय बरतु, नैन मूँदहु सब, हँसि बोले नँदलाल ।
सूर अगिनि सब बदन समानी, अभय किए ब्रज-बाल ।५६९।

मैया धरनि यह कहति पुकारे ।
कोउ बरजत, कोउ अगिनि बतावत, दई बरषौ है स्याम हमारे ।
तब गिरिवर कर धर्यौ कन्हैया अब न बाँचिहैं मारत जारे ।
जेंवन करन चली अब भीतर, छींक परी तब आसु मझारे ।
अब सबको संहार होत है छींक किए (ये काज बिगारे ।
कैसेहुँ ये बालक दोउ उबरैं, पुनि-पुनि सोचति परी खमारे ।
सूर स्याम यह कहत जननि सौं, रहि री मा धीरज उर धारे ।५७०।

महरात भहरात दवा (नल) आयौ
घेरि चहुँ ओर, करि सोर अंदोर बन, धरनि आकास चहुँ पास छायौ ।
बरत बन-बाँस, थरहरत कुस काँस, जरि, उड़त है भाँस अति प्रबल धायौ ।
झपटि झपटत लपट, फूल-फल चट चटकि, फटत लटलटकि द्रुम द्रुम नवायौ ।
अति अगिनि-झार, भंभार धुंधार करि, उचटि अंगार झंझार छायौ ।
बरत बन पात भहरात झहरात अररात तरु महा, धरनी गिरायौ ।
भए बेहाल सब ग्वाल ब्रज-बाल तब, सरन गोपाल कहि कै पुकार्यौ ।
एना केसी सकट बकी बक अघासुर, बाम कर राखि गिरि ज्यौं उबार्यौ ।
नैंकु धीरज करौ, जियहिं कोउ जिनि डरौ, कहा इहिं सरौ लोचन मुँदाए ।
मुठि भरि लियौ, सब नाइ मुखहीं दियौ, सूर प्रभु पियौ ब्रज-जन उबार ।५७१।

चकित देखि यह कहैं नर-नारी।
धरनि अकास बराबरि ज्वाला झपटति लपट करारी।
नहिं बरष्यौ नहिं छिरक्यौ काहूँ, कहँ धौं गई बिलाइ।
अति आघात करति बन-भीतर कैसैं गई बुझाइ।
बन की आगि बरतही बुझि गई, हँसि-हँसि कहत गोपाल।
सुनहु सूर यह करनि कहनि यह, ऐसे प्रभु के ख्याल।।२२२।

अति सुंदर नँद महर-ढुटौना।
निरखि-निरखि ब्रजनारि कहति सब यह जानत कछु टौना।
कपट रूप की त्रिया निपाती तबहिं रह्यौ अति छौना।
द्वार सिला पर पटकि तृना कौं, हुँ आयौ औ पौना।
बधा बकासुर तबहिं सँहारयौ प्रथम कियौ बन-गौना।
सूर प्रगट गिरि धरयौ बाम कर, हम जानतिं चलि बौना।।२२३।

हरि ब्रज-जन के दुख बिसरावन।
कहाँ कंस कब कमल मँगाए, कहाँ दवानल-दावन।
जल कब गिरे, उरग कब नाथ्यौ नहिं जानत ब्रज-लोग।
कहाँ बसे इक दिवस रैनि भरि, कबहिं भयौ यह सोग।
यह जानत हम ऐसैंहि ब्रज मैं ऐसैंहि करत बिहार।
सूर स्याम जननी सौं माँगत, माखन बारंबार।।२२४।

आजु कन्हैया बहुत बच्यौ री।
खेलत रह्यौ घोष के बाहर, कोउ आयौ सिसु-रूप रच्यौ री।
मिलि गयौ आइ सखा की नाईं, लै चढ़ाइ हरि कंध नच्यौ री।
गगन उड़ाइ गयौ लै स्यामहिं आनि धरनि पर आप दच्यौ री।
धर्म सहाइ होत है जहँ तहँ, स्रम करि पूरब पुन्य पच्यौ री।
सूर स्याम अब के बचि आए, ब्रज घर-घर सुख-सिंधु मच्यौ री।

बड़े भाग हैं महर महरि के।
लै गयौ पीठि चढ़ाइ असुर इक, कहा कहौं उबरन या हरि के।

नंदघरनि कुलदेव मनावति सुभ हौ रच्छक घरी-पहर के।
जहँ-तहँ तुमहिं सहाइ सदा हौ, जीवन हैं ये स्याम महर के।
हरष भए नँद करत बधाई, दान देत कहा कहौं महर के।
पंच-सब्द-धुनि बाजत, नाचत, गावत मंगलचार महर के।
कंचन भरि-भरि देत स्याम कौं, ब्रज-नर-नारि अतिहिं मन हरषे।
सूर स्याम संतनि सुखदायक दुष्टनि के उर सालक करषे ॥४२६॥

रजनी-मुख बन तैं बने आवत, भावति मंद गयंद की लटकनि।
बालक-बृंद बिनोद हँसावत करतल लकुट धेनु की हटकनि।
बिगसित गोपी मनौ कुमुद सर, रूप-सुधा लोचन-पुट घटकनि।
पूरन कला उदित मनु उडुपति तिहिं छन बिरह-तिमिर की फटकनि।
लज्जित मनमथ निरखि बिमल छबि रसिक रंग भौंहनि की मटकनि।
मोहनलाल, छबीलौ गिरिधर, सूरदास बलि नागर नटकनि ॥४२७॥

गावत मंगलचार महर-घर।
जसुमति भोजन करति चँडाई, नेवज करि-करि धरनि स्याम कर।
देखे रही ■ छुवौ कन्हैया कहू जाने यह देव-काम पर।
और नहीं कुलदेव हमारें के गोधन, कै ए सुरपति बर।
करति बिनय कर जोरि जसोदा, कान्हहिं कृपा करौ करुनाकर।
और देव तुम सम कोउ नाहीं सूर करौ सेवा चरननि-तर ॥४२८॥

बाजति नंद अवास बधाई।
बैठे खेलत द्वार आपनैं सात बरस के कुँवर कन्हाई।
बैठे नंद सहित बृषभानुहि और गोप बैठे सब आई।
थापैं देत घरनि के द्वारैं गावति मंगल नारि बधाई।
पूजा करत इंद्र की जानी, आए स्याम तहाँ अतुराई।
बार बार हरि बूझत नंदहि, कौन देव की करत पुजाई।
इंद्र बड़े कुल-देव हमारे, उनतैं सब यह होति बड़ाई।
सूर स्याम तुम्हरे हित कारन यह पूजा हम करत सदाई ॥४२९॥

नंद कही, पर आनु कन्हाई।
ऐसे मैं तुम जागु कहूँ जनि, कहो महरि, सुत लेहु जुगाई।
सोइ रही मेरे पलिका पर, कहति महरि हरि सौं समुझाई।
बरष दिवस की महा महोत्सव, को जानै धौं कौन सुभाई।
और महर-ढिग स्याम बैठि कै, कीन्हौ एक बिचार बनाई।
सुपनैं आजु मिल्यौ मोकौं, इक बड़ौ पुरुष अवतार जनाई।
कहन लग्यौ मो सौं ये बातैं पूजत ही तुम काहि मनाई।
गिरि गोवर्धन देवनि कौ मनि, सेवहु ताकौं भोग चढ़ाइ।
भोजन करै सबनि के आगैं, कहत स्याम यह मन उपजाई।
सूरदास प्रभु गोपनि आगैं, यह लीला कहि प्रगट सुनाई ॥२२०॥

मेरी कही सत्य करि जानौ।
जौ चाहौ ब्रज की कुसलाई तौ गोवर्धन मानौ।
दूध दही तुम कितनौ लैहौ, गोसुत बढ़ैं अनेक।
कहा पूजि सुरपति सौं पायौ छाँड़ि देहु यह टेक।
मुँह माँगे फल कौं तुम पावहु, तौ तुम मानहु मोहिं।
सूरदास प्रभु कहत ग्वाल सौं सत्य बचन करि तोहिं ॥२२१॥

छाँड़ि देहु सुरपति की पूजा।
कान्ह कही, गिरि गोवर्धन तैं और देव नहिं दूजा।
गोपनि सत्य मानि यह लीन्ही बड़ौ देव गिरिराज।
मोहिं छाँड़ि ये परवत पूजत, गरब कियौ सुरराज।
पर्वत सहित धोइ ब्रज डारौं, देउँ समुद्र बहाइ।
मेरी बलि औरहिं लै अरपत इनकी करौं सजाइ।
राखौं नहीं इन्हैं भूतल पर, गोकुल देउँ मुड़ाइ।
सूरदास-प्रभु ताको रच्छक, संगहिं संग रहाइ।।२२२॥

ब्रज-घर घर अति होत कुलाहल।
जहँ-तहँ ग्वाल फिरत उमँगे सब, अति आनंद चमाहल।

मिलत परस्पर अंकम दै-दै, सकटनि भोजन साजत।
दधि-माखनी-मधु माट परस लै, राम-स्याम सँग राजत।
मंदिर तैं लै भरत अजिर मैं, षटरस की ज्यौनार।
थारनि भरि भरि कंचन नए भरि, औरस है परकार।
सहस सकट मिष्टान्न भरि बहु नंद महर घरही के।
सूर चले सब लै घर-घर तैं संग सुवन नँद जी के।।८२३।

अति आनँद ब्रजबासी लोग।
भाँति-भाँति पकवान सकट भरि लै-लै चले कहूँ रस-भोग।
तीनि लोक कौ ठाकुर संगहिं जानी कहत सखा हम-जोग।
आवन जात डगर नहिं पावत, गोवर्धन-पूजा संजोग।
कोउ पहुँचि, कोउ रेंगत मग मैं कोउ घर तैं निकसे, कोउ नाहिं।
कोउ पहुँचाइ सकट घर आवत, कोउ घर तैं भोजन लै जाहिं।
मारग मैं कोउ निरतत आवत कोउ गावत अपने रस माहिं।
सूर स्याम कौ जसुमति टेरति, बहुत भीर है हरि न भुलाहिं।८२४

विप्र बुलाइ लिए नँदराइ।
प्रथमारंभ जज्ञ कौ कीन्हौ उठे बेद-धुनि गाइ।
गोबर्धन सिर तिलक चढ़ायौ, मेटि इंद्र ठकुराइ।
अन्नकूट ऐसौ रचि राख्यौ, गिरि की उपमा पाइ।
भाँति-भाँति व्यंजन परसाए कापैं बरन्यौ जाइ।
सूर स्याम सौं कहत ग्वाल गिरि जेंवहिं कहौ बुझाइ।८२५।

कहत कान्ह नँद बाबा आवहु।
भोजन परसि धरौ सब आगैं प्रेम-सहित गिरिराज मनावहु।
और नंद उपनंद बुलाए सबही जननि सौं, भोग लगावहु।
सुरनि मैं देख्यौ हरि मूरति बड़े रूप धरि ध्यान धियावहु।
इक मन, इक चित अरपित करिकै, प्रगट देव-दरसन तुम पावहु।
सूर स्याम कहि प्रगट सबनि सौं अपनैं कर लै क्यौं न जिंवावहु।

बिनती करत सकल आहीर।
कलस भरि-भरि ग्वाल लै-लै सिखर ढारत छीर।
पस्यौ धरि जहँ पास तैं पय सुरसरी जल ढारि।
बसन-भूषन लै चढ़ाए, भीर अति नर-नारि।
मूँदि लोचन भोग अरप्यौ प्रेम सौं रुचि धार।
सबनि देखी प्रगट मूरति, सहस भुजा पसार।
रुचि सहित गिरि सबनि आगैं, करनि लै-लै खाइ।
नंद-सुत महिमा अगोचर सूर क्यौं कहि जाइ ।९३७।

गिरिधर स्याम की अनुहारि।
करत भोजन अधिक रुचि यह, सहस भुजा पसारि।
नंद की कर गहे ठाढ़े, यहै गिरि कौ रूप।
सखी ललिता राधिका सौं कहति देखि स्वरूप।
यहै कुंडल, यहै माला यहै पीत पिछौरि।
सिखर सोभा स्याम की छवि स्याम-छवि गिरि जोरि।
नारि बदरौला रही, बृषभानु-घर रखवारि।
तहाँ तैं कहि भोग अरप्यौ, लियौ भुजा पसारि।
राधिका-छवि देखि भूली, स्याम निरखैं ताहि।
सूर प्रभु-बस भई प्यारी, कोर-लोचन चाहि ।९३८।

गोपनि सौं यह कहत कन्हाई।
जो मैं कहत रही मयौ सोई सुपनांतर प्रगम्यौ अब आई।
जो माँग्यौ चाही सो माँगौ, पावहुगी जो जा मन भाई।
कहत नंद सब तुमही दीन्हौ, माँगत् हौं हरि की कुसलाई।
कर जोरे नँद आगैं ठाढ़े, गोवर्धन की करत बड़ाई।
ऐसौ देव कहूँ नहिं देख्यौ सहस भुजा धरि खात मिठाई।
सदा तुम्हारी सेवा करिहौं और देव नहिं करौं पुजाई।
सूर स्याम कौं नीकैं राखी, कहत महर ये हलधर भाई ।९३९।

और नंद माँगी कछु हमसौं।
जो चाहौ सो देउँ तुरत ही, कहत सबै गोपनि सौं।
बल मोहन दोऊ सुत तेरे, कुसल सदा ये रहिहैं।
इनकौ कह्यौ करत तुम रहियौ, अब जोई ये कहिहैं।
सेवा बहुत करी तुम मेरी, अब तुम सब घर जाहु।
भोग प्रसाद लेहु कछु मेरौ, गोप सबै मिलि खाहु।
सुपनैं मैं ही कह्यौ स्याम सौं करौ हमारी पूजा।
सुरपति कौन बापुरो मोतैं और देव नहिं दूजा।
इंद्र आइ बरसै जौ ब्रज पर तुम जनि जाहु डराइ।
सुनहु सूर सुत कान्ह तुम्हारौ कहिहै मोहिं सुनाइ ॥८४०॥

बिनती करत नंद कर जोरे, पूजा कछु हम जानैं नाथ।
हम हैं दीन सदा माया बस दरस दियौ मोहिं कियौ सनाथ।
महा पतित मैं तुम पावन प्रभु सरन तुम्हारी आयौ तात।
तुमतैं देव और नहिं दूजौ, कोटि ब्रह्मंड रोम प्रति गात।
तुम दाता अरु तुमहिं भोगता, हरता-करता तुमही सार।
सूर कहा हम भोग लगायौ तुमही भुक्त दियौ संसार ॥८४१॥

चले ब्रज-घरनि कौं नर-नारि।
इंद्र की पूजा मिटाई, किनौ गिरि की सारि।
पुलक अंग न समात उर मैं, महर महरि-समाज।
अब बड़े हम देव पाए, गिरि गोबर्धन राज।
इनहिं तैं ब्रज चैन रहिहै, माँगि भोजन खात।
चढ़े पैरा चलत ब्रज जन, सबनि सुख पद बात।
सबै सदननि आइ पहुँचे करन केलि बिलास।
सूर प्रभु यह करी लीला, इंद्र-रिस परकास ॥८४२॥

ब्रजबासिनि मोसौं बिसरायौ।
भली करी बलि मेरी जो कछु, सो सब लै परबतहिं चढ़ायौ।

मोसौं गर्व कियौ लघु प्रानी, ना जानियै कहा मन श्याय।
तैंतिस कोटि सुरनि कौ नायक, जानि-बूझि इन मोहिं भुलायौ।
अब गोपनि भूतल नहिं राखौं, मेरी बलि मोहिं नहिं पहुँचायौ।
सुनहु सूर मेरैं मारत धौं, परवत कैसैं होत सहायौ ॥८४३॥

सुनि मेघवर्त सजि सैन आए।
जलवर्त, वारिवर्त, पौनवर्त, बज्र, अगिनिवर्तक जलद संग ल्याए।
घहरात, गररात, दररात, हररात, तररात झहरात माथ नाए।
कौन ऐसौ काम बोले हमैं सुरराज, प्रलय के साज हमकौं बुलाए।
बरष-दिन-संयोग, देत हे मोहिं भोग, क्षुद्र-मति ब्रज-लोग, गर्व कीन्हौ।
मोहिं दयौ बिसराइ, पूज्यौ गिरिवर जाइ, परौ ब्रज जाइ आयसहिं दीन्हौ।
कितिक ब्रज के लोग, रिस करी किहिं जोग, गिरि कियौ भोग पल द्वै पैहै।
सूर सुरपति सुनौ, कयौ तैसौ सुनौ, प्रभु कहा गुनौ, गिरि संग बैहै ॥८४४॥

बिनती सुनहु देव मघवापति।
कितिक बात गोकुल ब्रजबासी, बार-बार कौ रिस अति।
आपुन बैठि देखिए कौतुक, बहुतै आयसु दीन्हौ।
छिन मैं बरसि प्रलय-जल पाटैं, खोज रहै नहिं चीन्हौ।
महा प्रलय हमरे जल बरसैं, गगन रहै भरि छाइ।
जलै बृच्छ घट चलत निरंतर, कह ब्रज गोकुल गाइ।
चले मेघ माथैं कर धरि कै, मन मैं क्रोध बढ़ाइ।
उमड़त चले इंद्र के पायक, सूर गगन रहे छाइ ॥८४५॥

सैन साजि ब्रज पर चढ़ि धावहिं।
प्रथम बहाइ देहिं गोबर्धन, ता पाछैं ब्रज खोदि बहावहिं।

महरिनि करी अवज्ञा प्रभु की, सो फल सबकौं तुरत दिखावहिं।
इंद्रहिं पेलि करी गिरि-पूजा सलिल बरसि ब्रज नाउँ मिटावहिं।
दल समेत निसि-बासर बरसहिं, गोकुल बोरि पताल पठावहिं।
सूरदास सुरपति की आज्ञा, पर मूलक कहुँ रहन न पावहिं ॥८४६

फिरत लोग जहँ तहँ बितताने को हैं अपने कौन बिराने।
ग्वाल गए ले धेनु चरावन, तिनहिं परयौ बन-माँझ परावन।
गाइ बच्छ कोउ न सँभारैं, जिय की सबकौं परी सँभारैं।
भागे आवत ब्रजही तन कौं, बिपति परी अति बल ग्वालनि कौं।
अंध धुंध मग कहूँ न सूझै, ब्रज भीतर ब्रजही कौं बूझै।
जैसैं-तैसैं ब्रज पहिचानत, अन्धकार अम्बर करि मानत।
खोजत फिरैं आपने घर कौं कहा भयौ हरि घोष-सहर कौं।
रोवत डोलैं घरहिं न पावैं घर द्वारे घर कौं बिसरावैं।
सूर स्याम सुरपति बिसरायौ गिरि के पूजैं यह फल पायौ ॥८४७

जमुना जलहिं गई ते नारी हारि चली सिर गागरि भारी।
देखौं मैं बालक कत छाँड्यौ एक कहति आँगन दधि माँड्यौ।
एक कहति मारग नहिं पावति एक सासुरैं बोलि बतावति।
ब्रजबासी सब अति अकुलाने कालिहिं पूज्यौ कह्यौ बिहाने।
कहाँ गए अब कुँवर कन्हाई, गिरि गोबर्धन लेहि बुलाई।
जेंवन सहस भुजा धरि पावै अब है मुख हमकौं दिखरावै।
ये देवता रात ही कौ के पाछें पुनि तुम कौन, कहाँ के।
सूर स्याम सपनौ प्रगटायौ, घर के देव सबनि बिसरायौ ॥८४८॥

मेघवर्त मेघनि समुझावत, बार-बार गिरि तनहिं बतावत।
पर्वत पर बरसहु तुम जाई, जहँ कहौ हमकौं सुरराई।
ऐसैं [illegible] पहार बहाई, नाउँ रहै नहिं ठौर बनाई।
सुरपति की बलि सब हरि खाई, ताकौ फल पावै गिरिराई।
जेंवत काल्हि अधिक रुचि पाई, सलिल हेतु जिमि तृषा बुझाई।

बिना बारि रहते खग ऊपर, जब न रहन पावैं या भूपर।
सूर मेघ सुरपतिहिं पठाए, ब्रज के लोगनि तुमहिं बिहाए ॥८४९॥

गिरि पर बरषन लागे बादर।
मेघवर्त, जलवर्त, सैन सजि आए लै-लै आदर।
सलिल अखंड धार धर टूटत किए इंद्र मन सादर।
मेघ परस्पर यहै कहत हैं, धोइ करहु गिरि खादर।
देखि देखि डरपत ब्रजबासी, अतिहिं भए मन कादर।
यहै कहत ब्रज कौन उबारै सुरपति कियौ निरादर।
सूर स्याम देखैं गिरि अपनैं मेघनि कीन्हौ दादर।
देव आपनौ नहीं सम्हारत करत इंद्र सौं ठादर ॥८५०॥

बतियाँ कहति हैं ब्रज-नारि।
करति सैंतति धाम-धामन माहिं सुरति सम्हारि।
पूजि आए गिरि गोबरधन, देति पुरुषनि गारि।
आपनौ कुलदेव सुरपति, धरयौ ताहि बिसारि।
दियौ फल यह गिरि गोबरधन, लेहु गोद पसारि।
सूर कौन उबारि लैहै, बहुरौ इंद्र प्रचारि ॥८५१॥

ब्रज के लोग फिरत बितताने।
गैयनि लै बन ग्वाल गए ते धाए आवत ब्रजहिं पराने।
कोउ चितवत नभ-तन चकित ह्वै, कोउ गिरि परत धरनि अकुलाने।
कोउ लै रहत ओट वृक्षनि की अंध-धुंध दिसि-बिदिसि भुलाने।
कोउ पहुँचे जैसैं-तैसैं गृह, कोउ ढूँढ़त गृह नहिं पहिचाने।
सूरदास गोबर्धन-पूजा कीन्हे कौ फल लेहु बिहाने ॥८५२॥

ब्रज नर-नारि नंद-जसुमति सौं कहत, स्याम ये काज करे।
कुल-देवता हमारे सुरपति तिनकौं सब मिलि मेटि धरे।
इंद्रहिं मेटि गोबर्धन थाप्यौ उनकी पूजा कहा सरे।
सैंतत फिरत जहाँ तहँ बासन, परिकमि लै लै गोद भरे।

को करि लेइ सहाइ हमारी, प्रलय काल के मेघ भरे।
सूरदास सब कहत मारि मर, क्यौं सुरपति-पूजा बिसरे ॥४४३॥

राखि लेहु गोकुल के नायक।
भीजत-ग्वाल-गाइ गोसुत सब, बिषम बूँद लागत जनु सायक।
बरषत मुसलधार सेनापति, महा मेघ मघवा के पायक।
तुम बिनु ऐसौ कौन नंद-सुत, यह दुख दुसह मेटिबे लायक।
अघ-मर्दन बक-बदन-बिदारन, बकी-बिनासन ब्रज-सुखदायक।
सूरदास प्रभु तिनकी यह गति जिनके तुमसे सदा सहायक ॥४४४

राखि लेहु अब नंदकिसोर।
तुम जो इंद्र की मेटी पूजा, बरसत है अति जोर।
ब्रजबासी तुम तन चितवत हैं, ज्यौं करि चंद चकोर।
जनि जिय डरौ, नैन जनि मूँदौ, धरिहौं नख की कोर।
करि अभिमान इंद्र झरि लायौ करत घटा घनघोर।
सूर स्याम कह्यौ, तुमकौं राखौं बूँद न आवै ढोर ॥४४५॥

स्याम लियौ गिरिराज उठाइ।
धीर धरौ हरि कहत सबनि सौं गिरि गोवर्धन करत सहाइ।
नंद गोप ग्वालनि के आगैं, देव कह्यौ यह प्रगट सुनाइ।
काहे कौं ब्याकुल भए डोलत रच्छा करै देवता आइ।
सत्य बचन गिरि-देव कहत हैं कान्ह लेहि मोहिं कर उचकाइ।
सूरदास नारी-नर ब्रज के, कहत धन्य तुम कुँवर कन्हाइ ॥४४६॥

गिरि जनि गिरै स्याम के कर तैं।
करत बिचार सबै ब्रजबासी भय उपजत अति उर तैं।
लै-लै लकुट ग्वाल सब धाए, करत सहाय जु तुर तैं।
यह अति प्रबल, स्याम अति कोमल, रवकि-रवकि हरबर तैं।
सप्त दिवस कर पर गिरि धारयौ बरसि थक्यौ अंबर तैं।
गोपी-ग्वाल नंद-सुत राख्यौ मेघ धार जलधर तैं।

जमलार्जुन तोड़ सुत कुबेर के तेइ उधारे कर तें।
सूरदास प्रभु इंद्र-गर्व हरि, ब्रज राख्यौ करवर तें ॥४४७॥

नीकैं धरी गोव-नँदन बल-बीर।
गिरि जनि परै टरै कर तैं जनि, कौन सहैगी भीर।
चहुँ दिसि पवन झकोरत, घोरत मेघ-घटा गंभीर।
उनै-उनै बरषत गिरि ऊपर, धार अखंडित नीर।
बूँद-पुंज अंबर तैं गिरि पर परत बज्र के तीर।
चमकि चमकि चपला चकचौंधति, स्याम कहत मन धीर।
कर जोरत, कुल देव मनावत, ब्रज के गोप अहीर।
पय-पकवान-मिठान पूजिहैं, लै दधि-मधु-घृत-खीर।
गोपी-ग्वाल-गाइ-गोसुत सब, रहैं कुसल सहित सरीर।
सूर स्याम गिरि धरयौ बाम कर, मेघ भए अति सीर ॥४४८॥

गिरिधर नीकैं धरौ कन्हैया।
देखे रहौ टरै जनि कर तैं भुजा तनक सी भैया।
जब-जब गाइ परत ब्रज-लोगनि, तब करि लेत सहैया।
जननि जसोदा कर लै चाँपति, अति स्रम होय नन्हैया।
देखत प्रगट भयौ गोबरधन, चकित भए नँदरैया।
पिता देखि व्याकुल मनमोहन तब इक बुद्धि उपैया।
ल्यावहु तात लकुट गोबरधन गोपनि संग लिवैया।
जहाँ-तहाँ लकुटिनि गिरि टेक्यौ, कान्हहिं ओट देवैया।
स्याम कहत सब नंद गोप सौं भयौ लियौ उचकैया।
सूरदास प्रभु अंतरजामी मंदहिं हरष बढ़ैया ॥४४९॥

बरषि-बरषि हारे सब बादर।
ब्रज के लोगनि चोट चलावहु इंद्र हमहिं भयौ आदर।
कहा जाइ कैहैं प्रभु आगैं, करिहैं बहुत निरादर।
हम बरषत परबत जल सोखत ब्रजबासी सब आदर।

पुनि रिस करत, प्रलय-जल बरषत, कहत भए सब कायर।
सूर गाइ गो-सुत सब राखी, गिरिवर धरि ब्रज-नायर ॥९६०॥

मेघनि जाइ कही पुकारि।
दीन ह्वै सुरराज आगैं अस्त्र दीन्हे डारि।
सात दिन भरि बरसि ब्रज पर गई नैंकु न झारि।
अखंड धारा सलिल निझरयौ, मिटी नाहिं लगारि।
धरनि नैंकु न बूँद पहुँची हरषे ब्रज-नर-नारि।
सूर घन सब इंद्र आगैं, करत यहै गुहारि ॥९६१॥

जहाँ-तहाँ तुम हमहिं उबारयौ।
ग्वाल-सखा सब कहत स्यामसौं, धनि जसुमति अवतारयौ।
तृनावर्त ब्रज पर चढ़ि आयौ, लाग्यौ रैन उड़ाइ।
अति सिसुता मैं ताहि सँहारयौ परयौ सिला पर आइ।
बक-अघाइ बालक सँग खेलत कैसैं आयौ साथ।
ताहि मारि तुम हमहिं उबारयौ, ऐसे त्रिभुवननाथ।
कागासुर सकटासुर मारयौ पय पीवत दनु-नारि।
अघा उदर तैं हमहिं बचायौ, बका-बदन धरि फारि।
कालीदह-जल अँचे गए मरि, तब तुम लियौ जिवाइ।
सूर स्याम सुरपति तैं राख्यौ, ऐसौ सबनि बचाइ ॥९६२॥

घरनि घरनि ब्रज होति बधाई।
सात बरष कौ कुँवर कन्हैया, गिरिवर धरि जीत्यौ सुरराई।
गर्ब सहित आयौ ब्रज बोरन, यह कहि मेरी भक्ति घटाई।
सात दिवस जल बरषि सिराग्यौ, तब आयौ पाइनि तर धाई।
कहाँ कहाँ नहिं संकट मेटत, नर-नारी सब करत बड़ाई।
सूर स्याम अपनैं ब्रज राख्यौ, ग्वाल करत सब नंद दोहाई ॥९६३॥

(मेरे) मोहन अस प्रसाद क्यौं टारयौ।
पूछति मुदित जसोदा जननी, इंद्र कोप करि हारयौ।

मेघवर्त जल बरषि निसा-दिन नैंकु न पैग टिरायौ।
बार-बार यह कहति कान्ह सौं, कैसें गिरि नख धारयौ।
सुरपति आनि परयौ गहि पाइनि ताकौं सरन उबारयौ।
सूर स्याम जन के सुखदाता कर तें धरनि उतारयौ ॥२६४॥

(तेरैं) भुजन बहुत बल होइ कन्हैया।
बार-बार भुज देखि तनक-से कहति जसोदा मैया।
स्याम कहत नहिं भुजा पिरानी, ग्वालनि कियौ सहैया।
लकुटिनि टेकि सबनि मिलि राख्यौ, अरु बाबा नँदरैया।
मोसौं क्यौं रहतौ गोबरधन, अतिहिं बड़ौ वह भारी।
सूर स्याम यह कहि परबोध्यौ चकित देखि महतारी ॥२६५॥

गिरिवर कैसे लियौ उठाइ।
कोमल कर चाँपति महतारी, यह कहि लेति बलाइ।
महा प्रलय जल, तापर राख्यौ एक गोबर्धन भारी।
नैंकु नहीं टारयौ नख पर तैं, मेरौ सुत अहँकारी।
कंचन-थार दूध-दधि-रोचन सजि समीर लै आई।
हरषित तिलक करति मुख निरखति, भुज भरि कंठ लगाई।
रिस करिकै सुरपति चढ़ि आयौ तैसी अर्जाहि पठाई।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा गिरिधर बड़ौ कन्हाई ॥२६६॥

जननी चापति भुजा स्याम की, ठाढ़े देखि हँसत बलराम।
चौदह भुवन उदर मैं जाके गिरिवर धरयौ कहा यह काम।
कोटि ब्रह्मांड रोम-रोमनि-प्रति, जहाँ-तहाँ निसि-बासर धाम।
जोइ आवत सोइ देखि चकत है, कहत करे हरि ऐसे काम।
नाभि-कमल ब्रह्मा प्रगटायौ देखि अजानँद रच्यौ बिराम।
पावन-प्रान पीवही मनमयौ दुखित भयौ लोकहु निज धाम।
तिनसौं कहत सकल ब्रजबासी कैसें गिरि राख्यौ कर बाम।
सूरदास प्रभु ब्रज-ब्रज व्यापक, फिरि-फिरि जन्म लेत नँद-धाम ॥

मातु पिता इनकैं नहिं कोई।
आपुहिं करता, आपुहिं हरता, त्रिगुन रहित हैं सोइ।
कितिक बार अवतार लियौ ब्रज, ये हैं ऐसे ओइ।
जल-थल, कीट-ब्रह्म के ब्यापक, और न इन सरि होइ।
बसुधा-भार उतारन-कारन आपु रहत तनु गोइ।
सूर स्याम माता-हित-कारन, भोजन माँगत रोइ ॥२६८॥

सुरगन सहित इंद्र ब्रज आवत।
धवल बरन ऐरावत देख्यौ उतरि गगन तैं धरनि धँसावत।
अमरा-सिव-रबि-ससि चतुरानन, हय-गय बसह-हंस-मृग-जावत।
धर्मराज, बनराज, अनल, दिव, सारद, नारद सिव-सुत-भावत।
मेढ़ा महिष मगर गुदरारी, मोर, आखुसन बाहन गावत।
ब्रज के लोग देखि डरपे मन हरि आगैं कहि कहि जु सुनावत।
सात दिवस जल बरषि सिरान्यौ, आवत चल्यौ ब्रजहिं अतुरावत।
घेरी करत जहाँ तहँ ठाढ़े ब्रजबासिनि कौं नाहिं बचावत।
दूरहिं तैं बाहन सौं उतर्‌यौ, देवनि सहित चल्यौ सिर नावत।
आइ पर्‌यौ चरननि तर आतुर सूरदास-प्रभु सीस उठावत ॥२६९॥

सुरगन करत अस्तुति मुखनि।
दरस तैं तनु-ताप खोयौ मेटि पाप के दुखनि।
अंग पुलकित रोम गदगद कहत बानी सुखनि।
धाम सुख गिरि टेकि राख्यौ, करजलघु के नखनि।
प्रेम कैं बस तुमहिं कीन्हौ, ग्वाल-बालक सखनि।
जोगि जन बन तपति आपनि नहीं पावत लखनि।
धन्य नँद धनि मातु-जसुमति, चलत जाहिं रुखनि।
सूर प्रभु-महिमा अगोचर, जाति कापै लखनि ॥२७०॥

देखियत दोऊ घन उनए।
उत मघवा-बस अभ्र-घटा इत दीन रन रोप रए।

उत सुर चाप, कलाप चंद्र इत, तड़ित पट पीत नए।
उत सेनापति बरषत, ये इत अमृत-धार चितए।
सुभग दीप गिरिराज बिराजत, करज उठाइ लए।
मनु बिधि मरकत मनि दीप महानग मनी बिचित्र ठए।
सुठव सक्र को सीस चरन तर, जुग-गुन-गत समये।
मानहु कनकपुरी-पति के सिर, रघुपति छत्र दये।
भए प्रसन्न सकल, सुरपुर कौं प्रमुदित फेरि गए।
सूरदास गिरिधर करुनामय, इंद्र थापि पठए।२७१।

आजु दीपति दिव्य दीपमालिका।
मनहुँ कोटि रवि चंद्र कोटि छबि मिटि जो गई निसि कालिका।
गोकुल सकल बिचित्र मनि मंडित सोभित झलक झलक झालिका।
गज-मोतिन के चौक पुराए बिच बिच लाल प्रवालिका।
घर सिंगार बिरचि राधा जू चली सकल ब्रज-बालिका।
झलमलत दीप समीप सौंज भरि लै कर कंचन थालिका।
करिकै प्रगट मदन मोहन पिय चकित बिलोकि बिसालिका।
गावति हँसत गवावत हँसावत पटकि पटकि करतालिका।
नंद-द्वार आनंद बढ़्यौ अति देखियत परम रसालिका।
सूरदास कुसुमनि सुर बरषत कर संपुट भरि मालिका।२७२।

कौन परी मेरे लालहिं बानि।
प्रात समय आगन की बिरियाँ सोवत है पीतांबर तानि।
संग सखा ब्रज-बाल खरे सब मधुबन धेनु चरावन-जान।
मातु जसोदा कब की ठाढ़ी, दधि-ओदन भोजन लिए पान।
तुम मोहन जीवन-धन मेरे, मुरली नैंकु सुनावहु कान।
यह सुनि स्रवन उठे नँदनंदन, बंसी निज सौंप्यौ मृदु बानि।
जननी कहति [illegible] मनमोहन, दधि-ओदन-घृत आन्यौ सानि।
सूर सुबलि चलि आगे धेनु की, जिहिं लगि लाख लगे हित मानि।

तेरौ माई गोपाल रतन सूरौ।
जहँ-जहँ फिरत प्रचारि, पैंच करि, तहीं परत है पूरौ।
वृषभ-रूप दानव इक आयौ, सो छिन माहिं सँहारयौ।
पाछैं पकरि मुख सौं गहि चाक्यौ, भूतल माँहि पछारयौ।
कहत ग्वाल जसुमति धनि मैया बड़ौ पूत तैं जायौ।
यह कोउ आहि पुरुष अवतारी, भाग हमारैं आयौ।
चरन-कमल-रज बंदत रहिऐ, अनुदिन सेवा कीजै।
बारंबार सूर के प्रभु की, हरषि बलैया लीजै॥५७४॥

जसुमति बार-बार पछितानी।
सुनी करतूति वृषासुर की जब ग्वाल कही मुख बानी।
गैयनि भीतर आइ समान्यौ कान्हहिं मारन ठान्यौ।
मैं नहिं काहू की कछु मान्यौ पुन्यनि करवर नाक्यौ।
सुनि जसुमति मैया कत खीझति, हरि के मायँ ख्याल।
परवत तुल्य देह वाकी की, पल मैं कियौ बिहाल।
तुम्हरी रच्छा कौ यह नाहीं, यह ब्रज कौ रखवार।
सूरदास मन मोही सबकौ मोहन नंद-कुमार॥५७५॥

हमहिं डर कौन कौ रे मैया।
डोलत फिरत सकल वृंदावन, जाके मीत कन्हैया।
जब जब गाइ परति है हमकौ तब करि लेत सहैया।
चिरजीवहिं जसुमति सुत तेरे, हरि-हलधर दोउ भैया।
इनतैं बड़ौ और नहिं कोऊ, येइ सब देत पवैंया।
सूर स्याम सन्मुख के आए, ते सब लगें चलैया॥५७६॥

हँसि जननी सौं बात कहत हरि देख्यौ मैं वृंदावन नीकै।
अति रमनीक भूमि द्रुम बेली पुंज सघन निरखत सुख जी कै।
जमुना कै तट धेनु चराईं, कहत बात माता-मन भीकै।
भूख मिटी बन-फल के खाऐं, मिटी प्यास जमुना-जल पीकै।

सुनति जसोदा सुत की बातैं, अति आनंद मगन तब ही के।
सूरदास-प्रभु विस्व-भरन ये, भोर भए ब्रज ताके ही के ॥५०७॥

कहत जसोदा बात सयानी।
भावी नहीं मिटै काहू की करता की गति जाति न जानी।
जन्म भयौ जब तैं ब्रज हरि कौ, कहा कियौ करि करि रजधानी।
कहाँ कहाँ तैं स्याम न उबरयौ किहिं राख्यौ तिहिं औसर आनी।
केसी सकटासुर वृषभ पूतना तृनावर्त की कहति कहानी।
जो मेरैं पछिताइ मरी अब अनजानत सब करी अयानी।
लै जगाइ आपी सौं आए, स्याम-राम हरषित नँद-रानी।
भूखे गए प्रात अकुलातहिं, तातैं आजु बहुत पछितानी।
रोहिनि दियौ न्हवाइ दुहुँनि कौ भोजन की माता अकुलानी।
ल्याई परसि दुहुँनि की थारी, जेंवत बल-मोहन रुचि मानी।
माँगि लियौ सीतल जल अँचयौ, मुख धोयौ दुहुनि लै पानी।
बीरा खात बीर बीरा बल, जननी तब मुख देखि सिहानी।
रत्न-जटित पलिका पर पौढ़े, बरनि न जाइ कृष्ण-रजधानी।
सूरदास कछु जूठनि माँगत पाऊँ कहि दीजै वर बानी ॥५०८॥

(ङ) रूप-चित्रण

कहाँ लौं बरनौं सुंदरताई।
खेलत कुँवर कनक-आँगन में नैन निरखि छबि पाई।
कुलही लसति सिर स्यामसुंदर कैं, बहु बिधि सुरँग बनाई।
मानौ नव घन ऊपर राजत मघवा धनुष चढ़ाई।
अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन, मोहन मुख बगराई।
मानौ प्रगट कंज पर मंजुल अलि-अवली फिरि आई।
नील, सेत अरु पीत लाल मनि लटकन भाल रुनाई।
सनि गुरु-असुर, देवगुरु मिलि मनु भौम सहित समुदाई।
दूध-दंत-दुति कहि न जाति कछु अद्भुत उपमा पाई।
किलकत-हँसत दुरति प्रगटति मनु, घन में बिज्जु छटाई।
खंडित बचन देत पूरन सुख अलप-अलप जलपाई।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, सूरदास बलि जाई ॥४०५॥

हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि मनोज-सोभा-हरनि।
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि।
रहे बिवरनि, सलिल, नभ उपमा अपर दुरी डरनि।
मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि।
मनहुँ सुभग सिंगार-सिसु-तरु, फर्यौ अद्भुत फरनि।

चलत पद-प्रतिबिंब मनि-आँगन घुटुरुवनि करनि।
जलज-संपुट सुभग छबि भरि लेति उर जनु धरनि।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं बिलोकि कै नँद-घरनि।
सूर प्रभु की उर बसी, किलकनि, ललित लरखरनि ॥७८०॥

जब तैं आँगन खेलत देख्यौ, मैं जसुदा कौ पूत री।
तब तैं गृह सौं नातौ टूट्यौ जैसैं काँचौ सूत री।
अति बिसाल बारिज-दल-लोचन राजति काजर-रेख री।
इच्छा सौं मकरंद लेत मनु अलि गोलक के बेष री।
स्रवन सुनत उतकंठ रहति हैं, जब बोलत तुतरात री।
उमँगै प्रेम नैन-मग ह्वै कै, कापै रोक्यौ जात री।
दमकतिं दोउ दूध की दँतियाँ, जगमग जगमग होति री।
मानौ सुंदरता-मंदिर मैं रूप-रतन की ज्योति री।
सूरदास देखैं सुंदर मुख, आनँद उर न समाइ री।
मानौं कुमुद कामना पूरन पूरन, इंदुहिं पाइ री ॥७८१॥

अद्भुत इक चितयौ हौं सजनी, नंद महर कैं आँगन री।
सो मैं निरखि अपुनपौ खोयौ, गई मथानी माँगन री।
बाल-दसा मुख-कमल बिलोकत, कछु जननी सौं बोलै री।
प्रगटति हँसत दँतुलि, मनु सीपज दमकि दुरे दल ओलै री।
सुंदर भाल-तिलक गोरोचन, मिलि मसि-बिंदुका लाग्यौ री।
मनु मकरंद अँचै रुचि कै, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री।
कुंडल लोल कपोलनि झलकत, मनु दरपन मैं झाँई री।
रही बिलोकि बिचारि चारु छबि परमिति कहूँ न पाई री।
मंजुल तारनि की चपलाई, चित चतुराई करषै री।
मनौ सरासन धरे कर स्मर, भौंह चढ़े सर बरषै री।
जलधि मथित जनु काग पोत कौ कूल न कबहूँ पायौ री।
ना जानौं किहिं अंग गमन मन चाहि रही नहिं पायौ री।

कहँ लगि कहौं बनाइ बरनि छबि, निरखत मति-गति हारी री।
सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी री ॥१८८२॥

मैं मोही तेरैं लाल री।
निपट निकट ह्वै कै तुम निरखौ, सुंदर नैन बिसाल री।
चंचल दृग अंचल पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झलरी।
मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम चाल री।
मुक्ता-बिद्रुम-नील-पीत मनि लटकत लटकन भाल री।
मानौ सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि ससि कैं बीच रसाल री।
उपमा बरनि न जाइ सखी री, सुंदर मदन-गोपाल री।
सूर स्याम कैं ऊपर वारें तन-मन-धन ब्रजबाल री ॥१८८३॥

मेरे माई, स्याम मनोहर जीवनि।
निरखि नैन भूले जु बदन-छबि, मधुर हँसनि पय-पीवनि।
कुंतल कुटिल मकर कुंडल, भ्रुव नैन बिलोकनि-बंक।
सुधा सिंधु तैं निकसि नयौ ससि राजत मनु मृग-अंक।
सोभित सुमन मयूर-चंद्रिका, नील नलिन तनु स्याम।
मनहु नछत्र-समेत इंद्र-धनु, सुभग मेघ अभिराम।
परम कुसल कोबिद लीला नट, मुसुकनि मन हरि लेत।
कृपा-कटाच्छ कमल-कर फेरत सूर जननि सुख देत ॥१८८४॥

बरनौं बाल-बेष मुरारि।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन, नंदलाल निहारि।
केस सिर बिन पवन के चहुँ दिसा छिटके झारि।
सीस पर धरि जटा मनु सिसु-रूप कियौ त्रिपुरारि।
तिलक ललित ललाट केसरबिंदु सोभाकारि।
रोष अरुन तृतीय लोचन, रह्यौ जनु रिपु जारि।
कंठ कठुला नील मनि, अंभोज-माल सँवारि।
गरल ग्रीव कपाल उर इहिं भाइ भए मदनारि।

कुटिल हरि-नख हियें हरि के हरषि निरखति नारि।
ईस मनु रजनीस राख्यौ भाल तैं जु उतारि।
सदन-रज तन स्याम सोभित, सुभग इहिं अनुहारि।
मनहुँ अंग-बिभूति राजत संभु सौं मधु हारि।
त्रिदस-पति-पति असन कौं अति जननि सौं करै आरि।
सूरदास बिरंचि जाकौं जपत निज मुख चारि ॥१८४॥

सखि री, नंद-नंदन देखु।
धूरि-धूसर जटा जुटली, हरि किए हर-भेषु।
नील पाट पिरोइ मनि-गन फनिग धोखैं जाइ।
खुनखुना कर, हँसत हरि, हर नचत डमरु बजाइ।
जलज-माल गुपाल पहिरे, कहा कहौं बनाइ।
मुंडमाला मानौ हर-गर ऐसी सोभा पाइ।
स्वाति-सुत-माला बिराजत स्याम तन इहिं भाइ।
मनौ गंगा गौरि-डर हर लई कंठ लगाइ।
केहरी-नख निरखि हिरदैं रही नारि बिचारि।
बाल-ससि मनु भाल तैं लै उर धर्यौ त्रिपुरारि।
देखि अंग अनंग झझक्यौ नंद-सुत हर जान।
सूर के हिरदै बसौ नित स्याम-सिव कौ ध्यान ॥१८५॥

हरि के बाल-चरित अनूप।
निरखि रहीं ब्रजनारि इकटक अंग-अंग-प्रति रूप।
बिथुरि अलकैं रहीं मुख पर बिनहिं बपन सुभाइ।
देखि कंजनि चंद कै बस मधुप करत सहाइ।
सजल लोचन चारु नासा परम रुचिर बनाइ।
जुगल खंजन करत अबिनति, बीच कियौ बनराइ।
अरुन अधरनि दसन झाँई कहौं उपमा थोरि।
नील पुट बिच मनौ मोती धरे बंदन बोरि।

सुभग भाल मुकुंद की छबि बरनि कापै जाइ।
भृकुटि पर मसि-बिंदु सोहै सकै सूर न गाइ ॥१८७॥

सोभित स्याम अपनैं रंग।
नंदलाल निहारि सोभा, निरखि थकित अनंग।
चरन की छबि देखि डरप्यौ अरुन, गगन छपाइ।
जानु करभा की सबै छबि निदरि, लई छड़ाइ।
जुगल जंघनि खंभ-रंभा नाहिं समसरि ताहि।
कटि निरखि केहरि लजाने रहे घन बन चाहि।
हृदय हरि नख अति बिराजत छबि न बरनी जाइ।
मनौ बालक बारिधर नव चंद लियौ छिपाइ।
मुक्त-माल बिसाल उर पर, कछु कहौं उपमाइ।
मनौ तारागननि बेष्टित गगन निसि रह्यौ छाइ।
अधर अरुन, अनूप नासा निरखि जन-सुखदाइ।
मनौ सुक, फल बिंब कारन, लेन बैठ्यौ आइ।
कुटिल अलक बिना बपन कै मनौ अलि-सिसु-जाल।
सूर प्रभु की ललित सोभा, निरखि रही ब्रज-बाल ॥१८८॥

मुख-छबि कहा कहौं बनाइ।
निरखि निसि पति बदन-सोभा, गयौ गगन दुराइ।
अमृत अलि मनु पिवन आए, आइ रहे लुभाइ।
निकसि सर तैं मीन मानौ, लरत कीर छुराइ।
कनक-कुंडल-स्रवन बिभ्रम कुमुद निसि सकुचाइ।
सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ ॥१८९॥

सुभग साँवरे गात की मैं, सोभा कहत लजाऊँ।
मोर-चँदा सिर-मुकुट की, मुख-मटकनि की बलि जाऊँ।
कुंडल लोल कपोलनि झाईं बिहँसनि चितहिं चुरावै।
दसन-दमक, मोतिनि-लर ग्रीवा सोभा कहत न आवै।

उर पर पदिक, कुसुम बनमाला, अंगद खरे बिराजैं।
चित्रित बाँह पहुँचिया पहुँचें हाथ मुरलिका छाजैं।
कटि पट पीत, मेखला मुकुलित पाइनि नूपुर सोहैं।
आस पास बर ग्वाल-मंडली देखत त्रिभुवन मोहैं।
सब मिलि आनँद प्रेम बढ़ावत, गावत गुन गोपाल।
यह सुख देखत स्याम-संग कौ, सूरदास सब ग्वाल ॥४६०॥

देखि सखी, बन तैं जु बने ब्रज आवत हैं नँद-नंदन।
सिखी सिखंड सिर, मुख मुरली, बन्यौ तिलक उर चंदन।
कुटिल अलक मुख, चंचल लोचन, निरखत अति आनंदन।
कमल मध्य मनु द्वै खग खंजन बँधे आइ उड़ि फंदन।
अरुन अधर-छबि दसन बिराजत, जब गावत कल मंदन।
मुक्ता मनौ नील-मनिमय-पुट, धरे सुरकि बर बंदन।
गोप बेष गोपाल गो चारत हैं हरि असुर-निकंदन।
सूरदास प्रभु सुजस बखानत नेति नेति स्रुति छंदन ॥४६१॥

सोभा कहत कही नहिं आवै।
अँचवत अति आतुर लोचन-पुट, मन न तृप्ति कौं पावै।
सजल मेघ घनस्याम सुभग बपु, तड़ित बसन बनमाल।
सिखि-सिखंड बन-धातु बिराजत सुमन सुगंध प्रवाल।
कछुक कुटिल कमनीय सघन अति गो-रज मंडित केस।
सोभित मनु अंबुज-पराग-रुचि-रंजित मधुप सुदेस।
कुंडल-किरनि कपोल लोल छबि, नैन कमल-दल-मीन।
प्रति प्रति अंग अनंग-कोटि-छबि, सुनि सखि परम प्रबीन।
अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर करति मदन मन हीन।
सूरदास जहँ दृष्टि परति है, होति तहीं लवलीन ॥४६२॥

[illegible] सैन निरखि सुख पावत।
संध्या समय गोप-गोधन सँग बन तैं बनि ब्रज आवत।

उर गुंजा बनमाल, मुकुट सिर, बेनु रसाल बजावत।
कोटि किरनि-मनि मुख परकासित उडुपति कोटि लजावत।
नटवर रूप अनूप छबीलौ, सबहिनि के मन भावत।
गोप-सखा सब बदन निहारत, उर आनँद न समावत।
चंदन खौरि, काछनी काछे, देखत ही मन भावत।
सूर स्याम नागर नारिनि कौं, बासर बिरह नसावत ॥४६३॥

साँवरौ मनमोहन माई।
देखि सखी बन तैं ब्रज आवत सुंदर नंद-कुमार कन्हाई।
मोर-पंख सिर मुकुट बिराजत, मुख मुरली धुनि सुभग सुहाई।
कुंडल लोल कपोलनि की छबि, मधुरी बोलनि बरनि न जाई।
लोचन ललित ललाट भृकुटि बिच तिलक मृगमद की रेख बनाई।
मनु मरजाद उलँघि अधिक बल उमँगि चली अति सुंदरताई।
कुंचित केस सुदेस कमल पर मनु मधुपनि-माला पहिराई।
मंद-मंद मुसुक्यानि मनौ घन दामिनि दुरि-दुरि देति दिखाई।
सोभित सूर निकट नासा के अनुपम अधरनि की अरुनाई।
मनु सुक सुरँग बिलोकि बिंब फल चाखन कारन चोंच चलाई॥

नँदनंदन मुख देखौ माई।
अंग अंग-छबि मनहुँ उये रबि ससि अरु समर लजाई।
खंजन मीन, भृंग, बारिज मृग पर दृग अति रुचि पाई।
स्रुति मंडल कुंडल मकराकृत बिलसत मदन सदाई।
नासा कीर, कपोत ग्रीव, छबि दाड़िम दसन चुराई।
द्वै सारँग-बाहन पर मुरली आई देति दुहाई।
मोहे थिर चर बिटप बिहंगम, ब्योम बिमान थकाई।
कुसुमांजलि बरषत सुर ऊपर, सूरदास बलि जाई ॥४६४॥

देखि री देखि आनँदकंद।
चित चातक मम घन, लोचननि चकोरनि चंद।

चलित कुंडल गंड-मंडल, झलक ललित कपोल।
सुधा-सर जनु मकर क्रीड़त, इंदु डहडह डोल।
सुभग कर आनन समीपै, मुरलिका इहिं भाइ।
मनु उभै अंभोज-भाजन, लेत सुधा भराइ।
स्याम-देह दुकूल-दुति मिलि, लसत तुलसी-माल।
तड़ित घन संजोग मानौ, सेनिका सुक-जाल।
अलक अविरल, चारु हास बिलास भृकुटी भंग।
सूर हरि की निरखि सोभा, भई मनसा पंग॥२६६॥

देखौ माई, सुंदरता कौ सागर।
बुधि-बिबेक-बल पार न पावत, मगन होत मन नागर।
तनु अति स्याम अगाध अंबु निधि, कटि पट पीत तरंग।
चितवत चलत अधिक रुचि उपजति भँवर परत अँग-अंग।
नैन-मीन मकराकृत कुंडल, भुज सरि सुभग भुजंग।
मुक्त-माल मिली मानौ द्वै सुरसरि एकै संग।
कनक खचित मनिमय आभूषन मुख स्रम-कन सुख देत।
मनु जल-निधि मथि प्रगट कियौ ससि, श्री अरु सुधा समेत।
देखि सरूप सकल गोपीजन रहीं बिचारि-बिचारि।
तदपि सूर तरि सकीं न सोभा रहीं प्रेम पचि हारि॥२६७॥

बने बिसाल अति लोचन लोल।
चितै-चितै हरि चारु बिलोकनि, मानौ माँगत हैं मन ओल।
अधर अनूप नासिका सुंदर, कुंडल ललित सुदेस कपोल।
मुख मुसुक्यात महा छबि लागति, स्रवन सुनत सुठि मीठे बोल।
चितवति रहतिं चकोर चंद ज्यौं, निमिष न पलक लगावतिं डोल।
सूरदास प्रभु कैं बस ऐसैं दासी सकल भईं बिनु मोल॥२६८॥

देखि री देखि आनँद-कंद।
चित चातक प्रेम-घन लोचनि चकोरनि चंद।

लकुट लपेटि लटकि भए ठाढ़े, एक चरन धर धारे ।
मनहुँ नील-मनि-खंभ काम रचि, एक लपेटि सुधारे ।
कबहुँ लकुट तैं जानु फेरि लै, अपने सहज चलावत ।
सूरदास मानहुँ करभा, कर बारंबार डुलावत ॥५९९॥

कटि तट पीत बसन सुदेस ।
मानौ नव घन दामिनी, तजि रही सहज, सुबेस ।
कनक मनि मेखला राजत सुभग स्यामल अंग ।
मनौ हंस-रसाल पंगति नारि-बालक-संग ।
सुभट कटि काछनी राजति, जलज केसरि-खंड ।
सूर प्रभु-अँग निरखि माधुरि, मदन-बल परयौ मंद ॥६००॥

काछनी निरखि हरि प्रतिअंग ।
कोउ निरखि नख इंदु भूली कोउ चरन-जुग रंग ।
कोउ निरखि नूपुर रही थकि, कोउ निरखि जुग जानु ।
कोउ निरखि जुग जंघ सोभा करति मन अनुमान ।
कोउ निरखि कटि पीत काछनी मेखला रुचिकारि ।
कोउ निरखि हृद-नाभि की छबि डारयौ तन मन वारि ।
रुचिर रोमावली हरि कै चारु उदर सुदेस ।
मनौ अलि-स्रेनी बिराजति बनी एकहिं भेस ।
रही इकटक नारि ठाढ़ी करति बुद्धि बिचार ।
सूर आगम किधौं नभ तैं जमुन-सूच्छम-धार ॥६०१॥

राजति रोम राजी-रेख ।
नील घन मनु धूम-धारा रही सूच्छम भेष ।
निरखि सुंदर हृदय पर भृगु पाद परम सुलेख ।
मनहुँ सोभित अभ्र अंतर, संभु-भूषन भेष ।
मुक्त-माल नछत्र-गन सम, अर्द्ध चंद्र बिसेष ।
सजल उज्जल जलद-मलयज, स्रवत बनिनि कलेष ।

केकि कच सुर चाप की छबि बसन तड़ित सुवेष ।
सूर प्रभु की निरखि सोभा, तजे नैन निमेष ।।६०२।।

चतुर नारि सब कहति बिचारि ।
रोमावली अनूप बिराजति, जमुना की अनुहारि ।
उर-कलिंद तैं धँसि जल-धारा, उदर-धरनि परवाह ।
जाति चली धारा ह्वै अध कौं, नाभी-ह्रद अवगाह ।
भुजा दंड तट, सुभग घाट धन बनमाला तरु कूल ।
मोतिनि-माल बुलबुले मानौ, फेन लहरि रस-फूल ।
सूर स्याम-रोमावलि की छबि देखति करति बिचार ।
बुधि रचति तरि सकहिं न सोभा, प्रेम बिबस ब्रजनार ।।६०३।।

रोमावली-रेख अति राजति ।
सूच्छम बेष धूम की धारा नव घन ऊपर भ्राजति ।
भृगु-पद-रेख स्याम उर सजनी कहा कहौं ज्यौं छाजति ।
मनहुँ मेघ-भीतर दुतिया-ससि कोटि-काम-दुति लाजति ।
मुक्ता-माल नंद-नंदन-उर, अर्द्ध सुधा घट भ्राजति ।
तनु श्रीखंड मेघ उज्ज्वल अति, देखि महाबलि लाजति ।
बरही-मुकुट इन्द्र धनु मानहुँ तड़ित दसन-छबि लाजति ।
इकटक रही बिलोकि सूर प्रभु, निमिषनि की कद लाजति ।।६०४

मुख-छबि कहौं कहाँ लगि माई ।
भानु उदै ज्यौं कमल प्रकासित, रबि ससि दोऊ जोति छिपाई ।
अधर बिंब नासा ऊपर, मनु सुक चाखन कौं चोंच चलाई ।
बिकसित बदन दसन अति चमकत, दामिनि-दुति दुरि देति दिखाई ।
सोभित अति कुंडल की डोलनि मकराकृत की, सरस बनाई ।
निसि दिन रटति सूर के स्वामिहिं, ब्रज-बनिता देहँ बिसराई ।।६०५

सखी री, सुंदरता कौ रंग
छिन छिन माँहि परति छबि औरै कमल-नैन कैं अंग ।

परमिति करि राख्यौ चाहति है, लागी डोलति संग।
चलत निमय बिसेष जानियत, भूलि भई मति-भंग।
स्याम सुभग कैं ऊपर वारौं आली, कोटि अनंग।
सूरदास कछु कहत न आवै भई गिरा-गति पंग ॥६०६॥

स्याम-भुजनि की सुंदरताई।
चंदन-खौरि अनूपम राजति, सो छबि कही न आई।
बड़े बिसाल जानु लौं परसत, इक उपमा मन आई।
मनौ भुजंग गगन तैं उतरत अधमुख रह्यौ झुलाई।
रतन जटित पहुँची कर राजति अँगुरी सुंदर भारी।
सूर मनौ फनि सिर मनि सोभित फन-फन की छबि न्यारी ॥६०७॥

गोपी तजि लाज संग स्याम-रंग भूली।
पूरन मुख-चंद देखि नैन-कोइ फूलीं।
कैधौं नव जलद-स्वाति चातक मन लाए।
किधौं बारि-बूँद सीप हृदय हरष पाए।
रबि-छबि कैधौं निहारि पंकज बिकसाने।
किधौं चक्रवाक निरखि पतिहीं रति माने।
कैधौं मृग जूथ जुरे, मुरली-धुनि रीझे।
सूर स्याम-मुख-मंडल-छबि कै रस भीजे ॥६०८॥

बड़ी निठुर बिधना यह देख्यौ।
जब तैं आजु नँदनंदन छबि बार-बार करि पेख्यौ।
नख अँगुरी, पग, जानु, जंघ, कटि रचि कीन्ही निरमान।
हृदय बाहु कर, अंस, अंग अँग, मुख सुंदर अति बान।
अधर, दसन, रसना रस, बानी, स्रवन, नैन अरु भाल।
सूर रोम प्रति लोचन देतौ, देखत बनत गुपाल ॥६०९॥

स्याम-अंग जुवती निरखि भुलानी।
कोउ निरखति कुंडल की आभा, इतनेहिं माँझ बिकानी।

ललित कपोल निरखि कोउ अटकी, सिथिल भई ज्यौं पानी।
देह-गेह की सुधि नहिं काहूँ, हरषनि कोउ पछितानी।
कोउ निरखित रही ललित नासिका, यह काहू नहिं जानी।
कोउ निरखति अधरन की सोभा फुरति नहीं मुख बानी।
कोउ चकित भई दसन-चमक पर, चकचौंधी अकुलानी।
कोउ निरखति दुति चिबुक चारु की, सूर तरुनि बिततानी ॥६१०॥

स्याम-कर मुरली अतिहिं बिराजति।
परसति अधर सुधारस बरसति मधुर मधुर सुर बाजति।
लटकत मुकुट भौंह-छबि मटकति नैन-सैन अति राजति।
ग्रीव नवाइ अटकि बंसी पर कोटि मदन-छबि लाजति।
लोल कपोल झलक कुंडल की, यह उपमा कछु लागति।
मानहुँ मकर सुधा रस क्रीड़त, आपु आपु अनुरागत।
बृंदाबन बिहरत नँद-नंदन ग्वाल-सखा सँग सोहत।
सूरदास प्रभु की छबि निरखति सुर-नर-मुनि मन मोहत ॥६११॥

तब लगि सबै सयान रहैं।
जब लगि नवल किसोर न मुरली, बदन-समीर गहैं।
तबहीं लौं अभिमान, चातुरी, पतिब्रत, कुलहिं चहैं।
जब लगि स्रवन-रंध्र-मग मिलि कै मानिन मनहिं महैं।
तब लगि तरुनि तरल चंचलता बुध-बल-सकुचि रहैं।
सूरदास जब लगि वा धुनि सुनि नाहिंन धीर ढहैं ॥६१२॥

सुंदर मुख की बलि बलि जाउँ।
लावनि-निधि गुन-निधि सोभा-निधि निरखि-निरखि जीवत सब गाउँ।
अंग अंग प्रति अमित माधुरी प्रगटति रस रुचि ठावहिं ठाउँ।
तामैं मृदु मुसुक्यानि मनोहर न्याइ कहत कबि मोहन नाउँ।

नैन-सैन दै-दै जब हेरत वा छबि पर बिनु मोल बिकाउँ।
सूरदास प्रभु मदनमोहन-छबि सोभा की उपमा नहिं पाउँ ।११३।

मैं बलि जाउँ स्याम-मुख-छबि पर।
बलि बलि जाउँ कुटिल कच बिथुरे, बलि भृकुटी लिलाट पर।
बलि-बलि जाउँ चारु अवलोकनि बलि बलि कुंडल-रबि की।
बलि-बलि जाउँ नासिका सुललित, बलिहारी वा छबि की।
बलि-बलि जाउँ अरुन अधरनि की बिद्रुम-बिंब लजावन।
मैं बलि जाउँ दसन चमकनि की वारौं तड़ितनि भावन।
मैं बलि जाउँ ललित ठोढ़ी पर, बलि मोतिनि की माल।
सूर निरखि तन मन बलिहारौं बलि बलि जसुमति-लाल ।११४।

अलकनि की छबि अलि-कुल गावत।
खंजन मीन मृगज लज्जित भए, नैननि गतिहिं न पावत।
मुख मुसुक्यानि आनि उर अंतर, अंबुज बुधि उपजावत।
सकुचत अरु बिगसत वा छबि पर अनुदिन जनम गँवावत।
पूजत नाहिं सुभग स्यामल तन जद्यपि जलधर धावत।
बसन समान होत नहिं हाटक, अगिनि झाँप दै आवत।
मुक्त-दाम बिलोकि बिलखि करि, अवलि बलाक बनावत।
सूरदास प्रभु ललित त्रिभंगी, मनमथ-मनहिं लजावत ।११५।

नटवर-बेष काछे स्याम।
पद-कमल नख-इंदु-सोभा ध्यान पूरन काम।
जानु जंघ सुघटनि करभा, नहीं रंभा तूल।
पीत पट काछनी मानहुँ जलज-केसर झूल।
कनक छुद्रावली पंगति नाभि कटि कै भीर।
मनहुँ हंस-रसाल-पंगति, रहे हैं ह्रद तीर।
झलक रोमावली-सोभा, ग्रीव मोतिनि हार।
मनहुँ गंगा-बीच जमुना, चली मिलि त्रय धार।

बाहु दंड बिसाल तट दोउ, अंग चंदन रेनु ।
तीर-तरु बनमाल की छबि, ब्रज-जुवति सुख देनु ।
चिबुक पर अधरनि, दसन-दुति बिंब बीजु लजाइ ।
नासिका सुक, नैन खंजन, कहत कबि सरमाइ ।
स्रवन कुंडल कोटि-रबि-छबि, भृकुटि काम-कोदंड ।
सूर प्रभु हैं नीप कैं तर, सीस धरे सिखंड ।।६१६।।

उपमा धीरज तज्यौ निरखि छबि ।
कोटि मदन अपनौ बल हारयौ कुंडल किरनि छप्यौ रबि ।
खंजन कंज मधुप, बिधु, तड़ित, घन दीन रहत कहुँ दबि ।
हरि-पटतर दै हमहिं लजावत, सकुच नाहिं कोटै कबि ।
अरुन अधर दसननि, दुति निरखत, बिद्रुम सिखर लजाने ।
सूर स्याम आछौ बपु काछे पटतर मेटि बिराने ।।६१७।।

उपमा हरि-तनु देखि लजानी ।
कोउ जल मैं कोउ बननि रही दुरि कोउ दुरि गगन समानी ।
मुख निरखत ससि गयौ अंबर कौं, तड़ित दसन-छबि हेरि ।
मीन कमल कर चरन, नयन डर, जल मैं कियौ बसेरि ।
भुजा देखि अहिराज लजाने, बिबरनि पैठे धाइ ।
कटि निरखत केहरि डर मान्यौ, बन-बन रहे दुराइ ।
गारी देहिं कबिनि कैं बरनत, श्री अंग पटतर देत ।
सूरदास हमकौं सरमावत, नाउँ हमारौ लेत ।।६१८।।

बनी मोतिनि की माल मनोहर ।
सोभित स्याम-सुभग-उर ऊपर, मनु गिरि तैं सुरसरी धँसी धर ।
तट भुजदंड भौंर भृगु-रेखा, चंदन चित्र तरंग सु सुंदर ।
मनि की किरन मीन कुंडल-छबि मकर मिलन आये स्यारी सर ।
जग्योपबीत बिचित्र सूर सुनि, मध्य-धार धारा जु बनी वर ।
संख चक्र गदा पद्म पानि मनु कमल कूल हंसनि कीन्हे घर ।।६१९।।

बने बिसाल कमल-दल नैन।
ताहू मैं अति चारु बिलोकनि, गूढ़ भाव सूचति सखि सैन।
बदन-सरोज निकट कुंचित कच, मनहुँ मधुप आए मधु लैन।
तिलक तरुन ससि कहत कछुक हँसि, बोलत मधुर मनोहर बैन।
मदन नृपति कौ देस महा मद, बुधि बल बसि न सकत उर चैन।
सूरदास प्रभु दूत दिनहिं दिन, पठवत चरित चुनौती दैन ॥६२०॥

मोहन बदन बिलोकत अँखियनि उपजत है अनुराग।
तरनि ताप तलफत चकोर गति पिवत पियूष पराग।
लोचन नलिन नए राजत रति पूरन मधुकर भाग।
मानहुँ अलि आनंद मिले मकरंद पिवत रितु फाग।
भँवरि भाग भृकुटी पर कुमकुम चंदन-बिंदु बिभाग।
चातक सोम सक्र-धनु घन मैं निरखत मन बैराग।
कुंचित केस मयूर चंद्रिका-मंडल सुमन सुपाग।
मानहुँ मदन धनुष सर लीन्हे बरषत है बन बाग।
अधर-बिंब तैं अरुन मनोहर मोहन मुरली-राग।
मानहु सुधा-पयोधि घेरि घन ब्रज पर बरषन लाग।
कुंडल मकर कपोलनि झलकत स्रम-सीकर के दाग।
मानहुँ मीन मकर मिलि क्रीड़त सोभित सरद-तड़ाग।
नासा तिल प्रसून पदवी पर चिबुक चारु चित खाग।
दाड़िम दसन मंद-गति मुसुकनि मोहत सुर नर नाग।
श्रीगुपाल रस रूप भरी हैं, सूर सनेह सुहाग।
ऐसी सोभा-सिंधु बिलोकति इन अँखियनि के भाग ॥६२१॥

बिमना-चूक परी मैं जानी।
श्रजहुँ गुपितहि हेरि हेरि हौं, यहै समुझि पछितानी।
दधि मथि सोधि, सँवारि सकल अँग चतुर चतुरई ठानी।
दृष्टि न दई रोम-रोमनि-प्रति, इतनिहिं कला नसानी।

कहा करौं, अति सुख, द्वै नैना, उमँगि चलत पल पानी।
सूर सुमेरु समाइ कहाँ लौं बुधि-बासनी पुरानी ॥६२३॥

द्वै लोचन तुम्हरैं द्वै मेरैं।
तुम प्रति अंग बिलोकन कीन्हौ मैं भई मगन एक अंग हेरैं।
अपनौ अपनौ भाग्य सखी री, तुम तनमय मैं कहूँ न नेरैं।
जो बुतियौ सोई पुनि लुनियै, और नहीं त्रिभुवन मढ़ भेरैं।
स्याम-रूप अवगाह-सिंधु तैं, पार होत चढ़ि डोंगनि केरैं।
सूरदास तैसैं ये लोचन, कृपा जहाज बिना क्यौं पेरैं ॥६२३॥

चारु चितौनि सु चंचल डोल।
कहि न जाति मन मैं अति भावति, कछु जु एक उपजति गति गोल।
मुरली मधुर बजावत, गावत चलत करज अरु कुंडल लोल।
सब छबि मिलि प्रतिबिंब बिराजत, इंद्रनील-मनि-मुकुर कपोल।
कुंचित केस सुगंध-सुबनि मनु, उड़ि आए मधुपनि के टोल।
सूर सुभग नासिका मनोहर, अनुमानत अनुराग अमोल ॥६२४॥

नँद-नँदन मुख देखौ माई।
अनुकूल भए विधि त्रिविध देवकी, प्रगटे त्रिभुवन-चंद।
जठर-कूहू तैं बिहरि, बारुनी दिसि मधुपुरी सुछंद।
बसुदौ-संभु सीस धरि आन्यौ, गोकुल आनँद-कंद।
ब्रज प्राची राका-तिथि जसुमति सरस सरद-रितु-नंद।
उड़गन सकल सखा संकर्षन तम-कुल-दनुज निकंद।
गोपी-जन चकोर-चित बाँध्यौ, निमि निवारि पल द्वंद।
सूर सुदेस कला षोडस, परिपूरन परमानंद ॥६२५॥

देखि सखी हरि कौ मुख चारु।
मनहुँ छिड़ाइ लियौ नँद-नंदन वा ससि कौ सत-सारु।
रूप तिलक कच कुटिल किरनि-छबि कुंडल कल-बिस्तारु।
पत्रावलि परिवेष सुभग सरि मिल्यौ मनहुँ उडु दारु।

नैन चकोर बिहंग सूर सुनि पिवत न पावत पार।
अब अँचवत ऐसी लागत है, जैसी भूखी धार ॥६२६॥

देखि री, हरि के चंचल तारे।
कमल मीन को कहँ एती छबि, खंजन हू न जात अनुहारे।
वह लखि निमिष नचत, मुरली पर, कर मुख नैन भए इक धारे।
मनु जलरुह तजि बैर मिलत बिधु, करत नाद बाहन चुचुकारे।
उपमा एक अनूपम उपजति, कुंचित अलक मनोहर भारे।
बिहरत बिथुकि जानि रथ तैं मृग, जनु ससंकि ससि लंगर तारे।
हरि-प्रति अंग बिलोकि मानि रुचि ब्रज बनितानि प्रान-धन वारे।
सूर स्याम मुख निरखि मगन भईं यह बिचारि चित अनत न टारे

हरि-मुख निरखत नैन भुलाने।
ये मधुकर रुचि पंकज-लोभी, ताही तैं न उड़ाने।
कुंडल मकर कपोलनि कैं ढिग जनु रवि रैनि बिहाने।
भ्रुव सुंदर, नैननि गति निरखत खंजन मीन लजाने।
अरुन अधर दुज कोटि बज्र दुति ससि घन रूप समाने।
कुंचित अलक सिलीमुख मिलि मनु लै मकरंद उड़ाने।
तिलक ललाट, कंठ मुक्तावलि भूषन मनिमय साने।
सूर स्याम रस-निधि नागर के क्यौं गुन जात बखाने ॥६२८॥

देखि री, नवल नंद किसोर।
लकुट सौं लपटाइ ठाढ़े, जुवति जन-मन चोर।
चारु लोचन, हँसि बिलोकनि देखि कै चित भोर।
मोहिनी मोहन लगावत लटकि मुकुट-झकोर।
स्रवन धुनि सुनि नाद पोहत करत हिरदै फोर।
सूर अंग त्रिभंग सुंदर छबि निरखि तृन तोर ॥६२९॥

ब्रज-बनिता देखति नँद-नंदन।
नव घन-नील बरन ता ऊपर खौरि कियौ तनु चंदन।

कनक-बरन तन पीत पिछौरी, उर भ्राजति बनमाल।
निर्मल गगन स्वेत-बादर पर, मनौ दामिनी-जाल।
मुक्ता-माल विपुल बग-पंगति सकुल एक भई जोति।
सूर स्याम-छबि निरखति जुवती, हरष परस्पर होति ॥६२०॥

हरि-तन मोहिनी माई।
अंग-अंग अनंग सत सत, बरनि नहिं जाई।
कोउ निरखि सिर मुकुट की छबि, सुरति बिसराई।
कोउ निरखि बिथुरी अलक मुख, अधिक सुख पाई।
कोउ निरखि रही भाल चंदन एक चित लाई।
कोउ निरखि बिथकी भ्रकुटि पर, नैन ठहराई।
कोउ निरखि रही चारु लोचन, निमिष भरमाई।
सूर प्रभु की निरखि सोभा कहत नहिं आई ॥६२१॥

नैना (माई) भूलेहु अनत न जात।
देखि सखी, सोभा जु बनी है, मोहन कै मुसुकात।
दाड़िम-दसन-निकट नासा-सुक, चोंच चलाइ न खात।
मनु रतिनाथ-हाथ भ्रकुटी-धनु तिहिं अवलोकि डरात।
बदन प्रभामय चंचल लोचन, आनँद उर न समात।
मानहुँ भौंह-जुवा-रथ जोते ससि नचवत मृग मात।
कुंचित केस, अधर धुनि मुरली सूरदास सुर गात।
मनहुँ कमल पर कोकिल कूजत, अलिगन उपर उड़ात।६२२

स्याम हृदय जल-सुत की माला अतिहिं अनूपम छाजै (री)।
मनहुँ बलाक-पाँति नव-घन पर, यह उपमा कछु भ्राजै (री)।
पीत हरित सित अरुन, माल-बन राजति हृदय बिसाल (री)।
मानहुँ इंद्र-धनुष नभ-मंडल प्रगट भयौ तिहिं काल (री)।
भृगु-पद-चिन्ह उर-स्थल प्रगटे, कौस्तुभ मनि ढिग दरसत (री)।
बैठे मानौ षट बिधु इक सँग, अर्द्ध निसा मिलि हरषत (री)।

भुजा बिसाल स्याम सुंदर की चंदन-खौरि चढ़ाए (री)
सूर सुभग अँग अँग की सोभा, ब्रज-ललना ललचाए (री) ॥६२३॥

निरखि निरखि सुंदरता की सींवा।
अधर अनूप मुरलिका राजति लटकि रहति अध ग्रीवा।
मंद-मंद सुर पूरत मोहन राग मलार बजावत।
कबहुँक रीझि मुरलि पर गिरिधर, आपुहिं रस भरि गावत।
हँसत लसति दसनावलि-पंगति ब्रज-बनिता-मन-मोहत।
मरकत-मनि पुट बिच मुकुतावलि, चंदन-भरे मनु सोहत।
मुख बिकसत सोभा इक आवति मनु राजीव प्रकास।
सूर अरुन आगमन देखि कै, प्रफुलित भए हुलास ॥६२४॥

गोपी जन हरि बदन निहारति।
कुंचित अलक बिथुरि रहे भ्रुव पर ता पर तन मन वारति।
बदन-सुधा सरसीरुह लोचन भृकुटी दोउ रखवारी।
मनौ मधुप मधुपानहिं आवत देखि डरत जिय भारी।
इक इक अलक लटकि लोचन पर यह उपमा इक आवति।
मनहुँ पन्नगिनि उतरि गगन तें, दल पर फन परसावति।
मुरली अधर धरे, कल-पूरत, मंद मंद सुर गावत।
सूर स्याम नागरि नारिनि कै, चंचल चित्तहिं चुरावत ॥६२५॥

देखि सखी यह सुंदरताई।
चपल-नैन-बिच चारु नासिका, इकटक दृष्टि रही तहँ जाई।
करति बिचार परस्पर जुवती, उपमा आनति बुद्धि बनाई।
मानहुँ खंजन-बिच सुक बैठ्यौ यह कहिकै मन जाति लजाई।
कछु इक तिल प्रसून की आभा मन-मधुकर तहँ रह्यौ लुभाई।
सूर स्याम-नासिका मनोहर, यह सुंदरता उन कहँ पाई ॥६२६॥

मनोहर है नैननि की भाँति।
मानहुँ दूरि [illegible]

इंदीवर राजीव कुसेसय जीते सब गुन जाति।
अति आनंद सुमौदा तातैं, विकसत दिन अरु राति।
खंजरीट मृग मीन बिचारति, उपमा कौ अकुलाति।
चंचल चारु चपल अवलोकनि, चितहिं न एक समाति।
जब कहुँ परत निमेषहु अंतर, जुग समान पल जात।
सूरदास वह रसिक राधिका, निमि पर अति अनखाति ॥६१७

आजु सखि, देखे स्याम नए (री)
निकसे आनि अचानक अबहीं इत फिरि फिरि चितए (री)।
मैं तब तैं पछिताति यहै, उन नैन न बहुत भए (री)।
जौ बिधना इतनी जानत है कत दृग दोइ दए (री)।
सब है सेसैं लाख लोचन कहुँ जो कोउ करत नए (री)।
हरि प्रति अंग बिलोकन कौ मैं प्रन करिकै पठए (री)।
अपनैं चोप बहुत कहे पहुँचे ये हरि-संग गए (री)।
थके चरन सुनि सूरि मनौ गुन मदन बान बिषए (री) ॥६१८॥

देखि री हरि के चंचल नैन।
खंजन-मीन-मृगज चपलाई नहिं पटतर इक सैन।
राजिव-दल इंदीवर सतदल कमल कुसेसय जाति।
निसि मुद्रित प्रातहिं वै बिकसित ये बिकसित दिनराति।
अरुन स्वेत सित झलक पलक प्रति को बरनैं उपमाइ।
मनु सरसुति, गंगा जमुना मिलि आगम कीन्हौ आइ।
अवलोकनि जलधार तेज अति तहाँ न मन ठहराइ।
सूर स्याम लोचन-अपार-छबि उपमा सुनि सरमाइ ॥६१९॥

देखि सखी मोहन मन चोरत।
नैन-कटाच्छ बिलोकनि मधुरी, सुभग भृकुटि बिबि मोरत।
चंदन-खौरि ललाट स्याम कैं, निरखत अति सुखदाई।
मनौ एक सँग गंग-जमुन नभ तिरछी धार बहाई।

मनमथ भाल भृकुटि-रेखा की कवि उपमा इक पाई।
मानहुँ अर्धचंद्र-तट अहिनी, सुधा चुरावन आई।
भृकुटि चारु निरखि ब्रज-सुंदरि, यह मन करति बिचार।
सूरदास प्रभु सोभा-सागर कोउ न पावत पार ॥६४०॥

देखि री देखि कुंडल डोल।
चारु स्रवननि मदन कीन्हे, झलक ललित कपोल।
बदन-मंडल सुधा सरवर, निरखि मन भयौ भोर।
मकर क्रीड़त गुप्त परगट रूप जल झकझोर।
नैन मीन भुअंगिनी भ्रुव नासिका थल बीच।
सरस मृग मद-तिलक-सोभा लसित है तगि बीच।
मुख बिकास सरोज मानहु जुवति-लोचन भृंग।
चिकुर अलकैं परी मानहुँ, प्रेम-लहरि तरंग।
स्याम तनु-छबि जमुन-पूरन, रच्यौ काम-तड़ाग।
सूर प्रभु की निरखि सोभा ब्रज-तरुनि बड़भाग ॥६४१॥

हरि-मुख किधौं मोहनी माइ।
बोलत बचन मंत्र सौ लागत गति-मति जाति भुलाई।
कुटिल अलक राजति भ्रुव ऊपर जहाँ तहाँ बगराई।
स्याम फाँसि मन करष्यौ हमरौ अब समुझी चतुराई।
कुंडल ललित कपोलनि झलकत, इनकी गति मैं पाई।
सूर स्याम जुवती मनमोहन ये सँग करत सहाई ॥६४२॥

निरखति रूप नागरि नारि।
मुकुट पर मन अटकि लटक्यौ, जात नहिं निरवारि।
स्याम तन की झलक, आभा, चंद्रिका झलकाइ।
बार बार बिलोकि थकि रही, नैन नहिं ठहराइ।
स्याम-मरकत-मनि महानग सिखा निरतत मोर।
देखि जलधर हरष उर मैं नहीं आनँद थोर।

पीत फहरति सुर-चाप मानौ गगन भयौ प्रकास।
थकित ब्रज-ललना जहाँ तहँ, हरष कबहुँ उदास।
निरखि जो जिहिं अंग राँची तहीं रही भुलाइ।
सूर प्रभु-गुन-रासि-सोभा, रसिक जन सुखदाइ ॥६४२॥

देखि री देखि सोभा-रासि।
काम-पटतर कहा दीजै रमा जिनकी दासि।
मुकुट सीस सिखंड सोहै, निरखि रहीं ब्रज-नारि।
कोटि सुर-कोदंड-आभा झिरकि डारैं वारि।
केस कुंचित बिथुरि भ्रुव पर, बीच सोभा भाल।
मनौ चंदहिं अमल आन्यौ राहु घेरयौ जाल।
चारु कुंडल सुभग स्रवननि, को सकै उपमाइ।
कोटि कोटि कला तरनि छबि देखि तनु भरमाइ।
सुभग मुख पर चारु लोचन, नासिका इहिं भाँति।
मनौ खंजन बीच सुक मिलि बैठे हैं इक पाँति।
सुभग नासा तर अधर-छबि, रस धरे अरुनाइ।
मनौ बिंब निहारि सुक, भ्रुव धनुष देखि डराइ।
हँसत दसननि चमकताई बज्र कन रची पाँति।
दामिनी, दारिम नहीं सरि, कियौ मन अति भाँति।
चिबुक पर चित-बित चुरावत नवल नंद-किसोर।
सूर-प्रभु की निरखि सोभा भई तरुनी भोर ॥६४३॥

तन मन नारि वारहिं वारि।
स्याम सोभा सिंधु जान्यौ, अंग अंग निहारि।
थकि रहीं मन ज्ञान करि-करि लहति नाहिंन तीर।
स्याम-तन जल-रासि-पूरन, महा गुन गंभीर।
पीतपट फहरानि मानौ लहरि उठति अपार।
निरखि छबि थकि तीर बैठीं, कहूँ वार न पार।

चलत अंग त्रिभंग करिकै, भौंह भाव चलाइ।
मनौ बिच-बिच भँवर डोलत, चित परस भरमाइ।
स्रवन कुंडल मकर मानौ, नैन मीन बिसाल।
सलिल झलकनि-रूप-आभा देखि री नँदलाल।
बाहु दंड भुजंग मानौ, जलधि-मध्य बिहार।
मुक्त-माला मनौ सुरसरि, है चली द्वै धार।
अंग अंग भूषन बिराजत, कनक-मुकुट प्रभास।
जलधि मथि मनु प्रगट कीन्ही श्री, सुधा-परगास।
चकित भई तिय निरखि सोभा देह-गति बिसराइ।
सूर प्रभु छबि-रासि नागर, स्यामि आनन्दराइ ॥६४४॥

बैठी कहा मदन मोहन कौ, सुंदर बदन बिलोकि।
जा कारन घूँघट पट अपनौं, अँखियाँ राखी रोकि।
रुचि रही मोर-चंद्रिका माथैं छबि की उठति तरंग।
मनहुँ अमर-पति-धनुष बिराजत नव जलधर कैं संग।
रुचिर चारु कमनीय भाल पर, कुंकुम-तिलक दिये।
मानहुँ अखिल भुवन की सोभा राजति उदय किये।
मनिमय जटित लोल कुंडल की आभा झलकति गंड।
मनहुँ कमल ऊपर दिनकर की, पसरी किरनि प्रचंड।
भृकुटी कुटिल निकट नैननि कैं, चपल होति इहि भाँति।
मनहुँ तामरस कैं सँग खेलत बाल भृ ग की पाँति।
कोमल स्याम कुटिल अलकावलि, ललित कपोलनि तीर।
मनहुँ सुभग इंदीवर ऊपर, मधुपनि की अति भीर।
अरुन-अधर, नासिका निकाई, बदत परस्पर होड़।
सूर सुमनसा भई पाँगुरी, निरखि डगमगी गोड़ ॥६४५॥

सजनी निरखि हरि कौ रूप।
मनसि बचसि बिचारि देखौ, अंग-अंग अनूप।

कुटिल केस सुदेस अलिगन बदन सरद सरोज।
मकर-कुंडल-किरनि की छबि, दुरत फिरत मनोज।
अरुन अधर कपोल नासा, सुभग ईषद हास।
दसन की दुति तड़ित, नव ससि, भ्रकुटि मदन बिलास।
अंग-अंग अनंग जीते, रुचिर उर बनमाल।
सूर सोभा हृदय पूरन, देत सुख गोपाल।।६४७।।

नैननि ध्यान नंद-कुमार।
सीस मुकुट सिखंड भ्राजत, नहीं उपमा-पार।
कुटिल केस सुदेस राजत, मनहुँ मधुकर-जाल।
रुचिर केसरि-तिलक दीन्हें, परम सोभा भाल।
भृकुटि बंकट चारु लोचन, रही जुवती देखि।
मनौ खंजन चाप-डर डरि, उड़त नाहिं तिहिं पेखि।
मकर कुंडल गंड झलमल, निरखि लज्जित काम।
नासिका-छबि कीर लज्जित, कबिनि बरनत नाम।
अधर बिद्रुम, दसन दाड़िम, चिबुक है चित-चोर।
सूर प्रभु-मुख चंद पूरन नारि-नैन चकोर।।६४८।।

नंद-नंदन-मुख देखौ नीकैं।
अंग-अंग प्रति कोटि माधुरी निरखि होत सुख जी कैं।
सुभग स्रवन कुंडल की आभा झलकनि कपोलनि पी कैं।
दर-दर अमृत मकर क्रीड़त मनु, यह उपमा कछु ही कैं।
और अंग की सुधि नहिं जानैं कहौं कहति हैं कीकैं।
सूरदास प्रभु नटवर काछे, राखत है रति-पति पी कैं।।६४९।।

देखि री देखि, कुंडल-झलक।
नैन द्वै छबि भरी कैसैं, लगत नाहिन पलक।
ललति चारु कपोल दुहुँ दिसि सचल सोभित चारु।
मुख सुधा-सर मीन मानौ मकर संग बिहार।

कुटिल अलक सुभाइ हरि कैं, भ्रुवनि पर रहे आइ।
मनौ-मनमथ फाँदे फाँदनि, मीन बिधि तट ल्याइ।
चपल लोचन, चपल कुंडल, चपल भृकुटी बंक।
सखा व्याकुल देखि अपने, चित बनत न संक।
सूर प्रभु नँद-सुवन की छबि, बरनि कापै जाइ।
निरखि गोपी-निकर बिथकीं, बिधिहिं अति रिस पाइ ॥६२०॥

बिधना अतिहीं पोच कियौ री।
कहा बिगार कियौ हम वाकौ, अब काहैं अपकार कियौ री।
यह तौ मन अपनैं चालत ही, एते पर क्यौं निठुर हियौ री।
रोम रोम लोचन इकटक करि, जुवतिनि प्रति काहैं न दियौ री।
अँखियाँ द्वै छबि की चमकनि यह, हम तौ चाहति सबै पियौ री।
सुनि सजनी, यह करनी अपनी अपनैं ही सिर मानि लियौ री।
हम तौ पाप कियौ भुगतै को पुन्य-प्रगट क्यौं जात छियौ री।
सूरदास प्रभु रूप-सुधा-निधि, पुट थोरौ बिधि नहीं कियौ री ॥६२१॥

देखि सखी अधरनि की लाली।
मनि मरकत तैं सुभग कलेवर, ऐसे हैं बनमाली।
मनौ प्रात की घटा साँवरी, तापर अरुन प्रकास।
ज्यौं दामिनि बिच चमकि रहत है फहरत पीत सुबास।
कीधौं तरुन तमाल बेलि चढ़ि जुग फल बिंब सुपाके।
नासा कीर आइ मनु बैठ्यौ लेत बनत नहिं ताके।
हँसत दसन इक सोभा उपजति उपमा जदपि लजाइ।
मनौ नीलमनि-पुट मुकुता-गन बंदन भरि बगराइ।
किधौं बज्र-कन, लाल नगनि खँचि तापर बिद्रुम पाँति।
किधौं सुभग बंधूक-कुसुम-तर, झलकत जल-कन-काँति।
किधौं अरुन अंबुज बिच बैठी, सुंदरताई आइ।
सूर अरुन अधरनि की सोभा बरनत बरनि न जाइ ॥६२२॥

मुख पर चंद डारौं वारि।
कुटिल कच पर भौंर वारौं, भौंह पर धनु वारि।
भाल-केसरि-तिलक-छबि पर, मदन-सर सत वारि।
मनु चली बहि सुधा-धारा, निरखि मन धौं वारि।
नैन सुरसरि-जमुन-गंगा, उपम डारौं वारि।
मीन खंजन मृगज वारौं, कमल के कुल वारि।
निरखि कुंडल तरनि वारौं, कूप स्रवननि वारि।
मधुर सरिस कपोल छबि पर, मुकुर सत-सत वारि।
नासिका पर कीर वारौं, अधर बिद्रुम वारि।
दसन पर कन-बज्र वारौं, बीज-दाड़िम वारि।
चिबुक पर चित-बित्त वारौं, प्रान डारौं वारि।
सूर हरि की अंग सोभा, को सकै निरुवारि ॥६५३॥

(घ) राधा-कृष्ण

खेलन हरि निकसे ब्रज-खोरी।
कटि कछनी पीतांबर बाँधे, हाथ लए भौंरा, चक, डोरी।
मोर-मुकुट, कुंडल स्रवननि बर, दसन-दमक दामिनि छबि छोरी।
गए स्याम रबि-तनया कैं तट, अंग लसति चंदन की खोरी।
औचक ही देखी तहँ राधा, नैन बिसाल भाल दिए रोरी।
नील बसन फरिया कटि पहिरे, बेनी पीठि रुलति झकझोरी।
संग लरिकिनी चलि इत आवति, दिन-थोरी, अति छबि तन-गोरी।
सूर स्याम देखत ही रीझे, नैन-नैन मिलि परी ठगोरी ॥६२४॥

बूझत स्याम, कौन तू गोरी ?
कहाँ रहति, काकी है बेटी, देखी नहीं कहूँ ब्रज-खोरी।
काहे कौं हम ब्रज-तन आवतिं, खेलति रहतिं आपनी पौरी।
सुनत रहतिं स्रवननि नँद-ढोटा, करत फिरत माखन-दधि-चोरी।
तुम्हरौ कहा चोरि हम लैहैं, खेलन चलौ संग मिलि जोरी।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि, बातनि भुरइ राधिका भोरी ॥६२५॥

प्रथम सनेह दुहुँनि मन जान्यौ।
नैन-नैन कीन्ही सब बातैं, गुप्त प्रीति प्रगटान्यौ।
खेलन कबहुँ हमारैं आवहु, नँद-सदन, ब्रज गाउँ।
द्वारैं आइ टेरि मोहिं लीजौ, कान्ह हमारौ नाउँ।

जौ कहियै घर दूरि तुम्हारौ, बोलत सुनियै टेरि।
तुमहिं सौंह वृषभानु बबा की, प्रात-साँझ इक फेरि।
सूधी निपट देखियत तुमकौ तातैं करियत साथ।
सूर स्याम नागर उत नागरि राधा, दोउ मिलि गाथ ।।६२६।।

ठाढ़ी कुँवरि राधिका लोचन मीचत तहँ हरि आए।
अति बिसाल चंचल अनियारे हरि-हाथनि न समाए।
सुभग आँगुरिनि मध्य बिराजत अति आतुर दरसाए।
मानौ मनिधर मनि ज्यौं ढाँकपी फन तर रहत दुराए।
गोसुत गयौ सु गाधि गयौ घर ज्यौं जु रबि सँग लाए।
अपने काम न मिलत हरी ज्यौं बिरहा बैठ दुराए।
अंबुज चारि कुमुद द्वै मिलि कै ज्यौं ससि-बीर गँवाए।
सूरदास अति हरि परसतहीं सकल बिथा बिसराए ।।६२७।।

सैननि नागरी समुझाइ।
खरिक आवहु दोहिनी लै, यहै मिस छल लाइ।
गाइ-गनती करन जैहैं मोहिं लै सँग धाइ।
बोलि बचन प्रमान कीन्हौ, दुहुँनि आतुरताइ।
कनक बरन सुढार सुंदरि, सकुचि बदन दुराइ।
स्याम प्यारी-नैन, रीझे, अति बिसाल चलाइ।
गुप्त प्रीति न प्रगट कीन्ही हृदय दुहुँनि छिपाइ।
सूर प्रभु के बचन सुनि-सुनि रही कुँवरि लजाइ ।।६२८।।

गई वृषभानु-सुता अपनैं घर।
संग सखी सौं कहति चली यह, को जैहै उनकैं दर।
बड़ी बेर भई जमुना आए खीझति ह्वैहै मैया।
बचन कहति मुख, हृदय प्रेम-दुख, मन हरि लियौ कन्हैया।
माता कहति, कहाँ ही प्यारी कहाँ अबेर लगाई।
सूरदास तब कहति राधिका, खरिक देखि हौं आई ।।६२९।।

नागरि मन गई अरुझाइ।
अति बिरह तनु भई ब्याकुल, घर न नैंकु सुहाइ।
स्याम सुंदर मदन मोहन, मोहिनी सी लाइ।
चित्त चंचल कुँवरि राधा खान पान भुलाइ।
कबहुँ बिहँसति, कबहुँ बिलपति, सकुचि रहति लजाइ।
मातु-पितु कौ त्रास मानति, मन बिना भई बाइ।
जननि सौं दोहिनी माँगति बेगि दै री माइ।
सूर प्रभु कौं खरिक मिलिहौं गए मोहिं बुलाइ ॥६६०॥

मोहिं दोहिनी दै री मैया।
खरिक माहिं अबहीं ह्वै आई, अहिर दुहत सब गैया।
ग्वाल दुहत तब गाइ हमारी जब अपनी दुहि लेत।
घरिक मोहिं लगिहै खरिका मैं तू जनि आवै हेत।
सोचति चली कुँवरि घर ही तैं खरिक गई सकुचाइ।
कब देखौं वह मोहन मूरति जिन मन लियौ चुराइ।
देखै जाइ तहाँ हरि नाहीं, चकित भई सुकुमारि।
कबहुँ इत कबहुँ उत डोलति, लागी प्रीति-खँभारि।
नंद लिए आवत हरि देखे, तब पायौ बिस्राम।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, कीन्हौ पूरन काम ॥६६१॥

नंद गए खरिकहिं हरि लीन्हे।
देखी तहाँ राधिका ठाढ़ी बोलि लिए तिहिं चीन्हे।
महर कह्यौ, खेलौ तुम दोऊ, दूरि कहूँ जिनि जैहौ।
गनती करत ग्वाल गैयनि की मोहिं नियरैं तुम रैहौ।
सुनि बेटी वृषभानु महर की कान्हहिं लेइ खिलाइ।
सूर स्याम कौ देखे रहियौ, मारै जनि कोउ गाइ ॥६६२॥

नंद बाबा की बात सुनी हरि।
मोहिं छाँड़ि जौ कहूँ जाहुगे, ल्याऊँगी तुमकौं धरि।

ऐसी भई तुम्हैं सौंपि गए मोहिं, जान न दैहौं तुमकौं।
बाँह तुम्हारी नैंकु न छाँड़ौं, महर खीझिहैं हमकौं।
मेरी बाँह छाँड़ि दै राधा, करत उपरफट बातैं।
सूर स्याम नागर, नागरि सौं, करत प्रेम की घातैं ॥६६३॥

जननी कहति कहा भयौ प्यारी।
अबहीं खरिक गई तू नीकैं, आवत ही भई कौन बिथा री।
एक बिटनियाँ सँग मेरे ही, कारैं खाई ताहि तहाँ री।
मो देखत वह परी धरनि गिरि, मैं डरपी अपनैं जिय भारी।
स्याम बरन इक ढोटा आयौ, यह नहिं जानति रहत कहाँ री।
कहत सुन्यौ नँद कौ यह बारौ, कछु पढ़िकै तुरतहिं वहिं झारी।
मेरौ मन भरि गयौ त्रास तैं, अब नीकौ मोहिं लागत मा री।
सूरदास अति चतुर राधिका यह कहि समुझाई महतारी ॥६६४॥

कुँवरि सौं कहति वृषभानु-घरनी।
नैंकु नहिं घर रहति, तोहिं कितनी कहति,
रिसनि मोहिं दहति, बन भई हरनी।
लरिकिनी सबनि घर तोसी नहिं कोउ निडर,
चलति नभ चितै नहिं तकति धरनी।
बड़ी करवर टरी, साँप सौं ऊबरी, बात,
कैं कहत तोहिं लगति जरनी।
लिखी मेटै कौन, करै करता जौन,
सोइ ह्वै है जु होनहारि करनी।
सुता लई उर लाइ, तनु निरखि पछिताइ,
डरनि गई कुम्हिलाइ सूर बरनी ॥६६५॥

महर वृषभानु की यह कुमारी।
देवपाली करत द्वार द्वारैं परत,
पुत्र है, तीसरैं ये ...

भई बरष सात की सुभ घरी जात की,
प्यारी छोड़ भ्रात की भली भारी।
कुँवरि दई अन्हवाइ गई तन-मुरझाइ,
बसन पहिराइ कछु कहति ना री।
काल्हि बनि बारिक-छन, खेलि अपनें भवन
यह सुनति हँसति मन स्याम नारी।
सूर प्रभु ध्यान धरि, हरषि आनंद भरि,
गौंव पर खेलिहीं कहति ना री।॥६६६॥

खेलन कैं मिस कुँवरि राधिका नंद महरि कैं आई (हो)।
सकुच सहित मधुरे करि बोली घर ही कुँवर कन्हाई (हो)।
सुनत स्याम कोकिल सम बानी निकसे अति अतुराई (हो)।
माता सौं कछु करत कलह हे, रिस डारी बिसराई (हो)।
मैया री, तू इनकौं चीन्हति, बारंबार बताई (हो)।
जमुना तीर काल्हि मैं भूल्यौ, बाहँ पकरि लै आई (हो)।
आवति इहाँ तोहिं सकुचति है मैं दै सौंह बुलाई (हो)।
सूर स्याम ऐसे गुन आगर, नागरि बहुत रिझाई (हो)॥६६७॥

देखि महरि मनही जु सिहानी।
बोलि लई, पूछति नँदरानी, कहि मधुरे मधु बानी।
ब्रज मैं तोहिं कबहुँ नहिं देखी कौन गाउँ है तेरौ।
भली काल्हि कान्हहिं गहि ल्याई, भूल्यौ हो सुत मेरौ।
नैन बिसाल, बदन अति सुंदर, देखत नीकी छोरी।
सूर महरि राधिका सौं बिनवति, भली स्याम की जोटी॥६६८

नाम कहा तेरौ री प्यारी।
बेटी कौन महर की है तू को तेरी महतारी।
धन्य कोख जिहिं तोकौं राख्यौ धनि घरि जिहिं अवतारी।
धन्य पिता माता हैं तेरे, छबि निरखति हरि-महतारी।

भली भई तुम्हें सौंपि गए मोहिं, जान न देहौं तुमकौं।
बाँह तुम्हारी नैकु न छाँड़ौं, महर खीझिहैं हमकौं।
मेरी बाँह छाँड़ि दै राधा, करत उपरफट बातैं।
सूर स्याम नागर, नागरि सौं, करत प्रेम की घातैं ॥११३॥

जननी कहति कहा भयौ प्यारी।
अबहीं खरिक गई तू नीकैं, आवत ही भई कौन बिथा री।
एक बिटिनियाँ सँग मेरे ही, कारैं खाई ताहि तहाँ री।
मो देखत वह परी धरनि गिरि, मैं डरपी अपने जिय भारी।
स्याम बरन इक ढोटा आयौ, यह नहिं जानति रहत कहाँ री।
कहत सुन्यौ नँद कौ यह बारौ, कछु पढ़िकै तुरतहिं उहिं झारी।
मेरौ मन भरि गयौ त्रास तैं, अब नीकौ मोहिं लागत ना री।
सूरदास अति चतुर राधिका, यह कहि समुझाई महतारी ॥११४॥

कुँवरि सौं कहति वृषभानु-घरनी।
नैकु नहिं घर रहति, तोहिं कितनौ कहति,
रिसनि मोहिं दहति, बन भई हरनी।
लरिकिनी सबनि घर, तोसी नहिं कोउ निडर
चलति नभ चितै नहिं चलति धरनी।
भली करवर टरी, साँप सौं उबरी, बात,
कै कहत तोहिं लागति जरनी।
लिखी मेटै कौन, करै कथा कौन,
सौंह टरै सु होनहारि करनी।
सुता लई उर लाइ, तनु निरखि पछिताइ,
जानि गई कुम्हिलाइ सूर बरनी ॥११५॥

महर वृषभानु की यह कुमारी।
देवपासी करत चार ठाढ़ें परत,
पुत्र द्वै, तीसरैं यहै बारी।

खेलति रही नंद कैं आँगन, जसुमति कही कुँवरि ह्यौं आ री।
मेरौ नाउँ बूझि बाबा कौ तेरौ बूझि, दई हँसि गारी।
तिस चौंवरी गोद करि लीनी, फरिया दई फारि नव सारी।
मो-तन चितै, चितै ढोटा-तन, कछु सविता सौं गोद पसारी।
यह सुनि कै वृषभानु मुदित चित, हँसि-हँसि बूझत बात दुलारी।
सूर सुनत रस सिंधु बढ़्यौ अति, दंपति पढ़ै बात बिचारी ॥६७२॥

मेरे आगैं महरि जसोदा, तोकौं गारी दीन्ही।
बाको नाव सबै मैं जानति, बै जैसी मैं चीन्ही।
तोकौं कहि पुनि कह्यौ बबा कौं बड़ौ धूत वृषभान।
तब मैं कह्यौ, ठग्यौ कब तुमकौं हँसि लागी लपटान।
भली कही तू मेरी बेटी, लयौ आपनौ दाउ।
जो मोहिं कह्यौ सबै गुन उनके, हँसि-हँसि कहति सुभाउ।
फेरि-फेरि बूझति राधा सौं सुनत हँसति सब नारि।
सूरदास वृषभानु-घरनि जसुमति कौं गावति गारि ॥६७३॥

कहत कान्ह जननी समुझाई।
जहँ-तहँ डारे रहत खिलौना राधा जनि लै जाइ चुराई।
साँझ सबारैं आवन लागी, चितै रहति मुरली-तन माई।
इनहीं मैं मेरे प्रान बसत है, तेरे भायैं नैंकु न माई।
राखि दुराइ, कह्यौ करि मेरौ बलदाऊ की जनि पतिआई।
सूरदास यह कहति जसुदा, कबै धौं मोहिं लगी भलाई। ६७४

आजु राधिका भोरहीं जसुमति कैं आई।
महरि मुदित हँसि यौं कह्यौ मथि माखन-दुहाई।
आयसु लै ठाढ़ी भई, कर नेति सुहाई।
रीती माठ बिलोवई चित जहाँ कन्हाई।
उनके मन की कह कहौं, ज्यौं दृष्टि लगाई।
मैया नोई वृषभ सौं गैया बिसराई।

मैं बेटी वृषभानु महर की, मैया तुमकौं जानति।
जमुना-तट बहु बार मिलन भयौ, तुम नाहिंन पहिचानति।
ऐसी कहि, वाकौ मैं जानति, वह तौ बड़ी छिनारि।
महर बड़ौ लंगर सब दिन कौ, हँसति देति मुख गारि।
राधा बोलि उठी, बाबा कछु तुमसौं ढीठौ कीन्हौ।
ऐसे समरथ कब मैं देखे, हँसि प्यारिहिं उर लीन्हौ।
महरि कुँवरि सौं यह कहि भाषति, आउ करौं तेरी चोटी।
सूरदास हरषित नँदरानी, कहति महरि हम जोटी ॥६६९॥

जसुमति राधा कुँवरि सँवारति।
बड़े बार सीमंत सीस के, प्रेम सहित निरुवारति।
माँग पारि बेनी जु सँवारति, गूँथी सुंदर भाँति।
गोरैं भाल बिंदु बदन, मनु इंदु प्रात-रवि काँति।
सारी चीरि नई फरिया लै, अपने हाथ बनाइ।
अंचल सौं मुख पोंछि अंग सब, आपुहिं लै पहिराइ।
तिल चाँवरी, बतासे मेवा दियौ कुँवरि की गोद।
सूर स्याम राधा-तनु चितवत, जसुमति मन-मन मोद ॥६७०॥

खेलौ जाइ स्याम सँग राधा।
यह सुनि कुँवरि हरष मन कीन्हौ, मिटि गई अंतर-बाधा।
जननी निरखि चकित रहि ठाढ़ी, दंपति रूप-अगाधा।
देखति भाव दुहुँनि कौ सोई, जो चित करि अवराधा।
सँग खेलत दोउ झगरन लागे, सोभा बढ़ी अगाधा।
मनहुँ तड़ित घन, इंदु तरनि ह्वै, बाल करत रस-साधा।
निरखत बिधि भ्रमि भूलि परयौ तब, मन-मन करत समाधा।
सूरदास प्रभु और रच्यौ बिधि, सोच भयौ तन दाधा ॥६७१॥

बूझति जननि कहाँ हुती प्यारी।
किन तेरे भाल तिलक रचि कीनौ, किहिं कच गूँदि माँग सिर पारी।

खेलति रही नंद कैं आँगन, जसुमति कह्यौ कुँवरि ह्याँ आरी।
मेरौ नाउँ बूझि बाबा कौ, तेरौ बूझि, दई हँसि गारी।
तिहिं चौंवरी गोद करि लीनी, फरिया दई फारि नव सारी।
गो-धन फिरै, फिरै सीटा-बन, कछु सखिया सौं गोद पसारी।
यह सुनि कै वृषभानु मुदित चित, हँसि-हँसि बूझत बात दुलारी।
सूर सुनत रस-सिंधु बढ़्यौ अति, दंपति बैठे बात बिचारी ॥६७२॥

मेरे आगैं महरि जसोदा तोकौं गारी दीन्ही।
बाके भाव सबै मैं जानति, वै जैसी मैं चीन्ही।
तोकौं कहि पुनि कह्यौ बबा कौं बड़ौ धूत वृषभान।
तब मैं कह्यौ ठग्यौ कब तुमकौं हँसि लागी लपटान।
भली कही तू मेरी बेटी लयौ आपनौ दाउ।
जो मोहिं कह्यौ सबै गुन उनके, हँसि-हँसि कहति सुभाउ।
फेरि-फेरि बूझति राधा सौं सुनत हँसति सब नारि।
सूरदास वृषभानु-घरनि जसुमति की गावति गारि ॥६७३॥

कहत कान्ह जननी समुझाई।
जहँ-तहँ धरे रहत खिलौना, राधा जनि धौं आइ चुराई।
साँझ सबारैं आवन लागी, चिते रहति मुरली-धन धाई।
इनहीं मैं मेरे प्रान बसत हैं, तेरे भाएँ नैकु न भाई।
राखि दुराइ, कह्यौ करि मेरौ, चपलाऊ कौं जनि पतियाई।
सूरदास यह कहति जसदा, को लैहै मोहिं लगी बलाई। ६७४

आजु राधिका भोरहीं जसुमति कैं आई।
महरि मुदित हँसि यौं कह्यौ मथि मान-दुहाई।
आपहु लै ठाढ़ी भई, कर नेति सुहाई।
रीती माट बिलोवई चित जहाँ कन्हाई।
उनके मन की कह कहौं ज्यौं दृष्टि लगाई।
लैया नोई वृषभ सौं गैया बिसराई।

नैननि मैं जसुमति लखी दुहुँ की चतुराई ।
सूरदास दंपति-दसा, कापै कहि जाई ॥६७५॥

महरि कह्यौ री लाडिली, किन मथन सिखायौ ।
कहूँ मथनी, कहूँ माट है, चित कहाँ लगायौ ।
अपनैं घर यौंही सबै करि प्रगट दिखायौ ।
कै मेरैं घर आइकै, तैं सब बिसरायौ ?
मथन नहीं मोहिं आवई, तुम सौंह दिवायौ ।
तिहिं कारन मैं आइ कै, तुव बोल रखायौ ।
नँद-घरनि तब मथि दह्यौ हरिं भाँति बतायौ ।
सूर निरखि मुख स्याम कौ, तहँ ध्यान लगायौ ॥६७६॥

दुहत स्याम गैया बिसराई ।
नोई लै पग बाँधि बृषभ के, दोहिनि माँगत कुँवर कन्हाई ।
ग्वाल एक दोहिनि लै दीन्ही, दुही स्याम अति करी चँडाई ।
हँसत परस्पर तारी दै दै आजु कहाँ तुम रहे भुलाई ।
कहत सखा हरि सुनत नहीं सो, प्यारी सौं रहे चित अरुझाई ।
सूर स्याम राधा-तन चितवत बड़े चतुर की गई चतुराई ॥६७७॥

राधा ये ढँग है री तेरे ।
कैसे हाल मथत दधि कीन्हे, हरि मधु लियौ चितेरे ।
तेरौ मुख देखत ससि लाजै और कहौ क्यौं बाचै ।
नैना तेरे जलज-जीत हैं, खंजन तैं अति नाचैं ।
चपला तैं चमकति अति प्यारी, कहा करैगी स्यामहिं ।
सुनहु सूर ऐसेहिं बिन सोचति काज नहीं तेरे धामहिं ॥६७८॥

मेरौ कह्यौ नाहिन सुनति ।
तबहिं तैं हटकत रही हौं, कहा धौं मन गुनति ।
अबहिं तैं तू करति ये ढँग, तोहिं अबही दौन ।
स्याम कौ तू ऐसैं ठगि लियौ, कछु न जाने कौन ॥

सुता है वृषभानु की री यही उनकौ नावँ।
सूर प्रभु नँद-सुवन निरखत, जननि कहति सुभाउ ॥६७९॥

चितैबौ छाँड़ि दै री राधा।

हिलि-मिलि खेलि स्यामसुंदर सौं करति काम की बाधा।
कै बैठी रहि भवन आपनैं काहे कौं बनि आवै।
मृग-नैनी हरि कौ मन मोहति जब तू देखि दुहावै।
कबहुँक कर तैं गिरति दोहिनी कबहुँक बिसरति दोई।
कबहुँक वृषभ दुहत है मोहन ता बातनि कर हाई।
कौन मंत्र जानति तू प्यारी, परि बसति हरि-गात।
सूर स्याम कौं धेनु दुहन दै, कहति जसोदा मात ॥६८०॥

धेनु दुहन दै मेरे स्यामहिं।

जौ आवै तौ सहज रूप सौं, जनि आवति बेकामहिं।
सूधैं आइ स्याम सँग खेलौ, बोलै बैठे, धामहिं।
ऐसौ ढंग मोहिं नहिं भावै लेइ न वाके नामहिं।
घर अपनैं तू जाहि राधिका, कहति महरि मन वामहिं।
सूर आइ तू करति अचगरी, को पचिहै निसि-जामहिं ॥६८१

बार बार तू जनि ह्याँ आवै।

मैं कह करौं सुतहिं नहिं बरजति घर तैं मोहिं बुलावै।
मोसौं कहत तोहिं बिनु देखैं, रहत न मेरौ प्रान।
छोह लगत मोकौं सुनि बानी, महरि तुम्हारी आन।
मुँह पावति तबही लौं आवति, औरैं लावत मोहिं।
सूर समुझि जसुमति उर लाई, हँसत कहति हौं तोहिं।६८२

हँसत कही मैं तोसौं प्यारी।

मन मैं कछू बिलग जनि मानै मैं तेरी महतारी।
बहुरौं दिवस आजु तू आई, राधा मेरैं धाम।
महरि कही मैं सुधरि सुनी है, कछु सिखयी गृह-काम ?

मैया आप मोहिं टहल कहति कछु, जिमत यथा वृषभान ।
सूर महरि सौं कहति राधिका मानौ अतिहिं अमान ।।६८१

या घर प्यारी आवति रहियौ ।
महरि हमारी बात चलावति ? सिखन हमारी कहियौ ।
एक दिवस मैं गई जमुन तट, तहँ वन देखी आइ ।
मोकौं देखि बहुत सुख पायौ मिली अंकम लपटाइ ।
यह सुनि कै चली कुँवरि राधिका, मोहीं भई अपार ।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौ, मोहन नंद-कुमार ।।६८२।।

मोहिनि-कर तैं दोहिनि लीन्ही, गो-पद बछरा जोरे ।
हाथ धेनु-थन, बदन तिया-तन, छीर छीटि छल छोरे ।
आनन रही ललित पय छींटैं, छाजति छबि तृन तोरे ।
मनौ निकसे निकलंक कलानिधि दुग्ध-सिंधु मथि पोरे ।
दै घूँघट पट ओट नील हँसि, कुँवरि मुदित मुख मोरे ।
मनहुँ सरद-ससि कौं मिलि दामिनि, घेरि लियौ घन घोरे
इहिं बिधि रहसत-बिलसत दंपति, हेत हियैं नहिं थोरे ।
सूर उमँगि आनंद सुधा-निधि, मनु बेला बल फोरे ।।६८३।।

हरि सौं धेनु दुहावति प्यारी ।
करति मनोरथ पूरन मन कौ वृषभानु महर की बारी ।
दूध-धार मुख पर छबि लागति, सो उपमा अति भारी ।
मानौ चंद कलंकहिं धोवत जहँ-तहँ बूँद सुधारी ।
हाव-भाव रस-मगन भए दोउ छबि निरखति ललिता री ।
गो-दोहन-सुख करत सूर-प्रभु, तीनिहुँ भुवन भरा री ।।६८४।।

तुम पै कौन दुहावै गैया ।
लिए रहत हौ कनक-दोहिनी, बैठत हौ अधपैया ।
अति रस काम की प्रीति जानि कै, आवत नारिक दुहैया ।
इत चितवत, उत धार चलावत, यहै सिखायौ मैया ?

तुम प्रीति तासौं करि मोहन, को है तेरी दैया।
सूरदास प्रभु झगरौ सीख्यौ क्यौं घर खसम गुसैयाँ ॥६८७॥

करि प्यारी हरि, आपुनि गैयाँ।
नाहिंन बसत लाल कछु तुम्हरैं तुमसे सबै ग्वाल इक ठैयाँ।
नहिं आधीन तेरे बाबा के, नहिं तुम हमरे नाथ-गुसैयाँ।
हम तुम जाति पाँति के एकै, कहा भयौ अधिकी द्वै गैयाँ ?
जा दिन तैं सँचरे गोपिनि मैं ताही दिन तैं करत लँगरैयाँ।
मानी हार सूर के प्रभु तब बहुरि न करिहौ नंद दुहैयाँ ॥६८८॥

धेनु दुहत अतिहीं रति बाढ़ी।
एक धार दोहिनि पहुँचावत, एक धार जहँ प्यारी ठाढ़ी।
मोहन कर तैं धार चलति परि मोहिनि-मुख अतिहीं छवि गाढ़ी।
मनु जलधर जलधार वृष्टि लघु पुनि पुनि प्रेम चंद पर बाढ़ी।
सखी संग की निरखति यह छवि भईं व्याकुल मन्मथ की डाढ़ी।
सूरदास प्रभु के रस-बस सब भवन-काज तैं भईं उचाढ़ी ॥६८९॥

दुहि दीन्ही राधा की गाइ।
दोहिनि भरी देत कर तैं हरि, हा हा करि परे पाइ।
ज्यौं ज्यौं प्यारी हा हा बोलति, त्यौं त्यौं हँसत कन्हाइ।
बहुरि कही प्यारी तुम हा हा, दैहौं नंद-दुहाइ।
तब दीन्ही प्यारी-कर दोहिनि, हा हा बहुरि कराइ।
सूर स्याम रस हाव-भाव करि, दीन्ही कुँवरि पठाइ ॥६९०॥

मुरि मुरि चितवति नंद गली।
डग न परत ब्रजनाथ-साथ बिनु बिरह-बिथा मैं जाति चली।
बार-बार मोहन-मुख कारन आवति फिरि-फिरि संग अली।
चली पीठि दै दृष्टि फिरावति अंग-अंग आनंद रली।
कर-कपोल-भीम-सिर-सारँग-केहरि-कनुमी-दवि बदली।
सूरदास प्रभु पास दुरावति धनि-धनि यौ वृषभ—

सिर दोहिनी चली लै प्यारी।
फिरि चितवत हरि हँसे निरखि मुख, मोहन मोहिनि डारी।
व्याकुल भई गई सखियनि लौं, मग कौं गए कन्हाई।
और अहिर सब कहाँ तुम्हारे, हरि सौं धेनु दुहाई।
यह सुनि कै चकित भई प्यारी, धरनि परी मुरझाइ।
सूरदास सब सखियनि घर भरि, लीन्ही कुँवरि उठाइ ॥६९२॥

क्यौं री कुँवरि गिरी मुरझाई ?
यह बानी कही सखियनि आगैं, मोकौं कारैं खाई।
चली लिवाइ सुता-वृषभानुहिं, घरहीं वन सकुचाई।
धरि दियौ भरी भूप दुलनियाँ, अबहीं नीकैं आई।
यह कारौ सुत नंद महर कौ, सब हम फूँक लगाई।
सूर सखिनि मुख सुनि यह बानी तब यह बात सुनाई ॥६९३॥

सखियनि मिलि राधा घर लाई।
देखहु महरि सुता अपनी कौं, कहुँ इहिं कारैं खाई।
हम आगैं आवति, यह पाछैं धरनि परी भहराई।
सिर तैं गई दोहिनी ढरिकै, आपु रही मुरझाई।
स्याम-भुअंग डस्यौ हम देखत ल्यावहु गुनी बुलाई।
रोवति जननि कंठ लपटानी, सूर स्याम गुन राई ॥६९४॥

आज गई नीकैं उठि घर तैं।
मैं बरजी कहँ जाति री प्यारी तब खीझी रिस-भर तैं।
सीतल अंग स्वेद सौं बूड़ी सीस परयौ मन डर तैं।
अतिहिं हठीली, कह्यौ न मानति, करति आपने बर तैं।
औरै दसा भई छिन भीतर, बोलि गुनी नगर तैं।
सूर गारुड़ी गुन करि थाके मंत्र न लागत थर तैं ॥६९५॥

थके सब गारुड़ी पछिताइ।
नैकहूँ नहिं मंत्र लागत, समुझि काहु न जाइ।

बात बूझत सँग सखियनि कहौ हमहिं बुझाइ।
कहा कहि राधा सुनायौ तुम सबनि सौं आइ?
महा बिषधर स्याम अहिवर, देखि सबही धाइ।
फूँक-ज्वाला हमहुँ लागी कुँवरि उर पर आइ।
गिरी धरनी मुरछि तबही, लई तुरत उठाइ।
सूर प्रभु कौं बेगि ल्यावहु, बड़ौ गारुड़ि राइ॥६९६॥

नंद-सुवन गारुड़ी बुलावहु।
कह्यौ हमारी सुनत न कोऊ, तुरत जाहु लै आवहु।
ऐसौ गुनी नहीं त्रिभुवन कहुँ हम जानति हैं नीकैं।
आइ जाइ तौ तुरत जिवावहिं नैंकु छुवत उठै जी कैं।
देखौ धौं यह बात हमारी एकहिं मंत्र जिवावै।
नंद महर कौ सुत सूरज सौ कैसहुँ धौं कौ ल्यावै॥६९७॥

बृषभानु की घरनि जसोमति पुकारयौ।
पठै सुत काम कौं कहति ही लाज तजि पाइ परिकै महरि करति आरयौ।
प्रात खरिकहिं गई, आइ बिह्वल भई राधिका कुँवरि कहुँ डस्यौ कारौ
सुनी यह बात मैं आई अतुरात, कौ गारुड़ी बड़ौ है सुत तुम्हारौ।
यह बड़ौ धरम मैं बरनि तुम पाइहौ नैंकु काहैं न सुत कौं हँकारौ।
सूर सुनि महरि यह कहि उठी सहचरी, कहा तुम कहति मेरौ अतिहिं बारौ॥६९८॥

जंत्र-मंत्र कछु जानै मेरौ?
यह तुम जाइ गुनिनि कौ बूझौ इहाँ करति कत भेरौ।

आठ बरस कौ कुँवर कन्हैया कहा कहति तुम ताहि ?
किनि बहकाइ दयौ है तुमकौं, ताहि पकरि लै आहि।
मैं तौ चकित भई हौं सुनि कै अति अचरज यह बात।
सूर स्याम गारुड़ी कहाँ कौ कहँ आई बिततात ॥६९९॥

महरि, गारुड़ी कुँवर कन्हाई।
एक बिटिनियाँ कारैं खाई, ताकौं स्याम तुरतहीं ज्याई।
बोलि लेहु अपने ढोटा कौं, तुम कहि कै देउ नैंकु पठाई।
कुँवरि राधिका प्रात खरिक गई तहाँ कहूँ धौं कारैं खाई।
यह सुनि महरि मनहिं मुसुक्यानी, अबहिं रही मेरैं गृह आई।
सूर स्याम राधहिं कछु कारन, जसुमति समुझि रही अरगाई ॥७००॥

तब हरि कौं टेरति नँदरानी।
भली भई सुत भयौ गारुड़ी आजु सुनी यह बानी।
जननी-टेर सुनत हरि आए कहा कहति री मैया ?
कीरति महरि बुलावन आई, जाहु न कुँवर कन्हैया।
कहूँ राधिका कारैं खायौ जाहु न आवौ झारि॥
जंत्र-मंत्र कछु जानत हौ तुम सूर स्याम बनवारि ॥७०१॥

हरि गारुड़ी तहाँ तब आए।
यह बानी वृषभानुसुता सुनि मन-मन हरष बढ़ाए।
धन्य-धन्य आपुन कौं कीन्हौ अतिहिं गई मुरझाइ।
तनु पुलकित रोमांच प्रगट भए आनँद अस्रु बहाइ।
बिह्वल देखि जननि भई ब्याकुल अँग बिष गयौ समाइ।
सूर स्याम-प्यारी दोउ जानत अंतरगत कौ भाइ ॥७०२॥

रोवति महरि फिरति बिततानी।
बार-बार लै कंठ लगावति, अतिहिं सिथिल भई पानी।
नंद सुवन कैं पाइ परी लै, दौरि महरि तब आइ।
ब्याकुल भई लाड़िली मेरी, मोहन देहु जिवाइ।

कछु पढ़ि पढ़ि कर अंग परस करि विष अपनौ लियौ झारि ।
सूरदास प्रभु बड़े गारुड़ी सिर पर गाड़ू डारि ॥७०३॥

ऐसौ मंत्र कियौ कुँवर कन्हाई ।
बार-बार लै कंठ लगायौ मुख चूम्यौ दियौ घरहिं पठाई ।
धन्य कोखि यह महरि जसोमति जहाँ अवतर्यौ यह सुत आई ।
ऐसौ चरित तुरतहीं कीन्हौ कुँवरि हमारी मरी जिवाई ।
मनहीं मन अनुमान कियौ यह, विधिना जोरी भली बनाई ।
सूरस्याम-प्रभु बड़े गारुड़ी ब्रज-घर घर यह पैंड चलाई ॥७०४॥

तुम सौं कहा कहौं सुंदर घन ।
या ब्रज मैं उपहास चलत है सुनि सुनि स्रवन रहति मन हीं मन ।
जा दिन सखनि पठाइ, नोई करि, मोहिं दुहि दई धेनु बंसीबन ।
तुम गही बाँह सुभाइ आपनैं हौं चितई हँसि नैकु बदन-तन ।
ता दिन तैं घर-मारग जित तित, करत चवाउ सकल गोपी-जन ।
सूर-स्याम अब साँच पारिहौ यह पतिव्रत तुम सौं नँद-नंदन ॥७०५

नाथ यह तुमसौं कहत लजाऊँ ।
सुनि न जात घर घर की चेध, कहूँ मुख न समाऊँ ।
नर नारी सब यहै चवावत राधा मोहन एक ।
मातु पिता सुनि-सुनि अति त्रासत मैं डरु पै जु अनेक ।
आपु बचे द्वारें ह्वै निकसत, देखत सबै लुगाइ ।
निंदत तुमहिं सुनावत मोकौं सुनत न नैकु सुहाय ।
धिक नर, धिक नारी धिक जीवन, तुमहिं विमुख धिक देह ।
सूर स्याम यह कोउ न जानत मन ही है जरि जैह ॥७०६॥

स्याम यह तुम सौं क्यौं न कही ।
जहाँ तहाँ घर घर चेरा कीनी भाँति सही ।
पिता कोपि करवाल गहत कर बंधु बधन कौं धावै ।
मातु कहै, कन्या कुल की दुख जनि कोऊ पग धावै ।

बिनती एक करौं कर जोरे, इन गोपिनि जनि आवहु।
जौ आवहु तौ मुरलि-मधुर धुनि, मो जनि कान सुनावहु।
मन-क्रम-बचन कहति हौं साँची, मैं मन तुमहिं लगायौ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी क्यौं न करौ मन भायौ ॥१००७॥

हँसि बोले गिरिधर रस-बानी।
गुरुजन खिझैं कहति हौं रिस पावति काहे कौं पछितानी।
देह धरे कौ धर्म यहै है, स्वजन-कुटुंब-गृह प्रानी।
कहत देहु कहि कहा करैंगे, अपनी सुरत हिरानी ?
लोक लाज अरु डर कौं छाँड़ति, सबहीं बसैं भुलानी।
सूरदास घट द्वै हैं मन इक, भेद नहीं कछु जानी ॥१००८॥

मन बसि काके बोल सहौं।
तुम बिनु स्याम, और नहिं जानौं सकुचि न तुमहिं कहौं।
कुल की कानि कहा लै करिहौं, तुमकौं कहाँ लहौं।
धिक माता धिक पिता बिमुख तुव भावै तहाँ रहौं।
कोउ कछु करै, कहै कछु कोऊ, हरष न सोक गहौं।
सूर स्याम तुमकौं बिनु देखे तनु मन जीव दहौं ॥१००९॥

तबहिं बसे आपुहिं बिसरायौ।
प्रकृति पुरुष एकहि करि जानहु बातनि भेद करायौ।
जल थल जहाँ रहौ तुम बिनु नहिं बेद उपनिषद गायौ।
द्वै तन जीव एक हम दोऊ, सुख-कारन उपजायौ।
ब्रह्म-रूप द्वितिया नहीं कोऊ, तब मन तिया जनायौ।
सूर स्याम-मुख देखि अलप हँसि आनँद-पुंज बढ़ायौ ॥१०१०॥

तब नागरि मन हरष भई।
नेह पुरातन जानि स्याम कौ अति आनंद मई।
प्रकृति-पुरुष नारी मैं वे पति काहे भूलि गई।
को माता, को पिता बंधु को, यह तौ भेंट नई।

जन्म-जन्म जुग-जुग, यह लीला, प्यारी जानि लई ।
सूरदास प्रभु की यह महिमा, यातैं बिबस भई ॥७११॥

सुनहु स्याम मेरी बिनती ।
तुम हरता तुम करता प्रभु जू, मातु-पिता कौनैं गिनती ।
गर्व भर मेटि, पठावत रासम प्रभुता मेटि, करत हिनती ।
भय की करी लोक-मरजादा मानौ मौरैं ही बिन की ।
बहुरि बहुरि प्रभु जन्म लेत हौ, यह लीला जानी जिन ती ।
सूर स्याम चरननि तैं मोकौं टारत यह कहा भिन ती ॥७१२॥

देह धरे की यह फल प्यारी ।
लोक-लाज-कुल कानि मानियै, डरियै बंधु-पिता-महतारी ।
श्रीमुख कह्यौ, जाहु घर सुंदरि, बड़े महर वृषभानु-कुमारी ।
तुव अवसेर करत सब ह्वैहैं जाहु बेगि ह्वैहै पुनि गारी ।
हमहूँ जाहिं भवन तुमहूँ जाहु अब, गेह-नेह क्यौं होवै वारी ।
सूरदास-प्रभु कहत प्रिया सौं, नैकु नहीं मोतैं तुम न्यारी ॥७१३॥

अब कैसैं दूजैं हाथ बिकाउँ ।
मन-मधुकर कीन्हौ वा दिन तैं चरन-कमल निज ठाउँ ।
जौ जानौं औरै कोउ करता तऊ न मन पछिताउँ ।
जो जाकौ सोई सो जानै नर-अघ-तारन नाउँ ।
जो परतीति होइ या जग की परमिति छुटत डराउँ ।
सूरदास प्रभु-सिंधु-सरन तजि, नदी-सरन कत जाउँ ॥७१४॥

घरहिं जाति मन हरष बढ़ायौ ।
दुख डार्‌यौ सुख अंग भार भरि, चली लूट सी पायौ ।
भौंह सकोरति मंद मंद गति नैकु बदन मुसुकायौ ।
तहँ इक सखी मिलि राधा कौं, कहति भयौ मनभायौ ।
कुंज-भवन हरि-संग बिलासि रस मन कौ सुफल करायौ ।
सूर सुगंध चुरावनहारी कैसैं दुरत दुरायौ ॥७१५॥

मोसौं कहा दुरावति राधा ।
कहाँ मिली नँद-नंदन कौं, जिनि पुरई मन की साधा ।
व्याकुल भई फिरति ही अबहीं काम बिथा तनु बाधा ।
पुलकित रोम रोम गदगद अब, अँग-अँग रूप अगाधा ।
नहिं पावत जो रस जोगी जन, जप-तप करत समाधा ।
सुनहुँ सूर तिहिं रस परिपूरन दूरि कियौ तनु बाधा ॥७१६॥

कहा कहति, तू भई बावरी ।
तू हँसि कहति, सुनै कोउ औरै कछु कीन्हौ चाहति उपाव री ।
सो तौ साँच मानि यह लैहै हमहिं तुमहिं बातैं सुभाव री ।
मेरी प्रकृति कहौं करि जानति मैं तोसौं करिहौं दुराव री !
ऐसी कैसे यह होइ सखी री पर पुनि मेरी है पचाव री ! ।
सूर कहत राधा मनि आगैं, चकित भई सुनि कथा रावरी ॥७१७

स्याम कौन, कारे की गोरे ।
कहाँ रहत काके है ढोटा वृद्ध तरुन कीधौं हैं भोरे ।
यहईं रहत कि और गाउँ कहुँ मैं देखे नाहिंन कहुँ उनकौं ।
कहै नहीं समुझाइ बात यह, मोहिं लगावति हौ तुम जिन ।
कहाँ रही मैं है धौं कहँके, तुम मिलवति हौ काहे ऐसी ।
सुनहु सूर मोसी भोरी कौं, जोरि जोरि लावति हौ कैसी ॥७१८

जाहि चली, मैं जानति तोकौं ।
आजुहिं परि कीन्ही चतुराई, कहा दुरावति मोकौं ।
इहिं ब्रज हम तुम नंद-नँदनहू, दूरि कहूँ नहिं जैहैं ।
मेरैं फेर कबहुँ तौ परिहौ मुजरा तबहीं दैहैं ।
उनहिं मिलै चितपाम भई अब वे दिन गए भुलाइ ।
सूर स्याम-सँग तैं उठि आई, मोसौं कहति दुराइ ॥७१९॥

राधे तेरौ बदन बिराजत नीकौ ।
जब तू इत उत बंक बिलोकति, होत निसा पति फीकौ ।

भृकुटी धनुष, नैन सर साँधे, सिर केसरि कौ टीकौ।
मनु घूँघट-पट मैं दुरि बैठ्यौ, पारधि रति पति ही कौ।
गति मैमंत नाग ज्यौं नागरि, करे कहति हौ लीकौ।
सूरदास प्रभु बिबिध भाँति करि, मन रिझयौ हरि पी कौ ॥७२०

काहे कौं पर-घर छिनु छिनु जाति।
घर मैं डाँटि, देति सिख जननी नाहिंन नैंकु डराति।
राधा कान्ह कान्ह-राधा ब्रज ह्वै रह्यौ अतिहिं लजाति।
अब गोकुल कौ जैबौ छाँड़ौ, अपजस हू न अघाति।
तू वृषभानु बड़े की बेटी उनकै जाति न पाँति।
सूर सुता समुझावति जननी सकुचति नहिं, मुसुकाति ॥७२१

खेलन कौं मैं जाउँ नहीं ?
और लरिकिनी घर घर खेलहिं मोही कौं पै कहत तुहीं।
उनकै मातु पिता नहिं कोई खेलत डोलति जहीं तहीं।
तोसी महतारी वहि नाहिं न, मैं रैहौं तुमहीं बिनुहीं।
कबहूँ मोकौं कछू लगावति, कबहूँ कहति जनि जाहु कहीं।
सूरदास बातैं अनखौहीं, नाहिंन मो पै जाति सही ॥७२२॥

मनहीं मन रीझति महतारी।
कहा भई जौ बाढ़ि तनक गई अबहीं तौ मेरी है बारी।
झूठैं हीं यह बात उड़ी है राधा-कान्ह कहत नर-नारी।
रिस की बात सुता के मुख की सुनत हँसति मनहीं मन भारी।
अब लौं नहीं कछू इहिं जान्यौ खेलत देखि लगावैं गारी।
सूरदास जननी उर लावति, मुख-चूमति पोंछति रिस टारी ॥७२३

सुता लए जननी समुझावति।
संग बिटिनिअनि कैं मिलि खेलौ, स्याम-साथ सुनि-सुनि रिस पावति।

सूर प्रभु कहाँ, तू कहाँ अपनैं भवन मैं सखी तोहिं तोसी न भोरी ॥७१४॥

कैसे हैं नँद-सुवन कन्हाई।
देखे नहीं नैन-भरि कबहूँ ब्रज मैं रहत सदाई।
सकुचति हौं इक बात कहति तोहिं, सो नहिं जाति सुनाई।
कैसैहुँ मोहिं दिखावहु उनकौं यह मेरैं मन आई।
अतिहीं सुंदर कहियत हैं वै, मोकौं देहु बताई।
सूरदास राधा की बानी, सुनत सखी भरमाई ॥७१५॥

सुनहु सखी राधा की बानी।
ब्रज बसि हरि देखे नहिं कबहूँ, लोग कहत कछु अकथ कहानी।
यह अब कहति, दिखावहु हरि कौं, देखहु री यह अतिअभिमानी।
सो हम सुनति रही सो नारी, ऐसी तो यह बातु बखानी।
स्याम न देत बनै काहू सौं, मन मैं यह कछु नाहिं मानी।
सूर सबै तरुनी मुख चाहति, चतुर-चतुर सौं चतुरई ठानी ॥७१६॥

सुनि राधे, तोहिं स्याम दिखैहैं।
जहाँ तहाँ ब्रज-गलिनि फिरत हैं, अब इहिं मारग ऐहैं।
जबहीं हम उनकौं देखैंगी, तबहीं तोहिं बुलैहैं।
उन्हूँ कैं लालसा बहुत यह, तोहिं देखि सुख पैहैं।
दरसन तैं धीरज[1] जब ऐहै, तब हम तोहिं पत्यैहैं।
तुमकौं देखि स्याम सुंदर घन मुरली मधुर बजैहैं।
तनु त्रिभंग करि अंग अंग सौं नाना भाव जनैहैं।
सूरदास-प्रभु नवल कान्ह बर, पीतांबर फहरैहैं ॥७१७॥

यह सुनि हँसि चलीं ब्रज-नारि।
अतिहिं आईं गरब कीन्हैं, गईं पर मन मारि।
कबहुँ ती हम देखिहैं, इक संग राधा-कान्ह।
भेद हमकौं कियौ राधा निठुर भई निदान।

जातैं निंदा होइ आपनी, जातैं कुल कौं गारी आवति ।
सुनि लाड़िली कहति यह तोसौं तोकौं यातैं रिस करि धावति ।
अब समुझी मैं बात सबनि की झूठैं ही यह बात चलावति ।
सूरदास सुनि सुनि ये बातैं राधा मन अति हरष बढ़ावति ॥७२४॥

राधा विनय करति मनहीं मन, सुनहु स्याम अंतर के जामी ।
मातु पिता कुल-कानिहिं मानत, तुमहिं न जानत है जग-स्वामी ।
तुम्हरौ नाउँ लेत सकुचत हैं, ऐसैं ठौर रही हौं आनी ।
गुरु परिजन कुल कानि मानियौ, बारंबार कही मुख बानी ।
कैसैं संग रहौं बिमुखनि कैं, यह कहि-कहि नागरि पछितानी ।
सूरदास प्रभु कौं हिरदै धरि गृह-जन देखि-देखि मुसुकानी ॥७२५॥

सखियनि यहै बिचार परयौ ।
राधा कान्ह एक भए दोऊ, हमसौं गोप करयौ ।
वृंदावन तैं अबहीं आई अति जिय हरष बढ़ाए ।
औरे भाव अंग-छबि औरै स्याम मिले मन भाए ।
तब यह सखी कहति मैं बूझी सो तन फिरि हँसि हेरयौ ।
तबहिं कही सखि मिली छोहिं हरि तब रिस करि मुख फेरयौ ।
औरे बात चलावन लागी, अब मैं बाकौं पहिचानी ।
सूर स्याम के मिलत माधुरी, ऐसी भई सयानी ॥७२६॥

सुनहु सखी राधा की बातैं ।
मोसौं कहति स्याम हैं कैसे ऐसी मिलईं घातैं ।
की गोरे, की कारे-रँग हरि की जोबन, की भोरे ।
की इहिं गाउँ बसत की अनतहिं, दिननि बहुत की थोरे ।
की तू कहति बात हँसि मोसौं, की बूझति सति-भाउ ।
सपनेहुँ मैं उनकौं नहिं देखे, बाके सुनहु उपाउ ।
मोसौं कही, कौन तोसी प्रिय तोसौं बात दुरैहौं ।
सूर कही राधा सो आगैं, कैसैं मुख दरसैहौं ॥७२७॥

सुनि-सुनि बात सखी मुसुकानी।
अब ही आइ प्रगट करि दैहैं कहा रही यह बात छपानी ?।
औरनि सौं दुराव जौ करती, तौ हम कहतीं भई सयानी।
राई आगैं पेट दुरावति, वाकी बुधि आजु मैं जानी।
हम जानतिं वह उघरि परैगी, दूध दूध पानी सौ पानी।
सूरदास अब करति चतुराई हमहिं दुरावति बातनि ठानी ॥७२८

अपनौ भेद तुम्हैं नहिं दैहै।
देखहु आइ चरित तुम वाके जैसैं गाल बजैहै।
बड़े गुरू की बुधि पढ़ी वह, काहू कौ न पत्यैहै।
एकौ बात मानिहै नाहीं, सबकी सौंहैं खैहै।
मैं नीकैं करि बूझि रही हौं अब बूझैं रिस पैहै।
सुनहु सूर रस-छकी राधिका बातनि बैर बढ़ैहै ॥७२९॥

जुवती जुरि राधा ढिग आई।
लखि लीन्ही तब चतुर नागरी, ये मोपर सब हैं रिसहाई।
आदर सहौ कियौ काहू कौ मन मैं एक बुद्धि उपजाई।
मौन गह्यौ नहिं बोलति किनसौं बैठि रही करिकै निठुराई।
आपुहिं बैठि गई ढिग सिगरी, अब जानी यह तौ चतुराई।
सूरदास ये सखी सयानी और कहूँ की बात चलाई ॥७३०॥

राधिका, मौन-व्रत किनि सधायौ।
धन्य ऐसौ गुरू, कान कै लागतहीं मंत्र दै आजुहीं यह सिखायौ।
अतिहिं कछु और, प्रातहिं कछू औरही, अबहिं कछु और ह्वै गई प्यारी
सुनत इहिं बात कौ दौरि आईं सबैं दौरि देखत भई चकृत भारी
अब कही बात, या मौन कौ क्रम कहा सुनि जु लीजै कछू हमहूँ जानैं
एकही संग भईं सबै जोबन भई, दोउ अब गुरू हम तुमहिं मानैं।
देहु उपदेस हमहूँ धरैं मौन सब मंत्र अब लियौ तब हम न बोलीं
सूर-प्रभु की नारि राधिका नागरी, चरचि लीन्ही मोहिं करत ठोली॥

बीस बिरियाँ चोर की तौ, कबहुँ मिलिहै साहु।
सूर सब दिन चोर कौ कहुँ होत है निरबाहु ॥७३८॥

कहा कहति तू बात अयानी।
तुम यह कहति, सखी यह जानति हम सबहैं वह बड़ी सयानी।
सात बरस ही पै ढँग सीखे, तुम तौ यह आजुहिं है जानी।
वाके छंद-भेद को जानै, मीन कबहिं धौं पीवत पानी।
हरि के चरित सबै उहिं सीखे, दोउ हैं ये बारहबानी।
काल्हि गई वाके घर सब मिलि, कैसी बुधि मौन की ठानी।
वैसी बकी, नैकु नहिं बोली, फिरि आई तब हमहिं खिसानी।
सूर स्याम-संगति की महिमा, काहू की नैकुहु न पत्यानी ॥७३९॥

तब राधा सखियनि पै आई।
आवत देखि सबनि मुख मोर्यौ, जहँ-तहँ रहीं अरगाई।
मुख देखत सब सकुचि गईं, यह कहा अचानक आई।
करति रहीं चुगुली हम याकी, बरनी गई बड़ाई।
अति आदर सौं बैठक दीन्ही, प्यारी, कहाँ तुम आई।
कहा आजु सुधि करी हमारी, सूर स्याम-सुखदाई ॥७४०॥

मैं कह आजु नयी ही आई।
बहुतै आदर करति सबै मिलि, पहुने की पहुनाई।
कैसी बात कहति तू राधा बैठन कौ नहिं कहिये।
तुम आई अपने घर तैं ज्यौं हमहुँ मौन धरि रहिये।
जानि लई वृषभानु-सुता हँसि, तरक बड़ी तुम कीन्ही।
सूरदास या दिन कौ बदलौ, ताकैं आपनौ लीन्ही ॥७४१॥

राधा जल बिहरति सखियनि सँग।
ग्रीव प्रजंत नीर मैं ठाढ़ी छिरकति जल अपनैं अपनैं रँग।
मुख भरि नीर परस्पर डारति, सोभा अतिहिं अनूप बढ़ी तब।
मनहु चंद-गन सुधा गँडूषनि डारत हैं आनँद भरे सब।

भाई निकसि भाजु कटि की सब, अँगुरिनि तैं लै लै जल डारति ।
मानहुँ सूर कनक-बल्ली जुरि, अंबुज-बूँद पवन-मिस झारति ॥७४२॥

जमुना-जल बिहरति ब्रज-नारी ।
तट ठाढ़े देखत नँद-नंदन मधुर मुरलि कर धारी ।
मोर मुकुट स्रवननि मनि-कुंडल, जलज-माल उर भ्राजत ।
सुंदर सुभग स्याम तन नव घन बिच बगपाँति बिराजत ।
उर बनमाल सुमन बहु भाँतिनि, सेत, लाल, सित, पीत ।
मनहुँ सुरसरी तट बैठे सुक बरन बरन तजि भीत ।
पीतांबर कटि तट छुद्रावलि, बाजति परम रसाल ।
सूरदास मनु कनकभूमि ढिग, बोलत रुचिर मराल ॥७४३॥

राधा निरखि भूली अंग ।
नंद-नंदन-रूप पर, गति-मति भई तनु पंग ।
इत सकुच अति सखिनि कौ उत होति अपनी हानि ।
ज्ञान करि अनुमान कीन्हौ, अबहिं लैहैं जानि ।
चतुर सखियनि परखि लीन्ही समुझि भई गँवारि ।
सबै मिलि इक ज्ञान ठानौ, ताहि दियौ बिसारि ।
नागरी मुख-स्याम निरखति कबहुँ सखियनि हेरि ।
सूर राधा जानति नाहीं, इन दई अवडेरि ॥७४४॥

चितवनि रोकैं हूँ न रही ।
स्याम सुंदर-सिंधु-सनमुख, सरित उमँगि बही ।
प्रेम-सलिल प्रवाह भँवरनि, मिति न कबहूँ लही ।
लोभ-लहर-कटाच्छ, घूँघट-पट-करार ढही ।
थके पल-पथ, नाव-धीरज परति नहिंन गही ।
मिली सूर सुभाव स्यामहिं, फेरिहूँ न चही ॥७४५॥

चितै रही राधा हरि कौ मुख ।
भृकुटि बिकट, बिसाल नैन लखि, मनहिं भयौ रति-पति दुख ।

चितहिं स्याम इकटक प्यारी-छबि, अंग अंग अवलोकत।
रीझि रहे इत हरि, उत राधा, अरस-परस दोउ नीकत।
सखिनि कह्यौ वृषभानु-सुता सौं, देखे कुँवर कन्हाई।
सूर स्याम येई हैं, ब्रज मैं जिनकी होति बड़ाई ॥७४६॥

हमहिं कह्यौ हो, स्याम दिखावहु।
देखहु दरस नैन भरि नीकैं, पुनि-पुनि दरस न पावहु।
बहुत लालसा करति रही तुम ये तुम कारन आए।
पूरी साध मिली तुम उनकौं पाछैं हमहिं सुनाए।
नीकैं सगुन भयसु की आईं, भयौ तुम्हारौ काज।
सुनहु सूर हमकौं कछु देही, तुमहिं मिले ब्रजराज ॥७४७॥

राधा कह्यौ, जाहु इन जानी।
बार-बार मैं हरि-तन चितई, तबही ये मुसुकानी।
कालिह कही मैं इनसौं ऐसैं, अब लौं बात न ठानी।
यह चतुराई परी मोही पर, मन मन करतिहिं सयानी।
मेरी बात गई इन आगे अबहिं करति बिनु पानी।
सूरदास-प्रभु कहा कहौं मैं अब तुम हाथ बिकानी ॥७४८॥

राधा चलहु भवनहिं जाहिं।
कबहिं की हम जमुन आईं कहहिं सब पछिताहिं।
कियौ दरसन स्याम कौ तुम, चलौगी की नाहिं।
बहुरि मिलिहौ कीन्हि राखहु कहत, सब मुसुकाहिं।
हम चली घर तुमहुँ आवहु सोच भयौ मन माहिं।
सूर राधा सहित गोपी चली ब्रज-समुहाहिं ॥७४९॥

कहि राधा, हरि कैसे हैं।
तेरैं मन भाए की नाहीं की सुंदर, की नैसे हैं।
की पुनि हमहिं दुराव करौगी, की जैसी ये जैसे हैं।
की हम तुमसौं कहति रहीं ज्यौं, सौंच कह्यौ की तैसे हैं।

नटवर भेष काछनी काछे, अंगनि रति-पति-से छे दैं।
सूर स्याम तुम नीकैं देखे, हम जानत हरि ऐसे हैं ॥७२०॥

राधा मन मैं यहै बिचारति।
ये सब मेरैं स्याम परी हैं, अबहीं बातनि मैं निरुवारति।
मोहूँ तैं ये चतुर कहावति, ये मनहीं मन मोकौं नारति।
ऐसे बचन कहौंगी इनसौं, चतुराई इनकी मैं झारति।
जाकै नंद-नँदन सिरसमरथ, बार-बार तन-मन-धन वारति।
सूर स्याम कैं गर्ब राधिका सूधैं कहूँ तन न निहारति ॥७२१॥

राधा हरि कैं गर्ब गहीली।
मंद-मंद गति मत्त मतंग ज्यौं, अंग अंग सुख-पुंज-भरीली।
पग द्वै चलति ठठकि रहै ठाढ़ी मौन धरै हरि कैं रस गीली।
धरनी नख चरननि कुरवारति, सौतिनि भाग-सुहाग-डहीली।
नैंकु नहीं पिय तैं कहुँ बिछुरति, तातैं नाहिँन काम-दहीली।
सूर सखी बूझैं प्यार कैसी, आजु भई बड़ भेंट पहीली ॥७२२॥

तुमकौं कैसे स्याम भगे ?
न्हात रही जब मैं सब तरुनी, तब तुम नैन कहाँ लगे ?
अंग-अंग अवलोकन कीन्हौ कौन अंग पर रहे ठगे ?
भूल्यौ न्हान सान तनु भूल्यौ, नंद सुवन रस तैं [illegible] रगे।
जानति नहीं कहूँ नहिं देखे, मिलि गइ ऐसैं मनहुँ सगे।
सूर स्याम ऐसैं तुम देखे, मैं जानति सुख दूरि भगे ॥७२३॥

पावै कौन मिलै बिनु भाग।
काहू की पट हम नहिं जानत कोउ जोवन कहैं निरत बिलाम।
तुम देख्यौ हरि अंग माधुरी, मैं नहिं देख्यौ कौन गुपाल।
ऊभे रंक लमक धन पावै, ताही मैं वह होत निहाल।
तुमहिं मोहिं इतनौ अंतर है, धन्य-धन्य ब्रज की तुम बाल।
सूरदास-प्रभु की तुम संगिनि, तुमहिं मिलि बहु दरस गुपाल ॥७२४

सुनहु सखी राधा की बानी।
हमकौं धन्य कहति आपुन धिक, यह निर्मल अति ज्ञानी।
आपुन रंक भई हरि-धन कौं हमहिं कहति धनवंत।
यह पूरी, हम निपट अधूरी, हम असंत, यह संत।
धिक धिक हम धिक बुद्धि हमारी धन्य राधिका नारि।
सूर स्याम कौं इहिं पहिचान्यौ हम भईं अंत गँवारि ॥७२५॥

अचानक आइ गए तहँ स्याम।
कृष्न कथा सब कहतिं परस्पर राधा-संग मिली ब्रज-बाम।
मुरली अधर धरे नटवर वपु कटि कछनी पर वारी काम।
सुभग मोर चंद्रिका सीस पर आइ गए पूरन सुख धाम।
तरु-तमाल तर ठाढ़े कन्हाई, दूरि करन जुवतिनि तनु-ताम।
सूर स्याम बंसी-धुनि पूरत, राधा-राधा लै लै नाम ॥७२६॥

मन-मधुकर पद-कमल लुभान्यौ।
चित चकोर चंद-नख अटक्यौ इकटक पलक भुलान्यौ।
जिनही कहूँ गए उठि मोतैं, आवत नहीं मैं जान्यौ।
अब ऐसौ तनु मैं है नाहीं, कहा लियहिं धौं आन्यौ।
तब तैं फेरि लख्यौ नहिं जीवन, नख-चरननि हित मान्यौ।
सूरदास वै आपु स्वारथी पर-बेदन नहिं जान्यौ ॥७२७॥

स्याम सखि नीकैं देखे नाहिं।
चितवत ही लोचन भरि आए बार-बार पछिताहिं।
कैसेहुँ करि इकटक मैं राखति, नैंकहिं मैं अकुलाहिं।
निमिष मनौ छबि पर रखवारे, तातैं अतिहिं डराहिं।
कहा करौं, इनकौ कह दूषन इन अपनी सी कीन्ही।
सूर स्याम-छबि पर मन अटक्यौ, उन सब सोभा लीन्ही ॥७२८॥

पुनि पुनि कहति हैं ब्रज-नारि।
धन्य धन्य बड़भागिनि राधा, तेरैं बस गिरिधारि।

धन्य नंदकुमार धनि तुम, धन्य तेरी प्रीति।
धन्य दोउ तुम नवल जोरी, कोक-कलानि जीति।
हम बिमुख, तुम कृष्न-संगिनि प्रान इक द्वै देह।
एक मन, इक बुद्धि, इक चित दुहूँनि एक सनेह।
एक छिनु बिनु तुमहिं देखें स्याम धरत न धीर।
मुरलि मैं तुव नाम पुनि पुनि कहत हैं बलबीर।
स्याम मनि तैं परखि लीन्ही, महा चतुर सुजान।
सूर के प्रभु प्रेम ही बस कौन तो सरि आन ॥७२६॥

राधा परम निर्मल नारि।
कहति हौं मन कर्मना करि, हृदय दुबिधा टारि।
स्याम कौ इक तुहीं जान्यौ दुराचारिनि और।
जैसें घट पूरन न डोलै, अधभरौ डगडौर।
धनी धन कबहूँ न प्रगटै, धरै ताहि छपाइ।
तैं महानग स्याम पायौ प्रगटि कैसैं जाइ।
कहति हौं यह बात तोसौं प्रगट करिहौं नाहिं।
सूर सखी सुजान राधा परसपर मुसकाहिं ॥७६०॥

तैं ही स्याम भलै पहिचाने।
साँची प्रीति जानि मनमोहन, तेरेहिं हाथ बिकाने।
हम अपराध कियौ कहि तुमसौं, हमहीं कुलटा नारि।
तुमसौं उनसौं बीच नहीं कछु, तुम दोऊ बर-नारि।
धन्य सुहाग भाग है तेरौ, धनि बड़भागी स्याम।
सूरदास-प्रभु-से पति जाकैं तोसी जाकैं बाम ॥७६१॥

राधा स्यामं की प्यारी।
कृष्न पति सर्वदा तेरे, तू सदा नारी।
सुनत बानी सखी मुख की, जिय भयौ अनुराग।
प्रेम-गदगद रोम पुलकित समुझि अपनौ भाग।

प्रीति परगट कियौ चाहै, वचन बोलि न जाइ।
नंद नंदन काम-नायक रहे नैननि छाइ।
हृदय तैं कहुँ टरत नाहीं कियौ निहचल बास।
सूर प्रभु-रस भरी राधा दुरत नहीं प्रकास ॥७६२॥

जौ बिधना अपबस करि पाऊँ।
तौ सखि, कह्यौ होइ कछु तेरौ, अपनी साध पुराऊँ।
लोचन रोम-रोम प्रति माँगौं पुनि पुनि त्रास दिखाऊँ।
इकटक रहैं पलक नहिं लागैं, पद्धति नई चलाऊँ।
कहा करौं छबि-रासि स्यामघन, लोचन द्वै नहिं ठाऊँ।
एतै पर ये निमिष सूर सुनि यह दुख काहि सुनाऊँ ॥७६३॥

स्वामहिं मैं कैसैं पहिचानौं।
क्रम क्रम करि इक अंग निहारति पलक ओट नाहीं नहिं जानौं।
पुनि लोचन ठहराइ निहारति निमिष मेटि वह छबि अनुमानौं।
औरै भाव और कछु सोभा कहौ सखी कैसैं उर आनौं।
छिनु छिनु-अंग अंग छबि अगिनित पुनि देखौ,फिरि कै हठ ठानौं
सूरदास स्वामी की महिमा कैसैं रसना एक बखानौं ॥७६४॥

सुनि री सखी-दसा यह मेरी।
जब तैं मिले स्यामघन सुंदर, संगहिं फिरति भई जनु चेरी।
नीकैं दरस देत नहिं मोकौं अंगनि प्रति अनंग की ढेरी।
चपला तैं अतिहीं चंचलता, दसन चमक चकचौंधि घनेरी।
चमकत अंग पीत पट चमकत, चमकति माला मोतिनि केरी।
सूर समुझि बिधना की करनी, अति रिसि करति सौंह मोहिं तेरी।

इनहुँ मैं चटवाई कीन्ही।
रसना स्रवन नैन की होते, की रसनाहीं इनहीं दीन्ही।
बैर कियौ हमसौं बिधना रचि, याकी जाति अबै हम चीन्ही।
निठुर निर्दई यातैं और न स्याम बैर हमसौं है कीन्ही।

या रस ही मैं मगन राधिका, चतुर सखी तबहीं लखि लीन्ही।
सूर स्याम कैं रंगहिं राँची, टरति नहीं अब वै क्यौं मीन्ही ॥७६६॥

धन्य-धन्य बड़भागिनी राधा।
नीकैं मिली नँद-नंदन कौं, मेटि मदन-तन-बाधा।
नवल स्याम नवला तुमहूँ हौ, दोऊ रूप अगाधा।
मैं जानी यह बात हृदय की, रही नहीं कछु साधा।
संगहिं रहत सदा पिय प्यारी, कौतुक करत उपाधा।
छोड़-कथा निरुपम भई हौ, अन्द रूप-तनु आधा।
प्रेम उमँगि हेरैं मुख मगन्यौ, अरस-परस अवराधा।
सूरदास-प्रभु मिले कृपा करि गए दुरित दुख बाधा ॥७६७॥

कहि राधिका बात अब साँची।
तुम अब प्रगट कही मो आगैं, स्याम-प्रेम-रस माँची।
तुमकौं कहाँ मिले नँद-नंदन जब उनकैं रँग राँची।
खरिक मिले, की गोरस बेचत, की जब बिपहर नाँची।
कहैं बनै छाँड़ौ चतुराई, बात नहीं यह काँची।
सूरदास राधिका सयानी रूप-रासि-रस-खाँची ॥७६८॥

कब री मिले स्याम नहिं जानौं।
तेरी सौं करि कहति सखी री अजहूँ नहिं पहिचानौं।
खरिक मिले की गोरस बेंचत, की अबहीं की कालि।
नैननि अंतर होत न कबहूँ, कहति कहा री आलि।
एकौ पल हरि होत न न्यारे, नीकैं देखे नाहिं।
सूरदास-प्रभु टरत न टारैं नैनन सदा बसाहिं ॥७६९॥

जा दिन तैं हरि दृष्टि परे री।
ता दिन तैं मेरे इन नैननि दुख-सुख सब बिसरे री।
मोहन अंग गुपाल लाल के, प्रेम पियूष भरे री।
बसे जहाँ मुसुकान-चाँद सी रवि-ससि मदन हरे री।

पठवति हीं मन तिनहिं मनावन निसिदिन रहत अरे री।
ज्यौं ज्यौं जतन करति उलटावति त्यौं त्यौं हठनि अरे री।
पपिहारी समुझाइ कँप-निज पुनि-पुनि पाइ परे री।
सो सुख सूर कहाँ लौं बरनौं, इक टक तैं न टरे री ।।१७००।।

अब तैं प्रीति स्याम सौं कीन्ही।
वा दिन तैं मेरे इन नैननि, नैंकहुँ नींद न लीन्ही।
सदा रहै मन चाक चढ़्यौ सौ और न कछू सुहाइ।
करत उपाइ बहुत मिलिबे कौं, यहै विचारत जाइ।
सूर सकल लागति ऐसीयै, सो दुख कासौं कहिये।
ज्यौं अचेत बालक की बेदन, अपने ही तन सहिये ।।१७०१।।

मैं जानी तबही तैं मोकौं स्याम कहा धौं कीन्हौ री।
मेरी दृष्टि परे जा दिन तैं, ज्ञान ध्यान हरि लीन्हौ री।
द्वारैं आइ गए औचक ही, मैं आँगन ही ठाढ़ी री।
मनमोहन-मुख देखि रही तब काम बिथा तनु बाढ़ी री।
नैन-सैन दै-दै हरि मो तन, कछु इक भाव बतायौ री।
पीतांबर उपरैना कर गहि, अपनें सीस फिरायौ री।
लोक-लाज, गुरुजन की संका, कहत न आवै बानी री।
सूर स्याम मेरैं आँगन आए, जात बहुत पछितानी री ।।१७०२

मन हरि लीन्हौ कुँवर कन्हाई।
जब तैं स्याम द्वार ह्वै निकसे तब तैं री मोहिं घर न सुहाई।
मेरैं हेत आइ भए ठाढ़े, मोहिं कछु न भई री माई।
तबही तैं व्याकुल भई डोलति बैरी भए मातु पितु-भाई।
मो देखत सिर पाग सँवारी, हँसि चितए छबि कही न जाई।
सूर स्याम गिरधर बर नागर, मेरौ मन लै गए चुराई ।।१७०३।।

प्रेम सहित हरि मेरैं आए।
कछु सेवा तैं करी कि नाहीं की धौं वैसेहि

भाहे तैं हरि पाग सँवारी क्यौं पीतांबर सीस फिराए।
गुप्त भाव वौसी कछु कीन्ही पर आप कहँ बिसराए।
भतिही चतुर कहावति राधा जानति री हरि क्यौं न भुराए।
सूर स्याम कौं बस करि लेती काहेकौं रहती पछिताये ॥४७४

स्याम अचानक आइ गए री।
मैं बैठी गुरुजन बिच सजनी देखतहीं मेरे नैन नए री।
तब इक बुद्धि करी मैं ऐसी बेंदी सौं कर परस कियौ री।
आपु हँसे उत पाग मसकि हरि, अंतरजामी जानि लियौ री।
लै कर कमल अधर परसायौ, देखि हरषि पुनि हृदय धर्यौ री।
चरन छुए दोउ नैन लगाए, मैं अपनैं भुज अंक भर्यौ री।
ठाढ़े रहे द्वार अति हित करि, तबहीं तैं मन चोरि गयौ री।
सूरदास कछु दोष न मेरौ, उत गुरुजन इत हेत नयौ री ॥४७५॥

राधा भाव कियौ यह नीकौ तुम बेंदी, उन पाग छुई।
ऐसे भेद कहा कोउ जानै तुमही जानौ गुप्त दुई।
तुम जुहार उनकौं जब कीन्ही तुमकौं उनहूँ जुहार कियौ।
एकै भाव, देह द्वै कीन्हे तुम वै एकै, नहीं बियौ।
तुम पग परसि नैन पर राख्यौ, उन कर कमलनि हृदय धर्यौ।
सूर स्याम हिरदै तुम राखे, तुम उनकौं लै कंठ धर्यौ ॥४७६॥

मन मेरौ हरि साथ गयौ री।
द्वारैं आइ स्याम मन सजनी हँसि मोहन तिहिं संग भयौ री।
ऐसैं मिल्यौ जाइ मोकौं तजि मानौ उनही पोषि लयौ री।
सेवा चूक परी धौं मो तैं मन उनकौ धौं कहा कियौ री।
मोहूँ देखि रिसात बहुत यह मेरैं जिय कछु गर्व भयौ री।
सूर स्याम-छबि अंग लुभान्यौ मन-बच-क्रम मोहिं छाँड़ि दयौ री।
मैं मन बहुत भाँति समुझायौ।
कहा करौं दरसन रस-अँटक्यौ, बहुरि नहीं घट आयौ।

इन नैननि के भेद रूप-रस उर मैं आनि दुरायौ।
बरबस ही बेकाज सुपन ज्यौं, पलक्यौ नहिं जो सिखायौ।
लोक-बेद-कुल निदरि, निडर ह्वै करत आपनौ भायौ।
मुख-छबि निरखि चौंधि निसि जग ज्यौं हठि अपुनपौ बँधायौ।
हरि कौ दोष कहा कहि दीजै यह अपनैं बस पायौ।
अति बिपरीत भई सुनि सूरज मुरझ्यौ मदन जगायौ ॥७७८॥

मैं अपनौ मन हरत न जान्यौ ॥
कीधौं गयौ संग हरि कैं वह कीधौं पंथ भुलान्यौ।
कीधौं स्याम हटकि है राख्यौ, कीधौं आपु रतान्यौ।
काहे तैं सुधि करी न मेरी, मोपै कहा रिसान्यौ।
जबही तैं हरि ह्याँ ह्वै निकसे, बैर तबहिं तैं ठान्यौ।
सूर स्याम सँग चलन कह्यौ मोहिं, कह्यौ नहीं तब मान्यौ ॥७७९॥

स्याम करत हैं मन की चोरी।
कैसैं मिलत आनि पहिलैं ही, कहि-कहि बतियाँ भोरी।
लोक-लाज की कानि गँवाई, फिरति गुड़ी बस डोरी।
ऐसे ढंग स्याम अब सीख्यौ, चोर भयौ चित कौ री।
माखन की चोरी सहि लीन्ही बात रही वह थोरी।
सूर स्याम भयौ निडर तबहिं तैं गोरस लेत अँजोरी ॥७८०॥

माई कृष्न-नाम जब तैं स्रवन सुन्यौ है री, तब तैं भूली री भौन बावरी सी भई री।
भरि भरि आवै नैन चित न रहत चैन, बैन नहिं सूधौ दसा औरहिं ह्वै गई री।
कौन माता, कौन पिता, कौन भैनी, कौन भ्राता, कौन ज्ञान कौन ध्यान मनमथ दई री।
सूर स्याम जब तैं परे री मेरी डीठि बाम, काम धाम लोक-लाज कुल कानि गई री ॥७८१॥

राधा, तैं हरि कैं रँग राँची।
तो तैं चतुर और नहिं कोऊ बात कहौं मैं साँची।
तैं उनकौ मन नहीं चुरायौ ऐसी है तू काँची।
हरि तेरौ मन अबहिं चुरायौ प्रथम तुही है नाँची।
तुम अरु स्याम एक ही दोऊ बाकी नाहीं बाँची।
सूर स्याम तेरैं बस राधा, कहति लीक मैं खाँची ॥१६८२॥

तुम जानति राधा है छोटी।
चतुराई अँग-अँग भरी है, पूरन ज्ञान, न बुधि की मोटी।
हमसौं सदा दुराव कियौ इहिं, बात कहै मुख चोटी पोटी।
कबहुँ स्याम तैं नैंकु न बिछुरति किये रहति हमसौं हठ ओटी।
नँद-नंदन याही कैं बस हैं, बिबस देखि बेंदी छबि चोटी।
सूरदास प्रभु वै अति खोटे यह उनहूँ तैं अतिहीं खोटी ॥१६८३॥

सखी कहति तू बात गँवारी।
याकी सरि कैसैं कोउ ह्वै है जाकैं बस हैं श्री बनवारी।
ब्रज-भीतर यह रूप आगरी जब लीन्ही हरि गिरिधर-धारी।
प्रीति गुप्त ही की है नीकी, या पर मैं रीझी ही भारी।
साँची कहौ भेद ऐसौई चाहौ ओछी दीजौ गारी।
सूरदास राधा की चोटी, तब देखौ यह छन्न पियारी ॥१६८४

सुनहु सखी राधा सरि को है।
जो हरि हैं रतिपति-मनमोहन, याकौ मुख सो जोहै।
जैसी स्याम नारि यह तैसी, सुंदर जोरी सोहै।
यह द्वादस वहऊ दस हैं कै ब्रज-जुवतिनि मन मोहै।
मैं इनकौं घटि-बढ़ि नहिं जानति, भेद करै सो को है।
सूर स्याम नागर, यह नागरि, एक प्रान तन दो है ॥१६८५॥

राधा नँद-नंदन अनुरागी।
भय चिंता हिरदै नहिं एकौ स्याम-रंग-रस पागी।

हरद चून रँग, पय पानी ज्यौं दुबिधा दुहुँ की भागी।
तन-मन-प्रान समर्पन कीन्हौ, अंग अंग रति लागी।
ब्रज-बनिता अवलोकन करि करि प्रेम-बिबस तनु त्यागी।
सूरदास-प्रभु सौं चित लाग्यौ सोवत तैं मनु जागी ॥८८६॥

आँखिनि मैं बसै, जिय मैं बसै हिय मैं बसत निसि दिवस प्यारी।
तन मैं बसै मन मैं बसै, रसना [illegible] मैं बसै नँदवारी।
सुधि मैं बसै, बुधिहू मैं बसै, अंग-अंग बसै मुकुटवारी।
सूर बन बसै, घरहु मैं बसै, संग ज्यौं तरंग जल न न्यारी ॥८८७॥

सासु-ननद घर त्रास दिखावैं।
तुम कुल-बधू लाज नहिं आवति, बार बार समुझावैं।
कब की गई न्हान तुम जमुना, यह कहि कहि रिस पावैं।
राधा कौ तुम संग करति हौ, ब्रज उपहास उड़ावैं।
वै हैं बड़े महर की बेटी, तौ ऐसी कहवावैं।
सुनहु सूर यह उनहीं भावै, ऐसी कहति डरावैं ॥८८८॥

हम अहीर ब्रजबासी लोग।
ऐसे चलौ हँसै नहिं कोऊ, घर मैं बैठि करौ सुख-भोग।
दही-मही-माखनी-घृत बेचौ, सबै करौ अपने उद्योग।
सिर पर कंस मधुपुरी बैठ्यौ छिनकहिं मैं करि डारै सोग।
फूँक-फूँक धरनी पग धारौ, अब लागी तुम करन अयोग।
सुनहु सूर अब जानौगी तब जब ऐसौ राधा-संजोग ॥८८९॥

तुमैं कुल-बधू, निलज जनि हैहौ।
यह करनी उनहीं कौं छाजै, उनकैं संग न जैहौ।
राधा-कान्ह-कथा ब्रज-घर घर, ऐसैं जनि कहवैहौ।
यह करनी उन नई चलाई, तुमैं जनि हँसहिं हँसैहौ।
तुम हौ बड़े महर की बेटी कुल जनि नावँ धरैहौ।
सूर स्याम राधा की महिमा यहै जानि सरमैहौ ॥८९०॥

कहियत हौ अति चतुर सकल अँग आवत बहुत उपाइ।
तौ स्यानी जौ अब एकौ छन सकौ हृदय तैं आइ।
सूरदास स्वामी श्रीपति कौ भावत अंतर भाइ।
सहि न सके रति-बचन, उलटि हँसि लीन्ही, कंठ लगाइ ॥७५५॥

बीच कियौ कुल-लज्जा आइ।
सुनि नागरी, जकसि जनि मोकौं, सनमुख आए धाइ।
चूक परी हरि तैं मैं जानी मन ही गए चुराइ।
ठाढ़े रहे सकुचि तो आगैं, राख्यौ बदन दुराइ।
तुम हौ बड़े महर की बेटी कहाँ गई भुलाइ।
सूर स्याम हैं चोर तिहारे, बाँधि लेहु डरपाइ ॥७५६॥

कुल की लाज प्रकास कियौ।
तुम बिनु स्याम सुहात नहीं कछु, कहा करौं अति जरत हियौ।
आपु तुम करि राखी मोकौं, मैं आयसु सिर मानि लियौ।
देह गेह सुधि रहति बिसारे तुम तैं हितु नहिं और बियौ।
अब मोकौं चरननि तर राखौ हँसि नँद-नंदन अंग लियौ।
सूर स्याम श्रीमुख की बानी, तुम पै प्यारी बसत जियौ ॥७५७॥

मातु-पिता अति त्रास दिखावत।
भ्राता मोहिं मारन कौं फिरते, देखैं मोहिं न भावत।
जननी कहति, बड़े की बेटी, तोकौं लाज न आवति।
पिता कहै, कैसी कुल उपजी मनहीं मन रिस पावति।
भगिनी देखि देति मोहिं गारी, काहैं कुलहिं लजावति।
सूरदास प्रभु सौं यह कहि-कहि, अपनी बिपति जनावति ॥७५८॥

सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन।
बिमुख जननि की संगति कौ दुख, कब धौं करिहौ मोचन।
भवन मोहिं भाठी सौ लागत, मरति सोचहीं सोचन।
ऐसी गति मेरी तुम आगैं करत कहा जिय दोचन।

धिक वै मातु-पिता धिक भ्राता देत रहत मोहिं खीजन।
सूर स्याम मन तुमहिं लगान्यौ, हरद-चून-रँग-रोचन ॥७९९॥

कुल की कानि कहाँ लगि करिहौं।
तुम आगैं मैं कही जु साँची, अब काहू नहिं डरिहौं।
लोग कुटुँब जग के जे कहियत, पेला सबहिं निदरिहौं।
अब यह दुख सहि जात न मोपैं, बिमुख बचन सुनि मरिहौं।
आपु सुखी तौ सब नीके हैं, उनकै सुख कह सरिहौं।
सूरदास प्रभु चतुर-सिरोमनि अबकै हौं कछु लरिहौं ॥८००॥

प्राननाथ हो, मेरी सुरति किन करौ।
मैं जु दुख पावति हौं दीनानाथ कृपा करौ मेरी कामदेव-दुख की बिपद हरौ।
तुम बहु रमनी-रमन, सो तौ जानति हौं, याही कै जु धोखैं हौ मोसौं कहैं लरौ।
सूरदास स्वामी तुम हौ अंतरजामी, सुनौ मनसा-बाचा मैं ध्यान तुम्हरौई धरौं ॥८०१॥

हौं या माया ही लागी तुम कत तोरत।
मेरौ तौ जिय तिहारे चरननि ही मैं लाग्यौ, धीरज क्यौं रहै रावरे मुख मोरत।
कोऊ है बनाइ बातैं मिलावति तुम आगैं सोई किन आइ मोसौं अब है खोरत।
सूरदास पिय मेरे तौ तुमहिं हौ जु जिय, तुम बिनु देखे मेरौ हिय कठोरत ॥८०२॥

बिहँसि राधा कृष्न अंक लीन्ही।
अधर सौं अधर जुरि नैन सौं नैन मिलि, हृदय सौं हृदय लगि हरष कीन्ही।

कंठ भुज-भुज जोरि उछंग लीन्ही नारि, भुजन-भुज टारि, सुख दियौ भारी।
हरषि बोले स्याम कुंज-बन-घन धाम, तहाँ हम तुम संग मिलैं प्यारी।
जाहु गृह परम धन हमहुँ जैहैं सदन, आइ कहुँ पास मोहिं सैन देही।
सूर यह भाव दै तुरतहीं गवन करि, कुंज-गृह-सदन तुम आइ रैहौ।।८०३।।

मैं जमुना-तन आव सही री।
ब्रज तैं आवत देखि सखिनि कौं इन कारन ह्याँ परखि रही री।
उततैं आइ गए हरि तिरछैं मैं तुमहीं तन चितै रही री।
बूझन लगे कान्ह ग्वालनि कौं तुम कौं देखे बनहिं लही री।
सुनह उनसौं बोली नहिं सन्मुख, जाहि हौं कछुवै न कही री।
सूर स्याम गए ग्वालनि टेरत, ना जानौं तुम कहा गही री।।८०४।।

सुता सौं कहति वृषभानु घरनी।
कहाँ तू राधिका भोर तैं फिरति है, तेरी गति मोपै नहिं जाति बरनी।
तोरि मोतीसरी गुप्त करि धरी कहूँ, ताहि मिस सकुचि रही मुख न बोलै।
मनहुँ खंजन चपल चंद-फंदा परयौ, उड़त नहिं बनत इत उतहिं डोलै।
कहा तेरी प्रकृति परी धौं साँवरी अबहिं तैं कहाँ तू जायगी री।
सूर कहै जननि बोली भली आज तू, पकरि धरिहौं कहाँ जायगी री।।८०५।।

जननी अतिहि भई रिसहाई।
बार-बार कहै कुँवरि राधिका मोतिसरि कहाँ गँवाई।

बूझे ते तोहिं ज्वाब न आवै कहा रही भरमाई ।
चौसर हार अमोल गरे को, देहु न मेरी माई ।
अखिहहिं ते रीती गर देखी कहि धौं तू आई ।
सुनहु सूर माता रिस देखत, राधा हँसति डराई ॥८०६॥

सुनी री मैया अखिहही मोतिसरी गँवाई ।
सखिनि मिली जमुना गई, धौं उनहिं चुराई ।
कीधौं जमुना मैं गई यह सुधि नहिं मेरें ।
तब ते मैं पछितात हौं कहति न डर तेरें ।
पलक नहीं निसि कहूँ लगी, मोहिं सपथ तिहारी ।
हरि कर तै मैं आजुहीं अति उठी सवारी ।
महरि सुनत चकित भई मुख ज्वाब न आवै ।
सूर राधिका गुन भरी कोउ पार न पावै ॥८०७॥

काहु कहाँ मोतिसरी गँवाई ।
तबहीं तौ घर पैठन पैहौ अब ऐसे ढंग आई ।
जो बरजौं आपुन सौंहें करै, ऐसी री गुन माई ।
इक इक नग सत सत दामनि को, लाख टका दै ल्याई ।
जाके हाथ परयौ सो माँगी घर पैठे निधि पाई ।
सूर सुनति री कुँवरि राधिका, तोकों नहीं भलाई ॥८०८॥

सुनि राधा अब तोहिं न पत्यैहौं ।
और हार चौकी हमेल अब तेरे कंठ न नैहौं ।
लाख टका की हानि करी तै सो जब तोसौं लैहौं ।
हार बिना ल्याये लड़बौरी, घर नहिं पैठन दैहौं ।
अब देखौंगी वहै मोतिसरि, तबहीं तौ सचु पैहौं ।
नातरु सूर जनम भरि तेरौ, नाउँ नहीं मुख लैहौं ॥८०९॥

पैहै कहाँ मोतिसरि मोरी ।
अब सुधि भई लइ चाली नै, हँसति चली वृषभानु-किसोरी ।

अबहीं मैं लीन्हे आवति ही मेरैं सँग आवै जनि कोरी।
दूजी यौं कह करिहीं ताकी, बड़े लोग सीखत हैं चोरी।
मोकौं आजु अबेर लागिहै, ढूँढ़ौगी घर-घर ब्रज-खोरी।
सूर बचौ निवरक ह्वै छन मैं चतुर राधिका बातनि भोरी ॥८१०॥

नंद-महर-घर के पिछवारैं, राधा आइ बतानी।
मनौ अंब-दल-मौर देखि कै, कुहुकी कोकिल बानी।
झूठेंहिं नाम लेति ललिता कौ, चलैं जाउ परानी।
वृंदावन-मग जाति अकेली, सिर लै दही मथानी।
मैं बैठी परखति हौं रैहौं, स्याम तबहिं तिहिं जानी।
कोक-कला-गुन आगरि नागरि, सूर चतुरई ठानी ॥८११॥

सैन दै नागरी गई बन कौं।
तबहिं घर-खोर दियौ डारि, नहिं रहि सके, ग्वाल जेंवत रहे, मोहौ उनकौं।
चले अकुलाइ बन धाइ, ब्याई गाइ देखिहौं जाइ, मन हरष कीन्हौ।
प्रिया निरखति पंथ मिले तब हरि तहँ गए इहिं अंत हँसि अंक लीन्हौ।
अतिहिं सुख पाइ अतुराइ मिलि आइ दोउ मनौ अति रंक नव-निधिहिं पाई।
सूर प्रभु की प्रिया राधिका अति नवल, नवल नँद-लाल के मनहिं भाई ॥८१२॥

दीजै कान्ह, काँधे कौ कंबर।
नान्ही नान्ही बूँदनि बरषन लाग्यौ, भीजत कुसुँभी अंबर।
बार-बार अकुलाइ राधिका देखि मेघ आडंबर।
हँसि हँसि रीझि बैठि रहे दोऊ, ओढ़ि सुभग पीतंबर।

सिव सनकादिक नारद सारद अंत न पावैं सुंदर।
सूर स्याम-गति सकि न परति कछु, खात ग्वाल सँग संवर ॥८१३

कान्ह कह्यौ बन रैनि न कीजै, सुनहु राधिका प्यारी।
अति हित सौं घर जाइ कह्यौ अब भवन आपनैं जा री।
मातु पिता जिय जानैं न कोऊ, गुप्त प्रीति-रस भारी।
घर तैं चोर डारि मैं आयौ, देखत बीच महतारी।
तुम जैसी मोहिं प्यारी लागति, चंद चकोर कहा री।
सूरदास-स्वामी इन बातनि नागरि रिझई भारी ॥८१४॥

मैं बलि जाउँ कन्हैया की।
कर तैं चोर डारि उठि धायौ बात सुनी बन गैया की।
धौरी गाइ आपनी जानी उपजी प्रीति लवैया की।
बातैं कहत समोह परत पग धोवति स्याम देखि हित मैया की।
सो अनुराग समोवा कै कर, मुख की कहनि कन्हैया की।
यह सुख सूर और कहुँ नाहीं सोइ करत बल भैया की ॥८१५

राधा अतिहिं चतुर प्रवीन।
कृष्न कौ सुख दै चली हँसि हंस-गति कटि छीन।
हार कैं मिस इहाँ आई स्याम-मनि कैं काम।
भयौ सब पूरन मनोरथ मिले श्रीब्रजराम।
गाँठि-आँचर छोरि कै, मोतिसरी लीन्ही हाथ।
सखी आवति देखि राधा गई ताकैं साथ।
जुवति बूझति कहाँ नागरि निसि गई इक जाम।
सूर ब्यौरो कहि सुनायौ, मैं गई तिहिं काम ॥८१६॥

इम बातनि कछु पावति री।
बिनु देखें लोगनि सौं सुनि-सुनि, काहे पैर बढ़ावति री।
मोकौं कहाँ अकेली देखति, तबहिं बात उपजावति री।
ब्रज-जुवतिनि की संगति त्यागी पुनि-पुनि कोप करावति री।

कैसी बुद्धि तुम्हारी सबकी ऐसी तुमकौं भावति री।
सूर सीस सुन दै बूझति हौं, कहति तुमहुँ कहनावति री ॥८१७

करति अबसेर वृषभानु-नारी।
प्रात तैं गई, बासर गयौ बीति सब, जाम निसि गई, धौं कहाँ बारी।
हार कैं त्रास मैं कुँवरि त्रासी बहुत सिहिं डरनि अबहुँ नहिं सदन आई।
कहाँ मैं जाउँ, कहूँ धौं रही रूसि कै, सखिनि सौं कहति कहुँ मिली माई।
हार कहि आइ, अति गई अतुराइ कै, सुता कैं जाउँ इक बेर मेरैं।
सूर यह बात धौं सुनैं अबही महर, कहैंगे मोहिं ये ढंग तेरे ॥८१८

राधा हर हरषित घर आई।
देखत ही कीरति महतारी हरषि कुँवरि उर लाई।
धीरज भयौ सुता-माता जिय दूरि गयौ तनु-सोच।
मेरी कौं मैं काहैं त्रासी कहा कियौ यह पोच।
मैं री मैया हार मोतिसरी, जा कारन मोहिं त्रासी।
सूर राधिका के गुन ऐसे, मिलि आई अबिनासी ॥८१९॥

परम चतुर वृषभानु-दुलारी।
यह मति रची कृष्न मिलिबे की परम पुनीत महा री।
यह सुख दियौ नंद-नंदन कौं हरषहिं हरष महतारी।
हार हरौ उपकार करायौ कबहुँ न उर तैं टारी।
लै सिव-सनक-सनातन दुर्लभ सो बस किये कुमारी।
सूरदास प्रभु-कृपा अगोचर निगमनि हू तैं न्यारी ॥८२०॥

प्रीति कै बस्य ये हैं मुरारी।
प्रीति कै बस्य नटवर सुभेसहिं धरयौ, प्रीति बस करज गिरिराज धारी।

प्रीति के बस्य भए माखन चोर, प्रीति के बस्य दाँवरि बँधाई ।
प्रीति के बस्य गोपी-रमन नाम प्रिय, प्रीति-बस जमल तरु मोच्छदाई ।
प्रीति बस नंद-बंधन बरुन-गृह गए, प्रीति के बस्य बन धाम कामी ।
प्रीति के बस्य प्रभु सूर त्रिभुवन बिदित, प्रीति-बस सदा राधिका स्वामी ॥८२१॥

स्याम भए वृषभानु-सुता बस, और नहीं कछु भावै (हो) ।
जो प्रभु तिहूँ भुवन कौ नायक, सुर-मुनि अंत न पावै (हो) ।
जाकौं सिव ध्यावत निसि-बासर, सहसानन जिहिं गावै (हो) ।
सो हरि राधा-बदन चंद कौं नैन चकोर बसावै (हो) ।
जाकौं देखि अनंग अनंगत नागरि छबि बरसावै (हो) ।
सूर स्याम स्यामा बस ऐसे ज्यौं सँग छाँह डुलावै (हो) ॥८२२॥

कबहुँ स्याम जमुना-तट जात ।
कबहुँ कदम चढ़त मग देखत, राधा बिनु अतिहीं अकुलात ।
कबहुँ जात बन कुंज-धाम कौं देखि रहत नहिं कछू सुहात ।
तब आवत वृषभानु-पुरा कौं अति अनुराग भरे नँद-तात ।
प्यारी हृदय प्रगटही जानति तब वह मनही मौन सिहात ।
सूरदास नागरि के उर मैं निबसे नागर स्यामल गात ॥८२३॥

आजु सखी अरुनोदय मेरे नैननि कौ धोखा भयौ ।
की हरि आजु पथ इहिं गवने स्याम जलद की उनयौ ।
की बग पाँति भाँति उर पर की मुकुत माल बहु मोल ।
कीधौं मोर मुदित नाचत की बरह-मुकुट की डोल ।
की घनघोर गँभीर प्रात उठि, की ग्वालनि की टेरनि ।
की दामिनि कौंधति चहुँदिसि की सुभग पीत पट फेरनि ।
की बनमाला लाल उर राजति की सुरपति-धनु चारु ।
सूरदास प्रभु-रस भरि उमँगी, राधा कहति बिचारु ॥८२४॥

राधा की कछु और सुभाइ ।
हम देखति हरि कौ औरैं अँग, यह निरखति सखि भाइ ।
यह है विधु कलंक की साँची, हम कलंक मैं सानी ।
हम हरि की दासी सम नाहीं यह हरि की पटरानी ।
याकी अस्तुति हम कह करिहैं, रसना एक न आवै ।
सूर स्याम कौं इनहीं जाने मजन प्रताप बतावै ॥८२५॥

राधिका हृदय तैं धोखा टारी ।
नंद के लाल देखे प्रात काल तैं मेघ नहिं स्याम-तनु-छबि बिचारी ।
इंद्र धनु नहीं बन दाम,बहु सुमन के नहीं बग पाँति वर मोतिमाला
सिखी यह नहीं,सिर मुकुट सीखंड-पख तड़ित नहिं पीत-पट छबि रसाला ।
मंद गरजन नहीं चरन नूपुर-सबद भोरहीं आजु हरि गवन कीन्हौ
सूर प्रभु भामिनी भवन करि गवन मन-रवन दुख के दवन मानि लीन्हौ ॥८२६॥

धन्य धन्य वृषभानु-कुमारी ।
धनि माता धनि पिता तिहारे, तोसी जाई बारी ।
धन्य दिवस धनि निसा तबहिं की, धन्य घरी, धनि जाम ।
धन्य धन्य तेरैं बस वे हैं धनि कीन्हे बस स्याम ॥
धनि मति, धनि रति, धनि तेरौ हित धन्य भक्ति, धनि भाइ ।
सूर स्याम पति धन्य नारि तू धनि धनि एक सुभाइ ॥८२७॥

तोहिं स्याम हम कहा दिखावैं ।
तुमतैं न्यारे रहत कहूँ न वै, नैकु नहीं बिसरावैं ।
एक जीव देही द्वै राखी, यह कहि कहि जु सुनावैं ।
उनकी पटतर तुमकौं दीजै तुम पटतर वै पावैं ।
अंबुज कहा अमृत-गुन प्रगटै, सो हम कहा बतावैं ।
सूरदास गूँगे को गुर ज्यौं, बूझति कहा बुझावैं ॥८२८॥

सुनि राधा, यह कहा बिचारै।
वे मेरैं तू उनकैं रँग, अपनी मुख क्यौं न निहारै।
जौ देखै तौ छाँह आपनी स्याम-हृदै जौ छाया।
ऐसी दसा नंद-नंदन की तुम दोउ निर्मल काया।
नीलांबर स्यामल तनु की छबि, तुम छबि पीत सुवास।
घन-भीतर दामिनी प्रकासित, दामिनि घन चहुँ पास।
सुनि री सखी, बिलछ कहौं तोसौं, चाहति हरि कौ रूप।
सूर सुनहु तुम दोउ सम जोरी एक स्वरूप अनूप ॥८२६॥

प्रिय तेरैं बस यौं री माई।
ज्यौं संगहिं सँग छाँह देह-बस प्रेम कह्यौ नहिं जाई।
ज्यौं चकोर बस सरद चंद्र कैं, चकवाक बस भान।
जैसैं मधुकर कमल-कोस-बस त्यौं बस स्याम सुजान।
ज्यौं चातक बस स्वाति बूँद कै, तन कैं बस ज्यौं जीय।
सूरदास-प्रभु अति बस तेरैं समुझि देखि धौं हीय ॥८३०॥

तू री छाँह प्रिय हरि राखति।
अपनैं मन तू जानति नीकैं, मुख सौंसी यह भाषति।
जानि बस रहत कान्ह री तोसौं मधुर हाथ लै देखि।
तैसीयै मनमोहन की गति, कहै भाव मन लेखि।
तू है बाम अंग हरिहृदय के ऐसें करि इक-देह।
सूर मीन-मधुकर चकोर कौ, इतनी नहीं सनेह ॥८३१॥

राधा चकृत भई मन माहीं।
अबहीं स्याम द्वार ह्वै झाँके, कौं आए क्यौं नाहीं।
आपुन आइ तहाँ जो देखै, मिले न नंद-कुमार।
आवन ही फिरि गए स्याम-घन, अति [illegible] भयी बिचार।
सूनैं भवन अकेली मैं हो, नीकैं लखि सिंगारयी।
मोतै चूक परी मैं जानी ताते मोहिं बिसारयी।

इक अभिमान हृदय करि बैठी एते पर महरानी।
सूरदास प्रभु गए द्वार ह्वै, तब व्याकुल पछितानी ॥८२१॥

मैं अपनैं जिय गर्व कियौ।
वह अंतरजामी सब जानत देखत ही उन चरचि लियौ।
कासौं कहौं मिलावै को अब नैकु न धीरज धरत हियौ।
वै तौ निठुर भए या बुधि सौं, अहंकार फल यहै दियौ।
तब आपुन कौं निठुर करावत प्रीति सुमिरि भरि लेति हियौ।
सूर स्याम प्रभु वै बहु नायक, मोसी उनकैं कोटि तियौ ॥८२३॥

महा विरह बन माँझ परी।
चकित भई ज्यौं चित्र-पुतरी, हरि-मारग बिसरी।
संग बटपार-गर्व अब देख्यौ, साथी छोड़ि पराने।
स्याम-सहर सँग-भाग मापुरी, तहँ वै आइ लुकाने।
यह बन माँझ अकेली व्याकुल, संपति गर्व छँड़ायौ।
सूर स्याम-सुधि टरति न उर तैं, यह मनु जीव बचायौ ॥८२४

राधा-भवन सखी मिलि आईं।
अति व्याकुल सुधि-बुधि कछु नाहीं देह-दसा बिसराई।
बाँह गही तिहिं बूझन लागी कहा भयौ री माई।
ऐसी बिबस भई तू काहैं, कही न हमहिं सुनाई।
कालिंदि-कूल बरन तोहिं देख्यौ आजु गई मुरझाई।
सूर स्याम देखे की बहुरी उनहिं ठगौरी लाई ॥८२५॥

अब मैं तोसौं कहा दुराऊँ।
अपनी कथा स्याम की करनी, तो आगैं कहि प्रगट सुनाऊँ।
मैं बैठी ही भवन आपने आपुन द्वार दियौ दरसाऊ।
जानि लई मेरे जिय की उन गर्व प्रहारन उनकी नाऊँ।
तबही तैं व्याकुल भई डोलति चित न रहै, कितनौ समझाऊँ।
सुनहु सूर गृह बन भयौ मोकौ अब कैसैं हरि दरसन पाऊँ ॥८२६

मान बिना नहिं प्रीति रहै री।
चाह मिले की गति तेरी सी प्रगट देखि मोहिं कहा कहै री।
अपनी चाह मारि उन लीन्ही, तू काहैं अब वृथा बहै री।
बैठि रही काहैं नहिं द्वै दिन फिरि काहैं नहिं मान गहै री।
अपनो पेच दियौ है उनकौं नाक-बुद्धि तिय सबै कहै री।
सूर स्याम ऐसे हैं माई उनकौं बिनु अभिमान लहै री ॥८३७॥

हमरी सुरति बिसारी बनवारी, हम सरबस दै हारी।
पै न भए अपने सनेह बस सपनेहुँ गिरिधारी।
वै मोहन मधुकर समान सखि, अनगन बेली चारी।
व्याकुल बिरह व्याधि दिन दिन हम नीर जु नैनन ढारी।
हम तन मन दै हाथ बिकानी वै अति निठुर मुरारी।
सूर स्याम बहु रमनि-रमन हम इक ब्रत, मदन प्रजारी ॥८३८

मैं अपनी सी बहुत करी री।
मोसौं कहा कहति तू माई मन के सँग मैं बहुत लरी री।
राखी हटकि उतहिं कौ धावत, वाकी ऐसियै परनि परी री।
मोसौं बैर करै रति उनसी मोकौं राख्यौ द्वार खरी री।
अजहूँ मान करौं मन पाऊँ, यह कहि इत उत चितै डरी री।
सुनहूँ सूर पाँचनि मत एकै, मैं ही मोही रही परी री ॥८३९॥

मूरख नही अब मान कर्यौ री।
आपै होइ अकाज आपनौ काहैं वृथा मरौ री।
ऐसे तन मैं गर्व न राखौ चिंतामनि बिसरौ री।
ऐसी बात कहै जौ कोऊ, ताकै संग लरौ री।
आश्चर्य भयौ यह सरिहै, स्यामहिं संग फिरौ री।
सूर स्याम अब आपुस्वारथी, दरसन नैन भरौ री ॥८४०॥

चूक परी मोतैं मैं जानी मिलैं स्याम बकसाऊँ री।
हा हा करि दसननि तृन धरि-धरि लोचन नीर बहाऊँ री।

कहति पुनि पुनि स्याम आगैं मोहिं देहु मिलाइ।
मुरछि भुज भुज जोरि दोऊ अरस परस बनाइ।
कृष्न पूरन भाए, उभरति प्यारि रिस करि गात।
बार बारि अधर धरि-धरि, बकसि नहिं अकुलात।
प्रिया-भूषन स्याम पहिरत, स्याम-भूषन नारि।
सूर प्रभु करि मान बैठे तिय करति मनुहारि ॥८५०॥

निरखि पिय-रूप तिय चकित भारी।
किधौं वै पुरुष मैं नारि की वै नारि मैं ही हौं पुरुष, तन सुधि बिसारी।
आपु तन चितै सिर मुकुट, कुंडल स्रवन, अधर मुरली माल बन बिराजै।
उतहिं पिय-रूप सिर माँग बेनी सुभग, भाल बेंदी बिंदु महा छाजै।
नागरी हठ तजी, कृपा करि मोहिं भजी परी कह चूक सो कहौ प्यारी।
सूर नागरी प्रभु-बिरह-रस मगन भई, देखि छबि हँसत गिरिराज-धारी ॥८५१॥

नंद-नँदन तिय-छबि तनु काछे।
मनु गोरी साँवरी नारि दोउ, जाति सहज मैं आछे।
स्याम अंग कुसुमी नई सारी फल गुंजा की भाँति।
इत नागरि नीलांबर पहिरे जनु दामिनि घन काँति।
आतुर चले जात बन-धामहिं मन अति हरष बढ़ाए।
सूर स्याम वा छबि कौ नागरि निरखति नैन चुराए ॥८५२॥

स्यामा स्याम कुंज बन आवत।
भुज भुज-कंठ परस्पर दीन्हे यह छबि उनहीं पावत।

इतनैं चन्द्रावली आदि ब्रज उततैं ये दोउ आए।
दूरिहिं तैं चितवति उनहीं तन, इकटक नैन लगाए।
एक राधिका दूसरि को है, याकौं नहिं पहिचानौं।
ब्रज-बृषभानु-पुरा-जुवतिनि कौं इक-इक करि मैं जानौं।
यह आई कहुँ और गाँव तैं, छबि साँवरी सलोनी।
सूर आजु यह नई बतानी, एकौ अँग न बिलौनी ॥८८२॥

यह बृषभानु-सुता यह को है।
याकी सरि जुवती कोउ नाहीं, यह त्रिभुवन मन मोहै।
अति आतुर देखन कौं आवति निकट आइ पहिचानी।
ब्रज मैं रहति किधौं कहुँ औरैं बूझे तैं तब जानी।
यह मोहिनी कहाँ तैं आई, परम सलोनी नारी।
सूर स्याम देखत मुसुक्याने करी चतुराई भारी ॥८८३॥

कहि राधा ये को हैं री।
अति सुंदरि साँवरी सलोनी, त्रिभुवन-जन-मन-मोहैं री।
और नारि इनकी सरि नाहीं, कहौ न हम-तन जोहैं री।
काकी सुता, बधू हैं काकी, काकी जुवती धौं हैं री।
जैसी तुम तैसी हैं येऊ भली बनी तुमसी हैं री।
सुनहु सूर अति चतुर राधिका येइ चतुरनि की गोहैं री।॥८८४

मथुरा तैं ये आई हैं।
कछु संबंध हमारौ इनसौं तातैं इनहिं बुलाई हैं॥
सखिया संग गई दधि बेचन, उनहीं इनहिं चिन्हाई हैं।
बड़ौ सनेह जानि री सजनी आजु मिलन हम आई हैं॥
तब ही की पहिचानि हमारी ऐसी सहज सुभाई हैं।
सूरदास मोहिं आवत देखी आपु संग उठि धाई हैं ॥८८५॥

इनकौं ब्रजहीं क्यौं न बसावहु।
की बृषभानुपुरा, की गोकुल निकटहिं आनि बसावहु॥

पेऊ नवल, भवत तुमहूँ ही मोहन की चोज भावहु।
मोकौं देखि कियौ अति घूँघट काहैं न लाज छुड़ावहु।
यह अचरज देख्यौ नहिं कबहूँ जुवतिहिं जुवति दुरावहु।
सूर सखी राधा सौं पुनि-पुनि, कहति जु हमहिं मिलावहु ॥८२५॥

मथुरा मैं बस बास तुम्हारी ?
राधा तैं उपकार भयौ यह, दुर्लभ दरसन भयौ तुम्हारौ ॥
बार बार कर गहि गहि निरखति, घूँघट ओट करौ किन न्यारौ।
कबहुँक कर परसति कपोल छुइ चुटकि लेति लौं हमहिं निहारौ ॥
कछु मैं हूँ पहिचानति तुमकौं तुमहिं मिलाऊँ नंद-दुलारौ।
काहे कौं तुम सकुचति हौ जू, कहौ कहा है नाम तुम्हारौ।
ऐसी सखी मिली तोहिं राधा तौ हमकौं काहैं न बिसारौ।
सूरदास दंपति मन जान्यौ याहैं कैसैं होत नयारौ ॥८२६॥

ऐसी कुँवरि कहाँ तुम पाई।
राधा हूँ तैं नख-सिख सुंदरि, अब लौं कहाँ दुराई।
काकी नारि कौन की बेटी कौन गाउँ तैं आई।
देखी सुनी न ब्रज वृंदावन सुधि-बुधि हरति पराई।
धन्य सुहाग भाग याकौ, यह जुवतिनि की मनभाई।
सूरदास-प्रभु हरषि मिले हँसि, लै उर कंठ लगाई ॥८२७॥

नंद-नंदन हँस नागरी-मुख चितै, हरषि चंद्रावली कंठ लाई।
बाम भुज रवनि, दच्छिन भुजा सखी पर, चले बन-धाम सुख
कहि न जाई।
मनो बिबि दामिनी बीच घन सुभग देखि छबि काम रति
सहित लाजै।
किधौं कंचन-लता बीच सु तमाल तरु, भामिनिनि बीच गिरधर
बिराजै।

गए गृह कुंज अलि गुंज सुमननि पुंज देखि आनँद भरे सूर स्वामी।
राधिका-रवन जुवती-रवन मन-रवन निरखि छबि होत मन-काम कामी ॥८५९॥

नवल स्याम नवला श्री स्यामा।
दोऊ राजत साँवलगोरी, कही जात न भामा।
या छबि की उपमा दीबे कौं त्रिभुवन नहीं उपामा।
दामिनि घन पटतर दीजै क्यौं, सकुचत कवि लिये नामा।
सुधा सरीर परस्पर दोऊ, सुखदायक दिन-जामा।
सूरदास नागरि नागर प्रभु जीते रति अरु कामा ॥८६०॥

करति सिंगार वृषभानु-बारी।
रहे इकटक नंदलाल मग हेरि कै, स्याम-मन भावती परम प्यारी।
कबहुँ बेनी रचति फूल की मिलै कच कबहुँ रचि माँग मोतिनि सँवारै।
कबहुँ राखति सीसफूल लटकाइ कै, कबहुँ बदन बिंदु भाल मारै।
कबहुँ केसरि आड़ रचति दर्पन हेरि, कबहुँ भ्रुव निरखि रिस करि सकोरै।
निरखि अपनो रूप आपु ही बिबस भई सूर परछाँहि कौं नैन जोरै ॥८६१॥

यह सुंदरी कहाँ तैं आई।
बार-बार प्रतिबिंब निहारति नागरि मन-मन रही लुभाई।
कर तैं मुकुर दूरि नहिं डारति हृदय मींच कछु रिस उपजाई।
देखै कहूँ नैन भरि याकौं नागर सुंदर कुँवर कन्हाई।

मेरी कहा चली या आगैं, यह धौं आयु अरस तैं आई ।
सूरदास याकौ या ब्रज मैं, ऐसी को बैरिनि लै आई ।।८६२।।

मुकुर छाँह निरखि देह की दसा गँवाई ।
बोली धौं कौन की आपुन ही गवन कियौ, ऐसी को बैरिनि है
या ब्रज मैं माई ।
बिधकी अँग अंग निरखि बार बार रहे परखि, ललिता चंद्रावलि
कहूँ इतनी छबि पाई ।
मन मैं कछु कहन चाहे, देखत ही ठिठकि रहे, सूर स्याम निरखत
बुधि बल सुधि बिसराई ।।८६३।।

कहति छाँह सौं नागरी को है तू माई ।
मिली नहीं ब्रज-गाँव मैं, री कहँ तैं आई ।
नाम कहा है सुंदरी कहि सौंह दिखाई ।
कही न मेरे साथ है, मुख बचन सुनाई ।
दिननि हमहूँ तुम सरबरी तुम छबि अधिकाई ।
और संग नहिं कोउ लई, यह कहि डरपाई ।
जानति ही, यह नहिं सुनी, मो की अधमाई ।
अभरन भेष छँड़ाइ कै, अब डीठ कन्हाई ।
सदन आपु मेरे कहूँ, पर अंग छपाई ।
सूर स्याम जौ देखिहैं करिहैं बरियाई ।।८६४।।

नाम कहा सुंदरी तुम्हारी क्यौं मोसौं नहिं बोलति हौ ।
हँसे हँसति चितवे चितवति तुम तन डोलैं तन डोलति हौ ।
परम चतुर मैं जानति तुम कौं मो पर भौंह मरोरति हौ ।
मटकति सुभग नासिका बेसरि, पुनि-पुनि बचन सकोरति हौ ।
अरुन अधर बिद्रुम बिपुल छबि दामिनि दसन लजावति हौ ।
ऐसे मुख की बचन माधुरी, काहे न हमहिं सुनावति हौ ।

कही बचन काकी तुम चरची काके मन की चोरति ही ।
सुनहु सूर सहजहिं कीधौं रिस, मौसौं लोचन जोरति ही ॥८६५॥

कछु रिस, कछु नागरि जिय चरची
यह तौ लोचन रूप गहीली संका मानति हरि की ।
यह बिपरीत होत जब चाहत भ्रम मैं आइ समानी ।
यह तौ गुननि उजागरि नागरि, वै तौ चतुर बिनानी ।
कर दर्पन प्रतिबिंब निहारति, चकित भई सुकुमारी ।
सूर स्याम निरखत गवाच्छ-मग, नागरि भोरी-भारी ॥८६६॥

नागरि रही मुकुर निहारि ।
आनि चौचक नैन मूँदे, कमल-कर गिरिधारि ।
चौंकि चकित भई मन मैं, स्याम कै जिय जानि ।
मैं डरति ही जबहिं आयौ मिले ताकौं आनि ।
तबहिं तन की सुरति आई, लख्यौ तन प्रतिबिंबहि ।
सकुच मही नयन दुरावति परस्पर मुसुकाहिं ।
समुझि मन मैं हरषि मतियमनि, बिपुल कै हैं काम ।
सूर प्रभु उर सीस परसे बीच बेनी स्याम ॥८६७॥

मूँदि रहे पिय प्यारी-लोचन ।
अति हित बेनी कर परसाए, बेष्टित भुजा अमोचन ।
कंचन-मनि-सुमेर अँग दोऊ, सोभा कही न जाइ ।
मनौ पनगी निकसि बीच रही, दमक-गिरि लपटाइ ,
चपल नैन दीरघ अति सुंदर खंजन तें अधिकाइ ।
अति आतुर भए कारन भाई परत पलनहिं न समाइ ।
मन हरषति मुख निरखति सँचानि कहि चतुर-चतुरइ-स्याम
सूर स्याम मनभामनि के कर सुबस दै रहि हाथ ॥८६८॥

पियहिं निरखि प्यारी हँसि दीन्ही ।
रीझि स्याम अग अँग निरखत हँसि नागरि उर लीन्ही ।

आलिंगन दै अधर दसन खँडि कर गहि चिबुक उठावत ।
नासा सौं नासा लै जोरत नैन नैन परसावत ।
इहिं अंतर प्यारी उर निरख्यौ झझकि भई तब न्यारी ।
सूर स्याम मोकौं दिखरावत, उर ल्याए धरि प्यारी ॥८६९॥

अब जानी पिय बात तुम्हारी ।
मोसौं तुम मुख ही की मिलवत भावति है वह प्यारी ।
राखी रहत हृदय पर जाकौं धन्य भाग हैं ताके ।
ऐसी कहूँ लखी नहिं अब लौं, बस्य भए हौ जाके ।
भली करी यह बात जनाई प्रगट दिखाई मोहिं ।
सूर स्याम यह प्रान पियारी, उर मैं राखौ पोहि ॥८७०॥

मोहिं छुवौ जनि दूर रहौ जू ।
जाकौं हृदय लगाइ लयौ है, ताकी बाँह गहौ जू ।
तुम सर्वज्ञ और सब मूरख सो रानी हम दासी ।
मैं देखत हिरदय वह बैठी हम तुमकौं भई हाँसी ।
बाँह गहत कछु सरम न आवति, सुख पावत मन माहीं ।
सुनहु सूर मो तन वह इकटक, चितवति डरपति नाहीं ॥८७१॥

कहा भई धनि बावरी, कहि तुमहिं सुनाऊँ ।
तुम तैं को है भावती जिहिं हृदय बसाऊँ ।
तुमहिं स्रवन तुम नैन हौ, तुम प्रान-अधारा ।
वृथा क्रोध तिय क्यौं करौ कहि बारंबारा ।
भुज गहि ताहि बतावहु जैहिं हृदय बतावति ।
सूरज प्रभु कहैं नागरी तुम तैं को भावति ॥८७२॥

स्याम कुंज पैठारि गई ।
चतुर दूतिका सखियनि लीन्हें, आतुरताई जाति भई ।
मनहीं मन इक रची चतुराई कहैं कहौंगी बात नई ।
जबहीं लै आवति ही ताकौं कहैं पहुँच कछु भई दई ।

करि आई हरि सौं परतिज्ञा, कहा कहौं वृषभानु-जाई।
सूर स्याम सौं मान करयौ है आजुहिं ऐसी कहा भई ॥८७३॥

वृन्दावन हरि बैठे धाम।
कहा की गथ हन्यौ सबनि की काहें अपनी कियो कुनाम।
धरि देहु यह लियौ परायौ मेरी कह्यौ मानि री वाम।
तबहीं तैं बन सोर लगायौ, तोकी जोली है इहिं काम।
चलौ तुरत, जनि बेर लगावहु अबहीं आइ करौ बिस्राम।
सूर स्याम तेरी यौं मगरत, तू काहैं विनसौ करे ताम ॥८७४॥

यह कछु नीकी बात सुनावति।
काको गथ मौ मैं लीन्हो है, बार-बार बन मोहिं कुनावति।
मेरी यौं हरि लरत कौन सौं इती मया मोहिं कीन्ही।
जैसे हैं हरि तैसे माई, मैं नीकैं करि चीन्ही।
को बैठी को आहु भवन कौं मैं सपनै नहिं आऊँ।
सूरदास प्रभु कौ री सजनी जनम न मौहीं नाऊँ ॥८७५॥

मैं कब तोहिं मनावन आई?
मगह किये सबकौ ब्रज बैठी, कहा करति अधिकाई।
आइ कह्यौ हौं बीच सबनि कौ मोपर कत सतरानी।
स्याम लरत तबहीं तैं तनसौं तिनपर अतिहिं रिसानी।
बार बार तू कहा कहति री ब्रज काकौ मैं लीन्हौ।
सूरदास राधा सहचरि सौं न्याव निबरि करि दीन्हौ ॥८७६॥

मान करौ तुम और सवाई।
कोटि करौ पर्कै पुनि हौं हौं, तुम अरु मोहन माई।
मोहन सो सुनि नाम स्रवनहीं मगन भई सुकुमारी।
मान गयौ रिस गई तुरतहीं, लज्जित भई मन भारी।
आइ मिली दूतिका कंठ सौं धन्य धन्य कहि बानी।
सूर स्याम घन धाम जानि कै, दरसन कौं अतुरानी ॥८७७॥

स्याम नारि कैं बिरह भरे।
कबहुँक बैठत कुंज द्रुमनि तर, कबहुँक रहत खरे।
कबहुँक तनु की सुरति बिसारत, कबहुँक तनु-सुधि आवत।
तब नागरि के गुनहिं बिचारत, तेई गुन गनि गावत।
कहूँ मुकुट, कहूँ मुरलि रही गिरि, कहूँ कटि पीत पिछौरी।
सूर स्याम ऐसी गति भीतर, आई दूतिका दौरी॥८८८॥

धनि वृषभानु-सुता बड़भागिनि।
कहा निहारति अंग अंग-छबि, धन्य स्याम अनुरागिनि।
और त्रिया नख सिख सिंगार सजि, तेरैं सहज न पूरैं।
रति, रंभा उरबसी रमा सी, तोहिं निरखि मन झूरैं।
ये सब कंत सुहागिनि नाहीं, तू है कंत पियारी।
सूर धन्य तेरी सुंदरता, तोसी और न नारी॥८८९॥

चली किन मानिनि, कुंज-कुटीर।
तुव बिनु कुँवर कोटि बनिता तजि सहत मदन की पीर।
गदगद स्वर संभ्रम अति आतुर, स्रवत सुलोचन नीर।
क्वासि क्वासि वृषभानु-नंदिनी बिलपत बिपिन अधीर।
बंसी बिसिख, ब्याल मालावलि, पंचानन पिक कीर।
मलयज गरल हुतासन मारुत साखामृग-रिपु चीर।
हिय मैं हरषि प्रेम अति आतुर, चतुर चली पिय-तीर।
सुनि भयभीत बज्र के पिंजर सूर सुरति-रनधीर॥८९०॥

सँग राजति वृषभानु-कुमारी।
कुंज सदन कुसुमनि सज्या पर, दंपति सोभा भारी।
आलम भरे मगन रस दोऊ, अंग अंग प्रति जोहत।
मनहुँ गौर स्यामल ससि नव तन, बैठे सन्मुख सोहत।
कुंज भवन राधा-मनमोहन, चहूँ पास ब्रजनारी।
सूर रही लोचन इकटक करि, डारति तन मन वारी॥८९१॥

प्यारी चितै रही मुख पिय कौ।
अंजन अधर, कपोलनि बंदन, लाग्यौ काहू त्रिय कौ॥
तुरत उठी दर्पन कर लीन्हे, देखौ बदन सुधारी।
अपनौ मुख वहि भाँत देखि कै, तब तुम कहूँ सिधारी॥
अधर बंदन, अधर कपोलनि, सकुचे देखि कन्हाई।
सूर स्याम नागरि-मुख जोवत, बचन कह्यौ नहिं आई॥८८२॥

क्यौं मोहन, दर्पन नहिं देखत।
क्यौं धरनी पग-नखनि करोवत क्यौं हम तन नहिं पेखत॥
क्यौं ठाढ़े बैठत क्यौं नाहीं, कहा परी हम चूक।
पीतांबर गहि क्यौं बैठियै रहे कहा ह्वै मूक॥
उघरि गयौ उर तैं उपरैना नख-छत, बिनु गुन माल।
सूर देखि लटपटी पाग पर, जावक की छवि लाल॥८८३॥

ऐसी कहाँ रँगीले लाल।
जावक सी कहँ पाग रँगाई, रंगरेजिनी मिली कोउ बाल॥
बंदन रंग कपोलनि दीन्हौ, मदन अधर भए स्याम रसाल।
जिनि तुम्हरी मन-इच्छा पुरई, धनि धनि पिय, धनि धनि वह बाल॥
माला कहाँ मिली बिनु गुन की उर-छत देखि भई बेहाल।
सूर स्याम छवि सबै बिराजी, रहे देखि मोकौं अंघात॥८८४॥

कहाँ की कहि गए, आइहौ, काहैं झूठी सौंहैं खाए।
ऐसे मैं नहिं जाने तुमकौ जे गुन करि तुम प्रगट दिखाए॥
भली करी यह दरसन दीन्हे, जनम जनम के ताप नसाए।
तब चितए हरि नैंकु तिया-तन, इतनैहिं सब अपराध छमाए॥
सूरदास सुंदरी सयानी, हँसि लीन्हे पिय अंकम लाए॥८८५॥

रहौ जाहु जहँ रैनि बसे हौ।
काहे कौं लालन ही आए अँग अँग चिह्न लसे हौ॥

स्याम नारि कैं बिरह भरे।
कबहुँक बैठत कुंज द्रुमनि तर, कबहुँक रहत खरे।
कबहुँक तनु की सुरति बिसारत, कबहुँक तनु-सुधि आवत।
तब नागरि के गुनहिं बिचारत, तेई गुन गनि गावत।
कहुँ मुकुट, कहुँ मुरलि रही गिरि, कहुँ कटि पीत पिछौरी।
सूर स्याम ऐसी गति भीतर आई दूतिका दौरी ॥८७८॥

धनि वृषभानु-सुता बड़भागिनि।
कहा निहारति अंग अंग-छबि धन्य स्याम-अनुरागिनि।
और त्रिया नख सिख सिंगार सजि, तेरैं सहज न पूरैं।
रति, रंभा, उरबसी रमा सी, तोहिं निरखि मन झूरैं।
ये सब कंत सुहागिनि नाहीं, तू है कंत पियारी।
सूर धन्य तेरी सुंदरता, तोसी और न नारी ॥८७९॥

चली जिन मानिनि कुंज-कुटीर।
तुव बिनु कुँवर कोटि बनिता तजि, सहत मदन की पीर।
गदगद स्वर संभ्रम अति आतुर, स्रवत सुलोचन नीर।
क्वासि क्वासि वृषभानु-नंदिनी, बिलपत बिपिन अधीर।
बंसी बिसिष, माल ब्यालावलि, पंचानन पिक कीर।
मलयज गरल, हुतासन मारुत, साखामृग-रिपु चीर।
हिय मैं हरषि प्रेम अति आतुर, चतुर चली पिय-तीर।
सुनि भयभीत बज्र के पिंजर, सूर सुरति-रनधीर ॥८८०॥

सँग राजति वृषभानु-कुमारी।
कुंज सदन कुसुमनि सिज्या पर दंपति सोभा भारी।
आलस भरे मगन रस दोऊ, अंग अंग प्रति जोहत।
मनहुँ गौर स्यामल ससि नव तन, बैठे सन्मुख सोहत।
कुंज-भवन राधा-मनमोहन, चहुँ पास ब्रजनारी।
सूर रही लोचन इकटक करि, डारति तन मन वारी ॥८८१॥

प्यारी चितै रही मुख पिय कौ।
अंजन अधर, कपोलनि बंदन, लाग्यौ काहू त्रिय कौ॥
तुरत उठी दर्पन कर लीन्हे देखौ बदन सुधारी।
अपनौ मुख ससि प्राय देखि कै, तब तुम कहूँ सिधारी॥
काजर बंदन, अधर कपोलनि सकुचे देखि कन्हाई।
सूर स्याम नागरि-मुख जोवत, बचन कह्यौ नहिं जाई॥८८२॥

क्यौं मोहन, दर्पन नहिं देखत।
क्यौं धरनी पग-नखनि करोवत क्यौं हम तन नहिं पेखत॥
क्यौं ठाढ़े बैठत क्यौं नाहीं, कहा परी हम चूक।
पीतांबर गहि क्यौं बैठियै रहे कहा ह्वै मूक॥
उघरि गयौ उर तैं उपरैना नख-छत, बिनु गुन माल।
सूर देखि लटपटी पाग पर, जावक की छबि लाल॥८८३॥

ऐसी कहाँ रँगीले लाल।
जावक सौं क्यौं पाग रँगाइ, रँगरेजिनी मिली कोउ बाल॥
बंदन रंग कपोलनि दीन्हौ अरुन अधर मद स्याम रसाल।
जिनि तुम्हरी मन इच्छा पुरई धनि धनि पिय धनि धनि वह बाल॥
माला क्यौं मिली बिनु गुन की उर-नख देखि भई बेहाल।
सूर स्याम छबि सबै बिराजी, यह देखि मोकौं जंजाल॥८८४॥

काहे कौं कहि गए, आइहैं, काहैं झूठी सौंहैं खाए।
ऐसे मैं नहिं जाने तुमकौं, जे गुन करि तुम प्रगट दिखाए॥
भली करी यह दरसन दीन्हे, जनम जनम के ताप नसाए।
तब चितए हरि नैंकु तिया-तन, इतनैंहि सब अपराध छमाए॥
सूरदास सुंदरी सयानी, हँसि लीन्हे पिय अंकम लाए॥८८५॥

कहँइ जाहु जहँ रैनि बसे हौ।
काहे कौं पाहन हौ आए अँग अँग चिह्न लसे हौ॥

मरगज अंग, मरगजी माला, बसन सुगंध भरे हौ।
काजर अधर कपोलनि बंदन, लोचन अरुन भरे हौ॥
पलकनि पीक, मुकुर लै देखौ, ये कौनहीं करे हौ।
सूरदास प्रभु पीठि बलय गड़े नागरि अंग भरे हौ॥८८६॥

तुम रीझे, की उनहिं रिझाए।
हा हा पिय, यह प्रगट सुनावौ, कोटिक सौंह दिवाए॥
जावक-भाल-चिह्न मैं जान्यौ, हठ करि पाइ लगाए।
नैननि पीक भया उन कीन्ही अंजन अधरनि लाए॥
बिनु-गुन माल मिली कहँ तुमकौं कंकन पीठि दिखायहु।
सूर स्याम हम तो यौ जानति, तुमहूँ कहि न सुनायहु॥८८७॥

धीर धरहु, फल पावहुगे।
अपनेही सुख के पिय चोंहे कबहूँ तौ बस आवहुगे॥
हमसौं कहत और की औरै, इन बातनि मन भावहुगे।
कबहुँ राधिका मान करैगी, अंतर बिरह जनावहुगे॥
तब चरित्र हमहीं देखैंगी जैसे नाच नचावहुगे।
सूर स्याम अति चतुर कहावत, चतुराई बिसरावहुगे॥८८८॥

मैं हरि सौं हो मान कियौ री।
आवत देखि आन बनिता-रत, द्वार कपाट दियौ री॥
अपनैं ही कर साँकर सारी, सँधिहिं सँधि सियौ री।
जौ देखौं तौ सेज सुमूरति कौप्यौ रिसनि हियौ री॥
जब झुकि चली भवन तैं बाहिर, तब हठि लौटि लियौ री।
कहा कहौं कछु कहत न आवै तहँ गोबिंद बियौ री॥
बिसरि गयौ सब रोष हरष मम पुनि फिरि भवन बियौ री।
सूरदास प्रभु अतिरति नागर छबि मुख अमृत पियौ री॥८८९॥

नंदनंदन सुखदायक हैं।
नैन सैन दै हरत नारि-मन, काम काम-तनु दायक हैं॥

कबहुँ रैन बसत काहू कैं, कबहुँ भोर उठि आवत हैं।
काहू को मन आपु चुरावत, काहू के मन भावत हैं।
काहू कैं जागत सगरी निसि काहू बिरह जगावत हैं।
सुनहु सूर जोइ जोइ मन भावै, सोइ सोइ रँग उपजावत हैं।।८१०

तनहीं कौं मन राखैं काम।
कौं तुम सौं आप या माहीं, बात सुनत ही नाहीं स्याम।
देखौ अंग अंग-प्रति सोभा, मैं तो भूली हौं हरि रूप।
धनि पिय बने धनी पेऊ हैं, एक एक तैं रूप अनूप।
सो छबि मोहिं दिखावन आप मया करी बहुत हरि आजु।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि बैठ रसिकिनी बन्यौ समाजु।।८११

स्याम तिया सन्मुख नहिं जोवत।
कबहुँ नैन की ओर निहारत कबहुँ बदन पुनि गोवत।
मन-मन हँसत त्रसत तनु परगट सुनत भावती बात।
खंडित बचन सुनत प्यारी के पुलक होत सब गात।
यह सुख सूरदास कछु जानै प्रभु अपने की भाव।
श्रीराधा रिस करति, निरखि मुख तिहिं छबि पर सकुचाव।।८१२

मैं जानी पिय-मन की बात।
धरनी पग-तल कहा करोवत, अब सीखी यह घात।
तुम जानत तिय हमहिं सयाने अरु सब लोग अयाने।
रैन बसत कहुँ, भोर हमारें आवत नहीं लजाने।
यह चतुराई पढ़ी ताहि पै सो गुन हम तैं न्यारी।
धनि धनि सूरदास के स्वामी, काहैं हम न बिसारी।।८१३।।

नैन चपलता कहाँ गवाँई।
मोसौं कहत चुरावत नागर नागरि रैनि जगाई।
वाही कैं रँग अरुन भए हैं धनि यह सुंदरताई।
मानौ अरुन अंबुज पर बैठे, मत्त भृंग रस पाई।

अरगज अंग, मरगजी माला, बसन सुगंध भरे हौ।
काजर अधर, कपोलनि बंदन, लोचन अरुन भरे हौ॥
पलकनि पीक, मुकुर लै देखौ, ये कौनहीं करे हौ।
सूरदास प्रभु पोठि बलय गड़े, नागरि अंग भरे हौ॥८८६॥

तुम रीझे की प्रनहिं रिझाए।
हा हा पिय, यह प्रगट सुनावौ कोटिक सौंह दिवाए॥
जावक-भाल-चिह्न मैं जान्यौ हठ करि पाइ लगाए।
नैननि पीक मया तन कीन्ही, अंजन अधरनि लाए॥
बिनु-गुन माल मिली कहँ तुमकौं कंकन पीठि दिखावहु।
सूर स्याम हम तौ यौं जानति तुमहीं कहि न सुनावहु॥८८७॥

पीर परहु, फल पावहुगे।
अपनेही सुख के पिय चौंके, कबहूँ तौ बस आवहुगे॥
हमसौं कहत और की औरै, इन बातनि मन भावहुगे।
कबहुँ राधिका मान करैगी, अंतर बिरह जनावहुगे॥
तब चरित्र हमहीं देखैंगी, जैसें नाच नचावहुगे।
सूर स्याम अति चतुर कहावत, चतुराई बिसरावहुगे॥८८८॥

मैं हरि सौं हो मान कियौ री।
आवत देखि आन बनिता-रत, द्वार कपाट दियौ री॥
अपनैं ही कर साँकर सारी, संधिहिं संधि सियौ री।
जौ देखौं तौ सेज सुमूरति, काँप्यौ रिसनि हियौ री॥
जब झुकि चली भवन तें बाहिर, तब हठि सौंटि लियौ री।
कहा कहौं कछु कहत न आवै तहँ गोबिंद बियौ री॥
बिसरि गयौ सब रोष हरष मन, पुनि फिरि मदन जियौ री।
सूरदास प्रभु अतिरति नागर छकि मुख अमृत पियौ री॥८८९॥

नंदनंदन सुखदायक हैं।
नैन सैन दै हरत नारि-मन, काम काम-तनु दायक हैं॥

अबहिं जाइ मनाइ लीजै, अवसि कीजै गौन।
सूर के प्रभु जाइ देखौ, चित्र पौंधी जौन ॥८६८॥

स्यामा तू अति स्यामहिं भावै।
बैठत-उठत चलत गौ चारत, तेरी लीला गावै।
पीत बरन लखि पीत बसन उर पीत धातु अँग लावै।
चंद्रानन सुनि मोर चंद्रिका माथे मुकुट बनावै।
अति अनुराग नैन संभ्रम मिलि संग परम सुख पावै।
बिछुरति तोहिं क्वासि राधिका कहि, कुंज-कुंज प्रति धावै।
तेरौ चित्र लिखै अरु निरखै बासर बिरह नसावै।
सूरदास रस-रासि रसिक सौं अंतर क्यौं करि आवै ॥८६९॥

जब-जब तेरी सुरति करत।
तब तब ढरढराइ दोउ लोचन, उमँगि भरत।
जैसें मीन कमल-दल कौ चलि अधिक अरत।
पलक कपाट न होत, तबहिं तैं निकसि परत।
आँसु परत ढरि-ढरि उर, मुक्त मनहु झरत।
सहज गिरा बोलत न बनत हित हेरि हरत।
राधा, नैन-चकोर बिना-मुख-चंद्र जरत।
सूर स्याम तव दरस बिना नहिं धीर धरत ॥९००॥

राधे हरि तेरौ नाम बिचारैं।
तुम्हरेइ गुन ग्रंथित करि माला, रसना-कर सौं टारैं।
लोचन मूँदि ध्यान धरि, दृढ करि पलक न नैंकु उघारैं।
अंग अंग प्रति रूप माधुरी, उर तैं नहीं बिसारैं।
ऐसौ नेम तुम्हारौ पिय कैं कह जिय निठुर तिहारैं।
सूर स्याम मनकाम पुरावहु उठि चलि कहैं हमारैं ॥९०१॥

अति न हठ कीजै री सुनि ग्वारि।
हा।सु कहति तू सुनि, या हठ तैं सरै न एकौ प्रारि।

चढ़ि न सकत पैमे मतवारे, लागत पलक जम्हाई।
सुनहु सूर यह अंग माधुरी, आलस भरे कन्हाई ॥८५४॥

यह कहि कै तिय धाम गई।
रिसनि भरी नख-सिख लौं प्यारी जोबन-गर्व-भई।
सखी चली गृह देखि दशा यह, हठ करि बैठी जाइ।
बोलति नहीं मान करि हरि सौं, हरि अंतर रहे आइ।
इहिं अंतर जुवती सब आईं जहाँ स्याम पर-द्वारें।
प्रिया मान करि बैठि रही है, रिस करि कोप तुम्हारें।
तुम आवत अबिहीं अकुलानी कहा करी चतुराई।
सुनत सूर यह बात चकित पिय अबिहिं गए मुरझाई ॥८५५॥

बहुरि नागरी मान कियौ।
लोचन भरि भरि ढारि दिये दोउ, मानि तनु बिरह हियौ।
देखत ही देखत भए व्याकुल, पिय प्यारी अकुलाने।
पै गुन करत होत मन चौपै अतिहित परम सयाने।
यह सुनि कै दूती हरि पठई देखि जाइ अनुमान।
सूर स्याम यह कहि तिहिं पठई तुरत तजै जिहिं मान ॥८५६॥

नेकु निकुंज कृपा करि आइयै।
अति रिसि बस ह्वै रही किसोरी, करि मनुहारि मनाइयै।
घर घरीक अंतर नहिं पावत, अति बसीस मन भाइयै।
द्वै चितुर वचन बुद्धिमानी सुदृढ़ सँवारि बनाइयै।
इतनी कहा गाँठि कौ लागत जौ मानिनि सुख पाइयै।
रूठहिं आदर देत सयाने यहै सूर जस गाइयै ॥८५७॥

बैठी मानिनी गहि मौन।
मनौ गिरिधि समाधि सेवत सुरनि साधे पौन।
अचल आसन, पलक तारी, गुफा घूँघट-भौन।
गौरही सौं ध्यान धारे टेक टारै कौन।

अबहिं जाइ मनाइ लीजै अवसि कीजै गौन।
सूर के प्रभु जाइ देखी, बिरह बाधी जौन ॥९९८॥

स्यामा तू अति स्यामहिं भावै।
बैठत उठत चलत, गौ चारत, तेरी लीला गावै।
पीत बरन लखि पीत बसन उर पीत धातु अँग लावै।
चंद्राननि सुनि मोर चंद्रिका माथैं मुकुट बनावै।
अति अनुराग सैन संभ्रम मिलि संग परम सुख पावै।
बिछुरति तोहिं क्वासि राधिका कहि, कुंज-कुंज प्रति धावै।
तेरौ चित्र लिखै अरु निरखै बासर बिरह नसावै।
सूरदास रस-रासि रसिक सौं अंतर क्यौं करि आवै ॥९९९॥

जब-जब तेरी सुरति करत।
तब तब इकटकाइ दोउ लोचन, उमँगि भरत।
जैसैं मीन कमल-दल कौं अलि अधिक भरत।
पलक कपाट न होत, तबहिं तैं निकसि परत।
आँसु परत हरि-हरि उर, मुक्ता मनहु झरत।
सहज गिरा बोलत न बनत हित हेरि हरत।
राधा, नैन-चकोर बिना-मुख-चंद्र जरत।
सूर स्याम तव दरस बिना नहिं धीर धरत ॥१०००॥

राधे हरि तेरौ नाम बिचारैं।
तुम्हरेइ गुन ग्रंथित करि माला, रसना-कर सौं टारैं।
लोचन मूँदि ध्यान धरि, दृढ़ करि पलक न नैकु उघारैं।
अंग अंग प्रति रूप माधुरी, उर तैं नहीं बिसारैं।
ऐसौ नेम तुम्हारौ पिय कैं, कह जिय निठुर तिहारैं।
सूर स्याम मनकाम पुरावहु उठि चल कहे हमारैं ॥१००१॥

मानि न रुप कीजै री सुनि ग्वारि।
[illegible] तू सुनि, या हठ तैं मरि न परौ हारि।

एक समय मोतिनि के चोकैं हंस चुनत है ज्वार ।
कीजै कहा काम अपने कौं, जीति मानियै हारि ।
ही जु कहति ही मानि सखी री, तन कौ काम सँवारि ।
स्यामी कान्ह कुँवर के ऊपर, सरबस दीजै वारि ।
यह जोबन बरषा की नदि ज्यौं बोरति कूलहिं करारि ।
सूरदास प्रभु बेगि मिलहुगी, ये बीते दिन चारि ॥१०२॥

कहा तुम इतनैहिं कौ गरबानी ।
जोबन-रूप दिवस दसही कौ, ज्यौं अँजुरी कौ पानी ।
तन की अगिनि धूम की मंदिर ज्यौं तुषार-कन पानी ।
रिसही जरति पतंग ज्योति ज्यौं, जानति लाभ न हानी ।
करि कछु ज्ञानऽभिमान जान दै, है ऽब कौन मति ठानी ।
तन धन जानि जाम जुग छाया, भूलति कहा अयानी ।
नखसे नदी चलति मरजादा सूधियै सिंधु समानी ।
सूर इतर ऊसर के बरषै, थोरेहि जल इतरानी ॥१०३॥

रहि री मानिनि, मान न कीजै ।
यह जोबन अँजुरी कौ जल है, ज्यौं गुपाल माँगैं त्यौं दीजै ।
छिनु छिनु घटति बढ़ति नहिं रजनी ज्यौं ज्यौं कला चंद्र की छीजै
पूरब पुन्य सुकृत फल तेरौ क्यौं न रूप नैन भरि पीजै ।
सौंह करति तेरे पाइन की ऐसी जियनि दसौ दिन दीजै ।
सूर सु जीवन सुफल जगत कौ बैरी बाँधि बिबस करि लीजै १०४

राधा सखी देखि हरषानी ।
आतुर स्याम पठाई आली अंतरगत की जानी ।
वह सोभा निरखत अँग अँग की रही निहारि-निहारि ।
चकित देखि नागरि मुख बानी, तुरत सिंगारनि सारि ।
ताहि चली सुख दै चलि हरि पै मैं आवति हौ पाछैं ।
वैसेहिं फिरी सूर के प्रभु पै जहाँ कुंज गृह आछैं ॥१०५॥

हरषि स्याम तिय बाँह गही।

अपनैं कर मारो सँग सावत, यह इक साध रही ॥
सकुचति नारि बचन मुसुकानी, उतकौ चितै रही।
कोक कला परिपूरन दोऊ, त्रिभुवन और नहीं ॥
कुंज-भवन सँग मिलि दोउ बैठे, सोभा एक कही।
सूर स्याम स्यामा सिर बैनी अपनैं करनि गुही ॥१०६॥

खंजन नैन सुरँग रस माते।

अतिसय चारु बिमल चंचल ये पल पिंजरा न समाते ॥
बसे कहूँ सोइ बात सखी कहि रहे इहाँ किहिं नाते।
सोइ संज्ञा देखति औरासी बिकल उदास कला तैं।
चलि चलि जात निकट स्रवननि के सकि ताटंक फँदाते।
सूरदास अंजन गुन अटके, नतरु कबै उड़ि जाते ॥१०७॥

धन्य धन्य वृषभानु-कुमारी गिरिधरवर बस कीन्हे (री)।
जोइ जोइ साध करी पिय रस की सी सब उनकौं दीन्हे (री) ॥
तोसी तिया और त्रिभुवन मैं, पुरुष स्याम से नाहीं (री)।
कोक कला पूरन तुम दोऊ अब न कहूँ हरि जाहीं (री) ॥
ऐसे बस तुम भए परस्पर, मोसौं प्रेम दुराचै (री)।
सूर सखी आनँद न सम्हारति, नागरि कंठ लगावै (री) ॥१०८॥

अतिहिं अरुन हरि नैन तिहारे।

मानहुँ रति-रस भए रँगमगे, करत केलि पिय पलक न पारे।
मंद मंद डोलत संकित से सोभित मध्य मनोहर तारे।
मनहुँ कमल संपुट महँ बीधे, उड़ि न सकत चंचल अलि बारे।
झलमलात रति-रैनि जनावत अति रस-मत्त भ्रमत अनियारे।
मनहुँ सकल जुवती जीतन कौं काम-बान खरसान सँवारे ॥
अटपटात अलसात पलक-पट मूँदत कबहुँ करत उघारे।
मनहुँ मुदित मर्कतमनि-आँगन, खेलत खंजरीट चटकारे ॥

बार बार अवलोकि कनखियनि, कपट नेह मन हरत हमारे ।
सूर स्याम सुखदायक लोचन, दुखमोचन, रोचन रतनारे ॥ ९॥

हरषि स्याम तिय बाँह गही ।
चूक परी हमकी यह बकसी, आपन कौ कहि गए सही ॥
रिसनि चढ़ी मनहराइ, झटकि भुज छुवत कहा पिय सरम नहीं ।
मचल गई आतुर ह्वै नागरि, वे आई मुख सबै कही ॥
मेरैं महल आजु तें आवहु, भौंह मंद की कौटिक ही ।
सूर स्याम जय की जग जीवी, मिली नहीं वह काम वही ॥११०॥

स्याम धरयौ तिय मोहन रूप ।
दूती प्रिया संग इक कीन्हें, अंग त्रिभंग अनूप ॥
अंतद्धार आइ भए ठाढ़े सुनत तिया की बातें ।
सहस वचन जु कहति सखि आगैं, कहीं मिलीं किहि नातें ॥
कपटी, कुटिल, क्रूर कहि आवत यह सुनि सुनि मुसुकात ।
सूरदास प्रभु हैं बहुनायक, तुही कहति यह बात ॥१११॥

जो लौं माई हौं जीवन भर जीवौं ।
तौ लौं मदनगुपाल लाल कैं, पंथ न पानी पीवौं ॥
करौं न अंजन धरौं न मरकत मृगमद तनु न लगाऊँ ।
हस्त वलय, कटि ना पट मेचक, कंठ न पोत बनाऊँ ॥
सुनौं न स्रवननि अलि-पिक-बानी नैन न नव घन देखौं ।
नील कमल कर धरौं न कबहूँ, स्याम सरीखे लेखौं ॥
इतनी कहत आइ गए मोहन लिये प्रिय दूती संग ।
छूटि गई रिसि-टेक मान की निरखि रसिक के अंग ॥
ससि रवि छीन भई भामिनि सँग, तब पिय गहि कर लीन्ही ।
सूरदास-प्रभु रसिक सिरोमनि, मिलि जु सुधा-सुख दीन्हो ॥११२॥

पथोहिं स्याम देखी आइ ।
महा मान दृढ़ाइ बैठी, चितै काहैं जाइ ।

रिसहिं रिस भई मगन सुंदरि, स्याम अति अकुलात।
चकित ह्वै सखि रहे ठाढ़े कहि न आवै बात॥
देखि ब्याकुल नंद-नंदन, सखी करति बिचार।
सूर दोउ मिलैं जैसैं करौ सोइ उपचार॥२१३॥

राधे तेरे नैन किधौं मृगबारे।
रहत न सुरझत भौंह-जूएँ तें ममत तिलक-रथ हारे।
जदपि अलक अंजन गहि बाँधे तऊ चपल गति न्यारे।
घूँघट-पट बागुर ज्यौं बिहरत स्रवन फंद समि हारे।
मुढिका सुगज मारु मोती मनि मुक्तावलि गरहारे।
चोर हरन लिये दीपिका मानौ, किये जात उँजियारे।
मुरली-नाद सुनत चलु धीरज बिय बालत चुचकारे।
सूरदास-प्रभु रीझि रसिक पिय, उमँगि प्रान धनवारे॥२१४॥

राधे तेरे नैन किधौं बटपारे।
जिहिं देखैं बन के मृग मोहे, मानुष कौन बिचारे॥
खंजन है पिय को मन मोह्यौ खंजन मीन लजारे।
चितवत दृष्टि बान भरि मारत, घूमत ज्यौं मतवारे॥
गिरिधर रूप त्रियी सब बोध्यौ कहिए तिन्हें कहा रे।
सूरदास प्रभु दरसन कारन नाचत ज्यौं मतवारे॥२१५॥

यह रितु रूसिबे की नाहीं।
बरषत मेघ मेदिनी कैं हित, प्रीतम हरष मिलाहीं॥
जे जेती ग्रीषम रितु ढाहीं ते तरुवर लपटाहीं।
जे जल बिनु सरिता ते पूरन मिलन समुद्रहिं जाहीं॥
जोबन-धन है दिवस चारि कौ, ज्यौं बदरी की छाहीं।
मैं दंपति-रस-रीति कही है, समुझि चतुर मन माहीं॥
यह चित धरि री सखी राधिका, दै दूती कौं बाहीं।
सूरदास उठि चलि री प्यारी, मेरैं सँग पिय पाहीं॥२१६॥

बार बार अवलोकि कनखियनि, कपट नेह मन हरत हमारे।
सूर स्याम मुखदायक लोचन, दुखमोचन राधन रखवारे ॥ ६॥

हरषि स्याम तिय बाँह गही।
चूक परी हमकों यह बकसी, आवन कीं कहि गए सही॥
रिसनि उठी झहराइ, झटकि भुज छुवत कहा पिय सरस मही।
भवन गईं आतुर ह्वे नागरि, लै आईं भुख सबै कही॥
मेरैं महल आजु तैं आवहु, सौंह नंद की कोटिक ही।
सूर स्याम जब सौं जग जीवौं, मिलौं नहीं यह काम यही ॥११०॥

स्याम धरयौ तिय मोहन रूप।
दूती प्रिया संग इक लीन्हें, अंग त्रिभंग अनूप॥
बंवरद्वार आइ भए ठाढ़े सुनत तिया की बातैं।
सरस वचन जु कहति सखि आगैं, कहौं मिलौं किहि नातैं॥
कपटी, कुटिल, क्रूर कहि आवत यह सुनि सुनि मुसुकात।
सूरदास प्रभु हैं यदुनायक, दूती कहति यह बात ॥१११॥

कौ लौं माई हौं जीवन भर जीवौं।
तौ लौं मदनगुपाल लाल के पंथ न पानी पीवौं॥
करौं न अंजन, धरौं न मरकत, मृगमद तनु न लगाऊँ।
हस्त पलव, कटि ना पट मेचक, कंठ न पोत बनाऊँ॥
सुनौं न स्रवननि अलि-पिक-बानी, नैन न नव घन देखौं।
नील कमल कर धरौं न कबहूँ स्याम सरीरै लेखौं॥
इतनी कहत आइ गए मोहन लियें प्रिय दूती संग।
छूटि गइ रिसि-टेक मान की निरखि रसिक के अंग॥
अति रति लीन भईं भामिनि सँग, तब पिय गहि कर लीन्हौं।
सूरदास-प्रभु रसिक सिरोमनि, मिलि जु सुधा-सुख दीन्हौं ॥११२॥

राधेहिं स्याम देखी आइ।
महा मान दृढ़ाइ बैठी, चितै कापै जाइ।

रत्न खचित के सुभग तरयौना, मनहुँ जात रवि भोरैं हो।
दुलरी कंठ निरखि पिय इकटक दृग भए रहैं चकोरैं हो।
सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन कौं रीझि-रीझि तन तोरैं हो ॥६२१॥

बेरस कीजै नाहिं भामिनी रस मैं रिस की बात।
हौं पठई तोहिं लेन मोंपैं तोहिं बिनु कछु न सुहात॥
हा हा करि [illegible] पाइँ परति हौं, छिनु छिनु निसि घटि जात।
सूर स्याम तेरी मग जोवत, अति आतुर अकुलात ॥६२२॥

मानिनि, मानति क्यौं न कह्यौ।
प्रथम स्याम-मन चोरि नागरी, अब क्यौं मान गह्यौ॥
जानत कहा रीति प्रीतम की घन मन जोग लह्यौ।
रुद्र, बिरंचि, सेस, सनसानन्द, तिनहुँ न अंत लह्यौ॥
बैठे नवल कुंज मंदिर मैं, सो रस जात बह्यौ।
सूर सखी मोहन-मुख निरखहु, धीरज नाहिं रह्यौ ॥६२३॥

कुंज भवन मैं ठाढ़े देखी अँखियनि भरि तब मैं आऊँ चलि।
मो पै देखि न परै अकेले नैकु होइ ठाढ़ी तू ढिग चलि॥
तेरौ बदन प्रफुल्लित अंबुज हरि जू के नैना अति आतुर अलि।
सूर न्यारे नँद-नंद न कीजै हा हा तूरि कह्यौ मानैं सखि ॥६२४॥

समुझि री नाहिन नई सगाई।
सुनि राधिके, तोहिं माधौ सौं, प्रीति सदा चलि आई।
जब जब मान कियौ मोहन सौं बिकल हाथ अधिकाई।
बिरहानल सब लोक जरत हैं, आपु रहत सब साईं।
सिंधु मथ्यौ सागर-बल बाँध्यौ रिपु रन जीति मिलाई।
अब सो त्रिभुवन-नाथ नेह-बस, बन बाँसुरी बजाई।
प्रकृति पुरुष श्रीपति सीतापति अनुक्रम कथा सुनाई।
सूर इती रस रीति स्याम सौं, तैं ब्रज बसि बिसराई ॥६२५॥

तोहि बिन रूठन सिखई प्यारी।
नवल रँगीस नव नागरि स्यामा, पै नागर गिरिधारी॥
सिगरी रैन मनावत बीती हा हा करि हौं हारी।
एते पर हठ छाँड़ति नाहीं तू वृषभानु-कुमारी॥
मदन-समय-ससि-बरस समर-सर, लागे तन तन भारी।
मेटहु त्रास दिखाइ बदन बिधु, सूर स्याम हितकारी॥११७॥

हरि मुख राधा-राधा बानी।
धरनी परे अचेत नहीं सुधि सखी देखि अकुलानी॥
बासर गयौ रैनि इक बीती बिनु भोजन बिनु पानी।
बाहैं पकरि तब सखिनि जगायौ, धनि-धनि सारँगपानी॥
हौं तुम बिबस भए हौ ऐसे, हौं तौ वै बिबसानी।
सूर बने दोउ नारि पुरुष तुम, दुहुँ की अकथ कहानी॥११८॥

सुनि री सयानी तिय हँसिबे की नेम लियौ पावस दिननि कोऊ ऐसी है करत री।
दिसि दिसि घटा उठी, मिलि री पिया सौं रूठी निठुर हियौ है तेरौ नैकु न डरत री।
चलिए री मेरी प्यारी, तोकौं लाल देनहारी, आन्हूँ वे प्यारो पवि धीर न धरत री।
सूरदास प्रभु तोहिं हियौ चाहे हित-चित, हँसि क्यौं न मिलै तेरौ नेम है डरत री॥११९॥

माधौ तहाँ बुलाई राधे, जमुना निकट सुसीतल छहियाँ।
चाही मीठी कुसुँभी सारी गौरैं तन अलि हरि पिय पहियाँ॥
दूती एक गई मोहिनि पै जाइ कह्यौ यह प्यारी कहियाँ।
सूरदास सुनि चतुर राधिका स्याम रैनि बृंदावन महियाँ॥१२०॥

भूँमक सारी तन गोरैं हो।
जगमग रह्यौ जराइ कौ टीकौ छबि की उठति झकोरैं हो॥

रत्न जटित के सुभग तरयौना, मनहुँ आत रवि भोरैं हो।
दुलरी कंठ निरखि पिय इकटक, दृग भए रहैं चकोरैं हो।
सूरदास प्रभु तुम्हार मिलन कौं, रीझि-रीझि तन तोरैं हो ।।९२१।।

बेरस कीजै नाहिं भामिनी, रस मैं रिस की बात।
हौं पठई तोहि लेन साँवरैं तोहिं बिनु कछु न सुहात।।
हा हा करि तेरे पाइँ परति हौं छिनु छिनु निसि घटि जात।
सूर स्याम तेरौ मग जोवत, अति आतुर अकुलात ।।९२२।।

मानिनि मानति क्यौं न कह्यौ।
प्रथम स्याम-मन चोरि नागरी अब क्यौं मान गह्यौ।।
जानत कहा रीति प्रीतम की जल-थल जोग मह्यौ।
रुद्र, बिरंचि सेस, सहसानन तिनहुँ न भेद लह्यौ।।
बैठे नवल कुंज मंदिर मैं, सो रस जात बह्यौ।
सूर सखी मोहन-मुख निरखहु धीरज नाहिं रह्यौ ।।९२३ ।।

कुंज भवन मैं ठाढ़े देखौ अँखियनि भरि तब मैं आऊँ चलि।
मो पै देखि न परै अकेले नैंकु होइ ठाढ़ी तू ढिग चलि।।
तेरौ बदन मधुरस्मित अंबुज हरि जू के नैना अति आतुर अलि।
सूर प्यारे नँद-नंद न कीजै हा हा दूरि करौ मानैं मलि ।।९२४।।

समुझि री नाहिंन नई सगाइ।
सुनि राधिके, तोहिं माधौ सौं प्रीति सदा चलि आई।
जब जब मान कियौ मोहन सौं बिछुरत होत अधिकाई।
बिरहानल सब लोक जरत हैं, आपु रहत जल साई।
सिंधु मथ्यौ सागर-जल बाँध्यौ रिपु रन जीति मिलाई।
अब सो त्रिभुवन-नाथ नेह-बस, बन बाँसुरी बजाई।
प्रकृति पुरुष श्रीपति सीतापति, अनुक्रम कथा सुनाइ।
सूर इती रस रीति स्याम सौं, तैं ब्रज बसि बिसराई ।।९२५।

राधिका बस्य करि स्याम पाए।
बिरह गयो दूरि, प्रिय हरष हरि कै भयौ, सहस मुख निगम जिहिं नेति गायौ ॥
मान तजि मानिनी, नैन कौ भ्रम हर्‌यौ करत तनु कंठ सौं त्रास भारी।
कोक-बिद्या निपुन, स्याम स्यामा बिपुल कुंज गृह द्वार ठाढ़ मुरारी ॥
भक्त-हित-हेत अवतारि लीला करत, रहत प्रभु जहाँ निजु ध्यान जाकैं।
प्रगट प्रभु-सूर ब्रजनारि कैं हित बँधे हेत मन-काम-क्रम संग ताकैं ॥२२६॥

झूलत स्याम स्यामा संग।
निरखि दंपति-अंग-सोभा, लजत कोटि अनंग।
मंद त्रिबिध समीर सीतल अंग अंग सुगंध।
मचत उड़त सुबास सँग मन रहे मधुकर बंध ॥
तैसियै जमुना सुभग जहँ रच्यौ रंग हिंडोल।
तैसिय ब्रज-बधू बनि, हरि चितै लोचन-कोर ॥
तैसीई वृंदा बिपिन घन कुंज द्वार-बिहार।
बिपुल गोपी, बिपुल बन गृह, रवन नंदकुमार ॥
नित्य लीला नित्य आनँद, नित्य मंगलगान।
सूर सुर मुनि मुखनि अस्तुति ध्यान गोपी-मान्ह ॥२२७॥

नित्य धाम वृंदावन स्याम। नित्य रूप राधा ब्रज धाम ॥
नित्य रास जल नित्य बिहार। नित्य मान, खंडिताऽभिसार ॥
ब्रह्म-रूप येई करतार। करन हरन त्रिभुवन येई सार ॥
नित्य कुंज-सुख नित्य हिंडोर। नित्यहिं त्रिबिध-समीर झकोर ॥
सदा बसंत रहत जहँ बास। सदा हर्ष, जहँ नहीं उदास ॥

कोकिल कीर सदा वहँ रोर। सदा रूप मन्मथ चित चोर ॥
बिबिध सुमन बन फूली डार। उन्मत मधुकर भ्रमत अपार ॥
नव पल्लव बन सोभा एक। बिहरत हरि सँग सखी अनेक ॥
कुहू कुहू कोकिला सुनाई। सुनि सुनि नारि परम हरषाई ॥
बार बार सो हरिहिं सुनावहिं। रितु बसंत आयौ समुझावहिं ॥
फागु चरित-रस साध हमारैं। खेलहिं सब मिलि संग तुम्हारैं ॥
सुनि सुनि सूर स्याम मुसुकाने। रितु बसंत आयौ हरषाने ॥१२८

कोकिल बोली, बन बन फूले, मधुप गुँजारन लागे।
सुनि भयौ भोर रोर बंदिनि को मदन-महीपति जागे ॥
तै दूने अंकुर द्रुम पल्लव वै पहिले दव लागे।
मानहुँ रति-पति रीझि जाचकनि बरन-बरन दए बागे ॥
नई प्रीति, नई लता, पुहुप नए नवल नए रस पागे।
नव नेह नव नागरि हरषित, सूर सुरँग अनुरागे ॥१२६॥

सुंदर बर सँग ललना बिहरति बसँत सरस रितु आई।
लै लै छरी कुमारि राधिका कमलनैन पर धाई ॥
सरिता सीतल बहत मंद गति रवि उत्तर दिसि आयौ।
अति रस-भरी कोकिला बोली बिरहिनि-बिरह जगायौ।
ढाकस बन रतनारे देखियत चहुँ दिसि टेसू फूले।
मौरे अँबुआ अरु द्रुम-बेली मधुकर परिमल-भूले ॥
इत श्रीराधा, उत श्रीगिरिधर, इत गोपी उत ग्वाल।
खेलत फागु रसिक ब्रज-बनिता, सुंदर स्याम तमाल ॥
चोवा चंदन अबिर कुमकुमा छिरकत भरि पिचकारी।
उड़त गुलाल अबीर, जौति रवि छिपि दीपक उँजियारी ॥
ताल मृदंग बीन बाँसुरि डफ, गावत गीत सुहाए।
रसिक गुपाल नवल ब्रज-बनिता निकसि चौहटैं आए ॥
झूम झूम झूमक सब गावहिं बोलहिं मधुरी बानी।

राधिका वस्य करि स्याम पाए।
बिरह गयौ दूरि, सिय हरष हरि कै भयौ, सहस मुख निगम जिहिं नेति गायौ ॥
मान तजि मानिनी, मैन कौ बल हर्यौ, करत तनु कंठ जौ त्रास भारी।
कोक-विद्या निपुन, स्याम स्यामा निपुन कुंज गृह द्वार ठाढ़े मुरारी ॥
भक्त-हित-हेत अवतारि लीला करत, रहत प्रभु तहाँ निजु ध्यान जाकैं।
प्रगट प्रभु-सूर ब्रजनारि कैं हित बँधे देत मन-काम-फल संग ताकैं ॥५२६॥

झूलत स्याम स्यामा संग।
निरखि दंपति-अंग-सोभा, लजत कोटि अनंग।
मंद त्रिविध समीर सीतल, अंग अंग सुगंध।
मचत उड़त सुबास सँग मन रहे मधुकर बंध ॥
तैसियै जमुना सुभग जहँ रच्यौ रंग हिंडोल।
तैसिय ब्रज-बधू बनि, हरि चितै लोचन-कोर ॥
तैसोई बृंदा बिपिन घन कुंज द्वार-बिहार।
बिपुल गोपी, बिपुल बन गृह, रवन नंदकुमार ॥
नित्य लीला, नित्य आनँद, नित्य मंगलगान।
सूर सुर-मुनि मुखनि अस्तुति ध्यान गोपी-कान्ह ॥५२७॥

नित्य धाम बृंदावन स्याम। नित्य रूप राधा ब्रज बाम ॥
नित्य रास, जल नित्य बिहार। नित्य मान, खंडिताऽभिसार ॥
ब्रह्म-रूप येई करतार। करन हरन त्रिभुवन येई सार ॥
नित्य कुंज-सुख नित्य हिंडोर। नित्यहिं त्रिविध-समीर झकोर ॥
सदा बसंत रहत जहँ बास। सदा हर्ष जहँ नहीं उदास ॥

हरि-सँग खेलति हैं सब फाग।
इहिं मिस करति प्रगट गोपी, उर-अंतर को अनुराग ॥
सारी पहिरि सुरँग कसि कंचुकि, काजर दै-दै नैन।
बनि-बनि निकसि निकसि भईं ठाढ़ी, सुनि माधौ के बैन ॥
डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुअरि बाजत ताल-मृदंग ॥
अति आनंद मनोहर बानी, गावत उठति तरंग ॥
एक कोध गोबिंद ग्वाल सब, एक कोध ब्रज-नारि।
छाँड़ि सकुच सब देतिं परस्पर, अपनी भाई गारि ॥
मिलि दस-पाँच अली चलि कृष्नहिं गहि लावतिं अचकाइ।
भरि अरगजा अबीर कनक-घट, देतिं सीस तैं नाइ ॥
छिरकतिं सखी कुमकुमा केसरि, भुरकतिं बंदन-धूरि।
सोभित है तनु, साँझ-समै घन आए हैं मनु पूरि ॥
दसहूँ दिसा भयौ परिपूरन, सूर सुरँग प्रमोद।
सुर बिमान कौतूहल भूले निरखत स्याम-बिनोद ॥१२४॥

हरि सँग खेलन फागु चली।
चोवा चंदन अगर अरगजा छिरकतिं नगर गली ॥
राती पीरी अँगिया पहिरे, नव तन झूमक सारी।
मुख तमोर, नैननि भरि काजर, देहिं माधौ गारी ॥
रितु बसंत आगम रति नायक जोबन भार भरी ॥
देखन रूप मदनमोहन कौ नंद दुवार खरी ॥
कहि न जाइ गोकुल की महिमा घर-घर बीथिन माँही।
सूरदास सो क्यौं करि बरनैं, जो सुख तिहुँ पुर नाहीं ॥१२५॥

खेलत स्याम ग्वालिनि संग।
एक गावत एक नाचत इक करत बहु रंग ॥
बीन मुरज उपंग मुरली झाँझ, झालरि, ताल।
पढ़त होरी बोलि गारी, निरखि कै ब्रज-बाल ॥

देति परस्पर गारि मुदित मन, तरुनी बाल-सयानी ।
सुर-पुर, नर पुर, नाग-लोक जल-थल क्रीड़ा सुख पावै ।
प्रथम बसंत पंचमी लीला, सूरदास जस गावै ॥१३०॥

पिय प्यारी खेलैं जमुन-तीर । भरि केसरि कुमकुम अरु अबीर ।
असि मृगमद चंदन अरु गुलाल । रँग भीने अरगजा बसन माल ॥
कूजत कोकिल कल हंस मोर । ललितादिक स्यामा एक ओर ॥
इक दादिक मोहन लई ओर । बाजे बाजत मृदंग रबाब घोर ॥
प्रभु हँसि कै गेंदुक दई चलाइ । मुख पट दै राधा गई बचाइ ॥
ललिता पट-मोहन गह्यौ धाइ । पीतांबर मुरली लई छिनाइ ॥
ही सपथ करौ छाँड़ौं न तोहिं । स्यामा जू आज्ञा दई मोहिं ॥
इक निज सहचरी आई बसीठि । सुनि री ललिता तू भई ढीठि ।
पट छाँड़ि दियौ तब नवकिसोर । छबि रीझि सूर तृन दियौ तोर ।

खेलत नवल किसोर-किसोरी ।
नंद नंदन वृषभानु सुता मिलि खेलत परस्पर होरी ॥
भीरी सखी-जाल बन सोभित सकल ललित तन गोरी ।
तिनकी नख-सोभा देखत ही, बरनि न जात मति मोरी ॥
एक गुलाल अबीर लिये कर इक चंदन, इक रोरी ।
उपरा उपरि छिरकि रस-भरि कुम की परिभिति फोरी ॥
देति असीस सकल ब्रज-जुवती जुग-जुग अबिचल जोरी ।
सूरदास उपमा नहिं सूझत जो कछु कहीं सु थोरी ॥१३१॥

तेरैं आवैगी आजु सखी, हरि, खेलन को फागु री ।
सगुन सँदेसो हौं सुन्यौ तेरैं आँगन बोलै काग री ॥
मदनमोहन तेरैं बस माई, सुनि राधे बड़भाग री ।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, का सोवै, उठि जाग री ॥
चोवा चंदन लै कुमकुम अरु केसरि पैयाँ लाग री ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौ राधा अचल सुहाग री ॥१३२॥

हरि-सँग खेलति हैं सब फाग।
इहिं मिस करति प्रगट गोपी, उर-अंतर कौ अनुराग॥
सारी पहिरि सुरँग कसि कंचुकि काजर दै-दै नैन।
बनि-बनि निकसि निकसि भईं ठाढ़ी, सुनि माधौ के बैन॥
डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुअरि बाजत ताल-मृदंग॥
अति आनंद मनोहर बानी, गावत उठति तरंग॥
एक कोध गोबिंद ग्वाल सब एक कोध ब्रज-नारि।
छाँड़ि सकुच सब देतिं परस्पर अपनी भाई गारि॥
मिलि दस-पाँच अली चलि कृष्नहिं गहि लावतिं अचकाइ।
भरि अरगजा अबीर कनक-घट देतिं सीस तैं नाइ॥
छिरकतिं सखी कुमकुमा केसरि, भुरकतिं बंदन-धूरि।
सोभित हैं तनु साँझ-समै घन आए हैं मनु पूरि॥
दसहूँ दिसा भयौ परिपूरन सूर सुरंग प्रमोद।
सुर बिमान कौतूहल भूले निरखत स्याम-बिनोद॥६२४॥

हरि सँग खेलन फागु चलीं।
चोवा चंदन अगर अरगजा, छिरकतिं नगर गलीं॥
राती पीरी अँगिया पहिरे नव तन झूमक सारी।
मुख तमोर, नैननि भरि काजर, देहिं भावती गारी॥
रितु बसंत आगम रति नायक, जोबन भार भरीं॥
देखन रूप मदनमोहन कौ नंद दुवार खरीं॥
कहि न जाइ गोकुल की महिमा घर-घर बीथिन माँहीं।
सूरदास सो क्यौं करि बरनैं, जो सुख तिहूँ पुर नाहीं॥६२५॥

खेलत स्याम ग्वालिनि संग।
एक गावत एक नाचत, इक करत बहु रंग॥
बीन मुरज उपंग मुरली झाँझ, झालरि, ताल।
पढ़त होरी बोलि गारी, निरखि कै ब्रज-बाल॥

कनक-कलसनि घोरि केसरि, कर लिये ब्रजनारि।
जबहिं आवत देखि तरुनी, भजत दै किलकारि॥
दुरि रही इक ओरि ललिता, उततैं आवत स्याम।
भरे भरि अँकवारि औचक, धाइ आईं बाम॥
बहुत दीठी दै रहे हौ, जानती अब आजु।
राधिका दुरि हँसति ठाढ़ी निरखि पिय मुख लाज॥
लियौ छीनि मुरलि कर तैं, ओढ़ि गही पट पीत।
सीस बेनी गूँथि लोचन आँजि करी अनीत॥
गए कर तैं छुटकि मोहन, नारि सब पछितानि।
सीस धुनि कर मीड़ि बोलति, सखी लै गए माँति॥
दाउँ हम नहिं लैन पायौ, बसन लेती लाल।
सूर प्रभु क्यौं जाहुगे अब हम परीं इहिं ख्याल॥१२६॥

मोहन गए आजु तुम जाहु दाँव हम लेहिंगी हो।
माखन हमहिं करे बेहाल, बदे फल देहिंगी हो॥
आजुहिं दाँव आपनी लेती भले गए ही भागि।
हा हा करत पाइनि परत, लेहु पितंबर माँगि॥
बेनी छोरत हँसत सखा सँग, कहत लेहु पट आइ।
सौंह करत ही नंद बबा की अपनी अपथि कराइ॥
जौ मैं लेहुँ पितांबर अबहीं, कहा देहुगे मोहिं।
इत उत जुवती चितवन लागीं, रहीं परस्पर जोहि॥
एक सखा हरि तिया-रूप करि, पठै दियौ तिन पास।
गयौ तहाँ मिलि संग तियनि कैं, हँसत देखि पट-बास॥
मोहिं देहु, राखौं दुराइ कै, स्यामहिं जनि लै देहु।
लियौ दुराइ गोद मैं राख्यौ दाँव आपनी लेहु॥
पितांबर जनि देहु स्याम कौं यह कहि चमक्यौ ग्वाल।
सूर स्याम पट फेरत कर सौं चकित निरखि ब्रज-बाल॥१२७

नंद-नँदन वृषभानु-किसोरी मोहन राधा खेलत होरी।
भीरू शामन करितिहि रुगागर, धरन बरन नव दंपति भीरी॥
एकनि कर है अगरु कुमकुमा, एकनि कर केसरि लै घोरी।
एक अर्थ सौ भाव दिखावति नाचति तरुनि-बाल-वृथ-भोरी॥
स्यामा उतहिं सकल ब्रज-बनिता इतहिं स्याम रस रूप लसी री।
कंचन की पिचकारी छूटति, छिरकत ज्यौं सचु पावें गोरी॥
कहतिहिं ग्वाल दधि-गोरस मारे गारी देत कही न करौ री।
करत दुहाई नंदराइ की लै जु गयौ ब्रज सकल झकोरी॥
सुंदरि बोरि रही चंद्रावलि गोकुल मैं कछु खेल मच्यो री।
सूरदास-प्रभु फगुआ दीजे चिरजीवौ राधा वर जोरी॥६३८॥

रूप चाँचन लागी हेली।
चलहु चलहु जैये तहँ री, जहँ खेलत स्याम-सहेली॥
जहँ घन सुंदर साँवरो नहिं मिलि देखन-दाउँ।
ये गुरुजन बैरी भए कीजै कौन उपाउ॥
आवहु बकरा मेलिये बन कौं देहि बिडारि।
वै ईहिं हमकौं पठे देखैं रूप निहारि॥
औंचत गागरि डारिवै जमुना जल कै काम।
इहिं मिस बाहिर निकरि कै, आइ मिलैं ब्रजराज॥
राग रंग रँगि मँगि रहौ नंदराइ दरबार।
गावहिं मधुर गुवारिनी, नाचत सरस गुवार॥
घरी घरी आनंद करि जीवन जानि असार।
लाइ टोसि हँसि खीजिये फाग बड़ौ त्यौहार॥
मुरली मुकुट विराजहीं, कटि पट राजत पीत।
सूरज प्रभु आनंद सौं गावत होरी गीत॥६३९॥

गोकुलनाथ बिराजत डोल।
संग लिये वृषभानु-नंदिनी पहिरे नील निचोल॥

कंचन खचित लाल मनि मोती, हीरा जटित अमोल।
झुलवहिं जूथ मिलै ब्रज-सुंदरि, हरषित करति कलोल।।
डोलति, हँसति परस्पर गावति, बोलति मीठे बोल।
सूरदास-स्वामी पिय-प्यारी, झूलत हैं झकझोल ।।१४०।।

झूलत नँदनंदन डोल।
कनक-खंभ जराइ पटुली लगे रतन अमोल।।
सुभग सरस सुदेस बाँधी रची बिधना गोल।
मनौ सुरपति सुर-सभा तैं, पठै दियौ हिंडोल।।
जबहिं झोंटा देति दंपति, बिहँसि लगति कपोल।
त्रिदस-पति सचि चढ़ि बिमाननि निरखि दै दै ओल।।
थके मुख कछु कहि न आवै, सकल मथ-कृत कोल।
सखी स्यामा साथ लीन्हें, कहति मधुरे बोल।।
मन्यौ रतिपति देखि यह छवि, भयौ बहु भ्रम मोल।
सूर यह सुख गोप गोपी, पियत अमृत कलोल ।।१४१।।

—(●)—

(ख) मुरली-माधुरी

जब हरि मुरली अधर धरत।
थिर चर, चर थिर, पवन थकित रहैं, जमुना-जल न बहत।
खग मोहैं, मृग-जूथ भुलाहीं, निरखि मदन-छबि छरत।
पसु मोहैं, सुरभी बिथकित, तृन दंतनि टेकि रहत।
सुक सनकादि सकल मुनि मोहैं, ध्यान न तनक गहत।
सूरदास भाग हैं तिनके, जे या सुखहिं लहत ॥१५२॥

(सखी कहत) जोगनि की सुधि बिसरि गई।
स्याम-अधर मृदु सुनत मुरलिका चकित, नारि भई।
जो जैसैं सो तैसैं रहि गई सुख दुख कह्यौ न जाइ।
लिखी चित्र सी सूर ह्वै रहीं इकटक पल बिसराइ ॥१५३

बंसी री बन कान्ह बजावत।
आनि सुनौ स्रवननि मधुरे सुर, राग मध्य लै नाम बुलावत।
सुर श्रुति तान बँधान अमित अति, सप्त अतीत अनागत आवत।
जुरि जुग भुज सिर, सेष सीस मथि श्रवन-पयोधि, अमृत उपजावत
मनौ मोहिनी भेष धारि कै, मन मोहत मधु पान करावत।
सुर-नर-मुनि बस किए राग-रस अधर-सुधा-रस मदन जगावत।
महा मनोहर नाद, सूर थिर चर मोहे, कोउ मरम न पावत।
मानहुँ मूक मिठाई कै गुन कहि न सकत मुख, सीस डुलावत ॥

बाँसुरी बजाइ आछे रंग सौं मुरारी।
सुनि कै धुनि छूटि गई, संकर की तारी।
बेद पढ़न भूलि गए, ब्रह्मा ब्रह्मचारी।
रसना गुन कहि न सकै, ऐसी सुधि बिसारी।
इंद्र-सभा थकित भई लगी जब करारी।
रंभा कौ मान मिट्यौ भूली नृतकारी।
जमुना जू थकित भई नहीं सुधि सँभारी।
सूरदास मुरली है तीन-लोक प्यारी ॥६४५॥

बंसी बनराज आजु आई रन जीति।
मेटति है अपने बल, सबहिनि की रीति।
बिडरे गज-जूथ-सील, सैन-लाज भाजी।
घूँघट-पट-कोट टूटे, छूटे दृग ताजी॥
काहूँ पति-गेह तजे, काहू तन प्रान।
काहूँ सुख सरन लयौ, सुनत सुजस गान॥
कोऊ पग परसि गए, अपने-अपने देस।
कोऊ रस रंक भए, हुते जे नरेस।
देत मदन मारुत मिलि दसौं दिसि दुहाई।
सूर श्रीगुपाल लाल बंसी-बस माई ॥६४६॥

जब तैं बंसी स्रवन परी।
तबही तैं मन और भयौ सखि, मो तन-सुधि बिसरी।
हौं अपनैं अभिमान रूप, जोबन कैं गर्ब भरी।
नैंकु न कह्यौ कियौ सुनि सजनी, बादिहिं आइ डरी।
बिनु देखैं अब स्याम मनोहर, जुग भरि जात घरी।
सूरदास सुनि आरज-पथ तैं कछू न चाड़ सरी ॥६४७॥

मुरली धुनि स्रवन सुनत, भवन रहि न परै।
ऐसी को चतुर नारि, धीरज मन धरै।

सुर-नर-मुनि सुनत सुधि न सिव-समाधि टरै।
अपनी गति तजत पवन, सरिता नहिं ढरै।
मोहन-मुख मुरली मन मोहिनि बस करै।
सूरदास सुनत स्रवन सुधा-सिंधु भरै ॥१४८॥

(माई री) मुरली अति गर्व काहूँ बदति नाहिं आजु।
हरि के मुख कमल-देस पायौ सुख-राजु।
बैठति कर पीठि ढीठि, अधर-छत्र-छाँहि।
राजति अति चँवर चिकुर, सुरद सभा माँहि।
जमुना कौ जलहिं माहिं जलधि आन देति।
सुरपुर त सुर बिमान यहं बुलाइ लेति।
स्थावर चर, जंगम जड़, करति जीति जीति।
बिधि की बिधि मेटि, करति अपनी नई रीति।
बंसी बस सकल सूर, सुर-नर-मुनि-नाग।
श्रीपति हूँ श्री बिसारी, याही अनुराग ॥१४९॥

मुरली मोहे कुँवर कन्हाई।
अचवति अधर-सुधा बस कीन्हे अब हम कहा करैं री माई।
मरवस लै हरि बरयौ सबनि कौ अवसर देति न होति बधाई।
गावति, बाजति चढ़ी दुहुँ कर अपने सब्द न सुनत पराइ।
जिहिं तन अमत रह्यौ अपनी मुख तासौं कैसै होत समाई।
अब सुनि सूर कौन बिधि कीजै बन की व्याधि माँझ घर आई ॥

मुरली तऊ गुपालहिं भावति।
सुनि री सखी जदपि नंदलालहिं, नाना भाँति नचावति।
राखति एक पाइ ठाढ़ौ करि, अति अधिकार जनावति।
कोमल तन आज्ञा करवावति, कटि टेढ़ी ह्वै आवति।
अति आधीन सुजान कनौड़े गिरिधर-नार नवावति।
आपुन पौढ़ि अधर-सज्या पर, कर पल्लव पलुटावति।

भृकुटी कुटिल नैन नासा-पुट हम पर कोप करावति।
सूर प्रसन्न जानि एकौ छिन, धर तैं सीस डुलावति ॥१२१॥

सखी री, मुरली लीजै चोरि।
जिनि गुपाल कीन्हे अपनैं बस प्रीति सबनि की तोरि।
छिन इक घर-भीतर, निसि-बासर, धरत न कबहूँ छोरि।
कबहूँ कर, कबहूँ अधरनि कटि कबहूँ खोंसत जोरि।
ना जानौं कछु मेलि मोहिनी, राखे अँग-अँग भोरि।
सूरदास प्रभु कौ मन सजनी, बँध्यौ राग की डोरि ॥१२२॥

मुरली कौन सुकृत फल पाए।
अधर-सुधा पीवति मोहन कौ सर्व कलंक गँवाए।
मन कठोर तन गाँठि प्रगट ही छिद्र बिसाल बनाए।
अंतर सून्य सदा, देखियति है निज कुल-धर्म सुभाए।
लघुता अंग नहीं कछु करनी, निरखत नैन लगाए।
सूरदास प्रभु पानि परसि नित, काम-केलि अधिकाए ॥१२३॥

जीती जीती है रन बंसी।
मधुकर सूत बदत बंदी पिक मागध मदन प्रसंसी।
मथ्यौ मान-बल-दर्प महीपति, जुवति-जूथ गहि आने।
ध्वनि-कोदंड ब्रह्मंड भेद करि, सुर-सन्मुख सर ताने।
ब्रह्मादिक, सिव, सनक-सनंदन बोलत जै-जै-बाने।
राधा-पति सर्बस अपनौ दै पुनि ता हाथ बिकाने।
खग-मृग-मीन सुमार किये सब जड़ जंगम जित जेय।
छाजन छुट मद मोद कवच कटि छूटे नैन निमेष।
अपनी अपनिहिं ठकुराइति की धारति हैं भुव रेष।
पैठी पानि पीठि गर्जनि है, देति सबनि अवसेष।
रवि कौ रथ लै दियौ सोम कौ, षट-दस कला समेत।
रच्यौ रूप रस-रास राजसू, वृंदा बिपिन-निकेत ॥

दान-मान परधान प्रेम-रस बढ़वी माधुरी देत।
अधिकारी गोपाल यहाँ हैं, सूर सबनि सुख देत ॥१५४॥

रीझत ग्वाल रिझावत स्याम।
मुरलि बजावत, सखनि बुलावत, सुबल सुदामा लै-लै नाम ॥
हँसत सखा सब तारी दै-दै, नाम हमारी मुरली लेत।
स्याम कहत अब तुमहूँ बुलावहु अपने करतैं ग्वालनि देत ॥
मुरली लै-लै सबै बजावत, काहू पै नहिं आवै रूप।
सूर स्याम तुम्हारे मुख बाजत कैसैं ऐसौ राग अनूप ॥१५५॥

अधर-रस मुरली लूटन लागी।
जा रस कौं षट रितु तप कीन्हौ, सो रस पियति सभागी ॥
कहाँ रही, कहँ तैं यह आई, कौनैं याहि बुलाई।
चकित भई कहति ब्रजबासिनि, यह तौ भली न आई ॥
सावधान क्यौं होति नहीं तुम, उपजी बुरी बलाइ।
सूरदास-प्रभु हम पर ताकौं, कीन्हौ सौति बजाइ ॥१५६॥

मुरली स्याम अधर नहिं टारत।
बारंबार बजावत, गावत, कर तैं नहीं बिसारत ॥
यह तौ अति प्यारी है हरि की कहति परस्पर नारी।
याकैं बस्य रहत हैं [ऐसे, गिरि-गोवर्धन-धारी।
अटकि रहत मुरली पर ठाढ़, राख्यौ ग्रीव नवाइ।
सूर स्याम बस याकैं डोलत पलक नहीं बिसराइ ॥१५७॥

मुरली कैं बस स्याम भए री।
अधरनि तैं नहिं करत निनारी याकैं रँग रए री ॥
रहत सदा तन-सुधि बिसराए, कहा करन धौं चाहति ॥
ऐसी सुनी न भई आजु लौं बास बँसुरिया दाहति ॥
स्यामहिं निदरि, निदरि हमहूँ कौं, अबहीं तैं यह रूप।
सुनहु सूर हरि कौ मुहँ पाएँ, बोलति बचन अनूप ॥१५८॥

मुरली स्याम कहाँ तें पाई ।
करत नहीं अधरनि तें न्यारी, कहा ठगौरी लाई ॥
ऐसी ढीठि मिलतहीं ह्वै गई, उनके मनहीं भाई ।
हम देखत यह पियत सुधा-रस, ऐसी री अधिकाई ।
कहा भयौ मुँह लागी हरि कैं, बचननि लिये रिझाई ।
सूर स्याम कौं विवस करावति कहा सौति सो आई ॥६५९॥

स्याम मुरली के रँग ढरे ।
कर-पल्लव तार्की बैठावत, आपुन रहत खरे ॥
बारंबार अधर-रस प्यावत अपआवत अनुराग ।
ये बस करत देव-मुनि-गंधर्व ते करि मानत भाग ।
बन में रहति परी को जानै, कब आनी धौं लाइ ।
सूरज प्रभु की बड़ी सुहागिनि, अपनी सौति सजाइ ॥६६०॥

मुरली भई सौति बजाइ
कहूँ बन मैं रहति जारी ताहि यह सुधराइ ॥
बचन हौ हरि रिझै लीन्हे, अधर पूरत नाद ।
दिनहिं दिन अधिकानि लागी, अब करैगी बाद ॥
सुनहुँ री इहिं दूरि कीजै, यहै करौ विचार ।
अबहि तें करनी करी यह, बहुरि कहा लगार ।
ढंग याके भले नाहीं, बहुत गई डराइ ।
सूर स्याम सुजान रीझे, देव-गति बिसराइ ॥६६१॥

मुरली दूरि कराएँ बनिहै ।
अबही तें ऐसे ढंग याके बहुरि काहि यह गनिहै ।
लागी यह कर पल्लव बैठन छिन-छिन नाहिन जाति ।
अपही तें सुख सजग होहु री, मैं जु कहति अकुलाति ।
यह बन में नहिं भली बात है, ऐसी हृदय बिचारि ।
सूर स्याम याही के ह्वै गए सब ब्रजनारि ॥

जबहीं तैं हम सबनि बिसारी।
ऐसे बस्य भए हरि याके जाति न दसा बिचारी॥
कबहूँ कर-पल्लव पर राखत, कबहूँ अधर लै धारी।
कबहूँ लगाइ लेत हिरदै सौं, नैंकहुँ करत न न्यारी॥
मुरली स्याम किए बस अपनें, जे कहियत गिरिधारी।
सूरदास प्रभु कैं तन-मन-धन, बाँस बँसुरिया प्यारी॥१६३॥

मुरली हरि कौं भावै री।
सदा रहति मुखही सौं लागी, नाना रंग बजावै री॥
छहौं राग छत्तीसौ रागिनि, इक इक नीकैं गावै री।
जैसेहिं मन रीझत है हरि कौ, तैसिहिं भाँति रिझावै री।
अधरनि कौ अमृत पुनि अँचवति, हरि कै मनहिं चुरावै री।
गिरिधर कौं अपनैं बस कीन्हौ नाना नाच नचावै री॥
उनकौ मन अपनौ करि लीन्हौ भरि-भरि पवन सुनावै री।
सूरज प्रभु ढिग तैं कहि जाकौ, ऐसी कौन टरावै री॥१६४॥

मुरली हम कहँ सौति भई।
नैंकु न होति अधर तैं न्यारी जैसें बपा दई॥
छई अँचवति, भई ढारति लै-लै जल-थल-बननि भई।
जा रस कौ ब्रत करि [illegible] गान्यौ कीन्हौ दई-दई॥
पुनि-पुनि लेति सकुच नहिं मानति ऐसी भई ढई।
कहा धरे बद बाँस साँस की, आस निरास गई॥
ऐसी कहूँ गाई नहिं देखी, जैसी भई नई।
सूर पवन याकै टोना सै, सुमत अनीम अई॥१६५॥

बाँसुरी बिधि हूँ तैं परबीन।
कहियै काहि आहि को ऐसी कियौ जगत आधीन॥
चारि बदन उपदेस बिधाता थापी थिर चर-नीति।
आठ बदन गरजति गरबीली, क्यौं चलिहै यह रीति॥

बिपुल बिभूति लही चतुरानन एक कमल करि थान ।
हरि-कर-कमल जुगल पर बैठी, बाढ़्यौ यह अभिमान ॥
एक बार श्रीपति के सिखएँ, चल आयौ गुरु ज्ञान ।
याकैं तौ नँदलाल लाड़िली लाग्यौ रहत नित ध्यान ॥
एक मराल-पीठि आरोहन, बिधि भयौ प्रबल प्रसंस ।
इन तौ सकल बिमान किये, गोपी-जन-मानस हंस ॥
श्री बैकुंठनाथ पुरबासी, जानत जा पद रेनु ।
ताकौ मुख सुखमय सिंहासन, करि बैठी यह बेनु ॥
अधर-सुधा पी कुल ब्रत टारयौ, नहीं सिखा नहिं ताग ।
तदपि सूर या नँद-सुवन कौं, याही सौं अनुराग ॥६६६॥

मुरली नहिं करत स्याम अधरनि तैं न्यारी ।
ठाढ़े हैं एक पाइ रहत तनु त्रिभंग करत भरत नाद, मुरली सुनि
पसु पुहुमि भारी ॥
थावर चर चर थावर जंगम जड़ जड़ जंगम सरिता उलटैं प्रवाह,
पवन थकित भारी ।
सुनि सुनि मुनि थकित ध्यान छोड़ि गए हैं पयान, तरु डोंगर पावक
खग-मृगनि सुधि बिसारी ॥
उलटे तरु भए पात पाथर पर कमल जात, आरत पद तजी
नाद व्याकुल नर-नारी ।
रीझे प्रभु सूर स्याम बंसी-रव सुखद धाम, पासहुँ ब्राम नहीं
जाति कबहुँ टारी ॥६६७॥

यह मुरली मोहिनी कहावै ।
सप्त सुरनि मधुरी करि बानी जल-थल-जीव रिझावै ॥
सहि रिझए सुर-असुर कपट रचि, तिनकौ बस्य कहावै ।
पुनि पाछै हर मन छल अंमृत आपु अँचै अँचवावै ॥
याके गुन ये सब सुख पावत हमकौं बिरह बढ़ावै ।
सूरदास याकी यह करनी स्यामहिं नीकैं भावै ॥६६८॥

मुरली तैं हरि हमहिं बिसारी।
बन की ब्याधि कहा यह आई, देति सबै मिलि गारी।
घर-घर तैं सब निठुर कराई महा अपस यह नारी।
कहा भयौ जो हरि-मुख लागी अपनी प्रकृति न हारी।
सकुचति ही याकौं तुम आगैं, कहौ न बात उघारी।
नीकी सौति भई यह हमकौं और नहीं कहूँ ला री।
इन्हूँ तैं कोउ निठुर कहावति जो आई कुल जारी।
सूरदास ऐसी को त्रिभुवन जैसी यह बनवारी ॥९६९।

सुनहु री मुरली की उतपत्ति।
बन मैं रहति, बाँस कुल याकौ यह तौ याकी जाति।
जलधर पिता धरनि है माता, अवगुन कहौं उघारि।
तिन्हूँ तैं याकौ घर न्यारौ निपटहिं जहाँ उजारि।
इक तैं एक गुननि हैं पूरे मातु पिता अरु आपु।
नहिं जानियै कौन फल प्रगट्यौ अतिहीं कृपा प्रतापु।
बिसवामिनि पर-काज न जानै, याकै कुल कौ धर्म।
सुनहु सूर भेषनि की करनी अरु धरनी के कर्म ॥९७०॥

सुनहु सखी याकै कुल-धर्म।
जैसोइ पिता मातु तैसी अब देखी याके कर्म।
वै परपंच करनी संपूरन सर सरिता अवगाह।
चातक सदा निरास रहत है, एक बूँद की चाह।
धरनी जनम देति सबही कौं आपुन सदा कुमारी।
उपजत फिरि ताही मैं बिनसत छोह न कहूँ महतारी।
ता कुल मैं यह कन्या उपजी, याके गुननि सुनाऊँ।
सूर सुनत सुख होइ तुम्हारे मैं कहिकै सुख पाऊँ ॥९७१॥

मातु-पिता गुन कहौ बुझाई।
अब मातु के गुन सुनि बेनु न जातैं तपन सिराई।

उनके वे गुन, निठुर कहावत मुरली के गुन देखौ।
तब याकौ तुम औगुन मानौ अब कछु अचरज पेखौ।
जा कुल में उपजी या कुल कौ जारि करत है छार।
उनहीं तन में अगिनि प्रकासति, ऐसी याकी झार।
यह जौ स्याम सुनें स्रवननि भरि, कर तैं देहिं डारि।
सूरदास प्रभु धोखैं याकौं राखति अधरनि धारि ॥१७२॥

हम तप करि तनु गारयौ जाकौं।
सो फल तुरत मुरलिका पायौ, करी कृपा हरि ताकौं।
कपट कुटिल और नहिं कोई, जैसे हैं ब्रजराज।
जो सन्मुख सो बिमुख कहावै, बिमुख करै सुखराज।
बूझि बात नंद-नंदन की मुरली कै रस पागी।
सूर अधर रस आहि हमारौ ताकौं लकसन लागी ॥१७३॥

मुरली हम सौं बैर बढ़ायौ।
भली निपट इतराइ गैहली हरि अधरनि परसायौ।
फूली फिरति स्याम-कर बैठी अतिहीं गर्ब बढ़ायौ।
ज्यौं निधनी धन पाइ अचानक नैन अकास चढ़ायौ।
सूर स्याम देखत सिहात हैं, ताकौं गाइ रिझायौ।
त्रिभुवन-पति श्रीपति जे कहावत तिन मुरली बस पायौ १७४

मुरली अति करी इतराइ।
अक्षय निधि जिनि लूटि पाई, क्यौं नहीं सतराइ॥
आदि सौ यह कहाँ होती, चलति सीस चढ़ाइ।
बननि कैं ही संग जनती चौरि मिलवी धाइ।
बाँस तैं उत्पत्ति जाकी कहा बुधि ठहराइ।
सूर प्रभु या बस्य कैसैं, रहे तनु बिसराइ ॥१७५॥

मुरली पति पर अति प्यारी।
जद्यपि नाना भाँति नचावति, सुख पावत गिरिधारी।

रहत हजूर एक पग ठाढ़े मानत हैं अति त्रास।
कर तैं कबहुँ नैकु नहिं टारत सदा रहत ता पास॥
बारंबार देति आयसु हरि पर राखति अधिकार।
सूर स्याम कौं अपबस कीन्हौ, रहत यही मनमार॥१०७६॥

बड़े की मानियै की कानि।
कहा ओछे की बड़ाई आहि ओछी बानि॥
बढ़ौ निदरै नाहिं काहूँ, ओछोई इतराइ।
नीर-नारी नीचे [illegible] ज्यौं बहै जैसैं धाइ।
रही बन मैं परहिं स्याप महा बुरी बलाइ।
निदरि कै याइ सबनि वैसी सौति उपजी आइ॥
दिनहिं दिन अधिकार पाइयौ लागि रहत कन्हाइ।
सूरदास उपाधि विधना कहा रची बनाइ॥१०७७॥

मुरली की सरि कौन करै।
नंद-नंदन त्रिभुवन-पति नागर सो जो बस्य करै॥
जबही जब मन आवत तब तब अधरनि पान करै।
रहत स्याम आधीन सदाई आयसु तिनहिं करै।
ऐसी भई मोहिनी माई, मोहन मोह करै।
सुनहु सूर याके गुन ऐसे ऐसो करनि करै॥१०७८॥

मुरली मोहिनी अब भई।
करि जु करनि देव-दनुजनि प्रति, वह विधि फेरि ठई।
उन पय-निधि इम ब्रज-सागर मथि पाई पीयूष नई।
अधर-सुधा हरि-बदन इंदु की हरि छवि दीनि लई॥
आपु अँचै अँचवाइ सकल सुर कीन्हे दिगविजई।
पकरिहि पुट अब असुर सूर, इव मदिरा मदन-मई॥१०७९॥

मुरलिया स्यामहिं और कियौ।
औरै दसा, और मति ह्वै गई और विवेक हियौ॥

तब तैं निठुर भए हरि हमसौं, जब तैं हाथ भई।
निसि दिन हम बन संगहि रहती, मनु ह्वै गई नई।
इहिं औरै करि डारे भारे, हम कहँ दूरि करी।
घर की बन, बन को घर कीन्ही, सूर सुजान हरी ॥१८०॥

सजनी, स्याम सदाई ऐसे।
एक अंग की प्रीति हमारी वे जैसे के तैसे॥
ज्यौं चकोर की बातें, चंदा नैंकु न मानै।
जल के तीर मीन तन त्यागैं, नीर निठुर नहिं जानै।
ज्यौं पतंग छकि परै ज्योति तकि, वाके नैंकु न भावै।
चातक रटि-रटि जनम गँवावै, जल पै हारत आवै।
इनहूँ तें निरदयी बड़े वै, तैसिये मुरली पाई।
सूर स्याम जैसे तैसी वह, भली बनी अब माई ॥१८१॥

मुरली को मन हरि सौं मान्यौ।
हरि को मन मुरली सौं मिलि गयौ, जैसैं पय जल सान्यौ।
जैसैं चोर चोर मौं राचै, ठग ठग पकै जानि।
कुटिल कुटिल मिलि चलैं एक ह्वै, दुहुनि भली पहिचानि।
वे बन बन नित धेनु चरावत वह बनही की आहि।
सूर गयी चोरी विधना की, जैसी तैसी ताहि ॥१८२॥

काहैं न मुरली सौं हरि जोरैं।
काहैं न अधरनि धरैं सु पुनि-पुनि, मिली अचानक भोरैं॥
काहैं नहीं ताहि कर धारैं, क्यौं नहिं ग्रीव नवावैं।
काहैं न तनु त्रिभंग करि राखैं, ताके मनहिं चुरावैं॥
काहैं न यौं आधीन रहैं ह्वै, वे अहीर, वह धेनु।
सूर स्याम कर तैं नहिं टारत, बन-बन चारत धेनु ॥१८३॥

सजनी, अब हम समुझि परी।
अंग-अंग उपमा जे हरि के कविता बने परी॥

नव जलधर तन कछिपत सोभा, दामिनि पट फहरी ।
भँवर कुटिल कुंतल की सोभा सो हम मारी करी ।।
मुख-छबि ससि-पटतर जनि दीन्ही, यह सुनि अधिक डरी ।
सूर सहाइ भई यह मुरली अपनैं गुनहिं भरी ।।१८४।।

बिधना मुरली सौति बनाई ।
कुटिल बाँस की बंस-बिनासिनि, ब्यास निवास कराई ।।
जौ यह ठाट ठटिबोहि राख्यौ, कुल की होती ओऊ ।
तौ इतनौ दुख हमहिं न होतौ औगुन-आगर दोऊ ।।
ये निरदई निठुर बन की घर अब भयौ प्रकास ।
सूरदास ब्रजनाथ हमारे तौ से भए उदास ।।१८५।।

अब मुरली-पति क्यों न कहावत ।
राधा पति काहे कौ कहियै सुनत लाज जिय आवत ।।
यह अनखाति नाउँ सुनि हमरौ इत हमको नहिं भावत ।
कै मिलि चलौ फेरि हमही कौं कै बनही जिन आवत ।।
काहे कौं है नाव धरत हैं, अपनी बिपति कहावत ।
सुनहु सूर यह कौन भलाई हँसि-हँसि बैर बढ़ावत ।।१८६।।

और कही हरि कौं समुझाइ ।
अब यह दुबिधा काहैं राखत, वाही मिलियै जाइ ।।
हम अपनी मन निठुर करायौ बात तुम्हारैं हाथ ।
भली भई अब सकुचन लागी, कहि गावत ब्रजनाथ ।।
अब मुरलीपति नाउ कहावहु, वह बाँसी तुम काठ ।
सूरदास प्रभु भई चतुराई, मुरली पढ़ये पाठ ।।१८७।।

सजनी भल सिख तैं हरि खोटे ।
ये गुन तबहीं तैं जानति हम, अब जननी करी छोटे ।।
भँवर हरे जाइ जमुना तट, राखे कदम चढ़ाइ ।
तब के चरित सबै जानति ही, औरन्ही निलज बनाइ ।।

जब हम तप करि करि तनु गारयौ, अधर-सुधा-रस काम।
सो मुरली निदरे अँचवति है, ऐसे हैं ब्रजराज॥
हमकौं यौं, औरनि कौं ऐसे, निदरक दीन्हौ डारि।
सूर इते पर चतुर कहावत, कहा दीजियै गारि॥१८८॥

यह हमकौं बिधना लिखि राख्यौ।
नातैं न गाउँ, कहाँ तैं आई स्याम अधर-रस चाख्यौ॥
यह दुख कहैं काहि, को जानै, ऐसी कौन निवारै।
जा रस धरयौ कृपिन की नाई सो सब ऐसैंहि डारै॥
यह दूषन याही कौ कहियै की हरिहू कौं दीजै।
सुनहु सूर कछु बच्यौ अधर-रस सो कैसैं करि लीजै॥१८९॥

मुरलिया कपट चतुरई ठानी।
कैसैं मिलि गई नंद-नँदन कौं, उन नाहिंन पहिचानी॥
इक वह नारि बचन मुख मीठे, सुनत स्याम ललचाने।
जाति-पाँति की कौन चलावै वाकैं रंग भुलाने।
वाकौ मन जानत है जासौं सो तहँई सुख मानै॥
सूर स्याम वाके गुन गावत वह हरि के गुन गानै॥१९०॥

अधर-रस मुरली लूट करावति।
आपुन बार-बार लै अँचवति, जहाँ-तहाँ ढरकावति॥
आजु महा चढ़ि बाजी वाकी जाइ जोइ करै बिराजै।
कर-सिंहासन बैठि अधर सिर-छत्र धरे वह गाजै॥
गनति नहीं अपने बल काहुहिं, स्यामहिं डीठि धराई।
सुनहु सूर बन की बसबासिनि, ब्रज मैं भई रजाई॥१९१॥

सखी री माधौहिं दोष न दीजै॥
जो कछु करि सकियै, सोई सब या मुरली कौं कीजै॥
बार-बार बन बोलि मधुर धुनि अति प्रवीन चपलाई।
मिलि स्रवननि मन मोहि महा रस, तन की सुधि बिसराई॥

मुख मृदु बचन, कपट उर अंतर हम यह बात न जानी।
लोक-बेद-कुल छाँड़ि आपनी जोइ जोइ कही सु मानी ॥
कबहुँ बड़े प्रकृति याकै जिय, लुब्धक-संग ज्यौं माखी ।
सूरदास क्यों हूँ करुना मैं, परति नहीं अपराधी ॥६६२॥

स्यामहिं दोष कहा कहि दीजै ।
कहा बात मुरली सौं कहियै सब अपनेहिं सिर लीजै ।
हमहीं कहति बजावहु मोहन, यह नाहीं तब जानी ॥
हम जानी यह बाँस बँसुरिया, को जानै पटरानी ॥
बारे तैं मुँह लागत-लागत अब ह्वै गई सयानी ।
सुनहु सूर हम भोरी भारी याकी अकथ कहानी ॥६६३॥

मुरली कहै सु स्याम करैं री ।
वाही के बस भए रहत हैं वाकैं रंग ढरैं री ॥
घर-बन रैन-दिना सँग डोलत कर तैं करत न न्यारी ।
आई मन बजाइ यह हमकौं कहा दीजियै गारी ॥
अब लौं रही हमारे माई हरि अपने बस कीन्हे ।
सूर स्याम नागर यह नागरि, दुहुँनि मतैं करि लीन्हे ॥६६४॥

मुरली हरि कौं नाच नचावति ।
एतै पर यह बाँस बँसुरिया नंद-नँदन कौं भावति ॥
ठाढ़े रहत बस्य ऐसे ह्वै सकुचत बोलत भाव ।
यह निदरे आज्ञा करवावति नैकहुँ नाहिं सकाव ॥
अब जानति आधीन भए हैं, देखत दीन नचावत ।
पौढ़ति अधर चलित कर पल्लव रंध्र चरन पलुटावत ॥
हम पर रिस करि-करि अवलोकत नासा-पुट फरकावत ।
सूर-स्याम जब-जब रीझत हैं, तब-तब सीस डुलावत ॥६६ ।

ग्वालिनि तुम कत उरहन देहु ?
पूछहु जाइ स्याम सुंदर कौं जिहिं दुख उपज्यौ सनेहु ॥

सम्भव ही तैं भई विरत चित, तज्यौ गार्ये, गुन गेहु।
एकहि पाउँ रही हौं ठाढ़ी, हिम ग्रीष्म रितु-मेहु॥
अगिनि सुलाकत मुरयौ न तन मन विकट बनावत बेहु॥
बकरीं कहा बाँसुरी कहि कहि करि-करि तामस तेहु।
सूर स्याम इहिं भाँति रिझै, फिन तुमहूँ अधर-रस लेहु॥११६॥

मैं अपनें बल रहति स्याम सग, तुम काहैं दुख पावति री॥
मो पर रिस पावति हौ पुनि पुनि कछु अहूँहिं बतरावति री।
तुमहूँ क्यौ सुख मैं परजरति हौं, ऐसेहि सोर लगावति री।
कहा करौं मोहिं स्याम निवाजौ काहैं न दूरि करावति री॥
वृथा बैर तुम करति निसाँवन, आपी जनम गँवावति री।
सूर सुनहु ब्रजनारि सयानी मूरख हौ, समुझावति री।॥११७॥

मेरे दुख की ओर नाहीं।
षट रितु सीत तपन बरषा में ठाढ़े पाइ रही॥
कसकी नहीं नैंकहूँ काटत, घामैं राखी बारि।
अगिनि-सुलाक देत नहिं मुरकी बेह बनावत जारि॥
तुम जानति मोहिं बाँस बसुरिया अगिनि-छाप दै आई।
सूर स्याम ऐसैं तुम लेहु न, खिझति कहा हौ माई॥११८॥

स्रम करिही जब मेरी सी।
तब तुम अधर-सुधा रस बिलसहु मैं हूँ रहिहौं चेरी सी॥
बिना कष्ट यह फल न पाइही जानति हौ अवडेरी सी।
षट रितु सीत तपनि तन गारी बास बँसुरिया केरी सी॥
कहा मौन ह्वै ह्वै जु रही हौ, कहा करति अवसेरी सी।
सुनहु सूर मैं न्यारी हूँ हौं अब ऐसी तुम मेरी सी॥११९॥

मुरली सी अधरनि पर गाजति।
कैसैं बैठी गुहुँ करनि चढ़ि, अगुरी रंधनि राजति॥
स्यामहिं मिलि हम सबनि दिखावति नैंकु नहीं मन लाजति।
नाद सवाद मीठ मीं उपजत, मधुरे मधुरे बाजति॥

कबहुँ मौन ह्वै रहति कबहुँ कछु कहति, रहति नहिं हाँसति।
सूर स्याम वाकौ सुर साजत यह उनहीं सौं भाषति ॥१०००॥

मुरली तप कियौ तनु गारि।
नैकहुँ नहिं अंग मुरकी, सब सुहागी झारि।
सरद, ग्रीषम प्रबल पावस रही इक पग धारि।
कटत हूँ नहिं अंग मोरयौ, साहसिनि अति नारि।
रिझै लीन्हे स्याम सुंदर, देति ही कत गारि।
सूर प्रभु तब करे हैं री गुननि कीन्ही प्यारि ॥१००१॥

मुरली जैसैं तप कियौ, तैसैं तुम करिहौ।
षटरितु इक पग क्यौं रहौ अपनही अरसरिहौ।
वह काटत मुरली नहीं तुम तौ मन मरिहौ।
वह सुभाव कैसैं नहीं परमत ही अरिहौ।
तुम अनेक, वह एक है, तासौं अनि अरिहौ।
सूर स्याम जिहिं हरि मिले नहिं जीतौ हरिहौ ॥१००२॥

मुरली की सरि अनि करौ वह तप अधिकारिनि।
पवे पर तुम बोलिहौ कह भई बनचारिनि।
धीर धरैं मरजाद] है नाची सपु दैहौ।
नैकु दरस की आस है, ताहू तैं जैहौ।
झगरैं झगरीईं रहै, तिहिं कहा बड़ाई।
वह अपनी फल भोगवै, तुम ऐसी माई।
ऐसौ वाकै भाग की, ताकौं न सराही।
सूरदास भामिनी कहा, भीजैं बिन काहीं ॥१००३॥

मुरली सौं अब प्रीति करौ री।
मेरी कही मानि मन राखौ उर-रिस दूरि धरौ री।
तुमहिं सुनी मुरली की बातैं दीन होइ बतरानी।
काहे न हरै स्याम वा ऊपर, क्यौं न होइ पटरानी।

हम जान्यौ यह गर्व भरी है, साधु न मानैं और।
रिसै छिपी हरि कौं तप कै बस, कृपा करौ तुम सौर।
सूर स्याम बहुनायक सजनी, यहौ मिलौ इक आइ।
तुम अपने कौ नेम रहौगी नेम न कर तैं जाइ॥१००४॥

नेमहिं मैं हरि आइ रहैंगे।
मुरली सौं तुम कछू कहौ जनि, ऐसेहिं तुमहिं मिलैंगे।
वै अंतरजामी सब जानत, घट-घट की जो प्रीति।
जाकी जैसी भाव सखी री ताहि मिलैं तिहिं रीति।
मातु-पिता-कुलकानि-लाज तजि, भजौ जनम तैं जाहि।
काहे कौं मुरली की बातनि, अब तजिये री ताहि।
सोरह सहस एक मन नागरि, नागरि मुरली जानि।
सूर स्याम कौ भजौ निरंतर, जासौं है पहिचानि॥१००५॥

हम तैं तप मुरली न करै री।
कहा सुभाउ सखी या इक पग नित प्रति बिरह जरै री।
किरिया सी करि कै भई ठाढ़ी, तुरत अंबर-तर लागी।
हमकौ निसि दिन भवन अराधत नाही रस अनुरागी।
यहै बात कबहूँ तै मोटी, तातें हम सरि नाहीं।
सूर स्याम की महिमा न्यारी, कृपा करी तन माहीं॥१००६॥

मुरलिया एकै बात कही।
भाग आपनी अपने माथे, मानी यह मनहिं सही।
हम तैं बहुत तपस्या माही, निरह जरी बड़ भारी।
कहा निमिष करि प्रेम सुनायौ रैनहु सुनि प्रिय माहीं।
पाय कहति कछु निरधि माहीं भाग बड़े हैं वाके।
सूरदास प्रभु चतुर सिरोमनि वश्य भए हैं जाके॥१००७॥

मुरली स्याम बजावन दै री।
स्रवननि सुधा पियनि काहे न हरि तू जनि बरजै री।

सुनति नहीं यह कहति कहा है, राधा, राधा नाम ।
तू जानति, हरि भूलि गए मोहिं, तुम एकै पति बाम ।
वाही के मुख नाम धरावत हमहिं मिलावत ताहि ।
सूर स्याम हमकौं नहिं बिसरे, तुम डरपति हौ काहि ॥१००८

जब जब मुरली कान्ह बजावत ।
तब-तब राधा-नाम उचारत बारंबार रिझावत ।
तुम रमनी वह रमन तुम्हारे, वैसेहिं मोहिं जनावत ।
मुरली भई सौति जो माई तेरी टहल करावत ।
वह दासी तुम हरि अर्धंगिनि यह मेरैं मन आवत ।
सूर प्रगट ताही सौं कहि कहि, तुमकौं स्याम बुलावत ।१००९

मुरलिया मोकौं लागति प्यारी ।
मिली अचानक आइ कहूँ तैं, ऐसी रही कहाँ री ।
धनि याके पितु-मातु, धन्य यह, धन्य-धन्य मृदु बोलनि ।
धन्य स्याम गुन गुनि कै ल्याए, नागरि चतुर अमोलनि ।
यह निरमोल मोल नहिं याकौ भली न यातैं कोई ।
सूरदास याके पटतर कौ, तौ वोऊ जौ होई ॥१०१०॥

मुरली दिन-दिन भली भई ।
बन की रहनि नहीं अब यामैं, मधुरहिं पागि गई ।
अमिय समान कहति है बानी, नीकै चालि भई ।
जैसी संगति बुधि तैसीयै है गई सुघमई ।
जब आई तब औरै लागी सी निठुरई दई ।
सूर स्याम अधरनि के परसैं सोभा भई नई ॥१०११॥

(माई) मोहन की मुरली मैं मोहिनि बसत है ।
जब तैं सुनी स्रवन, परी न परै भवन देह तैं मनहुँ प्रान चल
निकसत हैं ।

कहा करौं आली, बाँसुरी की धुनि साली, माता-पिता-पति-बंधु
अतिही त्रसत हैं।
मदन अगिनि अरु बिरह की ज्वाल जरी जैसे जल-हीन मीन वह
तरसत हैं।
अतिहि तपति छाती लागति है प्रेम फाँसी फूलनि की माला मनौ
ब्याल ह्वै डसत हैं।
सूर स्याम मिलन को आतुर हैं ब्रज की बाल एक-एक पल जुग-
जुग ज्यौं बसत हैं ॥१०१२॥

(ज) गोपी-कृष्ण

भवन रवन सबही बिसरायौ।
नंद-नँदन जब तैं मन हरि लियौ, बिरथा जनम गँवायौ॥
जप तप ब्रत संजम साधन तैं, द्रवित होत पाषान।
जैसैं मिलै स्याम सुन्दर बर सोइ कीजै, नहिं आन॥
यहै मंत्र दृढ़ कियौ सबनि मिलि, यातैं होइ सु होइ।
वृथा जनम जग मैं जिनि खोवहु, ह्याँ अपनौ नहिं कोइ।
तब प्रतीति सबहिनि कौं आई कीन्हौ दृढ़ बिस्वास।
सूर स्यामसुंदर पति पावैं यहै हमारी आस॥१०११॥

गौरी-पति पूजति ब्रजनारि।
नेम-धर्म सौं रहति क्रिया-जुत, बहुत करति मनुहारि॥
यहै कहति पति देहु उमापति गिरिधर नंद-कुमार।
सरन राखि लीजै सिवसंकर तनहिं त्रसावत मार॥
कमल पुहुप मालूर पत्र फल नाना सुमन सुबास।
महादेव पूजति मन-बच करि सूर स्याम की आस॥१०१२॥

सिव सौं बिनय करति कुमारि।
जोरि कर, मुख करति अस्तुति बड़े प्रभु त्रिपुरारि॥
सीत-भीत न करति सुंदरि, कृस भई सुकुमारि।
छटी रितु तप करति नीकैं, गेह नेह बिसारि॥

कहा करौं आली, बाँसुरी की धुनि साली, माता पिता-पति बंधु अतिही त्रसत हैं।
मदन अगिनि अरु बिरह की ज्वाल जरी जैसें जल-हीन मीन तड़ तरसत हैं।
अतिहि तपति छाती लागति है प्रेम काँती फूलनि की माला मनौ ब्याल ह्वै डसत है।
सूर स्याम मिलन कौं आतुर हैं ब्रज की बाल, एक-एक पल जुग-जुग ज्यौं बसत है ॥१०१२॥

जसुमति माइ, कहा सुत सिखयौ, हमकौ ऐसे हाल किए।
चोली फारि हार गहि तोरे, देखौ उर नख-घात दिए॥
अंचल चीरि, आभूषन तोरे, घेरि घरत उठि भागि गए।
सूर महरि मन कहति स्याम धौं, ऐसे लायक कबहिं भए।१०१९।

महरि, स्याम कौं बरजति काहैं न।
ऐसे हाल किए हरि हमकौ, भए कहूँ अग काहैं न।
और बात इक सुनौ स्याम की, अबहिं भए हैं ढीठ।
बसन बिना अमनान करति हम आपुन मीड़त पीठ।
आपु कहति, मेरौ सुत बारी हियौ उघारि दिखाउँ।
सुनहु लाज, कहत नहिं आवै तुमकौं कहा सुनाऊँ॥
यह बानी जुवतिनि मुख सुनि कै, हँसि बोली नँदरानी।
सूर स्याम तुम लायक नाहीं बात तुम्हारी जानी।१०२०।

बात कहौ सो सहै, कहै री।
बिना भीति तुम चित्र लिखति हौ सो कैसैं निबहै री॥
तुम चाहति हौ गगन-तरैयाँ माँगें कैसैं पावहु।
आवत ही मैं तुम लखि लीन्ही कहि मोहि कहा सुनावहु।
चोरी रही, छिनारी अब भयौ जान्यौ ज्ञान तुम्हारौ।
औरै गोप-सुतनि नहिं देखौ सूर स्याम है बारौ।१०२१।

ग्वालिनि हैं घरही की बाढ़ी।
निसि अरु दिन प्रति देखति हौं अपनें ही आँगन ठाढ़ी।
कबहिं गुपाल कँचुकी फारी कब भए ऐसे जोग।
अबहिं नैकु सीखन लीसे हैं, यह जानत सब लोग।
नितहीं अगारत हैं मनमोहन, देख प्रेम रस चाखी।
सूरदास-प्रभु कपट न जानत ग्वाल सबै हैं साखी।१०२२।

इहिं अंतर हरि आइ गए।
मोर मुकुट पीतांबर काछे, कोमल अंग भए॥

ध्यान धरि, कर जोरि, लोचन मूँदि, इक-इक जाम।
बिनय अंचल छोरि रबि सौं, करति हैं सब बाम॥
हमहिं होहु दयाल दिन-मनि, तुम बिदित संसार।
काम अति तनु दहत दीजै सूर हरि भरतार॥१०१५॥

रबि सौं बिनय करति कर जोरे।
प्रभु अंतरजामी यह जानी हम कारन अस जोरे।
प्रगट भए प्रभु जलहीं भीतर, देखि सबनि कौ प्रेम।
मींड़त पीठि सबनि के पाछैं पूरन कीन्हौ नेम॥
फिरि देखैं तौ कुँवर कन्हाई मींडत कुचि सौं पीठि।
सूर निरखि सकुची ब्रज-जुवती परी स्याम-तन दीठि॥१ १६॥

अति तप देखि कृपा हरि कीन्ही।
तन की जरनि दूर भई सबकी मिलि तरुनिनि सुख दीन्हौ॥
नवल किसोर ध्यान जुवतिनि मन वहै प्रगट दरसायौ।
सकुचि गई अँग-बसन सम्हारति भयौ सबनि मनभायौ॥
मन-मन कहति भयौ तप पूरन आनँद उर न समाई।
सूरदास प्रभु लाज न आवति जुवतिनि माँझ कन्हाई॥१०१७॥

ऊँमत स्याम ब्रज घर कौं मागे।
लागनि कहति सुनावति मोहन करन लँगराई लागे॥
हम असनान करति जल-भीतर मींड़त पीठि कन्हाई।
कहा भयौ जो नंद महर-सुत हमसौं करत ढिठाई॥
लरिकाई तबही सौं मीची चारि बरष कै पाँच।
सूर जाइ कहिहौं जसुमति सौं, स्याम करत ये नाच॥१०१८॥

प्रेम-बिबस सब ग्वालि भई।
बरदान देन चली जसुमति कौं, ममभावन के रूप रई॥
पुलक अंग अँगिया दर दरकी, हार तोरि कर आप लई।
अंचल चीरि थान उर नख धरि, यह मिस करि नँद-सदन गई॥

सरद ग्रीषम डरति नाहीं करति तप तनु गारि।
सूर प्रभु सर्बज्ञ स्वामी, देखि रीझे भारि ॥१०२७॥

ब्रज-बनिता रबि कौं कर जोरैं।
सीत-भीति नहिं करति छहौं रितु त्रिविध काल जल खोरैं।
गौरी-पति पूजति, तप साधति करत रहति नित नेम।
भोग-रहित निसि जागि चतुर्दसि, जसुमति-सुत कैं प्रेम।
हमकौं देहु कृष्न पति ईस्वर और नहीं मन आन।
मनसा-बाचा कर्म हमारैं, सूर स्याम कौ ध्यान ॥१०२८॥

मोकैं तप कियौ तनु गारि।
आपु देखत कदम चढ़ि मानि लियौ मुरारि॥
बर्ष भर ब्रत-नेम-संजम, स्रम कियौ मोहिं काज।
कैसेहूँ मोहिं भजै कोऊ, मोहिं बिरद की लाज।
धन्य ब्रत इन कियौ पूरन, सीत तपति निवारि।
काम आतुर भजी मोकौं नव तरुनि ब्रज नारि॥
कृपा नाथ कृपाल भए तब, जानि जन की पीर।
सूर प्रभु अनुमान कीन्हौ हरौं इनके चीर ॥१०२९॥

बसन हरे सब कदम चढ़ाए।
सोरह सहस गोप-कन्यनि के, अंग अभूषन सहित चुराए।
नीलांबर पाटंबर सारी, सेत पीत चुनरी, अरुनाए।
अति बिस्तार नीप तरु तामैं, लै-लै जहाँ-तहाँ लटकाए।
मनि आभरन डार डारनि प्रति, देखत छबि मनहीं अँटकाए।
सूर स्याम जुवतिनि ब्रत-पूरन कौ फल डारनि कदम फराए॥

आवहु निकसि घोष-कुमारि।
कदम पर तैं कहत सीन्हौ गिरिधरन बनवारि॥
नैन भरि ब्रत फलहिं देखौ करयौ है हुब-धार।
ब्रत तुम्हारौ भयौ पूरन, कह्यौ नंद कुमार॥

जननि बुलाइ बाहँ गहि लीन्ही देखहु री मदमाती।
इनही कौं अपराध लगावति, कहा फिरति इतराती।
सुनिहैं लोग भ्रष्ट अबहूँ करि, तुमहिं कहौं की लाज।
सूर स्याम मेरौ माखन-भोगी, तुम आवति बेकाज ॥१०२३॥

अबहीं देखे नवल किसोर।
घर आवत ही तनक भए हैं, ऐसे तन के थोर ॥
कबहुँ दिन करि दधि-माखन चोरी अब चोरत मन मोर।
बिबस भई, तन-सुधि न सम्हारति कहति बात भई भोर।
यह बानी कहतहीं लजानी समुझ भई जिय-थोर।
सूर स्याम-मुख निरखि चली घर, आनँद लोचन लोर ॥१०२४॥

ब्रज घर गईं गोप कुमारि।
नैकहूँ कहूँ मन न लागत काम-धाम बिसारि।
मातु-पितु कौ डर न मानति, सुनति नाहिंन गारि।
हठ करतिं, रिसहातिं तब तिय जननि जानति बारि।
प्रातही उठि चलीं सब मिलि जमुन-तट सुकुमारि।
सूर प्रभु ब्रत देखि इनकौ, मनहिं धरत सम्हारि ॥१०२५॥

चलत नहीं जमुना कौ देबी।
सुंदर स्याम घाट पर ठाढ़े, कहौ कौन बिधि जैबी ॥
कैसें बसन उतारि धरैं हम, कैसैं जलहिं समैबी।
नंद नँदन हमकौं देखैंगे, कैसैं करि जु अन्हैबी ॥
चोली चीर, हार लै भाजत सो कैसैं करि पैबी।
अंकम भरि भरि लेत सूर प्रभु काल्हि न इहिं पथ ऐबी ॥१०२६॥

ब्रत तप करतिं घोष-कुमारि।
कृष्न पति हम तुरत पावैं, काम आतुर भारि ॥
नैन मूँदतिं दरस-कारन, स्रवन सब्द बिचारि।
भुजा जोरतिं अंक भरि हरि, ध्यान उर अँकवारि ॥

कर धरि सीस गईं हरि-सम्मुख, मन मैं करि आनंद।
है कृपाल सूरज-प्रभु सुंदर, दीन्हे परमानंद ॥१०३५॥

दृढ़ व्रत कियौ मेरैं हेतु।
धन्य धनि कह्यौ नंद-नंदन जाहु सबै निकेतु ॥
कह्यौ पूरन काम तुम्हरौ, सरद रास रमाइ।
हरष भईं यह सुनत गोपी, रहीं सीस नवाइ ॥
सबनि कौ अँग परसि कीन्ही सुफल व्रत-व्यवहार।
सूर प्रभु सुख दियौ मिलि कै, ब्रज चल्यौ सुकुमार ॥१०३६॥

सिवसंकर हमकौ फल दीन्हौ।
पुहुप पान नाना फल, मेवा, षट-रस अर्पन कीन्हौ ॥
पाइ परीं जुवती सब यह कहि, धन्य-धन्य त्रिपुरारी।
तुरतहिं फल पूरन हम पायौ, नंदसुवन गिरिधारी।
बिनय करतिं सविता, तुम सरि कौ पय अँजलि, कर जोरी।
सूर स्याम पति तुम तैं पायौ यह कहि परहिं बहोरी ॥१०३६॥

सरद-निसि देखि हरि हरष पायौ।
बिपिन वृंदा रमन, सुभग फूले सुमन, रास रुचि स्याम के मनहिं आयौ ॥
परम उज्ज्वल रैनि छिटकि रही भूमि पर, सद्य फल तरुनि प्रति लटकि लागे ॥
तैसोई परम रमनीक जमुना-पुलिन त्रिबिध बहै पवन आनंद जागे ॥
राधिका-रमन बन-भवन-सुख देखि कै, अधर धरि बेनु सुललित बजाई।
नाम लै लै सकल गोप-कन्यानि के, सबनि के स्रवन वह धुनि सुनाई ॥

सलिल तैं सब निकसि आवहु, छमा सहति सुधार।
देत हौं, किन लेहु भीसौ चीर, चोली हार ॥
बाहैं टेकि पिनै करौ ओढ़ि, कहत बारंबार।
सूर प्रभु के आइ आगैं, करहु सब सिंगार ॥१०११॥

स्वामिनि अपने चोरहि लै री।
जल तैं निकसि-निकसि कढ़, दोउ कर जोरि सीस दै-दै री।
कब ही सीत सहति ब्रज-सुंदरि, व्रत पूरन सब भै री।
मेरे कहैं आइ पहिरौ पट, कस तन हेम करे री।
हौं अंतरजामी जानत सब, अति यह पैज करे री।
करिहौं पूरन काम तुम्हारौ, रास सरद निसि है री।
संतत सूर स्वभाव हमारौ, कत मैं काम करे री।
कौनेहुँ भाव भजै कोउ हमकौं तिन तन ताप हरै री ।१०१२।

हमारे अंबर देहु मुरारी।
लै सब चीर कदम चढ़ि बैठे, हम जल-माँझ उघारी।
तट पर बिना बसन क्यौं आवैं, लाज लगति है भारी।
चोली हार तुमहिं कौ दीन्हौ चीर हमहिं द्यौ डारी।
तुम यह बात अचंभौ भाषत, नाँगी आवहु नारी।
सूर-स्याम कछु छोह करौ जू, सीत गई तनु मारी ।१०१३।

हमारे देहु मनोहर चीर।
काँपति, सीत तनहिं अति व्यापत हिम सम जमुना-नीर ॥
मानहिंगी उपकार रावरौ, करौ कृपा बलबीर।
अतिहीं दुखित प्रान, बपु परसत प्रबल प्रचंड समीर ॥
हम दासी तुम नाथ हमारे, बिलपति जल मैं ठाढ़ी।
मानहु बिरह कुमुदिनी ससि सौं अधिक प्रीति उर बाढ़ी ॥
जौ तुम हमैं नाथ कै जान्यौ यह हम माँगें देहु।
जल तैं निकसि आइ बाहर ह्वै, बसन आपने लेहु ॥

एक उबटन ही चली उठि, धरयौ नाहिं उतारि।
एक भोजन करत त्यागौ, चली चूल्है हारि॥
एक भोजन करि सँपूरन, गई वैसैंहि त्यागि।
सूर प्रभु कैं पास मुरलिहिं, मन गयौ उठि भागि ॥१०४१॥

जबहिं बन मुरली स्रवन परी।
चकित भईं गोप-कन्या सब, काम धाम बिसरी॥
कुल मर्जाद बेद की आज्ञा नैंकहुँ नहीं डरी।
स्याम-सिंधु, सरिता-ललना-गन, जल की ढरनि ढरी॥
अँग-मरदन करिबे कौं लागी उबटन तेल धरी।
जो जिहिं भाँति चली सो तैसैंहि, निसि बन कौं जु खरी॥
सुत पति नेह, भवन-जन-संका, लज्जा नाहिं करी।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौ नागर नवल हरी ॥१०४२॥

मुरली सब्द सुनि ब्रज-नारि।
करत अंग-सिंगार भूली काम गयौ बसु मारि॥
चरन सौं गहि हार बाँध्यौ नैन ऐंचति नाहिं।
कंचुकी कटि साजि, लँहगा धरति हिरदय माहिं॥
चतुरता हरि चोरि लीन्ही, भई भोरी बाल।
सूर प्रभु अति काम मोहन, रच्यौ रास गोपाल ॥१०४३॥

चली बन बेनु सुनत जब धाइ।
मातु पिता-बांधव अति त्रासत जाति कहाँ अकुलाइ।
सकुचि नहीं संका कछु मानी रैनि कहाँ तुम जाति।
जननी कहति, दई की घाली, काहे कौं इतराति॥
मानति नहीं और रिस पावति, निकसी नातौ तोरि।
जैसें जल प्रवाह भादौं कौ सो को सकै बहोरि॥
ज्यौं केंचुरी भुअंगम त्यागत, मात पिता यौं त्यागे।
सूर स्याम कैं हाथ बिकानी, अलि अंबुज अनुरागे ॥१०४४॥

सुनत चपन्यौ मैन, परत कानहिं ज्यौं बैन, सब्द सुनि स्रवन भईं। बिकल भारी।
सूर-प्रभु ध्यान धरि कै चलीं उठि सबै, भवन-जन-नेह तजि घोष नारी ॥१०३७॥

सुनहु, हरि मुरली मधुर बजाई।
मोहे सुर-नर-नाग निरंतर, ब्रज बनिता उठि धाई ॥
जमुना-नीर प्रवाह थकित भयौ पवन रह्यौ मुरझाई।
खग-मृग-मीन अधीन भए सब, अपनी गति बिसराई ॥
द्रुम-बेली अनुराग-पुलक तनु, ससि थक्यौ निसि न घटाई
सूर स्याम वृंदावन बिहरत, चलहु सखी सुधि पाई ॥१०३८॥

सुनि कै कुंज कानन बैन।
ब्रज बधू सब बिसरि अंबर चलीं गृह तजि चैन ॥
सब्द इहिं बिधि भयौ मोहन सुनि और धरै न।
थकित जमुना भई इहिं बिधि मनहुँ जल कियौ सैन।
मगन मुनि जन भए इहिं बिधि पृथिवी पद रैनु।
सूर स्याम सु रसिक नागर, सुभट सुर वर बैनु ॥१०३९॥

आजु बन बेनु बजावत स्याम।
यह कहि-कहि चकित भईं गोपी, सुनत मधुर सुर-ग्राम।
कोउ ज्यौनार करति कोउ बैठी, कोउ ठाढ़ी ही धाम।
कोउ जेंवति कोउ पतिहिं जिंवावति, कोउ सिंगार मैं बाम।
मनौ चित्र कैसी लिखि काढ़ी सुनत परस्पर नाम।
सूर सुनत मुरली भईं बौरी, मदन कियौ तन ताम ॥१०४०॥

हरि-मुख सुनत बेनु रसाल।
बिरह ब्याकुल भ. बाला चलीं जहँ गोपाल।
पय दुहावत तजि चलीं कोउ, रही धीरज नाहिं।
एक औटिहिं दूध आवन कौ सिरावत जाहिं ॥

गई रही दधि बेचन मधुरा तहाँ आजु अबसेर लगाई ।
अति श्रम भयौ बिपिन क्यौं आई, मारग यह कहि सबनि बताई ॥
घाटु-बाटु पर तुरत सुभटजन, भीषन गुरुजन कहि डरपाई ।
की गोकुल तैं गमन कियौ तुम, इनि बातनि ह्वै नहीं भलाई ॥
यह सुनि कै ब्रज-बाम कहत भई कहा करत गिरिधर चतुराई ।
सूर नाम लै लै जन जन कै, मुरली बारंबार बजाइ ॥१०४८॥

यह जनि कही गोप-कुमारि ।
चतुराई हम नहीं कीन्ही तुम चतुर सब ग्वारि ॥
कहौ हम कहँ तुम रही भज कहौं मुरली-नाद ।
अति हो परिहास हमसौं करी यह रस बाद ॥
बड़े की तुम बहू-बेटी, नाम लै क्यौं जाइ ।
ऐसेही निसि चोरि आई हमहिं दोष लगाइ ॥
सब यह तुम करी नारी अबहुँ घर फिरि जाहु ।
सूर प्रभु क्यौं बिचरि आई नहीं तुम्हरे नाहु ॥१०४९॥

मातु पिता तुम्हरे धौं नाहीं ।
बारंबार कमल-दल-लोचन, यह कहि कहि पछिताहीं ॥
उनकैं लाज नहीं, बन तुमकौं आवन दीन्ही राति ।
सब सुंदरी सबै नवजोबन निठुर अहिर की जाति ॥
की तुम कहि आई की ऐसेहिं कीन्ही कैसी रीति ।
सूर तुमहिं यह नहीं बूझियै करी बड़ो बिपरीति ॥१०५०॥

अब तुम कही हमारी मानी ।
बन मैं आइ रैनि-सुख देख्यौ पै कहौ सुख मानी ॥
अब ऐसी कीजौ जनि कबहूँ जानति हौ मन तुमहूँ ।
यह धौं सुनै कहूँ जो कोऊ, तुमहिं लाज अरु हमहूँ ॥
हम धौं आजु बहुत सरमाने, मुरली टेरि बजायी ।
जैसी कियौ कही फल तैसौ, हमहीं दूषन लायौ ॥

मुरली धुनि करी बलबीर।
सरद निसि को इंदु पूरन, देखि जमुना तीर ॥
सुनत सो धुनि भईं ब्याकुल, सकल गोप-कुमारि।
अंग अभरन उलटि साजे, रही कछु न सम्हारि ॥
गईं सोरह सहस हरि पै, छाँड़ि सुत पति नेह।
एक सखी रोकि कै पति, सो गई तजि देह ॥
दियौ तिहिं निर्बान पद हरि, चितै लोचन-कोर।
सूर भजि गोबिंद यौं जग-मोह बंधन तोर ॥१०४४॥

सुनत बन बेनु धुनि चलीं नारी।
लोक-लज्जा निदरि, भवन तजि सुंदरि मिलीं बन जाइकै बन-बिहारी ॥
दरस कैं सहत मन हरष सबकौं भयौ, परस की लाभ अति करति भारी।
गईं मन-वच-करम तज्यौ सुत-पति-धरम, मेटि भव-भरम, सहि लाज-गारी ॥
भजै जिहिं भाव जो मिलै हरि ताहि त्यौं, भेद-भेदा नहीं पुरुष नारी।
सूर-प्रभु स्याम ब्रज-बाम आतुर काम मिलीं बन-धाम गिरिराज-धारी ॥१०४५॥

देखि स्याम मन हरष बढ़ायौ।
तैसियै सरद चाँदनी निर्मल तैसोई रास-रंग उपजायौ ॥
तैसियै कनक-बरन सब सुंदरि, इहिं सोभा पर मन ललचायौ।
तैसियै हंस-सुता पवित्र तट, तैसोइ कल्पवृच्छ सुख-दायौ ॥
करौं मनोरथ पूरन सबके, इहिं अंतर इक खेल उपायौ।
सूर स्याम रचि कपट चतुरई जुवतिनि कैं मन यह भरमायौ ॥

मिलि चाहैं मन की गति भाई।
हँसि-हँसि स्याम कहत हैं सुंदरि, को तुम ब्रज-मारगहिं भुलाइ ॥

मनु तुषार कमलनि परयौ ऐसैं कुम्हिलानी ।
मनौ महानिधि पाइ कै, खोयें पछितानी ।
ऐसी ह्वै गई तनु-दसा पिय की सुनि बानी ।
सूर बिरह ब्याकुल भई मूछी बिनु पानी ॥१०५४॥

स्याम उर प्रीति, मुख कपट-बानी ।
जुवति ब्याकुल भई धरनि सब गिरि गईं, स्वास गई टूटि नहिं भेद जानी ।
हँसत नँदलाल मन-मन करत ख्याल ये भईं बेहाल मन-काम मारी ।
रुदन जल नदी-सम बहि चल्यौ उरज बिच मनौ गिरि फोरि सरिता पनारी ।
अंग थकि पथिक नहिं चलत और पंथ के, काम-रस-भाव हरि नहीं जानैं ।
सूर प्रभु निठुर करिया कहा ह्वै रहे, तनहिं बिनु और को नेह जानै ॥१०५५॥

निठुर बचन जनि बोलहु स्याम ।
आस निरास करौ जनि हमरी, बिकल कहति हैं बाम ।
अंतर कपट दूरि करि डारौ हम तन कृपा निहारौ ।
कृपा सिंधु तुमकौं सब गावत अपनौ नाम सम्हारौ ।
हमकौं सरन और नहिं सूझै, कापै हम अब जाहिं ।
सूरदास प्रभु निज दासिनि की चूक कहा पछिताहिं ॥१०५६॥

तुम पावत हम घोष न जाहिं ।
कहा जाइ लैहैं हम ब्रज, यह दरसन त्रिभुवन नाहिं ।
तुमहूँ तैं ब्रज हितू न कोऊ, कोटि कही नहिं मानैं ।
काके पिता मातु हैं काकी काहूँ हम नहिं मानैं ।

अब तुम भवन जाहु, पति पूजहु परमेस्वर की नाईं ।
सूर स्याम जुवतिनि सौं यह कहि, करी अपराध छमाई ।।१०२१।।

यह जुवतिनि कौ धरम न होइ ।
धिक् सो नारि पुरुष जो त्यागै धिक सो पति जो त्यागै सोइ ।।
पति की धर्म यहै प्रतिपालै जुवती सेवा ही की धर्म ।
जुवती सेवा तऊ न त्यागै जौ पति करै कोटि अपकर्म ।।
बन मैं रैनि-बास नहिं कीजै देख्यौ बन वृन्दावन आइ ।
विविध सुमन सीतल जमुना जल त्रिविध समीर-परम सुखदाई ।।
घरही मैं तुव धर्म सदाई सुत-पति दुखित होत तुम जाहु ।
सूर स्याम यह कहि परमोधत, सेवा करहु जाइ घर नाहु ।।१०२२।।

इहिं विधि वेद-मारग सुनौ ।
कपट तजि पति करौ पूजा, कहा तुम जिय गुनौ ।।
कंत मानहु भव तरौगी, और नाहिं उपाइ ।
ताहि तजि क्यौं बिपिन आईं कहा पायौ आइ ।।
बिरध अरु बिन भागहूँ कौ पतित जौ पति होइ ।
जऊ मूरख होइ रोगी, तजै नाहीं सोइ ।।
यहै मैं पुनि कहत तुमसौं जगत मैं यह सार ।
सूर पति-सेवा बिना क्यौं तरौगी संसार ।।१०२३।।

कहा भयौ जौ हम ह्वै आईं कुल की रीति गँवाइ ।
हमहूँ की विधि की डर भारी, अजहूँ जाउ पराइ ।।
तजि भरतार और जौ भजियै, सो कुलीन नहिं होइ ।
मरैं नरक, जीवत या जग मैं, भलौ कहै नहिं कोइ ।।
हम जौ कहत सबै तुम जानति तुमहूँ चतुर सुजान ।
गुनहूँ सूर घर जाहु, हमहूँ घर जैहैं होत बिहान ।।१०२४।।

निठुर बचन सुनि स्याम के, जुवती बिकलानी ।
चकित भईं मनु मुनि रहीं नहिं आवति बानी ।।

दीन बानी स्रवन सुनि-सुनि, द्रवे परम कृपाल।
सूर प्रभु अँग न कौंची, धन्य-धनि ब्रज-बाल ॥१०६१॥

हरि सुनि दीन बचन रसाल।
बिरह ब्याकुल देखि बाला भरे नैन बिसाल॥
पाछ आनन नीर धारा ढरनि अर्घ बहाइ।
मनहुँ सुधा मयंक अवली, प्रेम प्रगट दिखाइ॥
चारु मुख पर सिखर बैठे, सुभग चीर चकोर।
पियत मुख भरि-भरि सुधा-रस गिरत तापर भोर॥
हरष-बानी कहत पुनि-पुनि, धन्य-धनि ब्रज-बाल।
सूर प्रभु करि कृपा जोरी सदय भए गोपाल ॥१०६२॥

स्याम हँसि बोले प्रभुता डारि।
बारंबार बिनय कर जोरत कटि-पट गोद पसारि॥
तुम सनमुख, मैं बिमुख तुम्हारौ मैं असाधु, तुम साध।
धन्य-धन्य कहि-कहि जुबतिनि कौ आप करत अनुराध॥
मोकौं भजीं एक चित ह्वै कै निदरि लोक-कुल कानि।
सुत-पति-नेह तोरि तिनुका सौं मोहीं निज करि जानि॥
जाकैं हाथ पेड़ फल ताकौ सो फल लेहु कुमारि।
सूर कृपा पूरन सौं बोले गिरि-गोबरधन-धारि ॥१०६३॥

हरि-मुख देखि भूले नैन।
हृदय-हरषित प्रेम गदगद, मुख न आवत बैन॥
काम आतुर भजीं गोपी, हरि मिले तिहिं भाइ।
प्रेम-बस्य कृपाल केसव जानि लेत सुभाइ॥
परसपर मिलि हँसत रहसत हरषि करत बिलास।
उमँगि आनँद-सिंधु उछल्यौ स्याम कैं अभिलाष॥
मिलति इक-इक भुजनि भरि-भरि, रास-रुचि जिय आनि।
तिहिं समय सुख स्याम-स्यामा सूर क्यौं कहै गानि ॥१०६४॥

काके पति, सुत-मोह कौन कौ, घरही कहा पठावत।
कैसो धर्म, पाप है कैसो आस निरास करावत।
हम जानैं केवल तुमही कौं, और वृथा संसार।
सूर स्याम निठुराई तजियै तजियै वचन विकार ॥१०४८॥

भवन नहीं भय काहिं कन्हाई।
स्वजन बंधु तैं नाहिं ताहिरी, वे क्यों करैं बड़ाई।
जौ कबहूँ वे छोहिं कृपा करि धिक वै, धिक हम नारि।
तुम बिमुख जीवन राखै धिक, कहौ न आपु बिचारि।
धिक यह लाज विमुख की संगति धनि जीवन तुम-हेत।
धिक माता धिक पिता गेह धिक, धिक सुत पति को चेत
हम चाहतिं मृदु हँसनि-माधुरी जातैं उपज्यौ काम।
सूर स्याम अधरनि-रस दीजहु, बरषि बिरह सब धाम ।१०४९

आस जनि तोरहु स्याम, हमारी।
बेनु-नाद धुनि सुनि उठि धाईं प्रगटत नाम मुरारी।
क्यों तुम निठुर नाम प्रगटायौ काहे बिरह भुलाने ?
दीन आजु हम कौ ठौर नाहीं, जानि स्याम मुसकाने।
अपने भुज-दंडनि करि गहिऐ, बिरह सलिल मैं भासी।
बार-बार कुल-धर्म बतावत, ऐसे तुम अबिनासी।
प्रीति-वचन-नौका करि राखौ, अंकम भरि बैठावहु।
सूर स्याम, तुम बिनु गति नाहीं जुवतिनि पार लगावहु १०५०

चित दै सुनौ अंबुज-नैन।
कपट की गथ मथी तुमकौ, सरस अंमृत बैन।
हम गुनी सब पाय अच्युत तुम तरुन धन-रासि।
कैसहूँ सुख-दान दीजै, बिरह-बारिध नासि।
करहु यह जस जगत त्रिभुवन निठुर कोठी खोलि।
कृपा चितवनि भुज उठावहु प्रेम-बचननि पासि।

धनि ब्रज-लोग धन्य ब्रज-बाला, बिहरत रास गुपाल ।
धनि बंसीबट, धनि जमुना-तट, धनि धनि लता-तमाल ॥
सब तैं धन्य-धन्य बृंदाबन जहाँ कृष्न कौ बास ।
धनि धनि सूरदास के स्वामी अद्भुत राच्यौ रास ॥१०६८॥

नैन सफल अब भए हमारे ।
देव लोक नीसान बजाए बरषत सुमन सुधारे ॥
जै जै धुनि किन्नर-मुनि गावत निरखत जोग बिसारे ।
सिव-सारद-नारद यह भाषत, धनि-धनि नंद-दुलारे ॥
सुर-ललना पति-गति बिसराए रहीं निहारि-निहारि ।
सात न बनै देखि सुख हरि कौ भाई लोक बिसारि ॥
यह छबि तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं जो बृंदाबन धाम ।
सुंदरता-रस-गुन की सीवाँ सूर राधिका स्याम ॥१०६९॥

इसकौ बिधि ब्रज-बधू न कीन्ही कहा अमरपुर बास भयें ।
बार-बार पछितातिं यहै कहि, सुख होतौ हरि संग रहैं ॥
कहा जनम जो नहीं हमारौ फिरि-फिरि ब्रज अवतार भयौ ।
बृंदाबन द्रुम-लता हूजियै, करता सौं माँगियै चलौ ॥
यह कामना होइ क्यौं पूरन दासी ह्वै बरु ब्रज रहियै ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी तिनहिं बिना कासौं कहियै ॥१०७०॥

मानौ माई घन घन-अंतर दामिनि ।
घन दामिनि दामिनि घन अंतर, सोभित हरि-ब्रज-भामिनि ॥
जमुना पुलिन, मल्लिका मनोहर सरद सुहाई जामिनि ।
सुंदर ससि गुन-रूप-राग-निधि, अंग अंग अभिरामिनि ॥
रच्यौ रास मिलि रसिक राइ सौं मुदित भई गुन-ग्रामिनि ।
रूप-निधान स्याम सुंदर तन, आनँद मन बिस्रामिनि ॥
खंजन मीन मयूर हंस पिक, भाइ-भेद गज गामिनि ।
को गति गनै सूर मोहन सँग काम बिमोह्यौ कामिनि ॥१०७१॥

रास-रुचि जबहिं स्याम मन आनी ।
करहु सिंगार सँवारि सुन्दरी कहत हँसत हरि बानी ॥
जब देखैं अँग सजे भूषन, तब धरनी मुसुक्यानी ।
बार-बार पिय देखि-दीखि मुख, पुनि-पुनि सुघटि बखानी ॥
नव-सत साजि भईं सब ठाढ़ी, को छवि सकै बखानी ।
यह छवि निरखि अधीर भए प्रभु, काम नारि बिवसानी ॥
कुच भुज परसि करी मन इच्छा कछु तनु-बाधा भुलानी ।
सुनहु सूर रस-रास नायिका सुंदरि राधा रानी ॥१०६५॥

अंचल चंचल स्याम गह्यौ ।
लै गए सुभग पुलिन जमुना कैं, अग-अँग भेद रह्यौ ॥
कल्पतरोवर तर बंसीवट, राधा रति-गृह धाम ।
तहाँ रास-रस-रंग उपायौ सँग सोभित ब्रज-बाम ॥
मध्य स्याम घन, तड़ित-दामिनी अति राजति सुभ गोरी ।
सूरदास प्रभु नवल छबीले नवल छबीली गोरी ॥१०६६॥

रास-मंडल बने स्याम स्यामा ।
नारि दुहुँपास गिरिधर बने दुहुँनि बिच, ससि सहस-बीस द्वादस उपामा ॥
मुकुट की छबि निरखि कहा उपमा कहौं, चैन जानै नहीं नैन जानै ॥
सुभग नव मेघ, ता बीच चपला चमक निरखि, नृत्यत मोर हरष मानै ॥
करत आनंद पिय-संग-ललना-पुंज, पढ़त रस-रंग छिन छिनहिं औरै ॥
सूर प्रभु रास-रस-नागरी मध्य दोउ परसपर नारि-पति मनहिं चोरै ॥१०६७॥

सुरगन चढ़ि बिमान नभ देखत ।
ललना सहित सुमन-गन बरसत धन्य जन्म ब्रज लेखत ॥

धनि ब्रज लोग धन्य ब्रज-बाला, बिहरत रास गुपाल ।
धनि बंसीबट, धनि जमुना-तट धनि धनि लता-तमाल ॥
सब तैं धन्य-धन्य बृंदावन जहाँ कृष्न कौ बास ।
धनि-धनि सूरदास के स्वामी, अद्भुत राच्यौ रास ॥१०६८॥

नैन सफल अब भए हमारे ।
देव लोक नीसान बजाए बरषत सुमन सुभारे ॥
जै जै धुनि किन्नर-मुनि गावत निरखत जोग बिसारे ।
सिव-सारद नारद यह भाषत धनि-धनि नंद-दुलारे ॥
सुर-ललना पति-गति बिसराए रहीं निहारि-निहारि ।
खात न बनै देखि सुख हरि कौ चाईं लोक बिसारि ॥
यह छबि तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं जो बृंदावन धाम ।
सुंदरता-रस-गुन की सींवाँ सूर राधिका स्याम ॥१०६९॥

हमकौं बिधि ब्रज-बधू न कीन्ही, कहा अमरपुर बास भये ।
बार-बार पछितात यहै कहि, सुख होतौ हरि संग रहे ॥
कहा जनम जो नहीं हमारौ फिरि फिरि ब्रज अवतार भयौ ।
बृंदावन द्रुम-लता हूजियै, करता सौं माँगियै यहौ ॥
यह कामना होइ क्यौं पूरन दासी ह्वै बस ब्रज रहियै ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी तिनहिं बिना कासौं कहियै ॥१०७०॥

मानौ माई घन घन अंतर दामिनि ।
घन दामिनि दामिनि घन-अंतर, सोभित हरि-ब्रज-भामिनि ॥
जमुना पुलिन मल्लिका मनोहर, सरद सुहाई जामिनि ।
सुंदर ससि गुन-रूप-राग निधि अंग अंग अभिरामिनि ॥
रच्यौ रास मिलि रसिक राइ सौं मुदित भईं गुन-ग्रामिनि ।
रूप-निधान स्याम सुंदर तन आनँद मन बिस्रामिनि ॥
खंजन मीन मयूर हंस पिक, भाइ-भेद गज गामिनि ।
को गति गनै सूर मोहन सँग काम बिमोह्यौ कामिनि ॥१०७१॥

देखौ माई, रूप सरोवर साज्यौ।
ब्रज-बनिता-बर-बारि-बृंद मैं श्री ब्रजराज बिराज्यौ॥
लोचन जलज, मधुप अलकावलि, कुंडल मीन सलोल।
कुच चक्रवाक बिलोकि बदन-बिधु, बिछुरि रहे अनबोल॥
मुक्ता-माल बाल-बग-पंगति करति कुलाहल कूल।
सारस हंस मोर सुक-स्रेनी, बैजयंति सम तूल॥
पुरइन कपिस निचोल, बिबिध रँग, बहुरति रुचि उपजावै।
सूर स्याम आनंदकंद की सोभा कहत न आवै॥१०७१॥

जुवति अंग छबि निरखत स्याम।
नंद-कुँवर की अंग माधुरी, अवलोकति ब्रज-बाम॥
परी दृष्टि उन कुचनि पिया की, वह सुख कह्यौ न जाइ।
अँगिया नील माँडनी राती निरखत नैन चुराइ॥
वै निरखति पिय-उर भुज की छबि पहुँचनि पहुँची भ्राजति।
कर-पल्लवनि मुद्रिका सोहति वा छबि पर मन लाजति॥
चंदन-बिंदु निरखि हरि रीझे, ससि पर बाल बिलास।
नंदलाल ब्रजबाल-सुभगनि कयौ, बरनै सूरजदास॥१०७२॥

स्याम तनु राजति पीत पिछौरी।
उर बनमाला काछनी काछे, कटि किंकिनि छबि-तौरी॥
बेनी सुभग नितंबनि डोलति मंदगामिनी नारी।
सूथन जँघन बाँधि नारा बँद तिरनी पर छबि भारी॥
भजनि रँग जावक की सीमा, देखत पिय-मन भावति।
सूरदास-प्रभु तनु-त्रिभंग है, जुवतिनि मनहिं रिझावत॥१०७४

नृत्यत स्याम नाना रंग।
मुकुट-लटकनि, भृकुटि-मटकनि, धरे नटवर अंग॥
चलत गति कटि कुनित किंकिनि, घूँघरू झनकार।
मनौ हंस रसाल बानी, सरस परस बिहार।

लसति कर पहुँची, उपजै मुद्रिका अति जोति ।
भाव सौं भुज फिरत जबहीं, तबहिं सोभा होति ।
कबहुँ नृत्यत नारि-गति पर, कबहुँ नृत्यत आपु ।
सूर के प्रभु रसिक के मनि, रच्यौ रास प्रतापु ॥१०७४॥

नृत्यत अंग-अभूषन बाजत ।
गति सुघंग की भाव दिखावत इक तैं इक अति राजत ।
कहत न बनै, रही रस ऐसी बरनत बरनि न जाइ ।
जैसेइ बने स्याम तैसीयै गोपी, छवि अधिकाइ ।
कंकन चुरी किंकिनी नूपुर, पैजनि बिछिया सोहति ।
अद्भुत धुनि उपजति इनि मिलि कै, भ्रमि भ्रमि इत-उत जोहति ।
सुनि-सुनि स्रवन रीझि मनहीं मन, राधा रास-रसज्ञा ।
सूर स्याम सबके सुखदायक लायक गुननि-गुनज्ञा ॥१०७५॥

उघटत स्याम नृत्यति नारि ।
धरे अधर उपंग, उपजैं लेत हैं गिरिधारि ।
ताल, मुरज, रबाब, बीना किन्नरी रस सार ।
सब्द संग मृदंग मिलवत, सुघर नंदकुमार ।
नागरी सब गुननि आगरि मिलि चलति पिय-संग ।
कबहुँ गावति, कबहुँ नृत्यति, कबहुँ उघटति रंग ।
मंडली गोपाल-गोपी अंग अंग अनुहारि ।
सूर प्रभु घन नवल भामिनि, दामिनी छवि वारि ॥१०७६॥

मुरली-धुनि बैकुंठ गई ।
नारायन कमला सुनि दंपति, अति रुचि हृदय भई ।
सुनौ प्रिया यह बानी अद्भुत वृंदावन हरि देखौ ।
धन्य-धन्य श्रीपति मुख कहि-कहि, जीवन ब्रज कौ लेखौ ।
रास बिलास करत नँद-नंदन सो हमतैं, धनि दूरि ।
धनि बन-धाम धन्य ब्रज-धरनी उड़ि लागै जौ धूरि ।

यह सुख तिहूँ भुवन मैं नाहीं जो हरि-संग पल एक।
सूर निरखि नारायन इक टक भूले नैन निमेष ॥१०७८॥

मुरली सुनत अचल चले।
थके चर, जल झरत पाहन बिफल वृच्छ फले।
पय स्रवति गोधननि थन तैं, प्रेम पुलकित गात।
झुरे द्रुम अंकुरित पल्लव, बिटप चंचल पात।
सुनत खग-मृग मौन साध्यौ चित्र की अनुहारि।
धरनि उमगि न मात उर मैं जती जोग बिसारि।
ग्वाल गृह-गृह सबै सोवत उहैं सहज सुभाइ।
सूर प्रभु रस रास के हित, सुखद रैनि बढ़ाइ ॥१०७९॥

रास-रस मुरली ही तैं जान्यौ।
स्याम अधर पर बैठि नाद कियौ, मारग चंद्र हिरान्यौ।
धरनि जीव जल-थल के मोहे, नभ-मंडल सुर थाके।
तृन-द्रुम-सलिल पवन गति भूले स्रवन सब्द पर्यौ जाके।
बच्यौ नहीं पाताल-रसातल, कितिक उदै लौ भान।
नारद-सारद-सिव यह भाषत, कछु तनु रह्यौ न स्यान।
यह अपार रस रास उपायौ, सुन्यौ न देख्यौ नैन।
नारायन धुनि सुनि ललचाने, स्याम अधर-रस-बैनु।
कहत रमा सौं सुनि-सुनि प्यारी, बिहरत हैं बन स्याम।
सूर कहाँ हमकौं वैसौ सुख जो बिलसति ब्रज-बाम ॥१०८०॥

गरब भयौ ब्रजनारि कौं, तबहीं हरि जाना।
राधा प्यारी संग लिये भए अंतर्धाना।
गोपिनि हरि देख्यौ नहीं, तब सब अकुलाईं।
चकित होइ पूछन लगीं कहँ गए कन्हाई।
कोउ मर्म जानै नहीं, ब्याकुल सब बाला।
सूर स्याम ढूँढ़ति फिरैं, जित-तित ब्रज-बाला ॥१०८१॥

हुते अनंद अबहीं सँग बन मैं, मोहन-मोहन कहि कहि टेरैं ।
ऐसी सँग तजि दूर भए क्यौं जानि परत अब गैयनि घेरैं ॥
चूक मानि लीन्हीं हम अपनी, कैसेहुँ आस बहुरि फिरि हेरैं ।
कहियत हौ तुम अंतरजामी, पूरन कामी सबही केरैं ॥
ढूँढ़ति हैं द्रुम-बेली बाला भई बिहाल करति अवसेरैं ।
सूरदास प्रभु रास बिहारी, कृपा करत काहे की मेरैं ॥१०८२॥

तुम कहुँ देखे स्याम बिलासी ।
तनक बजाइ बाँस की मुरली लै गए प्रान निकासी ॥
कबहुँक आगे कबहुँक पाछैं, पग पग भरति उसासी ।
सूर स्याम-दरसन के कारन निकसी चंद कला सी ॥१०८३॥

अति ब्याकुल भईं गोपिका, ढूँढ़ति गिरिधारी ।
बूझति हैं बन-बेलि सौं देखे बनवारी ॥
जाही, जूही, सेवती करना कनियारी ।
बेलि चमेली मालती बूझति द्रुम-डारी ।
कुवा मरुआ कुंद सौं कहैं गोद पसारी ।
बकुल, बहुलि, बट कदम पै ठाढ़ीं ब्रजनारी ।
बार बार हा-हा करैं कहुँ हौ गिरिधारी ।
सूर स्याम कौ नाम लै लोचन जल ढारी ॥१०८४॥

ब्याकुल भईं घोष-कुमारि ।
स्याम सँग तजि कै कहाँ गए यह कहति ब्रजनारि ॥
चली दिसि बन द्रुमनि देखति चकित भईं बिहाल ।
राधिका नहिं तहाँ देखी, कहाँ वाके ख्याल ॥
कछुक दुख कछु हरष कीन्ही, दुख लै गई स्याम ।
सूर प्रभु-सँग देखि हमको करे ऐसे काम ॥१०८५॥

बन-ढूँढ़ति चली ब्रजनारि ।
सदा राधा करति दुबिधा देखि रस की गारि ॥

संगहीं लै गई हरि कौं, सुख करति मन-धाम।
जहाँ जैहै हरि तैहैं, महा रमनिनि धाम॥
चरन चिन्हनि चली देखति, राधिका पग माहिं।
सूर प्रभु-पग परसि गोपी, हरषि मन मुसुकाहिं ॥१०८६॥

तब नागरि जिय गर्व बढ़ायौ।
मो समान तिय और नहीं कोउ, गिरिधर मैं ही बस करि पायौ।
जोइ-जोइ कहति करत पिय सोइ-सोइ, मेरैं ही हित रास उपायौ।
सुंदरि, चतुरि, और नहिं मोसी, देह धरे कौ भाव जनायौ॥
कबहुँक बैठि जाति हरि कर धरि, कबहुँ कहति, मैं अति स्रम पायौ।
सूर स्याम गहि कंठ रही तिय कंध चढ़ौ यह बचन सुनायौ ॥१०८७॥

कहै भामिनी कंत सौं, मोहिं कंध चढ़ावहु।
नृत्य करत अति स्रम भयौ, ता स्रमहिं मिटावहु।
धरनी धरत बनै नहीं, पग अतिहिं पिराने।
तिया बचन सुनि गर्व के पिय मन मुसुकाने॥
मैं अबिगत, अज अकल हौं यह मरम न पायौ।
भाव-बस्य सब पै रहौं निगमनि यह गायौ॥
एक प्रान द्वै देह हैं, द्विविधा नहिं यामैं।
कियौ नारिहु तैं, मैं रहौं न तामैं।
सूरज प्रभु अमर भए, सँग तैं तजि प्यारी।
जहँ की तहँ ठाढ़ी रही, वह घोष-कुमारी ॥१०८८॥

तब हरि भए अंतरधान।
जब कियौ मन गर्व प्यारी, कौन मोसी आन॥
धनि भ्रमित भई चकित मोहन धरनि न धीरै सोइ।
कंठ भुज गहि रही पद कहि पिउ कंध चढ़ाइ।
गए संग बिसारि, रस मैं बिरस कीन्हौ घाय॥
सूर प्रभु दुरि चरित देखत सुरनि भई बिराम ॥१०८९॥

जाएँ कब तुम देखे, अली।

बिछुरे मदन गोपाल रसिक मोहिं, बिरह-व्यथा तनु बाढ़ी।
लोचन सजल, बचन नहिं आवै स्वाँस लेति अति गाढ़ी।
नंदलाल हमसौं ऐसी कीनी, जल तैं मीन धरि काढ़ी।
तब कत लाड़ लड़ाइ लड़ैते बेनी कर गुही गाढ़ी।
सूर स्याम प्रभु तुम्हरे दरस बिनु सब न चलत डग आड़ी॥

जौ देखैं द्रुम के तरैं मुरझी सुकुमारी।
चकित भईं सब सुंदरी यह तौ राधा री।
याही कौ खोजति सबै यह रही कहाँ री।
धाइ परीं सब सुंदरी जो जहाँ तहाँ री।
तन की तनकहुँ सुधि नहीं, व्याकुल भई बाला।
यह तौ अति बेहाल है, कहाँ गए गोपाला।
बार-बार बूझतिं सबै नहिं बोलति बानी।
सूर स्याम काहैं तजी, कहि सब पछितानी॥१ ६१॥

क्यौं राधा, नहिं बोलति है?

काहैं धरनि परी व्याकुल ह्वै काहैं नैन न खोलति है?
कनक-बेलि सी क्यौं मुरझानी क्यौं बन माँझ अकेली है?
कहाँ गए मनमोहन तजि कै, कोउँ बिरह दुहेली है।
स्याम-नाम स्रवननि धुनि सुनि कै, सखियनि कंठ लगावतिं है।
सूर स्याम आए यह कहि-कहि, ऐसें मन हरषावतिं है॥१०६३॥

कहाँ रहे अब लौं तुम स्याम।

नैन उघारि निहारि रही तहँ, जौ देखैं घन-स्याम।
लागी करन बिलाप सखनि सौं स्याम गए मोहिं त्यागि।
तुमकौं कहीं मिले नँद-नंदन पूछति यह उठि जागि।
निरखि बदन वृषभानु-कुँवरि कौ, मनौ सुधा-बिनु चंद।
राधा-बिरह देखि बिरहानी, यह गति बिनु नँद नंद।

हरि बिनु लागत है बन सूनौ ।
ढूँढ़त फिरहिं सकल ब्रज-जुवती, बढ़त काम-दुख दूनौ ॥
तजि सुत-पति मुनि स्रवननि धाई, मुरलि-नाद सुधु कीनौ ।
व्यापित मकरध्वज अति आतुर, मनहु मीन जल-हीनौ ॥
चितवहिं चकित दिसनि दिसि हेरहिं मनमोहन हरि हीनौ ।
द्रुम-बेली पूछैं सब सुन्दरि, तबलु जात कहूँ चीनौ ॥
कदली-ओट निचोरत अंचल अधर-सुधा-रस भीनौ ।
सूर स्याम, पिय-प्रेम उमगि रस, हँसि आलिंगन दीनौ ॥११ १

राधा भूल रही अनुराग ।
तरु तर रुदन करति सुरमनी, हूँ ढ़ि फिरी बन-बाग ॥
कबरी मसत सिखी बहि भ्रम चरन मिलीमुख लाग ।
बानी मधुर जानि पिक बोलति कदम करारत काग ॥
कर पल्लव किसलय कुसुमाकर, जानि मसत भए कीर ।
राका चंद्र चकोर जानि कै, पिवत, नैन, लौ नीर ॥
बिहवल बिकल जाति नँद-नंदन, प्रगट भए तिहिं काल ।
सूरदास प्रभु प्रेमांकुर धर, लाय लई भुज माल ॥११०२॥

स्याम तजी स्यामा गोपाल ।
बीरी कृपा बहुत गरबानी, जोड़ी युवि ब्रज-बाल ॥
तैं कछु कपट सबनि सौं कीन्यौ, अपजसे तैं न डरानी ।
हम पकहिं सँग पकहिं मति सब कोऊ नहिं बिलगानी ॥
हम चातकि, घन हरि नँदनंदन, बरषनि लागि हित कीन्यौ ।
तुम मृद प्रबल पवन सम सजनी, प्रेम बीच दुख दीन्यौ ॥
बोली दीन दुखित भए, सुखनिधि मोहन बेनु बजायौ ॥
सूर स्याम तब दरस परस करि, मिटि संताप नसायौ ॥११०३

प्रगट भए नँदनंदन आइ ।
प्यारी निरखि विरह अति व्याकुल बर तैं लई उठाइ ॥

उभय भुजा भरि अंकम दीन्हीं, राखी कंठ लगाइ।
मानौं तैं प्यारी तुम मेरैं, यह कहि दुख बिसराइ॥
हैं सब भए अंतर हम तुम सौं सहज खेल उपजाइ।
धरनी मुरझि परीं तुम काहैं क्यौं गईं अकुलाई।
राधा सकुचि रही मन आप्यौ, कह्यौ न कछू सुनाइ।
सूरदास-प्रभु मिलि सुख दीन्यौ दुख डारयौ बिसराइ॥११०४

स्याम-छबि निरखति नागरि नारि।
प्यारी-छबि निरखत मनमोहन सकत न नैन पसारि।
पिय सकुचत नहिं दृष्टि मिलावत सन्मुख होत लजात।
मोरपिच्छ निरखत अवलोकति, अतिहिं हृदय हरषात॥
परस-परस मोहिनि मोहन मिलि सँग गोपी-गोपाल।
सूरदास प्रभु सब गुन लायक, दुष्टनि के उर-साल॥११०५

बहुरि स्याम सुख-रास कियौ।
भुज-भुज जोरि जुरीं ब्रजबाला वैसोई रस उमँगि हियौ।
वैसैंहि मुरली नाद प्रकास्यौ वैसैंहि सुर-नर थक्ति भए।
वैसैंहि उडुगन-सहित निसापति, वैसैंहि मारग भूलि गए।
वैसैंहि दसा भई जमुना की वैसैंहि गति तजि पवन थक्यौ
वैसैंहि नृत्य तरंग बढ़ायौ वैसैंहि बहुरौ काम जग्यौ।
बढ़ी निसा वैसैंहि सब जुवती, वैसैंहीं हरि सबनि भजे।
सूर स्याम वैसैंहि मन-मोहन वैसैंहि प्यारी निरखि लजे॥११०६

पुलिनहिं-झूलत स्यामा-स्याम।
कोक-कला-व्युत्पन्न परस्पर, देखत लज्जित काम॥
जा रस कौं ब्रजनारि कियौ ब्रत सो रस सबहिंनि दीन्हौ।
मनकामना भई परिपूरन, सबहिंनि मानि जु लीन्हौ॥
राग-रागिनी प्रगट दिखायौ गायौ जो जिहिं रूप।
सप्त सुरनि के भेद प्रकासति नागरि रूप-अनूप॥

या बन मैं कैसैं तुम आई, स्याम संग है नाहिं।
कमु जानति, कहँ गए कन्हाई तहाँ सौंहिं लै जाहिं।
मैं हठ कियौ वृथा री माई प्रिय स्पर्धौ अभिमान।
सूर स्याम कौं पै मोहिं जानी ह्वै गए अंतरधान ॥१०६३॥

मैं अपनै मन गरब बढ़ायौ।
यहै कह्यौ पिय कंध चढ़ौंगी तब मैं भेद न पायौ।
यह बानी सुनि हँसे कंठ भरि भुजनि उछंग लई।
तब मैं कह्यौ, कौन है मो सी, अंतर जानि गई।
कहाँ गए गिरिधर तजि मोकौं ह्याँ कैसैं मैं आई।
सूर स्याम अंतर भए मोतैं, अपनी चूक सुनाई ॥१०६४॥

केहिं मारग मैं जाउँ सखी री मारग मोहिं बिसरयौ।
ना जानौं कित ह्वै गए मोहन, जात न जानि परयौ।
अपनौ पिय ढूँढ़ति फिरौं, मोहिं मिलिबे कौ चाव।
काँटा लाग्यौ प्रेम कौ पिय यह पायौ घाव।
बन डोंगर ढूँढ़त फिरी, घर-मारग तजि गाउँ।
बूझौं द्रुम, प्रति बेलि कोउ कहै न पिय कौ नाउँ।
चकित भई चितवति फिरी ब्याकुल अतिहिं अनाथ।
अब कैं जौ कैसेहुँ मिलौं, पलक न त्यागौं साथ।
हृदय माँझ पिय घर करौं नैननि बैठक देउँ।
सूरदास प्रभु सँग मिलौं, बहुरि रास-रस लेउँ ॥१०६५॥

बदन करति वृषभानु-कुमारी।
बार-बार सखियनि सौं भाखति कहाँ गए गिरिधारी।
कबहुँ गिरति धरनि पर ब्याकुल, देखि दसा ब्रजनारी।
भरि अँकवारि धरति, मुख पोंछति हेरति नैन बस वारी।
त्रिधा पुरुष सौं मान करति है जाने निठुर मुरारी।
सूर स्याम कुल-धरम आपनौ तप रहत बनवारी ॥१०६६॥

नँद-नँदन उनकी हम जानतिं।
ग्वालनि संग रहत वे माई, यह कहि-कहि गुन गानतिं॥
बन-बन धेनु चरावत बासर तिया पचत घर नाहीं।
देखि चमर वृषभानु-सुता की मन-चकनी पछिताहीं॥
कहा भयौ तिय सौं हठ कीन्हौ, यह न बूझिये स्यामहिं।
सूरदास प्रभु, मिलहु कृपा करि, दूरि करौ मन कामहिं॥१०९७

मिलहु स्याम मोहिं चूक परी।
तिहिं अंतर तनु की सुधि नाहीं रसना रट लागी न टरी॥
कृष्न-कृष्न करि टेरि उठति है जुग सम बीतत पलक-घरी।
धरनि परी व्याकुल भइ बोलति, लोचन धारा आँसु झरी॥
कबहुँ मगन कबहुँ सुधि आवति, सरन सरन कहै बिरह-जरी।
सूर निरखि ब्रजनारि दसा यह, चकित भई जहँ-तहाँ खरी॥

करति है हरि चरित ब्रज-नारि।
देखहीं अति बिकल राधा, भई बुधि बिचारि॥
एक भई गोपाल की बपु, एक भई बनचारि।
एक भई गिरिधरन समरथ एक भई दैत्यारि॥
एक इक भई धेनु-बालक, एक भई नँदलाल।
एक भई कमला उचारन एक त्रिभंग-रसाल॥
एक भई दधि-दासि मोहन, कहति राधा नारि।
एक कहति उठि, मिलहु भुज भरि सूर प्रभु की प्यारि॥१०९९॥

सुनि सुनि स्रवन उठी अकुलाइ।
जो देखै नँद-नँदन नहीं वै, सखियन भेष बनाइ॥
कहा कपट करि मोहिं दिखावति कहाँ स्याम सुखदाइ।
कृष्न-कृष्न सरनागत कहि-कहि, बहुरि गिरी मुरझाइ॥
पुनि दौरी जहँ-तहँ ब्रजबाला बन-द्रुम बीर लगाइ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी बिरहिनि गेह सिधाइ॥११००॥

हरि बिनु लागत है बन सूनौ ।
हँसत फिरतिं सकल ब्रज-जुवती, बढ़त काम-दुख दूनौ ॥
तजि सुत-पति सुनि स्रवननि धाईं, मुरलि-नाद सबु कीनौ ।
व्यापित मकरध्वज अति आतुर, मनहु मीन जल-हीनौ ॥
चितवतिं चकित दिसनि दिसि हेरतिं मनमोहन हरि लीनौ ।
द्रुम-बेली पूछें सब सुन्दरि, तबहु आप कहुँ दीनौ ॥
कदली ओट निहोरत अंचल अधर-सुधा-रस भीनौ ।
सूर स्याम पिय-प्रेम उमगि रस, हँसि आलिंगन दीनौ ॥११०१

राधा मुख रही अनुराग ।
तब घर बदन कहति मुरझानी, ढूँढ़ि फिरी बन-बाग ॥
कबरी मसत सिखंडी अति भ्रम, बरन सिलीमुख लाग ।
बानी मधुर जानि पिक बोलति कदम करारत काग ॥
कर-पल्लव किसलय कुसुमाकर, जानि मसत मद कीर ।
राका चंद चकोर जानि कै, पिवत, नैन, कौ नीर हैं,
विह्वल विकल जानि नैन-नैचल, प्रगट भए तिहिं काल ।
सूरदास प्रभु प्रेमांकुर भर, लाय लई भुज माल ॥११०२॥

मगन भई स्यामा गोपाल ।
भोरी भया बहुत गरबानी, ओछी बुधि ब्रज-बाल ॥
तैं कछु कपट मनहि सौं कीन्यौं, अपबस तैं न डरानी ।
हम एकहि सँग, एकहि मति सब कोऊ नहिं बिलगानी ॥
हम चातकि, घन हरि नँदनंदन बरषनि, लगि हित कीन्यौ ।
द्रुम मृदु प्रबल पवन सम सजनी, प्रेम बीच दुख दीन्यौ ।
बानी, बैन, पुलिन सब, सुखनिधि मोहन बेनु बजायौ ॥
सूर स्याम तब, परस परस करि, सिखि संताप नसायौ ॥११०३

प्रगट भए नँदनंदन आइ ।
प्यारी निरखि बिरह अति व्याकुल धर तैं लई उठाइ ॥

उभय भुजा भरि अंकम लीन्ही राखी कंठ लगाइ।
मानहुँ तैं प्यारी तुम मेरैं, यह कहि दुख बिसराइ॥
हँसत भए अंतर हम तुम मैं सहज कोप उपजाइ।
बरसी मुरछि परी तुम काहैं कहाँ गई चतुराई।
राधा सकुचि रही मन मान्यौ, कह्यौ न कछू सुनाइ।
सूरदास-प्रभु मिलि सुख दीन्यौ दुख डारयौ बिसराइ॥११०४

स्याम-छबि निरखति नागरि नारि।
प्यारी-छबि निरखत मनमोहन सकत न नैन पसारि।
पिय सकुचत नहि दृष्टि मिलावत, सन्मुख होत लजात।
मोरपिच्छ निरखत अवलोकति, मनहिं हृदय हरषात॥
परस-परस सोहिनि मोहन मिलि, संग गोपी-गोपाल।
सूरदास प्रभु सब गुन लायक कुण्डनि कै रस-माल॥११०५

बहुरि स्याम सुख-रास कियौ।
भुज-भुज जोरि जुरी ब्रजबाला वैसोइ रस उमँगि हियौ।
वैसेहि मुरली नाद प्रकास्यौ वैसेहि सुर-नर थकित भए।
वैसेहि उड़गन-सहित निसापति वैसेहि मारग भूलि गए।
वैसेहि दसा भई जमुना की, वैसेहि गति तजि पवन थक्यौ
वैसेहि नृत्य तरंग पड़ायौ वैसेहि बहुरी काम जक्यौ।
वहै निसा वैसेहि सब जुवती वैसेही हरि सबनि भजै।
सूर स्याम वैसेहि मन-मोहन वैसेहि प्यारी निरखि लजै॥११०६

दुलहिनि-दूलह स्यामा-स्याम।
कोक-कला-ब्युत्पन्न परस्पर देखत लज्जित काम॥
जा फल कौं ब्रजनारि कियौ ब्रत सो फल सबहिंनि दीन्ही।
मनकामना भई परिपूरन, सबहिंनि मानि जु लीन्ही॥
राग-रागिनी प्रगट दिखायौ गायौ जो जिहिं रूप।
सत सुरनि के भेद बतावति नागरि रूप अनूप॥

भावहिं सुघर पिय कौ मन मोहति, अपबस करति रिझावति।
सूर स्याम-मोहिनि-मूरति कौं, बार-बार उर आवति ॥११०७॥

हा हा री पिय नृत्य करौ।
जैसें करि मैं तुमहिं रिझाई, त्यौं मेरौ मन तुमहु हरौ ॥
तुम जैसैं स्रम-बायु करत हौ, तैसैं मैंहुँ डुलावौंगी।
मैं स्रम देखि तुम्हारे अँग कौ, भुज भरि कंठ लगावौंगी॥
मैं हारी त्यौंही तुम हारौ, चरन चापि स्रम मेटौंगी।
सूर स्याम ज्यौं उछँग लई मोहिं, त्यौं मैं हूँ हँसि भेंटौंगी ॥११०८

रास-रस स्रमित भई ब्रजबाल।
निसि सुख दै जमुना-तट लै गए, भोर भयौ तिहिं काल ॥
मनकामना भई परिपूरन, रही न एकौ साध।
षोडस सहस नारि सँग मोहन, कीन्हौ सुख अवगाधि ॥
जमुना जल बिहरत नँद-नंदन, सँग मिली सुकुमारि।
सूर धन्य धरनी बृंदावन, रबि तनया सुखकारि ॥११०९॥

जमुना-जल क्रीड़त नँद-नंदन।
गोपी-बृंद मनोहर चहुँ दिसि, मध्य अरिष्ट निकंदन ॥
सोभित सलिल परसपर छिरकत सिथिल होत भुज-बंदन।
ज्यौं अहिपति केंचुरि कौ, अपु-अपु चोरत है अँग-चंदन ॥
कच-भर कुटिल सुदेस अंसुकनि, चुवत चाम गति मंदन।
मानहु भरि गंडूष कमल तैं डारत अलि आनंदन ॥
भुज भरि अंक अगाध चलत लै ज्यौं सुरधाम नग स्यंदन।
सूरदास स्वामी श्रीपति के गुन गावत स्रुति छंदन ॥१११०॥

राधे छिरकति छींट छबीली।
कुच कुंकुम कंचुकि-बँद छूटे, लटकि रही लट गीली ॥
बंदन सिर ताटंक गंड पर रतन जटित मनि नीली।
गति गयंद मृगराज सुकटि पर, सोभित किंकिनि ढीली ॥

मच्यौ खेल जमुना-जल-अंतर प्रेम मुदित रस-भीनी।
नंद-सुवन-भुज ग्रीव विराजति, भाग-सुहाग भरीली ॥
बरषत सुमन देवगन हरषत, दुंदुभि सरस बजीली।
सूर स्याम-स्यामा रस क्रीड़त, जमुन-तरंग चकीली ।११११।

विहरत हैं जमुन जल स्याम।
राजत हैं दोउ बाहाँ-जोरी दम्पति अरु ब्रज-बाम ॥
कोउ ठाढ़ी जल जानु जंघ लौं कोउ कटि-हिरदय ग्रीव।
यह सुख बरनि सकै ऐसी को सुन्दरता की सींव ॥
स्याम अंग चंदन की आभा, नागरि केसरि अंग।
मलयज-पंक कुंकुमा मिलिकै, जल जमुना इक रंग ॥
निसि-स्रम मिट्यौ मिट्यौ तन आलस परस जमुन भई पावन।
सूर स्याम जल मध्य जुवति-गन ब्रज-जन के मन-भावन।१११२।

ठाढ़े स्याम जमुना-तीर।
धन्य पुलिन पवित्र पावन जहाँ गिरिधर धीर ॥
जुवति धनि-धनि भई ठाढ़ी चीर पहिरे नीर।
राधिका सुख-स्याम-दायक कनक-बरन सरीर ॥
स्याम चोली नील उढ़िया संग जुवतिनि भीर।
सूर-प्रभु छबि निरखि रीझे, मगन भयौ मन-धीर।१११३।

चलत स्याम मन ललचात।
कहत हैं घर जाहु सुन्दरि मुख न आवति बात ॥
घर सदन बस गोप कन्या, रैनि भोगी जाम।
एक छिन भई कान न न्यारी, सबनि पूजी आस ॥
फिरीं सब घर-घर पठाई मन गई ब्रज-बाल।
सूर प्रभु नँद-धाम पहुँचे, लख्यौ काहु न ख्याल।१११४।

ब्रजबासी सब सोवत पाए।
नंद-सुवन मति ऐसी ठानी, घनि घर लाग जगाए ॥

उठे प्रात-गाथा मुख भाषत आतुर रति बिहानी।
पंडव संग सम्हारत बचन भरि, कहत सबै यह बानी॥
जो जैसे सो तैसे लागी अपनैं-अपनैं काज।
सूर स्याम के चरित अगोचर राखी कुल की लाज॥१११४॥

ब्रज-जुवती रस-रास पगीं।
कियौ स्याम सब कौ मन भायौ, निसि रति-रंग जगीं॥
पूरन ब्रह्म, अकल, अबिनासी, सबनि संग सुख कीन्हौ।
जितनी नारि भेष भए तितने, भेद न काहूँ चीन्हौ॥
यह सुख टरत न काहूँ मन तैं पति-हित-साध पुराई।
सूर स्याम दूलह, सब दुलहिनि निसि भाँवरि दै आई॥१११५॥

मैं कैसैं रस रासहिं गाऊँ।
श्री राधिका स्याम की प्यारी, कृपा बास ब्रज पाऊँ॥
आन देव सपनेहुँ न जानौं दंपति कौं सिर नाऊँ।
भजन प्रताप चरन-महिमा तैं गुरु की कृपा दिखाऊँ॥
नव निकुंज बन धाम-निकट इक, आनँद-कुटी रचाऊँ।
सूर कहा बिनती करि बिनवै, जनम-जनम यह ध्याऊँ॥१११७

रास-रस-लीला गाइ सुनाऊँ।
यह जस कहै सुनै मुख स्रवननि, तिहिं चरननि सिर नाऊँ॥
कहा कहौं बक्ता स्रोता फल, इक रसना क्यौं गाऊँ।
अष्टसिद्धि नवनिधि सुख-संपति लघुता करि दरसाऊँ॥
जौ परतीति होइ हिरदै मैं जग-माया धिक देखै।
हरि जन दरस हरिहिं सम बूझै, अंतर कपट न लेखै॥
धनि बक्ता, तेई धनि स्रोता, स्याम निकट हैं ताकें।
सूर धन्य तिहिं के पितु-माता भाव-भगति है जाकें॥१११८॥

\+ + + +

मृदु मुरली की तान सुनावै हरि बिधि नाद रिझावै।
नटवर भेष बनाए ठाढ़े पसु-मृग निकट बुलावै॥

ऐसी को जो आइ जमुन तैं, जल भरि लै घर आवै।
मोर-मुकुट-कुंडल बनमाला पीतांबर फहरावै।
एक अंग सोभा अवलोकत, लोचन जल भरि आवै।
सूर स्याम के अंग-अंग-प्रति कोटि काम-छबि छावै ॥१११९

पनघट रोके रहत कन्हाई।
जमुना-जल कोउ भरन न पावै, देखत हीं फिरि जाई।
तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई, आपुन रहे छपाई।
तट ठाढ़े जे सखा संग के, तिनकौं लियौ बुलाई।
बैठारयौ ग्वालनि कौं द्रुम तर, आपुन फिरि फिरि देखत।
बड़ी बार भई, कोउ न आई, सूर स्याम मन लेखत ॥११२

जुवति इक आवति देखी स्याम।
द्रुम कैं ओट रहे हरि आपुन, जमुना-तट गई बाम।
जल हलोरि गागरि भरि नागरि, जबहीं सीस उठायौ।
घर कौं चली जाइ ता पाछैं सिर तैं घट ढरकायौ।
चतुर ग्वारि कर गह्यौ स्याम कौ कनक-लकुटिया पाई।
औरनि सौं करि रहे अचगरी, मोसौं लगत कन्हाई।
गागरि लै हँसि देत ग्वारि-कर, रीतौ घट नहिं लैहौं।
सूर स्याम ह्याँ आनि देहु भरि, तबहिं लकुट कर दैहौं ॥११२१

घट भरि देहु लकुट तब दैहौं।
हौं हूँ बड़े महर की बेटी, तुम सौं नहीं डरैहौं।
मेरी कनक-लकुटिया दै री, मैं भरि दैहौं नीर।
बिसरि गई सुधि ता दिन की तोहिं, हरे सबनि के चीर।
यह बानी सुनि ग्वारि बिबस भई, तन की सुधि बिसराई।
सूर लकुट कर गिरत न जानी, स्याम ठगौरी लाई ॥११२२॥

घट भरि दियौ स्याम उठाइ।
नैकु तन की सुधि न ताकौं, चली ब्रज-समुहाइ।

स्याम सुंदर नैन-भीतर, रहे आनि समाइ।
जहाँ जहँ भरि दृष्टि देखै, तहाँ-तहाँ कन्हाइ।
उतहिं तैं इक सखी आई, कहति कहा भुलाइ।
सूर अबहीं हँसत आई, चली कहा गवाँइ ॥११२३॥

काहू तोहिं ठगौरी लाई।
बूझति सखी सुनति नहिं नैंकहुँ, तुही किधौं ठगमूरी खाई।
चौंकि परी सपनैं जनु जागी, तब बानी कहि सखिनि सुनाई।
स्याम बरन इक मिल्यौ ढुटौना तिहिं मोकौं मोहिनी लगाई।
मैं जल भरे इतहिं कौं आवति, आनि अचानक अंकम लाई।
सूर ग्वारि सखियनि के आगैं, बात कहति सब लाज गँवाई॥

नैंकु न मन तैं टरत कन्हाई।
इक ऐसैहिं छकि रही स्याम-रस, तापर इहिं यह बात सुनाई।
याकौं सावधान करि पठयौ, चली आपु जल कौं अतुराई।
मोर मुकुट पीतांबर काछे, देख्यौ कुँवर नंद कौ आई।
कुंडल मकराकृत लसित कपोलनि मृदु नैन बिसाल सुहाई।
कबौं सूर प्रभु ये ढंग सीखे, ठगत फिरत ही नारि पराई ॥११२४॥

कहा ठग्यौ, तुम्हरौ ठगि लीन्हौ ?
क्यौं नहिं ठग्यौ और काहू ठगिहौ, औरहिं के ठग चीन्हौ।
कहौ नाम धरि कहा ठगायौ सुनि राखैं यह बात।
ठग के लच्छन मोहिं बताबहु कैसे ठग के गात ?
ठग के लच्छन हममौं सुनियै मृदु मुसुकनि चित चोरत।
नैन-सैन दै चलत सूर-प्रभु तन त्रिभंग करि मोरत ॥११२५॥

जाहिं बरत तुम स्याम अचगरी।
काहू की हीगन दो ईंडुरी काहू की फोरत हो गगरी।
भरन देहु जमुना-जल हमकौ, दूरि करौ य बातैं लँगरी।
पैंड़े चलन न पावै कोऊ, रोकि रहत लरिकनि सैं डगरी।

तू मोही कौ मारन जानति ।
—रित कहा कोउ आनै, उनहिं कही तू मानति ॥
—र तैं मोहिं पुलायौ, गढ़ि-गढ़ि बातैं बानति ।
— गिरी गागरी सिर तैं, अब ऐसी बुधि ठानति ॥
—रत्नई तू कहाँ रही कहि, मैं नहिं जानी जानति ।
—हिं देखतही रिस गई, सुख कूमति उर आनति ।११२६

झूठहिं सुतहिं लगावति खोरि ।
मति उनके संग नीकैं बातैं मिलवति जोरि ।
र जोबन-मद की माती मेरौ तनक कन्हाई ।
फोरि गागरी सिर तैं उरहन लीन्हे आई ॥
नके ढिग जात कहाँ है ये पापिनि सब नारि ।
पास अब कहौ मानि तू हैं सब ढोठि गँवारि ।११२७

ब्रज-घर-घर यह बात चलावत ।
कौ सुत करत अचगरी जमुना जल कोउ भरन न पावत
मे नटवर वपु काछि मुरली राग मलार बजावत ।
के रवि किरनहुँ तैं दुति मुकुट इंद्र धनुहुँ तैं भावत ।
हु न करत अचगरी गागरि धरि जल मुहैं ढरकावत ॥
नौं मात पिता कोउ ऐसे ढंग आपुनहिं पढ़ावत ।११२८

करत अचगरी नँद महर कौ ।
लिये जमुना तट बैठ्यौ, निधरक न भौन डगर कौ ।
तौ काहू बिन परसौ जुवतिनि कैं मन ध्यान ।
एक रूप स्यामसुंदर तजि और न आनहिं ध्यान ।
लीला सब स्याम करत हैं, ब्रज जुवतिनि कैं हेत ।
मझैं जिहिं भाव कृष्न कौ ताकौं सोइ फल देत ।११२९

ब्रज-घरैं कोउ चलन न पावत ।
मा संग औरहु ग्वाल लै-लै जहाँ-तहाँ धावत ।

जमुन-तट हरि देखि ठाढ़े, करनि आयैं बहरि।
सूर स्यामहिं नैंकु बरजौ, करत हैं अति चहरि ॥११२१॥

कहा करौं मोसौं कहौ सबहीं।
जौ पाऊँ तौ तुमहिं दिखाऊँ, हा हा करिहैं अबहीं।
तुमहूँ गुन जानति हौ हरि के, ऊखल बाँधि जबहीं।
लटिया लै मारन जब लागी, तब बरज्यौ मोहिं सबहीं।
लरिकाई तैं करत अचगरी मैं जाने गुन तबहीं।
सूर हाल कैसे करिहौं भरि आवै तौ हरि अबहीं ॥११२२॥

मैं जानति हौं ढीठ कन्हाई।
आवन दौ घर देहु स्याम कौ कैसी करौं सजाई।
मोसौं करत ढिठाई मोहन मैं बाकी हौं माई।
और न काहू की यह मानै, कछु सकुचत बल भाई।
अब जौ आवै कहा तिहिं पाऊँ, कासी [illegible] चराई।
सूर स्याम दिन दिन लँगर भयौ, दूरि करौं लँगराई ॥११२३

जुवति बोधि सब घरहिं पठाई।
यह अपराध मोहिं बकसौ री, यहै कहति हौं मेरी माई।
इत तैं चली घरनि सब गोपी उत तैं आवत कुँवर कन्हाई।
बीचहिं भेंट भई जुवतिनि हरि, नैननि चोरत गईं चवाई।
आछु कान्ह महतारी टेरति बहुत पढ़ाई करि हम आईं।
सूर स्याम मुख निरखि चली हँसि, मैं केती जननी समुझाई ॥

जसुमति यह कहि कै रिस पावति।
रोहिनी करति रसोई भीतर, कहि-कहि तादि सुनावति।
गारी देत मट पेठिनि की, तैं पाई हौं आवति।
हा हा करति सबनि सौं मैं हौं, कैसेंहु मूँड छुड़ावति।
जाति-पाँति सौं कहा अचगरी यह कहि सुतहिं खिरावति
सूर स्याम कौ सिखवति हारी, मारेहुँ लाज न आवति ।११२४

तू मोहीं कौं मारन जानति ।
उनके चरित कहा कोउ जानै, उनहिं कही तू मानति ॥
कदम-तीर तैं मोहिं बुलायौ, गढ़ि-गढ़ि बातैं बानति ।
मटकत गिरी गागरी सिर तैं, अब ऐसी बुधि ठानति ॥
फिरि चितई तू कहाँ रही कहि, मैं नहिं तोकौं जानति ।
सूर सुतहिं देखतहीं रिस गई, मुख चूमति उर आनति ।११३६

झूठहिं सुतहिं लगावति खोरि ।
मैं जानति उनके ढँग नीकैं बातैं मिलवति जोरि ।
वै सब जोबन-मद की माती, मेरौ बालक कन्हाई ।
आपुन फोरि गागरी सिर तैं उरहन लीन्हे आई ॥
तू इनकैं ढिग जान न दहि दै, ए पापिनि सब नारि ।
सूर स्याम अब कह्यौ मानि तू, हैं सब ढीठि गँवारि ।११३७

ब्रज-घर-घर यह बात चलावत ।
जसुमति कौ सुत करत अचगरी जमुना-जल कोउ भरन न पावत ।
स्याम बरन नटवर वपु काछे मुरली राग मलार बजावत ।
कुंडल-छबि रबि-किरनहुँ तैं दुति मुकुट इंद्र-धनुहूँ तैं भावत ।
मानत काहु न करत अचगरी गागरि धरि जल मैं ढरकावत ॥
सूर स्याम कौं मात-पिता दोउ, ऐसैं ढँग आपुनहिं पढ़ावत ।११३८

करत अचगरी नंद महर कौ ।
सखा लिये जमुना-तट बैठ्यौ निदरत न लोग नगर कौ ।
कोउ खीझौ काहू किन बरजौ जुवतिनि कैं मन ध्यान ।
मन-बच-कर्म स्यामसुंदर तजि और न जानतिं आन ।
यह लीला सब स्याम करत हैं, ब्रज-जुवतिनि कैं हेत ।
सूर भजै जिहिं भाव कृष्न कौं ताकौं सोइ फल देत ।११३९

ब्रज-खोरैं कोउ चलन न पावत ।
ग्वाल सखा सँग लीन्हें डोलत दै-दै दौरि जहाँ-तहँ धावत ।

काहू की ईंडुरी फटकारत काहू की गगरी ढरकावत।
काहू की गारी दै भाजत, काहू की अंकम भरि लावत।
काहू नहिं मानत ब्रज-भीतर नंद महर को कुँवर कहावत।
सूर स्याम नटवर-वपु काछे जमुना कैं तट मुरलि बजावत॥

राधा सखिनि लई बुलाइ।
चलौ जमुना-जलहिं जैयै चलीं सब सुख पाइ॥
सबनि इक-इक कलस लीन्ही तुरत पहुँची आइ।
तहाँ देख्यौ स्याम सुंदर कुँवरि मन हरषाइ।
नंद-नंदन देखि रीझे, चितै रहे चित लाइ।
सूर प्रभु की प्रिया राधा भरति जल मुसुकाइ।।११४।।

भरहिं चली जमुना-जल भरि कै।
सखिनि बीच नागरी बिराजति भई प्रीति उर हरि कै।
मंद-मंद गति चलत अधिक छवि, अंचल रह्यौ फहरि कै।
मोहन कौं मोहिनी लगाई, संगहिं चले डगरि कै।
बेनी की छबि कहत न आवै रही नितंबनि हरि कै।
सूर स्याम प्यारी के बस भए, रोम-रोम रस भरि कै।।११४।।

सखियनि बीच नागरी आवै।
छवि निरखत रीझ्यौ नँद-नंदन, प्यारी मनहिं रिझावै।
कबहुँक आगैं कबहुँक पाछैं, नाना भाव बतावै।
राधा यह अनुमान करै हरि मेरे चितहिं चुरावै।
आगैं आइ कनक लकुटी लै, पंथ सँवारि बनावै।
निरखत जहाँ छाँह प्यारी की तहँ लै छाँह छुवावै।
छवि निरखत तन वारत अपनी नागरि जियहिं जनावै।
अपने सिर पीतांबर वारत, ऐसैं रुचि उपजावै।
चोलि उड़नियाँ चलत दिखावत इहिं मिसि निकटहिं आवै।
सूर स्याम ऐसे भावनि सौं, राधा-मनहिं रिझावै।।११४।।

× × ×

ऐसौ हम माँगिये नहिं जो हम पै दियौ न जाइ ।
बन मैं पाइ अकेली जुवतिनि, मारग रोकत धाइ ।
घाट-बाट औघट जमुना-तट बातैं कहत बनाइ ।
कोऊ ऐसौ दान लेत है कौनैं पठै सिखाइ ।
हम जानति तुम यौं नहिं रैहौ रहिहौ गारी ख्याइ ।
जो रस चाहौ सो रस नाहीं गोरस पियौ अघाइ ।
औरनि सौं लै लीजै मोहन तब हम दैहिं बुलाइ ।
सूर स्याम कत करत अचगरी हम सौं कुँवर कन्हाइ ।।१४८।

सूधैं दान न काहैं लेत ।
और अटपटी छाँड़ि नंद-सुत रहहु कँपावत बेत ।
वृंदावन की बीथिनि तकि-तकि, रहत गुमान समेत ।
इन बातनि पति नाहिन पैयत जानि न कोउ अचेत ।
मसकनि रपकि-रपकि पकरत हौ मारग चलन न देत ।
सो तौ तुम कछु कहि न सकावत कहा तुम्हारी हेत ।
आजु न जान दैहैं री ग्वारिनि बहुत दिननि कौ नेम ।
सूरदास प्रभु कुंज-भवन चलै औरि उरनि मन दैन । १५४।

ऐसे जनि बोलहु नँद-लाला ।
छाँड़ि देहु अँचरा मेरौ नीकैं, जानत और सी बाला ।।
बार बार मैं तुमहिं कहति हौं, परिहौ बहुरि जँजाला ।
जोबन रूप देखि ललचानो अबहीं तैं ये ख्याला ।
तरुनाई तनु आवन दीजै कत जिय होत बिहाला ।
सूर स्याम उर तैं कर टारहु टूटै मोतिनि-माला ।।१५६।

कहा भई जो अस्तुति तुम्हारी, बन बागन हो घेरे ।।
ये बतियाँ तुम देखि हाँसि मारन [illegible] पयौ चहुँफेरे ।
अब सुनिहैं यह बात आजु की, जाइ जुवति सब नेरे ।
मधुबनि हैं घर घर बैठा की नैकु लाज नहिं तेरे ।

काहू की ईंडुरी फटकारत काहू की गगरी ढरकावत।
काहू कौं गारी दै भाजत, काहू कौं अंकम भरि लावत।
काहू नहिं मानत ब्रज-भीतर नँद महर कौ कुँवर कहावत।
सूर स्याम नटवर-वपु काछे जमुना कैं तट मुरलि बजावत॥

राधा सखिनि लई बुलाइ।
चलौ जमुना-जलहिं जैयै चलीं सब सुख पाइ॥
सबनि इक-इक कलस लीन्हौ, तुरत पहुँची जाइ।
तहाँ देख्यौ स्याम सुंदर कुँवरि मन हरषाइ।
नँद-नंदन देखि रीझे, चितै रहे चित लाइ।
सूर प्रभु की प्रिया राधा भरति जल मुसुकाइ॥११४२॥

भरहिं चलीं जमुना-जल भरि कै।
सखिनि बीच नागरी बिराजति भई प्रीति उर हरि कै।
मंद-मंद गति चलत अधिक छबि अंचल रह्यौ फहरि कै।
मोहन कौं मोहिनी लगाई, संगहिं चले डगरि कै।
बैनी की छबि कहत न आवै रही नितंबनि ढरि कै।
सूर स्याम प्यारे के बस भए रोम-रोम रस भरि कै॥११४३॥

सखियनि बीच नागरी आवै।
छबि निरखत रीझ्यौ नँद-नंदन, प्यारी मनहिं रिझावै।
कबहुँक आगैं कबहुँक पाछैं, नाना भाव बतावै।
राधा यह अनुमान करै, हरि मेरे चितहिं चुरावै।
आगैं आइ कनक लकुटी लै, पंथ सँवारि बनावै।
निरखत जहाँ छाँह प्यारी की, तहँ लै छाँह छुवावै।
छबि निरखत तन वारत अपनी, नागरि हियहिं लगावै।
अपने सिर पीतांबर वारत, ऐसैं रुचि उपजावै।
कोउ चतुरनियौं चलत दिखावत,इहिं मिसि निकटहिं आवै।
सूर स्याम ऐसे भावनि सौं, राधा-मनहिं रिझावै॥११४४॥

× × ×

ऐसौ दान माँगियै नहिं जौ हम पैं दियौ न जाइ।
बन मैं पाइ अकेली जुवतिनि मारग रोकत धाइ।
घाट-बाट औघट जमुना-तट बातैं कहत बनाइ।
कोऊ ऐसौ दान लेत है कौनैं पठै सिखाइ।
हम जानतिं तुम यौं नहिं रैहौ रहिहौ गारी खाइ।
जो रस चाहौ सो रस नाहीं गोरस पियौ अघाइ।
औरनि सौं लै लीजै मोहन, तब हम देहिं बुलाइ।
सूर स्याम कत करत अचगरी हम सौं कुँवर कन्हाइ।।११४४।

सूधैं दान न काहैं लेत।
और अटपटी छाँड़ि नंद-सुत रहहु कँपावत बेत।
वृंदावन की बीथिनि तकि-तकि रहत गुमान समेत।
इन बातनि पति माहिन पैयत जानि न होहु अचेत।
अचलनि खँचि-खँचि पकरत हौ, मारग चलन न देत।
सो तो तुम कछु कहि न जनावत कहा तुम्हारौ हेत।
आजु न जान दैहैं री ग्वारिनि बहुत दिननि कौ नेत।
सूरदास-प्रभु कुंज-भवन चले, औरि करसि मन देत। ११४५।

ऐसैं जनि बोलहु नँद-लाला।
छाँड़ि देहु अँचरा मेरौ नीकैं जानत और सौ बाला।।
बार बार मैं तुमहिं कहति हौं, परिहौ बहुरि जँजाला।
जोबन रूप देखि ललचाने अबहीं तैं ये ख्याला।
तरुनाई तनु आवन दीजै, कत जिय होत बिहाला।
सूर स्याम कर तैं कर टारहु टूटै मोतिनि-माला।११४६।

कहा मकति परी कान्ह तुम्हारी, कत घालत हौ घेरे।।
ये बतियाँ तुम हँसि हँसि भाषत इहै चलैं चहुँफेरे।
अब सुनिहैं यह बात आजु की, कान्ह जुवति सब नेरे।
सकुचति हैं घर घर घेरा कौं नैकु लाज नहिं तेरे।

मतिहिं अबेर भई घर जाँहै फिरी हँसति मुख हेरैं।
सूरदास प्रभु मुरुख कहा री मेरी है कहु केरे।।११४७

तुम कबके जु भए ही दानी।
मटुकी फोटि हार गहि तोरयौ इन बातनि पहिचानी।
नंद महर की कानि करति हौं न तु करती मेहमानी।
भूलि गए सुधि ता दिन की अब बाँधे जसुदा रानी।
अब लौं सही तुम्हारी ढाठी तुम यह कहत बरानी।
सूर स्याम कछु करत न बनिहै, नृप पावै कहुँ जानी।।११४८।

दधि-मटुकी हरि छीन लई।
हार तोरि चोली-बँद तोरयौ जोबन दै बस डीठि गई।
ज्योंही ज्यों हम सूधें बोलत त्योंही त्यौं अति सतरि गई।
चार करति अबही येबहुगी, बार-बार कहि दई-दई।
अंस परायौ देहु न नोर्क माँगत ही सब करति लई।
सूर सुनहु मैं कहत करहुँ की प्रीति करहु, जु भई सुमई।।११४९

कन्हैया, हार हमारो देहु।
दधि, मखनी, घृत जो कछु चाही, सो तुम मैसैंहिं लेहु।।
कहा करौ दधि-घृत तिहारी, मौसौं नाहिंन काम।
जोबन-रूप दुराइ धरयौ है ताकौ लेति न नाम।
सोई मन है माँगत तुम सौं, बैर नहीं तुम मानति।
सूर सुनहु री ग्वारि अयानी अंतर हमसौं राखति।।११५०।

तें कत तोरयौ हार नौसरि कौ।
मोती बगरि रहे सब बन मैं, गयौ कान की तरिकौ।
ये अवगुन जु करत गोकुल मैं तिलक दिये केसरि कौ।
डीठ गुवाल दही को माती ओढ़नहार कमरि कौ।
आइ पुकारैं जसुमति आगैं चढ़ति जु मोहन हरि कौ।
सूर स्याम जानी चतुराई जिहिं अभ्यास मधुकरि कौ।।११५१

मैं तुम्हरे मन की सब जानी।
आपु सबै इतराति फिरति हौ, दूषन देति स्याम कौं आनी।
मेरौ हरि कहँ दसहिं बरस कौ, तुम हौ जोबन-मद उमदानी।
लाज नहीं आवति इन लँगरिनि, कैसैं धौं कहि आवति बानी।
आपुहिं तोरि हार चोली-बँद, उर नख-घात बनाइ निसानी।
कहाँ कान्ह की नन्हक अँगुरियाँ, यह कहि बार बार पछितानी।
देखहु जाइ और काहू कैं, हरि पर सबहिं रहसि मँडरानी।
सूरदास प्रभु मेरौ नान्हौ, तुम तरुनी डोलति अठिलानी।।११५०।

हँसत सखनि यह कहत कन्हाई।
आइ चढ़ी तुम सघन द्रुमनि पर, जहँ-तहँ रही लुकाई।
तब की बैठि रही मुख मूँदे, जब आयहु सब धाई।
छूटि परी तब द्रुमनि द्रुमनि तैं, दै दै नंद दुहाई।
पछित होहिं जैसैं जुवती गन, करति जाहिं चतुराई।
बेनु बिषान मुरलि धुनि कीन्ही, संख सब्द घहनाई।
नित प्रति जाति हमारैं मारग, यह कहियौ समुझाई।
सूर स्याम माखन-दधि-दानी, यह सुधि नाहिंन पाई।।११५१।

और सखा सँग लिये कन्हाई।
आपुहिं निकसि गए आगे कौं, मारग रोक्यौ जाई।
इहिं अंतर जुवती सब आईं, मन भाव्यौ कछु भारी।
पाछैं जुवती रहीं तिन टेरति, अबहिं गईं तुम हारी।
तरुनी जुरि इक संग भईं सब, इत उत चली निहारति।
सूरदास प्रभु सखा लिये सँग ठाढ़े भए बिचारत।।११५२।

ग्वारिनि जब देखे नँद नंदन।
मोर-मुकुट पीतांबर काछे, खौरि किए तन चंदन।
तब यह कह्यौ कहाँ अब जैहौ, आगैं कुँवर कन्हाई।
यह सुनि मन आनंद बढ़ायौ, मुख कहैं बात डराई।

मतिहिं अधीर भई घर छाँड़े, चितै हँसति मुख फेरे।
सूरदास प्रभु अछत कहा ही चेरी हैं कहु केरे ॥११४७॥

तुम कपटी सु मद ही सानी।
मटुकी फोरि, हार गहि तोरयौ इन बातनि पहिचानी।
नंद महर की कानि करति हौं न तु करती मेहमानी।
भूलि गए सुधि ता दिन की जब बाँधे जसुदा रानी।
अब लौं रह्यौ तुम्हारी ढोठी तुम पर करत बरानी।
सूर स्याम कछु करत न बनिहै, भूप पावै कहुँ जानी ॥११४८॥

दधि-मटुकी हरि छीन लई।
हार तोरि चोली-बँद तोरयौ जोबन कैं बल डीठि भई।
ज्यौंही ज्यौं हम सूधे बोलत त्यौंही त्यौं अति सखरि गई।
बाद करति अबही रोवहुगी, बार-बार कहि दई-दई।
कंस पठायौ देहु न लीजै माँगत ही सब करति नई।
सूर सुनहु मैं कहत सबहुँ सौं प्रीति करहु, जु भई सु भई ॥११४९॥

कन्हैया, हार हमारौ देहु।
दधि, अपनी पुत को कछु चाही, सो तुम पैसैंहि लेहु॥
कहा करौं दधि-दूध तिहारौ मौकौं नाहिंन काम।
जोबन-रूप दुराइ धरयौ है, ताकौ देति न दाम।
मोकैं मन हैं माँगत तुम सौं बैर भाही तुम जानति।
सूर सुनहु री ग्वारि अयानी अंतर हमसौं राखति ॥११५०॥

है कछु तोरयौ हार नौसरि कौ।
मोती बगरि रहे सब बन मैं गयौ कान कौ तरिकौ।
ये अवगुन जु करत गोकुल मैं तिलक दिये केसरि कौ।
ढीठ गुवाल दही को माती ओढ़नहार कमरि कौ।
जाइ पुकारैं जसुमति आगैं कहति सु मोहन लरिकौ।
सूर स्याम जानी चतुराई, जिहिं अभ्यास मधुपुरि कौ ॥११५१॥

तुम दानी ह्वै आए हम पर, यह हमकौं नहिं भावै ।
करौ वही जौ निपटै कोई, जातैं सब सुख पावै ॥
हमकौं जान देहु दधि बेंचन, पुनि कोऊ नहिं लैहै ।
गोरस लेत प्रातहीं सब कोउ सूर धरयौ पुनि रैहै ।।११५९।।

दान दिए बिनु जान न पैहौ ।
जब दैहौ बराइ सब गोरस, तबहिं दान तुम दैहौ ।
तुमसौं बहुत दिन है मोकौं पहिलैं काहि सुनाऊँ ।
चोरी जावति दैखि जाति हौ पुनि गोरस कहँ पाऊँ ।
सौंगति खाप, कहा रिसराऊँ, कौ नहिं हमकौ मानत ।
सूर स्याम तब कह्यौ ग्वालि सौं, तुम मोकौं नहिं मानत ।।११६०।

कहा हमहिं रिस करत कन्हाई ।
यह रिस जाइ करौ मथुरा पर जहँ है कंस बसाई ।
सब हम कहौं जाइ गुहरावैं, बसति तिहारैं गाउँ ।
ऐसे दान करत लोगनि कैं, कौन रहै इहिं ठाउँ ॥
अपने घर के तुम राजा हौ सब की राजा कंस ।
सूर स्याम हम देखत ठाढ़े सब सीखे ये गंस ।।११६१।

आइ सबै कंसहिं गुहरावहु ।
दधि-माखन घृत लेत छँड़ाए आजु हजूर बुलावहु ॥
ऐसे कौ कहि मारि बतावति पल भीतर गहि मारौ ।
मधुरापतिहिं सुनौगी तुमही अब धरि केस पछारौ ।
बार-बार दिन हमहिं बतावति अपनौ दिन न बिचारयौ ।
सूर इंद्र ब्रज जबहिं बहावत तब गिरि राखि उबारयौ ।।११६२

गिरिधर धरयौ आपने घर कौं ।
ताही कैं बल दान लेत हौ रोकि रहत तिय पर कौं ॥
अपनेही घर बड़े कहावत मन धरि नंद महर कौं ।
यह जानति, तुम गाइ चरावन जात सदा बन बर कौं ॥

कोउ-कोउ कहति, चली री जैयै कोउ कहै, घर फिरि जैयै ।
कोउ-कोउ कहति, कहा करिहैं हरि, इनसौं कहा परैयै।
कोउ-कोउ कहति, कालिहीं हमकौं लूटि लए नँद-लाल ।
सूर स्याम के ऐसे गुन हैं, घरहिं फिरीं ब्रज-बाल ।।११५५।

ग्वालनि सैन दई तब स्याम ।
छूटि-छूटि सब परत द्रुमनि तैं जाति चली घर बाम ।।
सैन जानि सब ग्वाल जहाँ-तहँ, द्रुम-द्रुम डार हँकारी ।
बेनु-बिषान-संख-मुरली धुनि, सब इक सब्द बजायौ ।।
चकित तरु-तरु-प्रति देखति, ग्वारनि-ग्वारनि स्याम ।
छूटि-छूटि सब परे धरनि मैं घेरि लईं ब्रज-बाम ।
नित प्रति जाति दूध-दधि बेचन आजु पकरि हम पाइ ।
सूर स्याम कौ दान देहु तब जैहौ, नँद-दुहाई ।।११५६।

यह सुनि हँसी सकल ब्रजनारि ।
कहा सुनी यै बात नई इक, सिखए हैं महतारि ।।
दधि-माखन बेचे कौ चाहत माँगि लेहु हम पास ।
सूधैं बात कहौ सुख पावैं चोंपन करत अकास ।।
अब समझी हम बात तुम्हारी, पढ़े एक चटसार ।
सुनहु सूर यह बात कहौ जनि, जानति नँद-कुमार ।।११५७।

काहे कहत दधि-दान न दैहौ ? ।
लैहौ छीनि दूध-दधि-माखन, देखति ही तुम रैहौ ।।
सब दिन कौ भरि लैहौं आजु ही, तब छाँड़ौं मैं तुमकौं ।
उघटति हौ तुम मातु-पिता लौं नहिं जानति हौ हमकौं ।।
हम जानति हैं तुमकौं मोहन लै-लै गोद खिलाए ।
सूर स्याम अब भए जगाती, वै दिन सब बिसराए ।।११५८।

कबहुँ माँगि लेहु दधि देरे ।
दूध-दही-माखन जौ चाहौ, सहज स्वादु सुख पैहै ।

तुम दानी है आप हम पर, यह हमकौं नहिं भावै ।
कही वही सौं निबहै कोई, आवै सब सुख पावैं ॥
हमकौं जान देहु दधि बेंचन, पुनि कोऊ नहिं लैहै ।
गोरस लेत मातही सब कोउ, सूर बहुरी पुनि दैहै ।।११५९।

दान दिये बिनु जान न पैहौ ।
जब देहौ दराइ सब गोरस, तबहिं जान तुम पैहौ ।
तुमसौं बहुत लेन है मोकौं पहिलैं ताहि सुनाऊँ ।
चोरी माखन चौंपि खाति हौ, पुनि गोरस कहँ पाऊँ ।
सौंगाँव बाप कहा दिखरावै, को नहिं हमकौं जानत ।
सूर स्याम तब कह्यौ ग्वालि सौं,तुम मोकौं नहिं मानत ।।११६०।

कहा हमहिं रिस करत कन्हाई ।
यह रिस जाइ करौ मथुरा पर, जहँ है कंस कसाई ।
जब हम कहाँ जाइ गुहरावैं, बसति तिहारैं गाउँ ।
ऐसे हाल करत लोगनि के कौन रहै इहिं ठावैं ॥
अपने घर के तुम राजा हौ सब को राजा कंस ।
सूर स्याम हम देखन पाई, अब सीखे ये गंस ।।११६१।

जाइ सबै कंसहिं गुहरावहु ।
दधि-माखन-घृत लेत छँड़ाए आजु हजूर बुलावहु ॥
ऐसे को करि मोहिं बतावति पल भीतर गहि मारौं ।
मथुरापतिहिं सुनौगी तुमही, अब धरि केस पछारौं ।
बार-बार दिन हमहिं बतावति अपनौ रिस न बिचारयौ ।
सूर इंद्र ब्रज जबहिं बहायौ तब गिरि राखि उबारयौ ।।११६२

गिरिधर बरजौ आपने घर कौं ।
ताही के बल दान लेत हौ रोकि रहत तिय पर कौं ॥
अपनेही घर करौ बदावत सब धरि नंद महर कौं ।
यह जानति, तुम गाइ चरावत जात सदा बन बर कौं ॥

कोउ-कोउ कहति, चलौ री जैयै कोउ कहै, घर फिरि जैयै ।
कोउ-कोउ कहति, कहा करिहैं हरि, इनसौं कहा परैयै।
कोउ-कोउ कहति, कालिहीं हमकौं लूटि लए नँद-लाल ।
सूर स्याम के ऐसे गुन हैं, घरहिं फिरीं ब्रज-बाल ।।११५५।

ग्वालनि सैन दई तब स्याम ।
कूदि-कूदि सब परत द्रुमनि तैं जाति चली घर बाम ।।
सैन जानि तब ग्वाल जहाँ-तहँ, द्रुम-द्रुम डार हलायौ ।
बेनु बिषान-संख-मुरली धुनि सब इक सब्द बजायौ ।।
चकित तरु-तरु प्रति देखति बारनि-बारनि ग्वाल ।
कूदि-कूदि सब परे धरनि मैं घेरि लईं ब्रज-बाल ।
नित प्रति जाति दूध-दधि बेचन आजु पकरि हम पाईं ।
सूर स्याम कौ दान देहु, तब जैहौ, नँद-दुहाई ।।११५६।

यह सुनि हँसी सकल ब्रजनारि ।
आइ सुनौ री बात नई इक सिखए हैं महतारि ।।
दधि-माखन लैबे कौ चाहत माँगि लेहु हम पास ।
सूधें बात कही सुख पावैं औंधन करत अकास ।।
अब समझी हम बात तुम्हारी परे एक अटमार ।
सुनहु सूर यह बात कही जनि, जानति नँद-कुमार ।।११५७।

कान्ह कहत दधि-दान न दैहौ ? ।
लैहौ छीनि दूध-दधि-माखन, देखति ही तुम रैहौ ।।
सब दिन कौ भरि लेउँ आजु ही, तब छाँड़ौं मैं तुमकौं ।
उघटति हौ तुम मातु-पिता लौं नहिं जानति हौ हमकौं ।।
हम जानति हैं तुमकौं मोहन लै-लै गोद खिलाए ।
सूर स्याम अब भए जगाती, वै दिन सब बिसराए ।।११५८।

कबहूँ माँगि लेहु दधि दैहैं ।
दूध-दही-माखन जौ चाहौ, सहज खाहु सुख पैहैं ।

तुम दानी ह्वै आए हम पर, यह हमकौं नहिं भावै ।
ज्यौं तहीं कौ नियरे कोई, आवै सब सुख पावै ॥
हमकौं जान देहु दधि बेचन, पुनि कोऊ नहिं लैहै ।
गोरस लेत प्रातही सब कोउ सूर भरयौ पुनि रैहै ।११५९।

दान दिए बिनु जान न पैहौ ।
जब दैहौ उपाइ सब गोरस तबहिं दान तुम दैहौ ।
तुमसौं बहुत दिन है मोकौं पहिलैं ताहि सुनाऊँ ।
चोरी आवति, मोंहि जाति हौ पुनि गोरस कहूँ पाऊँ ।
सौंगनि छाप कहा दिखराऊँ, को नहिं हमकौं जानत ।
सूर स्याम तब कह्यौ ग्वालि सौं, तुम मोकौं नहिं मानत ।११६०।

कहा हमहिं रिस करत कन्हाइ ।
यह रिस जाइ करौ मथुरा पर, जहँ है कंस कसाइ ।
जब हम कहाँ जाइ गुदरावैं, बसति बिहारैं गाऊँ ।
ऐसे दान करत लोगनि के, कौन रहै इहिं ठाऊँ ॥
अपने घर के तुम राजा हौ मन कौ राजा कंस ।
सूर स्याम हम देखन चाहैं अब सीखे ये गंस ।११६१।

जाइ सबै कंसहिं गुहरावहु ।
दधि-माखन-घृत लेत छँड़ाए आजु हजूर बुलावहु ॥
ऐसे कौ कहि मोहिं बतावति, पल भीतर गहि मारौं ।
मथुरापतिहिं सुनौगी तुमही, अब धरि केस पछारौं ।
बार-बार दिन हमहिं बतावति अपनो दिन न बिचारयौ ।
सूर इंद्र ब्रज उपरहिं बरषत तब गिरि राखि उबारयौ ।११६२

गिरिधर धरयौ आपने कर कौं ।
ताही कैं बल दान लेत हौ, रोकि रहत तिय पर कौ ॥
अपनेही घर बड़े कहावत मन धरि नंद महर कौ ।
यह जानति, तुम गाइ चरावन जात सदा बन बर कौ ॥

मुरली कर कामिनि आभूषन, मोर पखौवा सिर कौं।
सूरदास कौंधें कामरिया, और लकुटिया कर कौं ।।११६३।।

यह कमरी, कमरी करि जानति।
जाके जितनी बुद्धि हृदय मैं सो तितनी अनुमानति।
या कमरी के एक रोम पर, वारौं चीर-पटंबर।
सो कमरी तुम निंदति गोपी जो तिहुँ लोक अडंबर।
कमरी कैं बल असुर सँहारे, कमरिहिं तैं सब भोग।
जाति-पाँति कमरी सब मेरी, सूर सबै यह जोग ।।११६४।।

मोसौं बात सुनहु ब्रज-नारी।
इक उपखान चलत त्रिभुवन मैं तुमसौं कहौं उघारी।
कबहूँ बालक मुँह न दीजियै मुँह न दीजियै नारी।
जोइ मन करैं सोइ करि डारैं मूँड चढ़त हैं भारी।
बात कहत अँठिलाति जाति सब, हँसति देति कर तारी।
सूर कहा ये हमकौं जानैं छाँछहिं बेंचनहारी ।।११६५।।

यह जानतिं, तुम नँदमहर-सुत।
धेनु दुहत तुमकौं हम देखतिं जबहिं जाति खरिकहिं उत।
चोरी करत रहौ पुनि जानतिं, घर घर ढूँढ़त भाँडे।
मारग रोकि भए अब दानी वै ढँग कब तैं छाँड़े।
और सुनौ जसुमति जब बाँधे तब हम कियौ सहाइ।
सूरदास प्रभु यह जानति हम तुम ब्रज रहत कन्हाइ ।।११६६।।

को माता को पिता हमारैं।
कब जनमत हमकौं तुम देख्यौ हँसियत बचन तुम्हारैं।
कब माखन चोरी करि खायौ, कब बाँधे महतारी।
दुहत कौन की गैया चारत बात कही यह भारी।
तुम जानत मोहिं नंद-ढुटौना, नंद कहाँ तैं आए।
मैं पूरन अबिगत अबिनासी, माया सबनि भुलाए।

यह सुनि ग्वालि सबै मुसुक्यानी ऐसे गुन हौ जानत।
सूर स्याम जौ निदर्यौ सबही मात-पिता नहिं मानत ।।११६७।

भक्त-हेत अवतार धरौं।
कर्म धर्म के बस मैं नाहीं जोग-जज्ञ मन मैं न करौं ।।
दीन-गुहारि सुनौं स्रवननि भरि, गर्व-बचन सुनि हृदय जरौं ।
भाव-अधीन रहौं सबही कैं और न काहू नैंकु डरौं ।।
ब्रह्मा कीट आदि लौं व्यापक, सबकौ सुख दै दुखहिं हरौं ।
सूर स्याम तब कह्यौ प्रगटही, जहाँ भाव तहँ तैं न टरौं ।।११६८।

प्यारी पीतांबर उर अटक्यौ।
हरि चोरी मोतिनि की माला कछु गर कछु कर लटक्यौ।
दीठौ करन स्याम तुम लागे आइ गही कटि-फेंट।
आपु स्याम रिस करि अंकम भरी भई प्रेम की भेंट ।।
जुवतिनि घेर लियौ हरि कौ तब भरि भरि धरि अँकवारि।
सखा परस्पर देखत ठाढ़े हँसत देत किलकारि ।।
हाँक दियौ करि नंद दुहाई, आइ गए सब ग्वाल।
सूर स्याम की जानति नाहीं ढीठि भई हैं बाल ।।११६९।

हम भई ढीठि, भले तुम ग्वाल।
दीन्हौ ग्वाल दई कौ पैहौ ऐसी री यह कहा बँधाल ।।
बन-भीतर जुवतिनि कौ रोकत हम छोटी तुम्हरे ये ख्याल।
मात बदन कौ नेकु आवत, बड़े सुधर्मी धर्महिंपाल ।।
सारि सखा की ऐसी करिहौ, तब आवहुगे जीति गुपाल।
आप हैं बढ़ि रिस करि हम पर सूर हमहिं जानत बेहाल ।।११७०।

एक हार मोहिं कहा दिखावति।
नख-सिख लौं अँग-अंग निहारहु ये सब कहाँ दुरावति ।।
मोतिनि माल जराइ कौ टीकौ करनफूल नकबेसरि।
कंठसिरी, दुलरी, तिलरी उर, और हार इक नौसरि ।।

दधि खायौ, मोतिनि लर तोरी, घृत-माखन सोउ लीजै ।
सूरदास प्रभु अपनैं सदका घरहिं जान हम दीजै ॥११०५॥

की जानै हरि चरित तुम्हारे ।
अबहूँ दान नहीं तुम पायौ मन हरि लियौ हमारे ॥
ऐसौ करि दीजै मनमोहन, दूध-दही कछु खाहु ।
नवमाखन तुमहीं मुख-लायक कीजै दान उगाहु ॥
तुम सौं ही माखन-दधि हम सब देखि-देखि सुख पावैं ।
सूर स्याम तुम अब दधि-दानी कहि कहि प्रगट सुनावैं ॥११०६॥

माखन-दधि हरि खात ग्वाल-सँग ।
पातनि के दोना सब लै-लै, पतुकिनि मुख मेलत रँग ॥
मटुकिनि तैं लै-लै परुसति हैं हरष भरीं ब्रज-नारी ।
यह सुख तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं दधि खेवत बनवारी ॥
गोपी धन्य कहति आपुन कौं, धन्य दूध-दधि-माखन ।
जाकौं कान्ह लेत मुख मेलत सबनि कियौ सँभाखन ॥
जो हम साध करति अपनैं मन सो सुख पायौ नीकैं ।
सूर स्याम पर तन-मन वारति आनँद जी सबही कैं ॥११०७॥

गोपिका अति आनँद भरी ।
माखन-दधि हरि खात प्रेम सौं निरखति नारि खरी ॥
कर लै-लै मुख परस करावत उपमा बढ़ी सु भाइ ।
मानहुँ कंज मिलत ससि कौं लियैं सुधा-क्षीर भर आइ ॥
जा कारन सिव ध्यान लगावत, सेस सहस मुख गावत ।
सोई सूर प्रगटि ब्रज-भीतर राधा-मनहिं चुरावत ॥११०८॥

राधा सौं माखन हरि माँगत ।
औरनि की मटुकी कौ खायौ तुम्हरौ कैसौ लागत ॥
लै आई वृषभानु सुता हँसि सद लवनी है मेरौ ।
लै दीन्ही अपनैं कर हरि-मुख खात अल्प हँसि हेरौ ॥

सबनिहि तैं मीठौ दधि है यह, मधुरैं कह्यौ सुनाइ।
सूरदास प्रभु सुख उपजायौ, ब्रज-ललना मनभाइ ।।११७६।।

मेरे दधि कौ हरि स्वाद न पायौ।
जानत इन गुजरिनि कौ सौ है लयौ छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायौ ।।
धौरी धेनु दुहाइ छानि पय मधुर आँचि मैं औटि सिरायौ।
नई दोहिनी पोंछि पखारी धरि निरधूम खिरनि पै तायौ ।।
तामैं मिलि मिस्रित मिसिरी करि, दै कपूर-पुट जावन नायौ।
सुभग ढकनियाँ ढाँकि बाँधि पट, जतन राखि छीकैं समुदायौ ।।
हौं तुम कारन लै आई गृह, मारग मैं न कहूँ दरसायौ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि कियौ कान्ह ग्वालिनि मन भायौ।

गोपी कहति, धन्य हम नारी।
धन्य दूध, धनि दधि धनि माखन,हम परसति जैंवत गिरिधारी।।
धन्य घोष,धनि दिन, धनि निसि वह, धनि गोकुल प्रगटे बनवारी।
धन्य सुकृत पाछिलौ धन्य धनि नंद धन्य जसुमति महतारी ।।
धनि धनि ग्वाल धन्य बृंदावन धन्य भूमि यह अति सुखकारी।
धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृन-द्रुम-बन-झारी ।।११८१।।

गन गंधर्व देखि सिहात।
धन्य ब्रज-ललनानि कर तैं ब्रह्म माखन खात ।।
नहीं रेख, न रूप, नहिं तनु-बरन नहिं अनुहारि।
मातु-पिता नहिं दोउ जाकैं हरत-मरत न जारि ।।
आपु कर्ता आपु हर्ता आपु त्रिभुवन-नाथ।
आपुही सब घट कौ व्यापी निगम गावत गाथ ।।
अंग प्रति प्रति रोम जाकैं, कोटि-कोटि ब्रह्मंड।
कीट ब्रह्म प्रजंत जल-थल, इनहिं तैं यह मंड।
बेद बिस्वंभरन नायक, ग्वाल संग बिलास।
सोइ प्रभु दधि-दान माँगत धन्य सूरजदास ।।११८२।।

ब्रज तिनहिं यह आपदु दीन्हौ।
छिन छिन संग जन्म लियौ परगट, सखी-सखा करि कीन्हौ ॥
गोपी ग्वाल कान्ह द्वै नाहीं ये कहूँ नेंकु न न्यारे।
जहाँ-जहाँ अवतार धरत हरि, ये नहिं नेंकु बिसारे॥
एकै देह बहुत करि राखे, गोपी-ग्वाल मुरारी।
यह सुख देखि सूर के प्रभु कौं थकित अमर-सँग नारी ॥११८३॥

अमर-नारि अस्तुति करैं भारी।
एक निमिष ब्रजबासिनि कौ सुख, नहिं तिहूँ लोक बिचारी॥
धन्य कान्ह नटवर बपु धारत धन्य गोपिका नारी।
इक-इक तैं गुन रूप उजागरि, स्याम भावती प्यारी॥
परसति ग्वारि ग्वाल सब खेलत, धन्य कृष्न सुखकारी।
सूर स्याम दधि-दानी कहि कहि आनँद घोष कुमारी ॥११८४॥

यह महिमा येई पै जानैं।
जोग-जज्ञ-तप ध्यान न आवत सो दधि-दान लेत सुख मानैं॥
खात परस्पर ग्वालिनि मिलि कै, मीठौ कहि-कहि आपु बखानैं।
विस्वंभर जगदीस कहावत ते दधि-दोना माँझ अघाने॥
आपुहिं करता आपुहिं हरता, आपु बनावत, आपुहिं भानैं।
ऐसे सूरदास के स्वामी, ते गोपिनि कैं हाथ बिकाने ॥११८५॥

स्याम सुनहु इक बात हमारी।
दीठौ बहुत दई हम तुमसौं, बकसौ चूक हमारी।
तुम जो कही कटुक सब बानी हृदय हमारैं माहीं।
हँसि हँसि कहति सिमिटति तुमसौं अति आनँद मन माहीं॥
दधि-माखन कौ दान और जो, जानौ सबै तुम्हारौ।
सूर स्याम तुमकौं सब दीन्हौ जीवन प्रान हमारौ ॥११८६॥

सुनहु बात जुवती इक मेरी।
तुमतैं दूरि होत नहिं कबहूँ तुम राखौ मोहिं घेरी।

सखनिहिं तैं मीठी दधि है यह, मधुरैं कह्यौ सुनाइ।
सूरदास प्रभु सुख उपजायौ, ब्रज-ललना मनभाइ ॥११८५॥

मेरे दधि कौ हरि स्वाद न पायौ।
जानत इन गुजरिनि कौ सौ है लयौ छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायौ ॥
धौरी धेनु दुहाइ छानि पय, मधुर आँचि मैं औटि सिरायौ।
नई दोहनी पोंछि पखारी धरि निरधूम खिरनि पै तायौ ॥
तामैं मिलि मिस्रित मिसिरी करि दै कपूर-पुट जावन नायौ।
सुभग ढकनियाँ ढाँकि बाँधि पट, जतन राखि छींकैं समुदायौ ॥
हौं तुम कारन लै आई गृह, मारग मैं न कहूँ दरसायौ।
सूरदास-प्रभु रसिक-सिरोमनि किया कान्ह ग्वालिनि मन भायौ।

गोपी कहति, धन्य हम नारी।
धन्य दूध धनि दधि धनि माखन,हम परुसति जैंवत गिरिधारी॥
धन्य घोष,धनि दिन, धनि निसि वह धनि गोकुल प्रगटे बनवारी।
धन्य सुकृत पाछिलौ धन्य धनि नंद धन्य जसुमति महतारी॥
धनि धनि ग्वाल धन्य वृंदावन धन्य भूमि यह अति सुखकारी।
धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृन-द्रुम-बन-वारी ॥११८१॥

गन गंधर्ब देखि सिहात।
धन्य ब्रज-ललनानि कर तैं ब्रह्म माखन खात ॥
नहीं रेख, न रूप, नहिं तनु-बरन नहिं अनुहारि।
मातु-पिता नहिं दोउ जाकैं, हरत-मरत न जारि ॥
आपु कर्ता आपु हर्ता आपु त्रिभुवन-नाथ।
आपुहीं सब घट कौ ब्यापी, निगम गावत गाथ ॥
अंग प्रति प्रति रोम जाकैं, कोटि-कोटि ब्रह्मंड।
कीट ब्रह्म प्रजंत जल-थल, इनहिं तैं यह मंड।
येइ बिस्वंभरन नायक ग्वाल संग बिलास।
सोइ प्रभु दधि-दान माँगत, धन्य सूरजदास ॥११८२॥

धिक-धिक स्रवन कथा बिनु हरि कै, धिक लोचन बिनु रूप।
सूरदास प्रभु तुम बिनु घर ज्यौं बन-भीतर के कूप ॥११६०॥

जुवती ब्रज घर जान बिचारति।
कबहुँक मटुकी लेति सीस पर, कबहुँ धरनि फिरि धारति।
देखन स्याम, सखा सब देखत चितै रही ब्रज नारि।
रीती मटुकिनि मैं कछु नाहीं, सकुची मनहिं बिचारि।
तब हँसि बोले स्याम, आजु घर तुमको भई अबार।
सकुचनि दान चाहिसे को तुम, मैं करिहौं निरवार।
यह कहिकै हरि ब्रजहिं सिधारे, जुवतिनि दान मनाइ।
सूर स्याम नागर नारिनि कैं, चित लै गए चुराइ ॥११६१॥

रीती मटुकी सीस धरैं।
बन की घर की सुरति न काहूँ लेहु दही यह कहति फिरैं।
कबहुँक जाति कुंज भीतर कौं तहाँ स्याम की सुरति करैं।
चौंकि परति, कछु तन-सुधि आवति जहाँ-तहाँ सखि सुनति ररैं।
तब यह कहति कहाँ मैं इनकी, भ्रमि भ्रमि बन मैं वृथा मरैं।
सूर स्याम कैं रस पुनि छाकति वैसैं ही ढँग बहुरि ढरैं ॥११६२॥

तरुनी स्याम-रस मतवारि।
प्रथम जोबन-रस चढ़ायौ, अतिहिं भई खुमारि।
दूध नहिं दधि नहीं माखन नहीं, रीतौ माट।
महा-रस अँग अंग पूरन कहाँ घर कहँ बाट।
मातु-पितु गुरुजन कहाँ के कौन पति को नारि।
सूर प्रभु कैं प्रेम-पूरन, छकि रहीं ब्रजनारि ॥११६३॥

बैठि गईं मटुका सब धरि कै।
यह जानति अबहीं हैं आवत स्याम सखा सँग हरि कै।
धोखन भी दधि-माट ढुरावनि दृष्टि गईं नईं धरि कै।
गर्वनि मटुकियाँ [illegible] देखि तरुनी गईं भरमि कै।

तुम कारन बैकुंठ तजत हौं जनम लेत ब्रज आइ।
बृंदावन राधा-गोपी सँग यह नहिं बिसर्यौ जाइ॥
तुम अंतर अंतर कह भाषति, एक प्रान द्वै देह।
क्यौं राधा ब्रज बसैं बिसारी सुमिरि पुरातन नेह॥
अब घर जाहु दान मैं पायौ, लेखा कियौ न जाइ।
सूर स्याम हँसि-हँसि जुवतिनि सौं, ऐसी कहत बनाइ॥११८७

घर तनु मन बिना नहिं जात।
आपु हँसि-हँसि कहत हौ जू चतुराई की बात॥
तनहिं घर है मनहि राखा ओट करी मोह होइ।
कहौ घर हम जाहिं कैसैं मन धर्यौ तुम गोइ॥
नैन-स्रवन बिचार सुधि-बुधि रहे मनहिं सुभाइ।
ताहि अबहीं तनुहिं लै घर, परत नाहिंन पाइ॥
प्रीति करि, दुबिधा करौ कत तुमहिं जानौ नाथ।
सूर के प्रभु दीजियै मन, जाहिं घर लै साथ॥११८८

मन भीतर है बास हमारौ।
हमकौं लै गए तुमहिं अपायौ, यह तौ दोष तुम्हारौ॥
अजहूँ कहौ, रहैं हम अनतहिं, तुम अपनौ मन लेहु।
अब पतिव्रानी लोक-लाज-डर, हमहिं ताहि तौ देहु॥
घटवौ होइ ताहि तै अपनौ, ताहि कीजियै त्याग।
चोरैं कियौ बास मन-भीतर अब समुझे भई जाग॥
मन दीन्हौ, मौकौं तब दीन्हौ मन छेहौ मैं जाउँ।
सूर स्याम ऐसो जनि कहियै हम यह कही सुभाउ॥११८९

तुमहिं बिना मन धिक अरु धिक घर।
तुमहिं बिना धिक-धिक माता पितु, धिक कुल-कानि, लाज, डर॥
धिक सुत पति धिक जीवन जग कौ धिक तुम बिनु संसार।
धिक सो दिवस, पहर, घटिका, पल, जो बिनु नंद-कुमार॥

धिक-धिक स्रवन कथा बिनु हरि के, धिक लोचन बिनु रूप।
सूरदास प्रभु तुम बिनु घर ज्यौं, बन-भीतर के कूप ॥११६०॥

जुवती ब्रज घर आन बिचारति।
कबहुँक मटुकी छिति सीस पर कबहुँ धरनि फिरि धारति।
देखत स्याम, सखा सब देखत, चितै रही ब्रज नारि।
रीती मटुकिनि मैं कछु नाहीं सकुची मनहिं बिचारि।
तब हँसि बोले स्याम जाहु घर तुमकौं भई अबार।
सकुचति दान चाहिहौ कौ तुम, मैं करिहौं निरवार।
यह कहिकै हरि ब्रजहिं सिधारे, जुवतिनि दान मनाइ।
सूर स्याम नागर नारिनि के, चित लै गए चुराइ ॥११६१॥

रीती मटुकी सीस धरैं।
बन की घर की सुरति न काहूँ, लेहु दही यह कहति फिरैं।
कबहुँक जाति कुंज भीतर कौं तहाँ स्याम की सुरति करैं।
चौंकि परति, कछु तन-सुधि आवति जहाँ-तहाँ सखि सुनति ररैं।
तब यह कहति कहाँ मैं इनसी भ्रमि भ्रमि बन मैं वृथा मरैं।
सूर स्याम के रस पुनि छाकति वैसैं ही ढँग बहुरि ढरैं ॥११६२॥

तरुनी स्याम-रस मतवारि।
प्रथम जोबन-रस चढ़ायौ अतिहिं भई खुमारि।
दूध नहिं दधि नहीं, माखन नहीं, रीतौ माट।
महा-रस अँग अंग पूरन, कहाँ घर, कहँ बाट।
मातु-पितु गुरुजन कहाँ के, कौन पति, को नारि।
सूर प्रभु कैं प्रेम-पूरन छकि रहीं ब्रजनारि ॥११६३॥

बैठि गई मटुकी सब धरि कै।
यह जानति अबहीं हैं आवत, ग्वाल सखा सँग हरि कै।
अंचल सौं दधि-माट दुरावति दृष्टि गई तहँ परि कै।
सबनि मटुकियाँ रीती देखी तरुनी गई सभरि कै।

कहि-कहि उठीं जहाँ-तहँ सब मिलि, गोरस गयौ कहूँ ढरिकै।
कोउ कोउ कहै, स्याम ढरकायौ, जाम द्वै री धरि कै।
इहिं मारग कोऊ जनि आवहु, रिस करि चली डगरि कै।
सूर सुरति तनु की कछु आई, उबरत काम लहरि कैं ॥११८४॥

लोक-सकुच कुल-कानि तजी।
जैसैं नदी सिंधु कौं धावै वैसेहिं स्याम भजी।
मातु-पिता बहु त्रास दिखायौ, नैंकु न डरी लजी।
हारि मानि बैठे, नहिं लागति बहुतै बुधि सजी।
मानति नहीं लोक-मरजादा हरि कैं रंग मजी।
सूर स्याम कौं मिलि, चूनौ-हरदी ज्यौं रँग रजी ॥११८५॥

कोउ माई बरजै री गोपालहिं।
दधि कौ नाम स्यामसुंदर-रस बिसरि गयौ ब्रज-बालहिं।
मटुकी सीस, फिरति ब्रज-बीथिनि बोलति बचन रसालहिं।
उफनत तक्र, चहूँ दिसि चितवत चित लाग्यौ नँद-लालहिं।
हँसति, रिसाति, बुलावति, बरजति देखहु उनकी चालहिं।
सूर स्याम बिनु और न भावै या बिरहिनि बेहालहिं ॥११८६॥

कहा कहति तू, मोहिं री माई।
नँद-नँदन मन हरि लियौ मेरौ तब तैं मोकौं कछु न सुहाई।
अब लौं नहिं जानति मैं को ही कब पै तू मेरैं ढिग आई।
कहाँ गेह, कहँ मातु-पिता हैं, कहाँ सजन, गुरुजन, कहँ भाई।
कैसी लाज, कानि है कैसी कहा कहति ह्वै-ह्वै रिसहाई?।
अब तौ सूर भजी नँद-लालहिं की लघुता की होउ बड़ाई ॥११८७॥

मेरे कहे मैं कोउ नाहिं।
कह कहौं कछु कहि न आवै नैंकु न डराहिं।
नैन ये हरि-दरस-लोभी, स्रवन सब्द-रसाल।
प्रथमहीं मन गयौ तन तजि, तब भई बेहाल।

इंद्रियनि पर भूप मन है, सबनि लियौ बुलाइ।
सूर प्रभु कौं मिले सब ये, मोहिं करि गए बाइ ॥११९८॥

अब तौ प्रगट भई जग जानी।
वा मोहन सौं प्रीति निरंतर, क्यौंऽब रहैगी छानी।
कहा करौं सुंदर मूरति इन नैननि माँझ समानी।
निकसति नहीं, बहुत पचि हारी रोम-रोम अरुझानी।
अब कैसैं निरवारि जाति है, मिली दूध ज्यौं पानी।
सूरदास प्रभु अंतरजामी उर अंतर की जानी ॥११९९॥

सखि मोहिं हरि-दरस-रस प्याइ।
हौं रँगी अब स्याम-मूरति लाख लोग रिसाइ।
स्यामसुंदर मदन-मोहन रंग-रूप सुभाइ।
सूर-स्वामी प्रीति कारन सीस रहौ कि जाइ ॥१२००॥

नँदलाल सौं मेरौ मन मान्यौ कहा करैगौ कोइ।
मैं तौ चरन-कमल लपटानी जो भावै सो होइ।
बाप रिसाइ, माइ घर मारै, हँसै बिराने लोग।
अब तौ स्यामहि सौं रति बाढ़ी बिधना रच्यौ सँजोग।
जाति महति पति जाइ न मेरौ अरु परलोक नसाइ।
गिरिधर बर मैं नैकु न छाँड़ौं मिली निसान बजाइ।
बहुरि कबहिं यह तन धरि पैहौं कहँ पुनि श्रीबनवारि।
सूरदास-स्वामी कै ऊपर यह तन डारौं वारि ॥१२०१॥

करनि दै लोगनि कौं उपहास।
मन-क्रम-बचन नंद-नंदन कौ नैकु न छाँड़ौं पास।
सब या ब्रज के लोग चिकनियाँ मेरे भायें घास।
अब तौ यहै बसी री माई नहिं मानौं गुरु-त्रास।
कैसैं रह्यौ परै री सजनी, एक गाँव कै बास।
स्याम मिलन की प्रीति सखी री, जानत सूरजदास ॥१२०२॥

एक गाउँ के बास सखी हौं, कैसैं धीर धरौं।
लोचन-मधुप अटक नहिं मानत, जद्यपि जतन करौं।
वै इहिं मग नितप्रति आवत हैं, हौं दधि लै निकरौं।
पुलकित रोम-रोम, गदगद सुर आनँद उमँग भरौं।
पल अंतर चलि जात, कलप भर बिरहा अनल जरौं।
सूर सकुच कुल-कानि कहाँ लगि आरज-पथहिं डरौं ॥१२११॥

हौं सँग साँवरे के जैहौं।
होनी होइ, होइ सो अबहीं, जस-अपजस काहूँ न डरैहौं।
कहा रिसाइ करै कोउ मेरी, कछु जो कहै प्रान तिहिं दैहौं।
देहौं त्यागि, राखिहौं यह व्रत, हरि-रति-बीज बहुरि कब बैहौं
पा पद सूर अचिर अवनी, तनु तजि अकास पिय-भवन समैहौं।
धन पद ब्रज-बापी क्रीड़ा जल, मिलि नँद-नंद सबै सुख लैहौं ॥

(झ) नत्रोपालम्भ

मन बिगर्यौ, यह नैन बिगारे।
ऐसौ निठुर भयौ ऐसौ री, तब तैं टरत न टारे॥
इंद्री सबै नैन बस कीन्ही, स्यामहिं सौंपे मारे।
ये सब कहा कौन हैं मेरे, आनाकानि बिचारे॥
इतने तैं इतने मैं कीन्हे कैसैं आपु बिसारे।
सुनहु सूर ये आपुस्वारथी, ये आपुनहीं मारे॥१२०५॥

मन कैं भेद नैन गए माई।
लुब्धे जाइ स्यामसुंदर-रस करी न कछू भलाई॥
सबही स्याम अचानक आए, इकटक रहे लगाई।
लोक सकुच मरजादा कुल की छिनहीं मैं बिसराई॥
ब्याकुल फिरति भवन बन जहँ-तहँ तूल आक उघराई।
देह नहीं अपनी सी लागति यह है भली पराई॥
सुनहु सखी मन के रँग ऐसे ऐसी बुद्धि उपाई।
सूर स्याम लोचन बस कीन्हे रूप-ठगौरी लाई॥१२०६॥

नैन न मेरे हाथ रहे।
देखत दरस स्यामसुंदर कौ जल की ढरनि बहे॥
वह नीचे कौ धावत आतुर वैसेहिं नैन भए।
वह तौ जाइ समात उदधि मैं ये प्रति अंग रए॥

वह अगाध कहुँ वार पार नहिं, येउ सोभा नहिं पार।
लोचन मिले त्रिवेनी ह्वै कै, सूर समुद्र अपार ।१२०७।

नैना नीकैं उनहिं गए।
मन जब गयौ, नहीं मैं जान्यौ, ये दोउ निदरि गए॥
ये तौ भए भावते हरि के, सदा रहत उन माहीं।
कर मीड़तिं, सिर धुनतिं नारि सब यह कहि कहि पछिताहीं॥
सूरज कैं ज्यौं पुहि पाछिलौ हमहूँ करि दियौ आगैं।
अब तौ मिले सूर के प्रभु कौं पावति ही अब माँगैं ।१२०८।

नैन परे रस-स्याम-सुधा मैं।
सिव सनकादि, ब्रह्म, नारद मुनि, ये लुब्धे हैं जामैं॥
ऐसौ रस बिलसत नाना बिधि स्वाद, अघावत चाखत।
सुनहु सखी कैसो निधि लहि कै, क्यौं वै तुमहिं निहारत॥
जिनि यह सुधा-पान सुख कीन्हौ, ते कैसैं दुख देखत।
त्यौं ये नैन भए गरबीले अब काहैं हम लेखत॥
काहे कौ अपसोस करति हौ, नैन तुम्हारे नाहीं।
जाइ मिले सूरज के प्रभु कौ इत उत कहूँ न जाहीं ।१२०९।

नैना हरि अंग रूप लुब्धे री माई।
लोक लाज कुल की मरजादा बिसराई॥
जैसे चंदा चकोर, मृगी नाद जैसैं।
कंचुरि ज्यौं त्यागि फनिग फिरत नहीं तैसैं॥
जैसैं सरिता प्रवाह सागर कौं धावै।
कोऊ लाख कोटि करै, तहाँ फिरि न आवै॥
प्रभु की गति पंगु किये, सोचति ब्रजनारी।
तैसैं ये मिले जाइ, सूरज प्रभु हारी ।१२१०।

नैना भए बजाइ गुलाम।
मन बेंच्यौ लै बस्तु हमारी, सुनहु सखी ये काम॥

प्रथम भेद करि आयौ आपुन, माँगि पठायौ स्याम।
सेंधि दिये निधरक हरि लीन्हे, मृदु मुसुकनि दै दाम॥
यह धानी आई-नाई परवासी मोल लयं कौ नाम।
सुनहु सूर यह पाप कौन कौ यह तुम कहौ न बाम॥१२११

कहा भए जौ ऐसे लोचन, मेरैं तौ कछु काज नहीं।
मैं तौ व्याकुल भई पुकारति ये सँग लै जु गए मनहीं॥
त्रिभुवन मैं अति नाम अगायौ फिरत स्याम-सँगहीं-सँगहीं।
अपनैं सुख कौं कहा चाहियै, बहुरि न आए मो-तनहीं॥
सो सपूत परिवार चलावैं, ये तौ लीभी, धिक इनहीं।
ऐसे पर ये सूर कहावत काज नहीं ऐसे जनहीं॥१२१२।

इन बातनि कहुँ होति बड़ाई।
लूटत हैं छवि-रासि स्याम की, नीके करि निधि पाई॥
थोरे ही मैं उघरि परैंगे, अतिहिं चले इतराई।
आरत आव देत नहिं काहूँ, ओछैं घर निधि आई॥
यह संपति इ तिहूँ भुवन की सब इनहीं अपनाई।
सूरदास प्रभु सँग ही डोलैं काहूँ नहीं अनाई॥१२१३।

इन नैननि मोहिं बहुत सतायौ।
अब लौं कानि करी मैं सजनी बहुतैं मूँड़ चढ़ायौ।
निदरे रहत गहे रिस मोसौं मोही दोष लगायौ।
लूटत आपुन श्री अँग-सोभा ज्यौं निधनी धन पायौ।
निसिहूँ दिन ये करत अचगरी, मनहिं कहा धौं आयौ।
सुनहु सूर इनकौ प्रतिपालत, आलस नैंकु न आयौ॥१२१४।

हरि-छबि देखि नैन ललचाने।
इकटक रहे चकोर चंद ज्यौं, निमिष बिसरि ठहराने॥
मेरौ कह्यौ सुनत नहिं स्रवननि लोक-लाज न लजाने।
गए अकुलाइ धाइ मो देखत, मैंकहुँ नहीं सकाने॥

जैसैं सुभट आत रन सम्मुख फिरत न कबहुँ पराने।
सूरदास ऐसी इनि कीन्हीं, स्याम-रंग लपटाने ।।२२१२।

सुनि सजनी, तू भई अयानी।
या कलियुग की बात सुनाऊँ, जानति सोई सयानी ॥
जो तुम करी भलाई कोटिक, सो नहिं मानै कोई।
लै अनमले बड़ाई तिनकी, मानै सोई सोई।
प्रगट देखि, कद दूरि बताऊँ, हमहुँ स्याम कौं ध्यावैं।
सुनहु सूर सब व्याकुल डोलैं, नैन तुरत फल पावैं ।।२२१६।

नैन करैं सुख हम दुख पावैं।
ऐसी को पर-वेदन जानै, जासी कहि जु सुनावैं ॥
बातें मौन मली सबही तैं कहि कै मान गँवावैं।
जोवन, मन,इंद्री हरि कौं भजि, तजि हमकौं सुख पावैं ॥
वै तौ गए आपने कर तैं, वृथा जीव भरमावैं।
सूर स्याम हू चतुर सिरोमनि तिनसौं भेद बनावैं ।।२२१७।

इन नैननि की कथा सुनावै ।
इनमैं गुन औगुन हरि आगैं तिल-तिल भेद जनावै ।
इनसौं तुम परतीति यहावति, ए हैं अपने काजी।
स्वारथ मानि लेत रति करि कै, बोलत हाँ की, हाँ जी।
ये गुन नहिं मानत काहू को अपनैं सुख भरि लेत।
सूरज प्रभु ये पहिलैं हित करि, फिरि पाछैं दुख देत ।।२२१८

ये नैना यौं आहिं हमारे।
इतने तैं इतने हम कीन्हे, बारे तैं प्रतिपारे।
पोषति पुनि अंचल लै पौंछति, आँखनि इनहिं पनाइ।
पढ़े भए तब लीन मानि यह, जहँ-तहँ पलत भगाइ।
ऐसे भैवर कहाँ पाइहौ, पढ़े कहैं हरि आगैं।
ए अब ढीठ भए यौं डोलत, हमहिं चमी परित्यागैं ॥

सूर स्याम तुम त्रिभुवन-नायक, दुखदायक तुम नाहीं।
ज्यौं त्यौं करि ये हमहिं मिलावहु यहै कहौं बलि जाहीं ।।१२१९।।

नैना अतिहीं लोभ भरे।

संगहिं संग रहत वै जहँ तहँ, बैठत चलत-खरे ।।
काहू की परतीति न मानत, जानत सबहिनि चोर।
लूटत रूप अखूट दाम कौ, स्याम बस्य ज्यौं मोर ।।
बड़े भागमानी यह जानी कृपिन न इनतैं और।
ऐसी निधि मैं नाउँ न लीन्हौ कहँ लैहैं, कहँ ठौर ।।
आपुन लेहिं, औरहूँ देते जस लेते संसार।
सूरदास प्रभु इनहिं पत्याने को कहै बारंबार ।।१२२०।।

ऐसे आपुस्वारथी नैन।

अपनोइ पेट भरत हैं निसि-दिन और न लैन न दैन ।।
वस्तु अपार परी ओछैं कर ये जानत घटि जैहै।
को इनसौं समुझाइ कहै, यह दीन्हैं ही अधिकैहै ।।
सदा नहीं रैहैं अधिकारी, नाउँ राखि कौ लेते।
सूर स्याम सुख लूटैं आपुन, औरनि हूँ कौं देते ।।१२२१।।

ये लोभी ए देहिं कहा री।

ऐसे निठुर नहीं मैं जाने, जैसे नैन महा री ।।
मन अपनौ कबहूँ पठ हैहै, ये नहिं होहिं हमारे।
जब तै गए नंद-नंदन-ढिग, तब तैं फिरि न निहारे ।।
कोटि करौं वै हमहिं न मानैं, रीझे रूप अगाध।
सूर स्याम कौं कबहुँ त्रासे रहै हमारी साध ।।१२२२।।

नैन भरे घर के चोर।

लेत नहिं कछु बनै इनसौं, देखि छवि भयौ भोर ।।
नहीं त्यागत नहीं मागत, रूप लाग प्रकास।
चपल औरनि चौंधि राखी, जमी उनकी आस ।।

मैं बहुत करि बरजि हारी, निदरि निकसे हेरि।
सूर स्याम पँथाइ राखे, अंग अँग-छबि घेरि ॥१२२३॥

लोचन चोर बाँधे स्याम।
जात ही उन तुरत पकरे, कुटिल अलकनि दाम ॥
सुभग ललित कपोल-आभा गिथे दाम अपार।
और अँग छबि लोभ लागी, अब नहीं निरवार ॥
सँग गए ये सबै अटके, लटकि अंग अनूप।
एक एकहिं नहीं मानत, परे सोभा-कूप ॥
जो जहाँ सो तहाँ वारयौ नैंकु तन-सुधि नाहिं।
सूर गुरजन डरहिं मारत, यहै करि पछितारिं ॥१२२४॥

लोचन भए पखेरू माई।
लुब्धे स्याम रूप चारा कौं अलक-फंद परे जाई ॥
मोर मुकुट टाटी मानौ यह बैठनि ललित त्रिभंग।
चितवनि मधुप, हास लटकनि पिय, लौंपा अलक तरंग ॥
दौरि गहनि मुख-मृदु मुसकावनि लाम-पीमरु टारे।
सूरदास मन व्याध हमारौ गृह बन तें जु बिसारे ॥१२२५॥

लोचन मेरे भृंग भए री।
लोक-लाज बन-घन बेली तजि, आतुर ह्वै जु गए री ॥
स्याम-रूप-रस वारिज लोचन तहाँ जाइ लुबधे री।
लपटे लटकि पराग-बिलोकनि संपुट-लोभ परे री ॥
हँसनि प्रकास बिमास छिरि कै, निकसत पुनि तहँ पैठत।
सूर स्याम संपुट-कर चरननि, जहाँ-तहाँ भ्रमि पैठत ॥१२२६

मेरे नैन कुरंग भए।
जोबन-बन तें निकसि चले ये, मुरली-नाद रए ॥
रूप-व्याध फुंदन धुनि-बामा, किंकिनि फंदा जोर।
व्याकुल ह्वै घरहिं टर हेरत, गुरुजन गनि गंभीर ॥

भौंह कमान, नैन सर-साधनि, मारनि चितवनि चारि ।
ठौर रहे नहिं डरन सूर पै, मंद हँसनि सिर डारि ।१२२७।

नैन भए बस मोहन तैं ।
ज्यौं कुरंग बस होत नाद कै, टरत नहीं ता गादन तैं ॥
ज्यौं मधुकर बस कमल-कोष कै, ज्यौं बस चंद चकोर ।
तैसैंहि ये बस भए स्याम कै, गुड़ी-परस ज्यौं डोर ॥
ज्यौं बस स्वाति बूँद के चातक, ज्यौं बस जल के मीन ।
सूरज प्रभु के बस्य भए ये छिनु-छिनु प्रीति नवीन ।१२२८।

सुभट भए डोलत ये नैन ।
सन्मुख भिरत मुरत नहिं पाछैं भौंहा धनु डरैं न ॥
आपुन सीस-छत्र सौं धावत पलक-कवच नहिं संग ।
हाव-भाव सर भरत कटाच्छनि, भृकुटी धनुष अपंग ॥
महाबीर ये हम सौं मग-मग-बस रूप-सैन पर धावत ।
सुनहु सूर ये लोचन मेरे इकटक पलक न लावत ।१२२९।

नैना हैं टे ये बटपारी ।
कपट-नेह करि-करि इन हमसौं गुरुजन तैं करी न्यारी ॥
स्याम-सरन आइ कर झेल्ही, प्रेम-ठगौरी लाई ।
मुख परसाइ हँसनि मधुरता डोरन संग लगाइ ॥
मन हमसौं मिलि भेद बतायौ, बिरह फाँस गर डारी ।
कुल-लज्जा-संपदा हमारी लूटि लई इन सारी ॥
मोह-बिपिन मैं परी कराहति भेद जीव नहिं जान ।
सूरदास गुन सुमिरि-सुमिरि कै अंतरगत पछितान ।१२३०।

नीच नीच ह्वै नैन गए री ।
ज्यौं जलधर बरषत पर बरषत बूँद बूँद ह्वै निचरि गए री ॥
ज्यौं मधुकर रस-कमल पान करि मौनैं गाजि उनमत भए री ।
ज्यौं चौडुरी सुरंगम नाची, फिरि न गई जु गगन लु गए री ॥

ऐसी दसा भई री सबकी, स्याम-रूप मैं मगन भए री।
सूरदास-प्रभु अगनित सोभा न जानौं किहिं अंग छए री ।।१२११।।

तब तैं नैन रहे इकटकही।
जब तैं दृष्टि परे नँद-नंदन नैकु न अंत मटकही।।
मुरली धरे अरुन अधरनि पर कुंडल झलक कपोल।
निरखत इकटक पलक भुलाने, मनौ बिकाने मोल।।
हमकौं पै काहैं न बिसारैं अपनी सुधि उन नाहिं।
सूर स्याम छबि सिंधु समाने बूधा बरुनि पछिताहिं ।।१२१२।।

मेरे नैन चकोर भुलाने।
अह निसि रहत पलक सुधि बिसरे रूप-सुधा न अघाने।।
पल घटिका, घटि जाम, जाम दिन, दिनहीं जुग कर जाने।
स्वाद परे निमिषहुँ नहिं त्यागत, ताही सौंज समाने।।
हरि मुख बिधु-छबि पीवत ये व्याकुल, नैकहुँ नहीं अघाने।
सूरदास प्रभु निरखि थकित तनु, अंग अंग अरुझाने ।।१२१३।।

हरि-मुख-बिधु, मेरी अँखियाँ चकोरी।
रखी रहति ओट पट पलकनि चकू न मानति किधिक निहोरी।।
बरबस ही इन गही सुरुचा, प्रीति जाइ चंचल सौं जोरी।
बिबस भईं चाहति गहि लागन झलकति नैकु अँजन की डोरी।।
बरबसही इन गही चपलता करत फिरत हमहूँ सौं चोरी।
सूरदास प्रभु मोहन नागर बरषि सुधा-रस सिंधु झकोरी ।।१२१४

नैन भए बोहित के काग।
उड़ि-उड़ि जात पार नहिं पावत, फिरि आवत तिहिं लाग।।
ऐसी दसा भई री इनकी अब लागे पछितान।
मो बरजत-बरजत उठि धाए, नहिं पायौ अनुमान।।
वह समुद्र, ये बोहित बासन, धरे कहाँ सुख-रासि।
सुनहु सूर ये चतुर कहावत, वह छबि महा प्रकासि ।।१२१५।।

हारि-जीति नैना नहिं जानत।
आप आत धरी कौं फिरि-फिरि कै कितनौ अपमानत॥
परे रहत द्वारें सोभा कैं, वेई गुन गनि गानत।
हरषित रहत सबनि कौं निदरे नैंकहु लाज न मानत॥
अब ये रहत निपटहीं कीन्हे, जद्यपि रूप न आनत।
दुख-सुख बिरह-सँजोग समिति जनु सूरदास यह गानत।।१२३६

नैना मानऽपमान सह्यौ।
अति अकुलाइ मिले री बरजत, जदपि कोटि कह्यौ।
लाजी जानि परी मर्यादा जैसी सो लिहि टेक रह्यौ।
ज्यौं मरकट मूठी नहिं छाँड़त नलिनी सुआ गह्यौ॥
जैसैं नीर प्रवाह समुद्रहिं माँझ चली सु बह्यौ।
सूरदास इन वैसिय कीन्ही फिरि मो तन न चह्यौ।।१२३७।

नैन गए ते फिरे री माई।
ज्यौं मरजाद बाइ सुपथ की बहुर्यौ फेरि न आई।
ज्यौं बालापन बहुरि न आवै, फिरे नहीं तरुनाई।
ज्यौं जल ढरत गिरत नहिं पाछें आगैं आगैं जाई।
ज्यौं कुलमद् बाहिरौ परि कै, कुल मैं फिरि न समाई।
वैसी दसा भई हमहूँ की, सूर स्याम-सरनाई।।१२३८।

नैननि सौं झगरौ करिहौं री।
कहा भयौ जौ स्याम-संग हैं बाँह पकरि सन्मुख करिहौं री।
जन्महिं तैं प्रतिपालि बड़े किये दिन दिन कौ लेखौ करिहौं री।
रूप-लूट कीन्ही तुम काहैं, अपने बाँटे कौ धरिहौं री।
एक मातु-पितु, भवन एक रहे मैं काहैं उनकी डरिहौं री।
सूर अंस जौ नहीं देहिंगे, उनकैं रंग मैंहूँ ढरिहौं री।।१२३९।

नैना रहैं न मेरे हटके।
कछु पढ़ि दियौ सखी उहिं ढोटा, घूँघरवारी लटकै।

कमल-कुसुम भीति मंदिर मैं, पल-सँपुट पट झटके ।
निगम नीति कुल लाज टूटे सब मम-मर्याद के झटके ॥
मोहनलाल करी बस अपने, ही निमेष के झटके ।
सूरदास पुर नारि फिरावत संग लगाए लट कैं ।।१२४०।

सुनि सजनी, मोसी इक बात ।
भाग बिना कछु नहीं पाइयै, तू काहैं पुनि-पुनि पछितात ।
नैनान बहुत करी री सेवा पल-पल घरी-पहर दिन-रात ।
मन-बच-क्रम रहतीं चाहैं धन्य-धन्य इनकौ है बात ।
कैसैं मिलै स्याम इनकौ हरि, जैसे सुत कौ हित कै मात ।
सूरदास प्रभु कृपा-सिंधु है, सरन बचे हैं त्रिभुवन-तात ।।१२४१।

नैन स्याम-सुख लूटत हैं ।
यहै बात मोकौं नहिं भावै हम तै काहैं छूटत हैं ।
महा अनूप निधि पाइ अचानक, आपुहिं सबै चुरावत हैं ।
अपने हैं, तातै यह कहियत, स्याम हमैं भरमावत हैं ।
यह संपदा कहौ क्यौं पचिहैं, आकसँभारी जानत हैं ।
सूरदास की ऐसे लघु-लघु, कहौ कहा अनुमानत हैं ।।१२४२।

नैननि हरि कौ निठुर कराए ।
चुगली करी जाइ उन आगैं हमतैं वै उपराए ॥
यहै कहौ, हम जनहिं बुलावत, ये नाहिंन ह्यौं आवहिं ।
आरज-पंथ लोक की संका तुम-तन आवन पावहिं ॥
यह सुनि कै उन हमहिं बिसारी, राखत नैननि साथ ।
सेवा बस करि कै राखत हैं, बात आपनें हाथ ॥
संगहिं रहत फिरत नहिं कतहूँ आपस्वारथी नीके ।
सुनहु सूर ये ऐसे ढीठे, भये कुटिल हैं जी के ।।१२४३।

कपटी नैननि तैं कोउ नाहीं ।
घर कौ भेद और कै आगैं, क्यौं कहिबे कौं जाहीं ॥

मधुप रूप निधरक ह्वै हमसौं, बरजि-बरजि पचि हारी।
मनमथमना भई परिपूरन, हरि रीझे गिरिधारी॥
इनहिं बिना वै उनहिं बिना ये, अंतर नाहीं भावत।
सूरदास यह जुग की महिमा, कुटिल तुरत फल पावत॥१ २४॥

मेरे इन नैननि इतौ करे।
मोहन बदन चकोर चंद ज्यौं, इकटक तैं न टरे॥
प्रमुदित मनि अवलोकि जग ज्यौं, अति आनंद भरे।
निधिहिं पाइ इतराइ नीच ज्यौं, त्यौं हमकौं निदरे॥
ज्यौं मनके गोचर घूँघट पट, सिसु ज्यौं अनलि धरे।
धरे न धीर निमेष रुदन-बस, सौं हठ-करनि परे॥
रही चाहि, सिखि लाज-अकुस तैं पच्छु बर न डरे।
सूरदास गथ खोटौ, काहैं पारखि-दोष धरे॥१२४४२॥

नैननि बानि परी नहिं नीकी।
फिरत सदा हरि पाछैं-पाछैं कहा लगनि इन जी की॥
लोक लाज, कुल की मरजादा, बिसरी आगति फीकी।
जो सीखति मोपै री सजनी, कही कहि या ही की॥
अपनैं मन इन सबी करी है, मोहि धरे हैं लौकी।
सूरदास ये भए सुमाने, मृदु मुसुकनि हरि पी की॥१२४४३॥

नैना घूँघट मैं न समात।
सुंदर बदन नंद-नंदन कौ निरखि-निरखि न अघात॥
अति-रस-लुब्ध महा मधु-लंपट, जानत एक न बात।
कहा कहौं दरसन-सुख माते ओट भएँ अकुलात॥
बार-बार बरजत हौं हारी, तऊ टेव नहिं जात।
सूर तनक गिरिधर बिनु देखें, पलक कलप सम जात॥१२४४४॥

लोचन टेक परे सिसु जैसें।
माँगत हैं हरि-रूप माधुरी खोज परे हैं नैनें॥

बारंबार पछितात कबहीं रहन न पाईं वैसे।
आप चले आपुनहीं अब लौं, राखे जैसे तैसे॥
कोटि जतन करि-करि परमोधति क्यौं न मानहिं कैसैं।
सूर कहूँ ठगमूरी खाई, व्याकुल डोलत ऐसे॥११४८॥

ये नैना मेरे ढीठ भए री।
घूँघट-ओट रहत नहिं रोकैं, हरि-मुख देखत लोभि गए री।
जब मैं कोटि जतन करि राखे, पलक-कपाटनि मूँदि लए री।
तब ते उमँगि चले दोउ हठ करि, कहौ कहा मैं नाम दए री।
अतिहिं चपल बरज्यौ नहिं मानत, देखि बदन तन फेरि नए री।
सूर स्यामसुंदर-रस अटके, मानहुँ लोभी उहँइ भए री॥११४९॥

नैना बहुत भाँति हटके।
बुधि-बल-छल-उपाइ करि थाके, नैकु नहीं मटके।
इत चितवत, उतहीं फिरि लागत, रहत नहीं अटके।
देखतहीं चढ़ि गए हाथ तैं भए घटा नट के।
एकहिं परनि परे खग ज्यौं हरि-रूप-माँझ लटके।
मिले जाइ हरदी चूना ज्यौं, फिरि न सूर फटके॥११५०॥

अँखियाँ हरि कैं हाथ बिकानी।
मृदु मुसुकानि मोल इनि लीन्ही, यह सुनि सुनि पछितानी॥
कैसैं रहति रहीं मेरैं बस, अब कछु औरै भाँति।
अब वै लाज मरति मोहिं देखत, बैठीं मिलि हरि-पाँति॥
सपने की सी मिलनि करति हैं, कब आवतिं, कब जातिं।
सूर मिलीं हरि नंद-नँदन कौं, अनत नाहिं पतियातिं॥११५१॥

अँखियनि तब तैं बैर धर्‌यौ।
जब हम हटकी हरि-दरसन कौं, सो रिस नहिं बिसर्‌यौ॥
तबहीं तैं उनि हमहिं भुलायौ गईं उतहिं कौं धाइ।
अब तौ तरकि तरकि ऐंठति हैं, लेनी लेति बनाइ॥

भई जाइ वे स्याम सुहागिनि, बड़भागिनि कहवावैं ।
सूरदास वैसी प्रभुता तजि, हम पै कब वे आवैं ।।१२५२।

धन्य धन्य अँखियाँ बड़भागिनि ।
जिनि बिनु स्याम रहत नहिं नैकहुँ, कीन्ही बने सुहागिनि ।।
जिनकौं नहीं अंग तें टारत, निसि-दिन दरसन पावैं ।
तिनकी सरि कहि कैसे कोई, जे हरि के मन भावैं ।।
हमहीं तै ये भईं उजागर, अब हम पर रिस मानैं ।
सूर स्याम अति बिबस भए हैं, कैसे रहत सुमाने ।।१२५३।

— (✽) —

(ञ) मथुरा-प्रवास

नृपति हृदै मन बिचार परयौ।
क्यौं मारौं पौत नंद ढुठौना, ऐसी भरनि भरयौ ॥
कबहुँक कहत आपु उठि धावौं यहै बिचार करयौ।
सात दिवस मैं बधी पूतना, यह गुनि मनहिं डरयौ ॥
पुनि साहस जिय-जिय करि गरज्यौ, ताकै काल सरयौ।
सूर स्याम-बलराम हृदय तैं, नैकु नहीं बिसरयौ ॥१२४९॥

नँद-सुत सहज बुलाइ पठाऊँ।
स्याम-राम अति सुन्दर कहियत, देखन काज मँगाऊँ ॥
बैरी कौन प्रेम करि ल्यावै भेद न जानै कोइ।
महर-महरि सौं हित करि ल्यावै महा चतुर जो होइ ॥
इहिं अंतर अक्रूर बुलायौ, अति आतुर महराज।
सूर चल्यौ मन सोच बढ़ाये, कौन है ऐसौ काज ॥१२५०॥

कंस नृपति अक्रूर बुलाये।
बैठि इकंत मंत्र दृढ़ कीन्हौ, दोउ बंधु मँगवाये।
कहूँ मल्ल, कहूँ गज दै राखे, कहूँ धनुष, कहूँ बीर।
नंद महर के बालक मेरैं करषत रहत सरीर ॥
उनहिं बुलाइ बीच ही मारौं नगर न आवन पावैं।
सूर सुनत अक्रूर, कहत नृप मन-मन मौज बढ़ावै ॥१२५१॥

पत नंदहिं सपनौ भयौ, हरि कहूँ हिराने।
बल-मोहन कोउ लै गयौ, सुनि कै बिलखाने॥
ग्वाल-सखा रोवत कहैं हरि तौ कहुँ नाहीं।
संगहिं सँग खेलत रहे यह कहि पछिताहीं॥
दूत एक संग लै गयौ, बलराम कन्हाई।
कहा ठगौरी सी करी, मोहिनी लगाइ॥
वाही के होउ ह्वै गए, हम देखत ठाढ़े।
सूरज प्रभु वै निठुर ह्वै, अतिहीं गए गाढ़े।१२४७।

आजु आइ देखौं वे चरन।
सीतल-सुभग सकल सुखदाता, दुसह तीप-दुख-हरन॥
अंकुस-कुलिस-कमल-धुज चिन्हित अरुन कंज के रंग।
गो-चारत बन जाइ पावहीं, गोप-सखनि के संग॥
जाकौ ध्यान धरत मुनि नारद, सुर, बिरंचि अरु ईस।
तेई चरन प्रगट करि परसौं, इन कर अपने सीस॥
कहि सरूप रथ रहि मैं भकिहौं तिन परिहौं धर धाइ।
सूरदास प्रभु अभय भुजा धरि, हँसि लैहैं उठाइ।१२४८।

सुफलक-सुत हरि दरसन पायौ।
रहि न सक्यौ रथ पर सुख-व्याकुल, भयौ जहें मन भायौ॥
भू पर दौरि निकट हरि आयौ, चरननि चित्त लगायौ।
पुलक अंग लोचन जल-धारा श्रीपद सिर परसायौ॥
कृपासिंधु करि कृपा मिले हँसि लियौ भक्त उर लाइ।
सूरदास यह सुख सोइ जानै कहौ कहा मैं गाइ।१२४९।

अति कोमल बलराम-कन्हाई।
दुहुनि गोद भक्त लिए हसि सुमनहुँ तैं हरुवाई॥
ग्वाल संग रथ लीन्हे आए पहुँचे ब्रज की खोर।
देख्यौ गोकुल लोग जहाँ-तहँ लेत उठे सुनि सोर॥

(घ) मथुरा-प्रवास

नृपति हृदै मन बिचार परयौ ।
क्यौं मारौं दोउ नंद ढुटौना, ऐसौ करनि करयौ ॥
कबहुँक कहत आपु उठि जाऔं बहुरि बिचार करयौ ।
सात दिवस मैं बधी पूतना यह सुनि मनहिं डरयौ ॥
पुनि साहस बिध-बिध करि गरज्यौ ताकौ काल सरयौ ।
सूर स्याम-बलराम हृदय तैं, नैंकु नहीं बिसरयौ ।।१२४।।

नँद-सुत सहज बुलाइ पठाईं ।
स्याम-राम अति सुन्दर कहियत, देखन काज मँगाई ॥
बैठे कौन प्रेम करि ल्यावै, भेद न जानै कोइ ।
महर-महरि सौं हित करि ल्यावै, महा चतुर जौ होइ ॥
इहिं अंतर अक्रूर बुलायौ, अति आतुर महराज ।
सूर चल्यौ मन सोच बढ़ाये, कौन है ऐसी काज ।।१२५।।

कंस नृपति अक्रूर बुलाये ।
बैठि इकंत मंत्र दृढ़ कीन्हौ, दोऊ बंधु मँगाये ।
कहुँ मल्ल, कहुँ गज दै राखौ कहुँ धनुष, कहुँ बीर ।
नंद महर के बालक मेरैं, करषत रहत सरीर ॥
उनहिं बुलाइ बीच ही मारौं, नगर न आवन पावै ।
सूर सुनत अक्रूर, कहत नृप मन-मन मौज बढ़ावै ।।१२६।।

मथुरा असुर-समूह बसत है, कर-कृपान जोधा हत्यारे।
सूरदास ये लरिका दोऊ, इन कब देखे मल्ल-अखारे ॥१२६४

ब्रजबासिनि के सरबस स्याम।
यह अक्रूर, क्रूर भयौ हमकौं लिये जात मोहन-बलराम।
अपनी लाग लेहु लेखौ करि जो कछु राज-अंस कौ दाम।
और महर लै संग सिधारौ नगर कहा लरिकन कौ काम।
तुम तौ साधु परम उपकारी, सुनियत बड़ौ तिहारौ नाम।
सूरदास-प्रभु पठै मधुपुरी, को जीवै छिन बासर जाम ॥१२६५॥

मेरी माई, निधनी कौ धन माधौ।
बारंबार निरखि सुख मानति, तजति नहीं पल आधौ।
छिनु-छिनु परसति अंकम लावति प्रेम प्रकट ह्वै बाँधौ।
निसिदिन चंद चकोरी अँखियनि, मिटै न दरसन साधौ।
करिहै कहा अक्रूर हमारौ देहैं प्रान अबाधौ।
सूर स्यामघन हौं नहिं पठवौं, अबहिं कंस किन बाँधौ ॥१२६६

नहिं कोउ स्यामहिं राखै जाइ।
सुफलक-सुत बैरी भयौ मोकौं कहति जसोदा माइ।
मदनगोपाल बिना घर आँगन, गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रहीं ठगी सी ठाढ़ी कहा ठगौरी लाइ।
सुंदर स्याम-राम भरि लोचन बिनु देखैं दोउ भाइ।
सूर तिन्हैं लै चले मधुपुरी हिरदै सूल बढ़ाइ ॥१२६७॥

जसोदा बार-बार यौं भाषै।
है कोऊ ब्रज हितू हमारौ चलत गुपालहिं राखै।
कहा काज मेरे छगन-मगन कौं, नृप मधुपुरी बुलायौ।
सुफलक-सुत मेरे प्रान हरन कौं, काल-रूप ह्वै आयौ।
बरु यह गोधन हरौ कंस सब मोहिं बंदि लै मेलौ।
इतनोइ सुख मेरौ कमल-नयन इन अँखियनि आगैं खेलौ।

निसि सुपने कौ त्रास भए अति, सुन्यौ कंस कौ दूत।
सूर नारि-नर देखन धाये, घर-घर सोर अकूत ॥१२६०॥

चलन चलन स्याम कहत, लैन कोउ आयौ।
नंद-भवन भनक सुनी, कंस कहि पठायौ॥
ब्रज की नारि गृह बिसारि ब्याकुल उठि धाईं।
समाचार बूझन कौं आतुर ह्वै आईं॥
प्रीति जानि, हेत मानि बिलख बदन ठाढ़ीं।
मानहु वै अति बिचित्र चित्र लिखी काढ़ीं॥
ऐसी गति ठौर-ठौर कहत न बनि आवै।
सूर स्याम बिछुरैं, दुख-बिरह काहि भावै ॥१२६१॥

चलत जानि चितवति ब्रज जुवती, मानहु लिखी चितेरैं।
जहाँ सु तहाँ एकटक रहि गईं, फिरत न लोचन फेरैं॥
बिसरि गई गति भाँति देह की, सुनति न स्रवननि टेरैं।
मिलि जु गईं मानौ पय-पानी, निबरति नहीं निबेरैं॥
लागीं संग मतंग मत्त ज्यौं, घिरति न कैसैंहु घेरैं।
सूर प्रेम आसा-अंकुस जिय वै नहिं इत उत हेरैं ॥१२६२॥

स्याम गयैं सखि, प्रान रहैंगे?
बरस-बरस ज्यौं बातैं कहियत वैसैं बहुरि कहैंगे!
इंदु-बदन खग-नैन हमारे, आनति और चहैंगे!
बासर-निसि कहुँ होत न न्यारे, बिछुरनि हृदय सहैंगे!
एक कही तुम आगैं जाना स्याम न जाहिं, रहैंगे।
सूरदास प्रभु जसुमति कौ तजि, मथुरा कहा लहैंगे ॥१२६३॥

([illegible]) कमलनैन प्राननि तैं प्यारे।
इन्हैं कहा मधुपुरी पठाऊँ, राम-कृष्न दोउ जन बारे॥
जसुदा कहै, सुनौ सुफलक-सुत, मैं इन बहुत दुखनि सौं पारे।
ए कहा जानैं राज-सभा कौं ए गुरुजन-बिप्रहुँ न जुहारे॥

मथुरा असुर समूह बसत हैं, कर-कृपान ओपा हत्यारे।
सूरदास ये लरिका दोऊ, इन कब देखे मल्ल-अखारे ॥१२६४

ब्रजबासिनि के सरबस स्याम।
यह अक्रूर, क्रूर भयौ हमकौं जिय के जिय मोहन-बलराम।
अपनी लाग लेहु लेखौ करि, जो कछु राज-अंस कौ दाम।
और महर लै संग सिधारौ नगर कहा लरिकन कौ काम।
तुम तौ साधु परम उपकारी सुनियत बड़ौ तिहारौ नाम।
सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी को जीवै छिन बासर जाम ॥१२६५॥

मेरी माई निधनी कौ धन माधौ।
बारंबार निरखि सुख मानति तजति नहीं पल आधौ।
छिनु-छिनु परसति अंकम लावति प्रेम प्रकट ह्वै बाँधौ।
निसिदिन चंद चकोरी अँखियनि मिटै न दरसन साधौ।
करिहै कहा अक्रूर हमारौ दैहैं प्रान अबाधौ।
सूर स्यामघन ही नहिं पठवौं अबहिं कंस किन बाँधौ ॥१२६६

नहिं कोउ स्यामहिं राखै आइ।
सुफलक-सुत बैरी भयौ मोकौं, कहति जसोदा माइ।
मदनगोपाल बिना घर आँगन, गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रहीं ठगी सी ठाढ़ी कहा ठगौरी लाइ।
सुंदर स्याम-राम भरि लोचन बिनु देखें दोउ माइ।
सूर तिन्हें लै चले मधुपुरी हिरदै सूल बढ़ाइ ॥१२६७॥

जसोदा बार-बार यौं भाषै।
है कोउ ब्रज हितू हमारौ चलत गुपालहिं राखै।
कहा काज मेरे छगन-मगन कौ नृप मधुपुरी बुलायौ।
सुफलक-सुत मेरे प्रान हरन कौं काल-रूप ह्वै आयौ।
बरु यह गोधन हरौ कंस सब मोहिं बंदि लै मेलौ।
इतनोइ सुख मेरौ कमल-नयन इन अँखियनि आगैं खेलौ।

बासर बदन बिलोकति जीवौं, निसि निज अंकम लाऊँ।
तिहिं बिछुरत जौ जियौं कर्मबस तौ हँसि काहि बुलाऊँ।
कमलनयन-गुन टेरत-टेरत अधर-बदन कुम्हिलानी।
सूर कहाँ लगि प्रगटि जनाऊँ, दुखित नंद जू की रानी १२६८

मोहन इतौ मोह चित धरियै।
जननी दुखित जानि कै कबहुँ मथुरा गवन न करियै।
यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै तुमहिं लेन है आयौ।
तिरछे भए करम कृत पहिले बिधि यह ठाट बनायौ।
बार बार जननी कहि मौसौं माखन माँगत जौन।
सूर तिनहिं लैबे कौं आए, करिहैं सूनौ भौन ॥१२६९॥

जसुमति अति ही भई बिहाल।
सुफलक-सुत यह तुमहिं बूझियत, हरत हमारे बाल!
ये दोउ भैया जीवन हमरे, कहति रोहिनी रोइ।
धरनी गिरति, उठति अति ब्याकुल करि राखति नहिं कोइ।
निठुर भए जब तैं यह आयौ, घरहूँ आवत नाहिं।
सूर कहा नृप पास तुम्हारौ, हम तुम बिनु मरि जाहिं ॥१२७०॥

कन्हैया मेरी छोह बिसारी।
क्यौं बलराम, कहत तुम नाहीं, मैं तुम्हरी महतारी।
तब हलधर जननी परबोधत, मिथ्या यह संसारी।
ज्यौं सावन की बेलि फैलि कै, फूलति है दिन चारी।
हम बालक तुमकौं कह सिखवैं, हम तुमही तैं जात।
सूर हृदय धीरज धरु मारी, काहे कौं बिलखात ॥१२७२॥

यह सुनि गिरी धरनि झुकि माता।
कहा अक्रूर ठगौरी लाई, लिये जात दोउ भ्राता।
बिरध समय की हरत लकुटिया पाप-पुन्य डर नाहीं।
कछू लभ्य है तुमकौं यातैं सोचौ धौं मन माहीं।

नाम सुनत अक्रूर तुम्हारौ, क्रूर भए हौ आइ।
सूर नँद-घरनी अति व्याकुल, ऐसेहिं रैनि बिहाइ ॥१२७२॥

सुने हैं, स्याम मधुपुरी जात।
सकुचनि कहि न सकति काहू सौं, गुप्त हृदय की बात।
संकित बचन अनागत कोऊ, कहि जु गयौ अधरात।
नींद न परै, घटै नहिं रजनी, कब उठि देखौं प्रात।
नँद-नँदन तौ ऐसे लागे ज्यौं जल पुरइनि पात।
सूर स्याम सँग तैं बिछुरत हैं, कब ऐहैं कुसलात ॥१२७३॥

गोपालहिं राखहु मधुबन जात।
लाज किए कछु काज न सरिहै, पल बीतै जुग सात।
सुफलक-सुत के सँग न दीजिवै, सुनौ हमारी बात।
गोकुल की सोभा सब जैहै, बिछुरत नँद के तात।
रथ आरूढ़ होत बल-केसव हूँ आयौ परभात।
सूरदास कछु बोल न आयौ, प्रेम पुलक सब गात ॥१२७४॥

मोहन नैंकु बदन-तन हेरौ।
राखौ मोहिं नात जननी कौ, मदनगुपाल लाल मुख फेरौ।
पाछैं चढ़ौ बिमान मनोहर, बहुरौ ब्रज मैं होत अँधेरौ।
बिछुरन भेंट [illegible] आहे हैं निरखौ घोष जनम कौ खेरौ।
समदौ सखा स्याम यह कहि-कहि अपने गाइ-ग्वाल सब घेरौ।
गए न प्रान सूर ता अवसर, नँद जतन करि रहे घनेरौ ॥१२७५॥

जब नँद, गाइ सिंधु सँभारि।
जौ तुम्हारैं आनि बिलमै, दिन चराई चारि।
दूध-दही खवाइ कीन्हे बड़े अति प्रतिपारि।
ये तुम्हारे गुन हृदय तैं आरिहौं न बिसारि।
मातु जसुदा द्वार ठाढ़ी चलै आँसू ढारि।
कह्यौ रहियौ सुखित सौं, यह ज्ञान गुरु उर धारि।

कौन सुत, को पिता-माता, देखि हृदै बिचारि ।
सूर के प्रभु गवन कीन्हौ, कपट कागद फारि ॥१२०६॥

जबहीं रथ अक्रूर चढ़े ।
तब रसना हरि-नाम भाषि कै, लोचन-नीर बढ़े ।
महरि पुत्र कहि सोर लगायौ, तरु ज्यौं धरनि लुटाइ ।
देखति नारि चित्र सी ठाढ़ी, चितये कुँवर कन्हाइ ।
इतनेहि मैं सुख दियौ सबनि कौं, दीन्हौ अवधि बताइ ।
तनक हँसे, हरि मन जुवतिनि कौ, निठुर ठगौरी लाइ ।
बोलति नहीं, रहीं सब ठाढ़ी, स्याम ठगीं ब्रज-नारि ।
सूर तुरत मधुबन पग धारे, धरनी के हितकारी ॥१२०७॥

रहीं जहाँ सो तहाँ सब ठाढ़ी ।
हरि के चलत देखियत ऐसी, मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी ।
सूखे बदन स्रवति नैननि तैं जल धारा उर बाढ़ी ।
कंधनि बाँह धरे चितवति भ्रमु द्रुमनि-बेलि दव डाढ़ी ।
नीरस करि छाँड़ी सुफलक-सुत, जैसें दूध बिनु साढ़ी ।
सूरदास अक्रूर कृपा तैं, सही बिपति तन गाढ़ी ॥१२०८॥

बिछुरत श्रीब्रजराज आजु इनि नैननि की परतीति गई ।
उड़ि न गए हरि संग तबहिं तैं, ह्वै न गए सखि स्याममई ।
रूप-रसिक लालची कहावत, सो करनी कछुवै न भई ।
साँचे क्रूर कुटिल ये लोचन, वृथा मीन-छवि छीन लई ।
अब काहैं जल-मोचत, सोचत, समौ गए तैं सूल नई ।
सूरदास याही तैं जड़ भए, पलकनिहूँ हठि दगा दई ॥१२०९॥

सखी री वह देखी रथ जात ।
कमल-नयन काँधे पर प्यारी, पीत बसन फहरात ।
सब जात अब कौन जतनि कौ बचन-हीन कृस-गात ।
द्रुमनि पर कंप, कनक बकुली चढ़ैं, मानौ पवन बिहात ।

मधु बैठाइ सुफलक-सुत लै गए, ज्यौं माखी बिललात।
सूर सुरूप-नीर-सरसन बिनु, मनहु मीन अकुलात।।१२८०।

पाछैं ही चितवत मेरे लोचन आगैं परत न पायँ।
मन लै चली माधुरी मूरति, कहा करौं ब्रज जाय।।
पवन न भई पताका-अंबर, भई न रथ के अंग।
धूरि न भई चरन लपटाती जाती वहाँ लौं संग।।
ठाढ़ी कहा करौं मेरी सजनी जिहिं बिधि मिलहिं गुपाल।
सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी मुरछि परीं ब्रजबाल।।१२८१।

अब वै बातैं ह्यौं रहीं।
मोहन मुख मुसुकाइ चलत कछु काहूँ नहीं कही।।
सखि सुभाय बस समुझि परस्पर सन्मुख सूल सही।
अब वै सालति हैं उर महियाँ, कैसेहु कढ़ति नहीं।
ज्यौं त्यौं सत्य करन कौं सजनी, कहुँ फिरति बही।
हरि चुंबक जहँ मिलहिं सूर प्रभु मो तें जाइ बही।।१२८२।

आजु रैनि नहिं नींद परी।
जागत गिनत गगन के तारे, रसना रटत गोबिंद हरी।।
वह चितवनि, वह रथ की बैठनि जब अक्रूर की बाँह गही।
चितवति रही ठगी-सी ठाढ़ी, कहि न सकति कछु काम दही।।
इते मान ब्याकुल भइ सजनी आरज-पंथहुँ तैं बिडरी।
सूरदास प्रभु जहाँ सिधारे, कितिक दूर मथुरा नगरी।।१२८३।

कहा हौं ऐसे ही मरि जैहौं।
इहिं आँगन गोपाल लाल कौ, कबहुँ कि कनिया लैहौं।।
कब वह मुख बहुरौ देखौंगी कब वैसौ सचु पैहौं।
कब मोपै माखन माँगैगे कब रोटी धरि दैहौं।।
मिलन-आस तन-प्रान रहत हैं, दिन दस मारग ज्वैहौं।
जौ न सूर आइहैं इते पर जाइ जमुन धँसि लैहौं।।१२८४।

इहै सोच आक्रूर परयौ ।
लिये जात इनकौं मैं मथुरा, कंसहिं महा डरयौ ॥
धिक मोकौं, धिक मेरी करनी, तबहीं क्यौं न मरयौ ।
मैं देख्यौ, इनकौ यह हरिहै, अति व्याकुल हहरयौ ।।
इहिं अंतर जमुना-तट आए, स्नान कियौ अरयौ ।
सूरदास-प्रभु अंतरजामी, मन को सोच हरयौ ।।१२८२।

पूछत हैं अक्रूरहिं स्याम ।
दरति किरनि महलनि पर भाई, इहै मधुपुरी नाम ॥
स्रवननि सुनत रहत है जाकौं सो दरसन भए नैन ।
कंचन कोट कँगूरनि की छवि, मानौ बैठे मैन ।।
उपवन बन्यौ चहूँधाँ पुर के, अतिहीं मोकौं भावत ।
सूर स्याम बलरामहिं पुनि-पुनि, कर-पल्लवनि दिखावत ।।१२८३।

बार-बार बलराम कौ मधुपुरी बतावत ।
छज्जनि महलनि देखि कै, मन हरष बढ़ावत ॥
जन्म-धाम जिय जानि कै, सात्यें सुख पावत ।
बन उपबन आये सघन, रथ चढ़े बनावत ।।
नगर सौर अकुलत सकल अति रुचि उपजावत ।
सुनत सम्द परिवार कौ, नृप द्वार बजावत ॥
बरन बरन मंदिर बने, कोचन उहरावत ।
सूरज प्रभु अक्रूर सौं काहि देखि सुनावत ।।१२८४।

मथुरा हरषित आजु भई ।
ज्यौं जुवती पति आवत सुनि कै, पुलकित अंग मई ॥
नवसत साजि सिंगार सुंदरी, आतुर पंथ निहारति ।
उड़ति धुजा तनु सुरति बिसारे, अंचल नहीं सँभारति ॥
उरज प्रगट महलनि पर कलसा लसति पास बन सारी ।
ऊँचे अटनि छाज की सोभा, सीस उचाइ निहारी ॥

नाटारंभ इन्द्र मग जोवति कंकिनि कंचन दुर्ग ।
बेनी लसति कहाँ छबि ऐसी, महलनि चित्रे चर्ग ॥
बाजत नगर बाजने जहँ तहँ, और बजत घरियार ।
सूर स्याम बनिता ज्यौं चंचल, पग नूपुर झनकार ॥१०८८

मथुरा पुर मैं सोर परयौ ।
गरजत कंस बंस सब साजे, मुख कौ नीर हरयौ ।
पीरे भयौ फेफरी अधरनि हिरदै अतिहिं डरयौ ।
नंद महर के सुत दोउ सुनि कै, नारिनि हर्ष भरयौ ।
कोउ महलनि पर, कोउ छज्जनि पर कुल-लज्जा न करयौ ।
कोउ धाई पुर गलिनि-गलिनि ह्वै काम-धाम बिसरयौ ।
इंदु बदन नव जलद सुभग तनु, दोउ खग नयन करयौ ।
सूर स्याम देखत पुर-नारी उर-उर प्रेम भरयौ ॥१०८९॥

ढोटा नंद को यह री ।
नाहिं जानति बसत ब्रज मैं प्रगट गोकुल री ॥
धरयौ गिरिवर बाम कर जिहिं, सोइ है यह री ।
दैत्य सब इनहीं सँहारे आपु-भुज-बल री ।
ब्रज-घरनि की करत चोरी, खात माखन री ।
नँद-घरनी जाहि बाँध्यौ अजिर ऊखल री ।
सुरभि-ठान लिये बन तैं आवत सबहिं गुन इन री ।
सूर-प्रभु ये सबहिं लायक, कंस डरै जिन री ॥१०९०॥

रथ पर देखि हरि-बलराम ।
निरखि कोमल-चारु मूरति हृदय लुब्ध-बाम ॥
मुकुट कुंडल पीत पट छबि, अनुज भ्राता स्याम ।
रोहिनी-सुत एक कुंडल गौर तनु सुख धाम ॥
जननि कैसैं धरयौ धीरज कहति सब पुर-बाम ।
बोलि पठयौ कंस इनकौं, करै धौं कह काम ॥

जोरि कर बिधि सौं मनावतिं असिस दै दै नाम ।
न्हात बार न खसै इनकौ, कुसल पहुँचैं धाम ॥
कंस कौ निरबंस ह्वै है, करत इन पर ताम ।
सूर प्रभु नँद-सुवन दोऊ, हंस काम उपमा ॥१२६१॥

भए सखि नैन सनाथ हमारे ।
मदनगोपाल देखतहिं सजनी सब दुख-सोक बिसारे ।
पठए हैं सुफलक-सुत गोकुल लेन, सो इहाँ सिधारे ।
मल्ल जुद्ध प्रति कंस कुटिल मति छल करि इहाँ हँकारे ॥
मुष्टिक अरु चानूर सैल सम, सुनियत हैं अति भारे ।
कोमल कमल समान देखियत, ये जसुमति के बारे ॥
होवै जीति बिधाता इनकी, करहु सहाइ सबारे ।
सूरदास चिर जियहु दुष्ट दलि, दोऊ नंद-दुलारे ॥१२६२॥

स्याम-बलराम गए धनुषसाला ।
लियौ रथ तैं उतरि रजक मार्यौ जहाँ कंस तैं निकसि सिव बाला ।
नंद उपनंद सँग सखा इक बल राखि चले आवैं बीर जोधा ।
असुर सेना सबै देखि कै भै डरे, धनु जहाँ पास रिपु महा-जोधा ।
घेरि लीन्हे स्याम-बलराम कौ तहाँ, जीति सब चले, हरि, धनुष तोरौ ।
सूर तुमकौ सुने, भुजनि बल चंड अति, हँसत हरि कह्यौ, यह बैर थोरौ ॥१२६३॥

हमकौ नृप इहि हेत बुलाए ?
कहाँ धनुष, कहँ हम अति बालक कहि अचरज सुनाए ।
ठाढ़े सूर बीर अवलोकत जिनिसौं चल्यौ न टोरै ॥
हमसौं कह्यौ, सीस कछु नोयौ यह कहि-कहि मुख मोरे ।
कंस एक तहँ असुर पठायौ, यहै कहत वह आयौ ॥
चले धनुष तोरौ अब तुमकौ, पाछें निकट बुलायौ ।

धावक देखि गहन भुज लाग्यौ ताहि तुरत हीं मारयौ।
डारि कोदंड मारि सब जोधा, तब बल भुजा निहारयौ।
आछे बस्त्र तिनहिं तेहिं मारयौ चली सामुहीं खोरी।
सूर कूबरी चंदन लीन्हें, मिली स्याम कौं दौरि ॥१२६४॥

प्रभु, तुमकौं मैं चंदन ल्याई।
गह्यौ स्याम कर अपने सौं, लिए सदन कौं आई।
धूप दीप नैवेद साजि कै मंगल करे विचारि।
चरन पखारि लियौ चरनोदक धनि धनि कहि दैतारि।
मेरी जनम कल्पना ऐसी, चंदन परसौं अंग।
सूर स्याम जन के सुखदायक, बँधे भाव-रजु-रंग ॥१२६५॥

सुनिहि महावत, बात हमारी।
बार-बार संकर्षन भाषत लेत नहीं यौं तैं गज टारी।
मेरौ कह्यौ मानि रे मूरख, गज समेत तोहिं डारौं मारी।
द्वारे खरे रहे हैं कबके, जानि रे, गर्व करहिं जिय भारी।
न्यारौ करि गयंद तू अजहूँ, जान देहि कै आपु सँभारी।
सूरदास प्रभु दुष्ट-निकंदन, धरनी भार उतारनकारी ॥१२६६

तब रिस कियौ महावत भारि।
जौ नहिं आज मारिहौं मरौं कंस डारिहै मारि।
अंकुस राखि कुंभ पर करष्यौ हलधर उठे हँकारि।
धायौ पवनहुँ तैं अति आतुर धरनी दंत सँभारि।
तब हरि पूँछ गह्यौ दच्छिन कर, कंदुक फेरि सिर डारि।
पटक्यौ भूमि, फेरि नहिं मटक्यौ, लीन्हे दंत उपारि।
दुहुँ कर दुरद दसन इक इक छबि, सो निरखति पुर-नारि।
सूरदास प्रभु सुर-सुखदायक, मारयौ नाग पछारि ॥१२६७॥

पर्यौ सुत नंद अहीर के।
मारयौ रजक बसन सब लूटे, संग सखा बलबीर के।

काँधे धरि चोक अन आए, दंत कुबलयापीर के।
पसुपति मंडल मध्य मनौ, मानि छीरधि नीरधि नीर के।
चढ़ि आए तजि हंस मानौ मनु मानसरोवर तीर के।
सूरदास प्रभु ताप निवारन, हरन संत दुख पीर के ॥१२८८॥

स्याम-बलराम रँगभूमि आए।
मल्ल लघु रूप सुंदर परम देखि पुनि प्रबल बल आनि मन मैं डराए।
कह्यौ गज कुबलया हते भयौ गर्व तुम, आनि परिहै भिरन संग हमारैं।
काल सौं भिरैं हम कौन तुम बापुरे, पै हते धर्म रहिहौ बिचारे।
स्याम चानूर, बलबीर मुष्टिक भिरे, सीस सौं सीस, भुज भुज मिलाएँ।
वै उन्हैं गहत, वै दौरि उनकौं गहत करत छलबल नहीं दाव पावैं।
धरि पछारयौ दुहुँ बीर दुहुँ मल्ल कौं, हरषि कह्यौ, हते वे नैंन दुराई।
सूर प्रभु परस करि, लही निरबान पद सुरनि आकास जय धुनि सुनाई ॥१२८९॥

मथत मंद-मंथन रंगभूमि राजैं।
स्याम तन, पीत पट मानौ घन मैं तड़ित मोर के पंख माथैं बिराजैं।
स्रवन कुंडल-झलक मानौ चपला-चमक, दृग अरुन कमल-दल से बिसाल।
भौंहैं सुंदर धनुष बान सम सिर तिलक, केस कुंचित सोह भृंग माल।
हृदय बनमाल, नूपुर चरन लाल, चलत गज चाल, अति बुधि बिराजैं।
हंस मानौ मानसर, अरुन अंबुज सुभर निरखि, आनंद करि हरषि गाजैं।

कुबलया मारि, चानूर मुष्टिक पटकि, बीर दोउ कंध गज दंत धारे।
आइ पहुँचे तहाँ, कंस बैठ्यौ जहाँ, गए अवसान प्रभु के निहारे।
ढाल तरवारि आगैं धरी रहि गई महल कौं पंथ खोजत न
पावत।
लात कैं लगत सिर तैं गयौ मुकुट गिरि, केस गहि लै चले हरि
खसावत।
चारि भुज धारि तिहिं चारि दरसन दियौ, चारि आयुध चहूँ हाथ
लीन्हें।
असुर तजि प्रान निरबान पद कौं गयौ, बिमल मति भई प्रभु-रूप
चीन्हें।
देखि यह पुहुप-बर्षा करि सुरनि मिलि, सिद्ध गंधर्व जय धुनि
सुनाई।
सूर प्रभु अगम महिमा न कछु कहि परति, सुरनि की गति तुरत
असुर पाई ॥३६००॥

हरष नर-नारि मधुपुर-पुरी।
सीच सबकी गयौ दनुज कुल सब दयौ, तिहूँ भुवन तैं बची,
हरष ही कै।
निदरि मारयौ कंस प्रगट देखत सबै अतिहिं अरु के नंद ढोटा।
नैन भौंह प्रगल से, परम सोभा लसे, भक्त की असे सुभ हंस ओटा।
देव दुंदुभि बजी, अमर आनँद भए पुहुपगन बरषही चैन मान्यौ।
सूर बसुदेव-सुत रोहिनी-नंद धनि, धनि मिल्यौ भुव भार धजित
जान्यौ ॥३६०१॥

उग्रसेन कौं दियौ हरि राज।
आनँद-मगन सकल पुरवासी, चँवर डुलावत श्री ब्रजराज।
जहाँ तहाँ तैं जादव आए, कंस डरनि जे गए पराइ।
मागध-सूत करत सब अस्तुति, जै जै जै श्री जादवराइ।

जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ गए बलि कै द्वारैं प्रतिहार।
सूरदास प्रभु अज अबिनासी, भक्तनि हेतु लेत अवतार ॥१२०१

तब बसुदेव हरषित गात।
स्याम रामहिं कंठ लाए, हरषि देवी मात।
अमर दिवि दुंदुभी दीन्हीं, भयौ जैजैकार।
दुष्ट दलि सुख दियौ संतनि, ये बसुदेव-कुमार।
दुख गयौ बहि, हरष पूरन नगर के नर-नारि।
भयौ पूरब फल सँपूरन, लह्यौ सुत दैत्यारि।
तुरत बिप्रनि बोलि पठये धेनु कोटि मँगाइ।
सूर के प्रभु ब्रह्मपूरन पाइ हरषे राइ ॥१२०३॥

बसुधौ कुल-ब्यौहार बिचारि।
हरि, हलधर कौ दियौ जनेऊ करि षटरस ज्यौनारि।
जाके स्वाँस उसाँस लेत मैं प्रगट भए स्त्रुति चार।
तिन गायत्री सुनी गर्ग सौं प्रभु गति अगम अपार।
बिधि सौं धेनु दई बहु बिप्रनि सहित सर्बसिंगार।
अनुकूल भयौ परम कौतूहल आईं तहँ गावहिं नार।
मातु देवकी परम मुदित ह्वै देति निछावरि वारि।
सूरदास की यहै आसिषा चिर जियौ नंदकुमार ॥१२०४॥

कुबरी पूरब तप करि राख्यौ।
आए स्याम भवन ताही कैं, नृपति महल सब नाख्यौ।
प्रथमहिं धनुष तोरि आवत हैं, बीच मिली यह धाइ।
तिहिं अनुराग बस्य भए ताकैं, सो हित कह्यौ न जाइ।
देव-काज करि आवन कहि गए, दीन्हौ रूप अपार।
कृपा-दृष्टि चितवतहीं श्री भइ, निगम न पावत पार।
हम तैं दूरि दीन के पीछैं, ऐसे दीनदयाल।
सूर सुरनि करि काज तुरतहीं, आवत तहाँ गोपाल ॥१२०५॥

कियौ सुर काज गृह बसे ताकैं।
पुरुष औ नारि कौ भेद-भेदा नहीं, कुलिन अकुलिन अवतरयौ ताकैं।।
दास दासी कौन, प्रभु-निप्रभु कौन है, अखिल ब्रह्मांड इक रोम जाकैं।
भाव साँचौ हृदय जहाँ, हरि तहाँ हैं, कृपा प्रभु की माथ भाग जाकैं।।
दास-दासी स्याम भजनहुँ तैं किये, रमा सम भई सो कृष्न दासी।
मिली वह सूर प्रभु प्रेम चंदन परसि किया जप कोटि, तप कोटि कासी।।१२०६।

मथुरा दिन-दिन अधिक बिराजै।
तेज, प्रताप राइ केसौ कैं, तीनि लोक पर गाजै।
पग पग तीरथ कोटिक राजैं मधिबिस्रांत बिराजै।
करि अस्नान प्रात जमुना कौ जनम-मरन भय भाजै।
बिट्ठल बिपुल बिनोद बिहारन ब्रज कौ बसिबौ छाजै।
सूरदास सेवक उनही कौ, कृपा सु गिरिधर राजै।।१२०७।

\+ + +

बेगि ब्रज कौ फिरिए नँदराइ।
हमहिं तुमहिं-सुत-तात कौ नातौ और पर्यौ है आइ।
बहुत कियौ प्रतिपाल हमारौ सो नहिं जी तैं जाइ।
जहाँ रहैं तहँ तहाँ तुम्हारे, डारौ जनि बिसराइ।
जननि जसोदा भेंटि सखा सब मिलियौ कंठ लगाइ।
साधु समाज निगम जिनके गुन, मेरैं गनि न सिराइ।
माया मोह, मिलन अरु बिछुरन ऐसैंही जग जाइ।
सूर स्याम के निठुर बचन सुनि रहे नैन जल छाइ।।१२०८।

यह सुनि भए व्याकुल नंद।
निठुर बानी हरि कही जब, परि गए दुख-दंद॥
निरखि मुख मुख रहे चकित सखा अरु सब गोप।
चरित ए अक्रूर कीन्हे, करत मन मन कोप।
धाइ चरननि परे हरि कैं, चलहु ब्रज कौं स्याम।
कंस असुर समेत मारे, सुरनि के करि काम॥
छोरि बंधन राज दीन्हौ हरष भए बसुदेव।
सूर जसुमति बिनु तुम्हारैं कौन जानै भेव॥४१०८॥

(मेरे) मोहन तुमहिं बिना नहिं जैहौं।
महरि दौरि आगे जब ऐहै कहा ताहि मैं कैहौं॥
माखन मथि राख्यौ ह्वैहै तुम हेतु, चलौ मेरे बारे।
निठुर भए मधुपुरी आइ कै, काहैं असुरनि मारे॥
सुख पायौ बसुदेव-देवकी अरु सुख सुरनि दियौ।
यहै कहत नंद गोप-सखा सब बिछुरन चहत हियौ॥
तब माया जड़ता उपजाई, निठुर भए जदुराइ।
सूर नंद परमोधि पठाए निठुर ठगौरी लाइ॥४१०९॥

गोपालराइ, हौं न चरन तजि जैहौं।
तुमहिं छाँड़ि मधुबन मेरे मोहन, कहा जाइ ब्रज लैहौं।
कैहौं कहा जाइ जसुमति सौं, जब सन्मुख उठि ऐहै।
प्रात समय दधि मथत छाँड़ि कै, काहि कलेऊ दैहै।
बारह बरस दियौ हम ढीठौ, यह प्रताप बिनु जानै।
अब तुम प्रगट भए बसुदेव-सुत गर्ग-बचन परमानै।
रिपु हति काज सबै कत कीन्हौ, कत आपदा बिनासी।
डारि न दियौ कमल-कर तैं गिरि, दबि मरते ब्रजबासी।
बासर संग सखा सब लीन्हैं, टेरि न धेनु चरैहौ।
क्यौं रहिहैं मेरे प्रान दरस बिनु, जब संध्या नहिं ऐहौ।

ऊधर स्वाँस पवन गमि याकी नैन नीर भरहाइ।
सूर मदन विछुरत को वेदनि, मो पै कही न जाइ॥३३११॥

उठे कहि माधौ इतनी बात।
जिती मान सेवा तुम कीन्ही, बदली दयौ न जात॥
पुत्र हेतु प्रतिपार कियौ तुम जैसैं जननी तात।
गोकुल बसत हसत-खेलत मोहिं, दौस न जान्यौ जात॥
होहु विदा घर जाहु गुसाईं माने रहियौ नात।
ठाढ़ौ थक्यौ उत्तर नहिं आवै लोचन जल न समात॥
मन बस होत साँस वन कंपित ज्यौं बयारि बस पात।
धकधकात हिय बहुत सूर उठि चले नंद पछितात॥३३१२॥

नंदहिं कहत हरि ब्रज जाहु।
किधौं मथुरा प्रजहिं अंतर जिय कहा पछिताहु॥
कहा व्याकुल होत कमिही दूरि हौ कहुँ जात?
निठुर उर मैं ज्ञान बरन्यौ मानि लीन्हौं बात॥
नंद मन धर धीरि ठाढ़े तुम कहे ब्रज जाउँ।
सूर मुख यह कहत मानी बिन नहीं कहुँ ठाउँ॥३३१३॥

फिरि करि नंद न उत्तर दीन्हौ।
रोम रोम भरि गयौ बचन सुनि मनहु चित्र लिखि कीन्हौ॥
यह तौ परंपरा चलि आई सुत-सुत लाभऽरु हानि।
हम पर यहा मया किम रहियौ, सुत अपनौं जिय जानि॥
को अपने काके पत लागौं निदरि मधुप सिर नायौ।
दुग्ध समुद्र हृदय परिपूरन पलटत कंठ भरि आयौ॥
थप थप पर भुज भई कोटि गिरि, औ लगि गोकुल पैठौ।
सूरदास पौस कठिन कुलिस तैं, अजहूँ रहत तनु बैठौ॥३३१४॥

चले नंद ब्रज की समुहाइ।
गोप सखा हरि बोधि पठाए, सबै चले अकुलाइ॥

काहू सुधि न रही तन की कछु अटपटात परे पाइ।
गोकुल जात फिरत पुनि मधुबन, मन तिन चलहिं चलाइ॥
बिरह सिंधु मैं परे चेत बिनु ऐसेहिं चले बहाइ।
सूर स्याम-बलराम छाँड़ि कै, ब्रज आए नियराइ।।१२१५।।

बार बार मग जोवति माता। ब्याकुल बिनु मोहन बलभ्राता॥
आवत देखि गोप नँद साथा। बिबि बालक बिनु भई अनाथा॥
धाई धेनु बच्छ ज्यौं ऐसैं। माखन बिना रहैं धौं कैसैं॥
ब्रज-नारी हरषित सब धाईं। महरि जहाँ-तहँ आतुर आईं॥
हरषित मातु रोहिनी आई। उर भरि हलधर लेउँ कन्हाई॥
देखे नँद गोप सब देखे। बल मोहन कौं तहाँ न पेखे।
आतुर मिलन-काज ब्रज-नारी। सूर मधुपुरी रहे मुरारी।।१२१६।।

उलटि पग कैसैं दीन्हौ नंद।
छाँड़े कहाँ उभै सुत मोहन, धिक जीवन मतिमंद।
कै तुम धन जोबन-मद-माते कै तुम छूटे बंद॥
सुफलक-सुत बैरी भयौ हमकौं लै गयौ आनँदकंद॥
राम-कृष्न बिनु कैसैं जीऐं, कठिन प्रीति के फंद।
सूरदास मैं भई अभागिनि तुम बिनु गोकुलचंद।।१२१७।।

दोउ ढोटा गोकुल-नायक मेरे।
काहैं नंद छाँड़ि तुम आए, प्रान-जिवन सब केरे॥
तिनकैं जात बहुत दुख पायौ, रोर परी इहिं खेरे।
गोसुत-गाइ फिरत हैं दहुँ दिसि, वै न चरैं तृन घेरे॥
प्रीति न करी राम दसरथ की, प्रान तजे बिनु हेरैं।
सूर नंद सौं कहति जसोदा, प्रबल पाप सब मेरैं।।१२१८।।

नंद कही हौ कहँ छाँड़े हरि।
लै जु गए जैसैं तुम ह्याँतैं ल्याए किन वैसैंहिं आगैं धरि॥

पालि पोषि मैं किए सयाने जिन मारे गज मल्ल कंस अरि ।
अब भए तात देवकी बसुधौ, बाँहँ पकरि ल्याये न न्याव करि ॥
देखी दूध-दही-घृत-माखन मैं राखे सब वैसें ही धरि ।
अब को खाइ नंदनंदन बिनु गोकुलमनि मथुरा जु गए हरि॥
श्रीमुख देखन कौं ब्रजबासी रहे ते घर आँगन मेरैं भरि ।
सूरदास प्रभु के जु सँदेसे, कहे महर आँसू गदगद करि ।१३१९।

जसुदा कान्ह-कान्ह कै बूझै ।
फूटि न गईं तुम्हारी चारौ, कैसैं मारग सूझै ॥
इक तौ जरी जात बिनु देखे अब तुम दीन्हौ फूँकि ।
यह छतिया मेरे कान्ह कुँवर बिनु, फटि न भई द्वै टूक ॥
धिक तुम, धिक ये चरन अहीपति अध बोलत उठि धाए ।
सूर स्याम बिछुरन की हम पै दैन बधाई आए ।१३२०।

नंद, हरि तुम सौं कहा कह्यौ ।
सुनि सुनि निठुर बचन मोहन के, कैसैं हृदय रह्यौ ॥
छाँड़ि सनेह चले मंदिर कत, दौरि न चरन गह्यौ ।
दरकि न गई बज्र की छाती कत यह सूल सह्यौ ॥
सुरति करति मोहन की बातैं नैननि नीर बह्यौ ॥
सुधि न रही अति गलित गात भयौ मनु डसि गयौ अह्यौ॥
तिन्हैं छाँड़ि गोकुल कत आए चाखन दूध-दह्यौ ।
तजे न प्रान सूर दसरथ लौं हुतौ जन्म निबह्यौ ।१३२१।

कहाँ रह्यौ मेरौ मन-मोहन ।
वह मूरति जिय तैं नहिं बिसरति अंग अंग सब सोहन ॥
कान्ह बिना गौवैं सब व्याकुल को ल्यावै भरि दोहन ।
माखन खात खवावत ग्वालनि, सखा लिए सब गोहन ॥
जब वै लीला सुरति करति हौं चित चाहत उठि जोहन ।
सूरदास प्रभु के बिछुरे तैं मरियत है अति छोहन ।१३२२।

तब तू मारिबोई करति।
रिसनि आगैं कहि जु आवति अब लै भांडे भरति॥
रोस कै कर दाँवरी लै, फिरति घर-घर धरति।
कठिन यह कहौ तब जो बाँध्यौ, अब वृथा करि मरति॥
नृपति कंस बुलाइ पठयौ बहुत के प्रिय हरति।
यह कछुक विपरीति जो मन, सौंफ देखि जु परति॥
होनहारी होइहै सोइ, अब इहाँ कत करति।
सूर तब किन फेरि राखे पाइँ अब किहिं परति।११७३।

कहौ नंद कहाँ छाँड़े कुमार।
कैसैं प्रान रहे सुत बिछुरत पूछति हैं गोपी अरु ग्वार॥
करुना करै जसोदा माता नैननि नीर बहै असरार।
चितवत नंद ठगे से ठाढ़े मानौ हारयौ हेम जुआर॥
मुरली-धुनि नहिं सुनियत ब्रज मैं सुर-नर-मुनि नहिं करत बिचार।
सूरदास प्रभु के बिछुरे तैं कोउ न झाँकत आवत द्वार।११७४।

ग्वारनि कही ऐसी जाइ।
भए हरि मधुपुरी राजा, बड़े बंस कहाइ॥
सूत-मागध बदत बिरदनि, बरनि बसुधौ-नाव।
राज भूषन अंग भ्राजत अहिर कहत लजाव॥
मातु-पितु बसुदेव दैवैं, नंद जसुमति नाहिं।
यह सुनत जल नैन ढारति, मीजि कर पछिताहिं॥
मिली कुबिजा मलै लैकै, सो भई अरधंग।
सूर प्रभु बस भए ताकैं, करत नाना रंग।११७५।

कैसैं री यह हरि करिहैं।
राधा कौं तजिहैं मनमोहन, कहा कंस-दासी धरिहैं॥
कहा कहति यह भई पटरानी, वै राजा भए जाइ वहाँ।
मथुरा बसत लखत नहिं कोऊ, को आयौ, को रहत कहाँ॥

साम देखि कूबरी सिसाही, संग न जीवत एक घरी।
सूर जाहि परतीति न काहू, मन सिहात यह करनि करी ।।१२२६

तब तैं मिटे सब आनंद।
या ब्रज के सब भाग संपदा, लै जु गए नँदनंद ॥
बिह्वल भई जसोदा डोलति, दुखित नंद उपनंद।
धेनु नहीं पय स्रवति, रुचिर मुख चरति नहीं तृन-कंद ॥
बिषम बियोग दहत उर सजनी, बाढ़ि रहे दुख-दंद।
सीतल कौन करै री माई, नाहिं इहाँ ब्रजचंद ॥
रथ चढ़ि चले, गहे नहिं काहूँ, चाहि रही मति-मंद।
सूरदास अब कौन छुड़ावै परे बिरह कैं फंद ।।१२२७

इक दिन नंद चलाई बात।
कहत-सुनत गुन राम-कृष्न के, ह्वै आयौ परभात ॥
वैसैहिं भोर भयौ जसुमति कौ, लोचन जल न समात।
सुमिरि सनेह बिहरि उर अंतर, ढरि आवत, ढरि जात ॥
जद्यपि वै बसुदेव-देवकी हैं निज जननी-तात।
बार एक मिलि जाहु सूर-प्रभु, धाई हूँ कै नात ।।१२२८

चूक परी हरि की सेवकाई।
यह अपराध कहाँ लौं बरनौं, कहि कहि नंद-महर पछिताई।
कोमल चरन-कमल कंटक कुस, हम उन पै बन गाइ चराई ॥
रंचक दधि के काज जसोदा, बाँधे कान्ह उलूखल लाई ॥
इन्द्र-कोप जानि ब्रज राखे, बरुन फाँस तैं मोहिं मुकराई।
अपने तन-धन-लोभ कंस डर, आगैं कै दीन्हें दोउ भाई ॥
निकट बसत कबहूँ न मिलि आयौ, इते मान मेरी निठुराई।
सूर अजहुँ नाती मानत हैं, प्रेम सहित करैं नंद-दुहाई ।।१२२९।

लै आवहु गोकुल गोपालहिं।
पाँइनि परि क्यौं हूँ बिनती करि, छल-बल बाहु बिसालहिं ॥

अबकी बार नैकु दिखरावहु, नंद आपने लालहिं ।
गाइनि गनत ग्वार-गोसुत सँग सिखवत बैन रसालहिं ॥
जद्यपि महाराज सुख-संपति, कौन गनै मनि-लालहिं ।
तदपि सूर वै छिन न तजत हैं वा घुँघुची की मालहिं ।।१२२० ।

जद्यपि मन समुझावत लोग ।
सूल होत नवनीत देखि कै मोहन के मुख जोग ॥
निसि-बासर छतिया लै लाऊँ बालक-लीला गाऊँ ।
वैसे भाग बहुरि कब ह्वैहैं, मोहन मोर नचाऊँ ॥
जा कारन मुनि ध्यान धरैं, सिव अंग बिभूति लगावैं ।
सो बालक-लीला धरि गोकुल ऊखल साथ बँधावैं ॥
बिदरत नहीं बज्र कौ हिरदै हरि-बियोग क्यों सहिए ।
सूरदास प्रभु कमलनयन बिनु, कौने बिधि ब्रज रहिए ।।१२२१

नंद ब्रज लीजै ठोंकि बजाइ ।
देहु बिदा मिलि जाहिं मधुपुरी, जहँ गोकुल के राइ ॥
नैननि पंथ कहौ क्यौं सूझयौ, उलटि दियौ जब पाइँ ।
रघुपति दसरथ कथा सुनी ही, तउ मरते गुन गाइ ॥
भूमि मसान बिदित यह गोकुल मनहु खाइ कै खाइ ।
सूरदास प्रभु पास जाहिं हम, देखहिं रूप अघाइ ।।१२२२।

हौं तौ माई, मथुरा ही पै जैहौं ।
दासी ह्वै बसुदेव राइ की दरसन देखत रैहौं ॥
राखि राखि एते दिनमनि मोहिं, कहा कियौ तुम नीकौ ।
सोऊ तौ अक्रूर गए लै, तनक खिलौना जी कौ ।
मोहिं देखि कै लोग हँसैंगे अरु किन कान्ह हँसै ।
सूर असीस जाइ दैहौं, जनि न्हातहु बार खसै ।।१२२३।

पंथी इतनी कहियौ बात ।
तुम बिनु इहाँ कुँवर बर मेरे, होत जिते उतपात ॥

मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कुछ वैसहिं धर्यौ रहै।
को उठि प्रात होत लै माखन, को कर नेति गहै॥
सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि सूल सहै।
दिन उठि घर घेरत ही ग्वारिनि उरहन कोउ न कहै॥
जो ब्रज मैं आनंद हुतौ, मुनि-मनसाहू न गहै।
सूरदास स्वामी बिनु गोकुल, कौड़ी हू न लहै॥३३३७॥

—(❀)—

(८) गोपी-विरह

सजन गुपाल के सँग चले।
यह प्रीतम सों प्रीति निरंतर रहे न अर्ध पले॥
धीरज पहिलें करी चलिबे की जैसी करत भले।
धीर चलत मेरे नैननि देखे तिहिं छिन आँसु ढले॥
आँसु चलत मेरी बलयनि देखे भए अंग सिथिले।
मन चलि रह्यौ हुतौ पहिलें ही चले सबै बिमले।
एक न चलैं प्रान सूरज प्रभु असलेहु साल सले।१३३८।

करि गए थोरे दिन की प्रीति।
कहँ वह प्रीति करी वह बिछुरनि, कहँ मधुबन की रीति।
अब की बेर मिलौ मनमोहन बहुत भई बिपरीति।
कैसे प्रान रहत दरसन बिनु मनहुँ गए जुग बीति॥
कृपा करहु गिरिधर हम ऊपर, प्रेम रह्यौ तन जीति।
सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, भई भुस पर की भीति।१३३९

प्रीति करि दीन्ही गरें छुरी।
जैसे बधिक चुगाइ कपट-कन पाछैं करत बुरी॥
मुरली मधुर चैंप काँपी करि, मोर चंद्र फँदवारि।
चंद दिखौ रुचि लगी लोभ-बस, सकी न पंख पसारि॥
तरफत छाँड़ि गए मधुबन कौं बहुरि न कीन्ही सार।
सूरदास प्रभु-संग कलपतरु, उलटि न बैठी डार।१३४०।

माधव, अनाथनि की सुधि लीजै ।
गोपी, ग्वाल, गाइ, गोसुत सब, दीन-मलीन दिनहिं दिन छीजै ।
नैननि जलधारा बाढ़ी अति बूड़त ब्रज किन कर गहि लीजै ।
इतनी बिनती सुनहु हमारी, बारक हूँ पतिया लिखि दीजै ।
चरन-कमल दरसन नव नौका, करुनासिंधु जगत जस लीजै ।
सूरदास प्रभु आस मिलन की, एक बार आवन ब्रज कीजै ।।१३४१

देखियति कालिंदी अति कारी ।
अहो पथिक, कहियौ उन हरि सौं, भई बिरह-जुर जारी ।
गिरि-प्रजंक तैं गिरति धरनि धँसि, तरँग-तरफ तन भारी ।
तट बारू उपचार चूर जल पूर प्रसेद पनारी ।
बिगलित कच-कुस-काँस कूल पर, पंक जु काजल सारी ।
भौंर भ्रमत अति फिरति भ्रमति गति, दिसि दिसि दीन दुखारी ।
निसि दिन चकई पिय जु रटति है भई मनौ अनुहारी ।
सूरदास-प्रभु जो जमुना गति, सो गति भई हमारी ।।१३४२।

परेखौ कौन बोल कौ कीजै ।
ना हरि जाति न पाँति हमारी कहा मानि दुख लीजै ।
नाहिंन मोर-चंद्रिका माथैं, नाहिंन उर बनमाल ।
नहिं सोभित पुहुपनि के भूषन सुंदर स्याम तमाल ।
नँद-नँदन गोपी-जन-बल्लभ, अब नहिं कान्ह कहावत ।
बासुदेव जादवकुल दीपक बंदी जन बर गावत ।
बिसरयौ सुख नातौ गोकुल कौ और हमारे अंग ।
सूर स्याम वह गई सगाई वा मुरली कैं संग ।।१३४३।

सुनियत मुरली देखि लजात ।
दूरिहिं तैं सिंहासन बैठे सीस नाइ मुसकात ।
मोर पच्छ कौ व्यजन बिलोकत बहरावत कहि बात ।
जौ कहुँ सुनत हमारी चरचा चालत हीं चपि जात ।

मुरली लिखत चित्र की रेखा सोचेंहू सकुचात।
सूरदास को ब्रजहिं बिसारयौ, दूध-दही कत खात ।।१३४३।।

अब वे बातें उलटि गईं।
जिन बातनि लागत सुख आली, तेऊ दुसह भईं।।
रजनी स्याम स्याम सुंदर सँग अरु पावस की गरजनि।
सुख समूह की अवधि माधुरी, पिय रस-बस की तरजनि।
मोर पुकार गुहार कोकिला, अलि गुंजार सुहाई।
अब लागति पुकार दादुर सम बिनहीं कुँवर कन्हाई।
चंदन चंद समीर अगिनि सम, तनहिं देत दव लाई।
कालिंदी अरु कमल कुसुम सब दरसन ही दुखदाई।
सरद बसंत सिसिर अरु ग्रीष्म हिम-रितु की अधिकाई।
पावस जरें सूर के प्रभु बिनु तरफत रैनि बिहाई ।।१३४४।।

इहिं बिरियाँ बन तें ब्रज आवत।
दूरिहिं तें वह बेनु अधर धरि बारंबार बजावत।
कबहुँक काहूँ भाँति चतुर चित अति ऊँचे सुर गावत।
कबहुँक लै-लै नाम मनोहर धौरी धेनु बुलावत।
इहिं बिधि बचन सुनाइ स्याम घन, मुरझे मदन जगावत।
आगम सुख उपचार बिरह-ज्वर, बासर ताप नसावत।
रुचि रुचि प्रेम पियासे नैननि, क्रम क्रम बलहिं बढ़ावत।
सूर सकल रसनिधि सुंदर घन, आनँद प्रगट करावत ।।१३४५।।

मोहन वा दिन बनहिं न जात।
वा दिन पसु पच्छी द्रुम बेली, बिनु देखे अकुलात।।
देखत रूप निधान नैन भरि, तातें नहीं अघात।
ते न तृना मुख चरत उदर भरि, भए रहत कृस गात।
जे मुरली-धुनि सुनत स्रवन भरि, ते सुख फल नहिं खात।
ते मृग बिपिन अधीन कीर-पिक, डोलत हैं बिलखात।

जिन बेलिन परसत कर-पल्लव, अति अनुराग सुभाव।
ते सब सूखी परसि बिटप हैं जीवन से द्रुम-पात ॥
अति अधीर सब बिरह सिथिल सुनि, तन की दसा दिखात।
सूरदास मदनमोहन बिनु, जुग सम पल छन जात ।।११४७।।

मिलि बिछुरनि की बेदन न्यारी।
जाहि लगी सोई पै जानै बिरह पीर अति भारी।
जब यह रचना रची बिधाता, तबही क्यौं न सँभारी।
सूरदास प्रभु काहैं जिवाई जनमत ही किन मारी ।।११४८।।

मधुबन, तुम क्यौं रहत हरे।
बिरह-बियोग स्यामसुंदर के ठाढ़े, क्यौं न जरे।
मोहन बेनु बजावत तुम तर, साखा टेकि खरे।
मोहे थावर अरु जड़-जंगम मुनिजन ध्यान टरे।
वह चितवनि तू मन न धरत है फिरि-फिरि पुहुप धरे।
सूरदास प्रभु बिरह-दवानल नख-सिख लौं न जरे ।।११४९।।

को सखि, मानिहैं अब स्याम।
बरष होत न एक पल सम, अब सु जुग भर जाम।
कहँ गोकुल, लोग वेई कहँ जमुना ठाम।
कहँ गृह जिहिं सकल संपति बन भयौ सोइ धाम।
कहँ रति पति अछत स्यामहिं लै न सकत्यौ नाम।
सूर प्रभु बिनु अब कलेवर, दहन लाग्यौ काम ।।११५०।।

अब यौं ही लागी दिन जान।
सुमिरत प्रीति प्राय लागति है, उर भयौ कुलिस समान।
लोचन रहत पवन बिनु देखे, स्रवन सुने बिन कान।
हृदय रहत हरि पानि-परस बिनु, छिदत न मनसिज-बान।
मानौ सखी, रहे नहिं मेरे, ये पहिले तन-प्रान।
बिधि सनेह रचि कहे नंदसुत, बिरह-बिथा दै मान ॥

बिधि यह हरे और पुनि कीने वैसेइ पेत बिधान।
सूरदास ऐसीयै कछु यह समुझति हैं अनुमान।१३२१।

ऐसी कोउ नाहिंनै सजनी, जो मोहनहिं मिलावै।
बारक बहुरि नंदनंदन कौं, जो हाँ ली लै आवै॥
पाइनि परि बिनती करि मेरी यह सब कथा सुनावै।
निसि सिर्जन-सुख केलि परम रुचि राम की सुरति करावै॥
और कौनहुँ भाव की सकुच न, फिरि बिधि की पद्मावै।
पुनि-पुनि सूर याहि कहे हरि सौं लोचन सरत बुझावैं।१३२२।

बहुरो देखिबी इहिं भाँति।
असन बाँटत खात बैठे, बालकन की पाँति॥
एक दिन नवनीत चोरत, हौं रही दुरि जाइ।
निरखि मम छाया भजे, मैं दौरि पकरे धाइ॥
पोंछि कर मुख लई कनियाँ तब गई रिस भागि।
वह सुरति जिय जाति नाहीं रहे छाती लागि॥
जिन चरनि वह सुख बिलोक्यो, ते सगत अब खान।
सूर बिनु ब्रजनाथ देखे रहत पापी प्रान।१३२३।

कब देखौं इहिं भाँति कन्हाई।
मोरनि के चँदवा माथे पर काँध कामरी लकुट सुहाई॥
साँझ समै बोरें सुरभिनि सँग आवत एक महाछवि पाई।
कान अँगुरिया घालि निकट पुर, मोहन राग अहीरी गाई।
क्यौंहुँ न रहत प्रान दरसन बिनु, अब कित जतन करें री माई।
सूरदास स्वामी नहिं आए बदि जु गए अवध्यौ अतराई।१३२४।

यह जिय हौंसे ये जु रही।
पुनि री सखी स्याम सुन्दर हँसि, बहुरि न बाँह गही॥
अब वै दिवस बहुरि कब ह्वैहैं, ऐसी जात सही।
कहाँ स्याम हैं, कहैं री अब हम, कौन पधारि मही॥

फाँसी कही कहत नहिं आवै, कहत न परै कही।
जो कछु हुती हमारी हरि की, हरि कै संग निबही॥
इतनी कहतहिं हिचकी लागी, गोबिंद गुननि गही।
सूरदास काटे तरिवर ज्यौं, ठाढ़ी रहति रही॥११२५॥

ब्रज मैं वै उनहार नहीं।
ब्रज सब गोप रहे, हरि बिनहीं, स्वाद न सूध रही॥
ज्यौं द्रुम डार पवन के परसे उस बिधि परत नहीं।
बासर बिरह भरी अति व्याकुल कबहु न नींद गही॥
दिन दिन देह दुखी अति हरि बिनु, इहिं तन बहुत सही।
सूरदास हम तब न मुईं, अब ये दुख सहन रही॥११२६॥

कहा दिन ऐसे ही चलि जैहैं।
सुनि सखि मदन गुपाल आँगन मैं ग्वालनि संग न ऐहैं॥
कबहुँ जात पुलिन जमुना कै बहु बिहार बिधि खेलत।
सुरति होत सुरभी संग आवत पहुप गहे कर मेलत॥
मृदु मुसुकानि आनि राख्यौ जिय, चलत कह्यौ है आवन।
सूर सुदिन कबहूँ तौ ह्वै है, मुरली सब्द सुनावन॥११२७॥

स्याम सिधारे कौनैं देस।
तिनकौ कठिन करेजौ सखि री, जिनकौ पिय परदेस॥
उन माधौ कछु भली न कीन्ही, कौन जतन कौ वेस।
छिन भरि प्रान रहत नहिं उन बिनु, निसि दिन अधिक अँदेस॥
अवधिहिं निठुर पतियाँ नहिं पठई काहूँ हाथ सँदेस।
सूरदास प्रभु यह उपजत है, धरिए जोगिनि-भेस॥११२८॥

गोपालहिं पावौं धौं किहिं देस।
सिंगी मुद्रा कर खप्पर लै, करिहौं जोगिनि भेस॥
कंथा पहिरि, बिभूति लगाऊँ, जटा बँधाऊँ केस।
हरि कारन गोरखहिं जगाऊँ, जैसैं स्वाँग महेस॥

तन-मन जारौं, भस्म चढ़ाऊँ, बिरही के उपदेस।
सूर स्याम बिनु हम हैं ऐसी जैसैं मनि बिनु सेस ॥१२५९॥

फिरि ब्रज आइऐ गोपाल।
नंद-नृपति-कुमार कहिहैं, अब न कहिहैं ग्वाल।
मुरलिका धुनि सब दिसि दिसि, चली निसान बजाइ।
दिगविजय कौं नृपति-मंडल-भूप परिहैं पाइ।
सुरभि-सखा सु सैन भट सँग, जुटैगी सुर-सैन।
आतपत्र मयूर चंद्रिका, लसत है रवि-ऐन।
मधुप-बंदीजन सुजस कहि मधुर आयसु पाइ।
द्रुम-लता बन-कुसुम-बानक, बसन-कुटी बनाइ।
सकल खग मृग पैक पायक, पौरिया, प्रतिहार।
सूर प्रभु ब्रजराज कीजै आइ अबकी बार ॥१२६०॥

फिरि ब्रज बसौ गोकुलनाथ।
अब न तुमहिं जगाइ पठवैं, गोधननि के साथ।
बरजैं न माखन खात कबहूँ, दह्यौ देत लुटाइ।
अब न देहिं उराहनौ नँद-घरनि आगैं आइ।
दौरि दाँवरि देहिं नहिं, लकुटी जसोदा पानि।
चोरी न देहिं उघारि कै, औगुन न कहिहैं आनि।
कहिहैं न चरननि देन जावक गुहन बेनी-फूल।
कहिहैं न करन सिंगार कबहूँ बसन जमुना-कूल।
करिहैं न कबहूँ मान हम हठिहैं न माँगत दान।
कहिहैं न मृदु मुरली बजावन, करन तुमसौं गान।
देहु दरसन नंद-नंदन मिलन की जिय आस।
सूर हरि के रूप कारन मरत लोचन प्यास ॥१२६१॥

पारक आइयौ मिसि माधौ।
कै जानै घन दृष्टि आइगी सून रह जिय साधौ।

पहुनैहुँ नंद पिता के आवहु देखि लेहुँ पल आधौ ।
मिलिही मैं बिपरीत करी बिधि होत दरस कौ बाधौ ।
सो सुख सिव-सनकादि न पावत जो सुख गोपिनि लाधौ ।
सूरदास राधा बिलपति है, हरि कौ रूप अगाधौ ॥११६२॥

सखी, इन नैननि तैं घन हारे ।
बिनहीं रितु बरषत निसि-बासर, सदा मलिन दोउ तारे ।
ऊरध स्वास समीर तेज अति सुख अनेक द्रुम डारे ।
बदन सदन करि बसे बचन-खग, दुख पावस के मारे ।
दुरि दुरि बूँद परति कंचुकि पर मिलि अंजन सौं कारे ।
मानौ परनकुटी सिव कीन्ही बिबि मूरति धरि न्यारे ।
घुमरि घुमरि बरषत जल छाँड़त डर लागत अँधियारे ।
बूड़त ब्रजहिं सूर को राखै, बिनु गिरिवरधर प्यारे ॥११६३॥

निसि-दिन बरषत नैन हमारे ।
सदा रहति बरषा-रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे ।
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर-कपोल भए कारे ।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे ।
आँसू सलिल सबै भइ काया पल न जात रिस टारे ।
सूरदास-प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे ॥११६४॥

अति रस-लंपट मेरे नैन ।
तृप्ति न मानत पिवत कमल-मुख, सुंदरता मधु-ऐन ।
दिन अरु रैनि दृष्टि रसना-रस निमिष न मानत चैन ।
सोभा-सिंधु समाइ कहाँ लौं हृदय साँकरे ऐन ।
अब यह बिरह अजीरन ह्वै कै, बमि लाग्यौ दुख देन ।
सूर बैद ब्रजनाथ मधुपुरी, काहि पठाऊँ लैन ॥११६५॥

हरि दरसन की तरसति अँखियाँ ।
झाँकति झखति झरोखा बैठी, कर मीड़ति ज्यौं मखियाँ ।

बिछुरी मदन-सुधानिधि-रस तैं लगति नाहीं पल पँखियाँ।
इकटक चितवति उड़ि न सकति जनु थकित भईं सखि मखियाँ।
बार बार सिर धुनति बिसूरति, बिरह ग्राह जनु भखियाँ।
सूर सुरूप मिलै तैं जीवहिं काटि किनारे नखियाँ ।।१३६६।

अँखियाँ करति हैं अति आरि।
सुंदर स्याम पाहुनै के मिस, मिलि न जाहु दिन चारि ॥
बारैं लगी चरावहिं उड़ावन, कब देखौं उनहारि।
मैं तौ स्याम-स्याम करि टेरति कालिंदी कैं करार।
कमल बदन ऊपर द्वै खंजन मानौ बूड़त वारि।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु सकै न पंख पसारि ।।१३६७।

लोचन लालच तैं न टरैं।
हरि-मुख एक रंग मैं बीधे, राखे, फेरि अरैं ॥
ज्यौं मधुकर रुचि रच्यौ केतकी कंटक घाटि करै।
तैसेंइ लाज लगत नहिं लोभा, फिरि फिरि फेरि फिरैं ॥
मृग ज्यौं सहज सहत सर न, सन्मुख तैं न टरैं।
आनन आहि हनै मन स्वागत, वापर दिनै करै ॥
समुझि न परै कौन प्रभु पावन, जोवन माइ मरैं।
सूर सुभट दृढ़ छाँड़त नाहीं काटे सीस लरैं ।।१३६८

(मेरे) नैना बिरह की बेलि बई।
सींचत नैन-नीर के सजनी मूल पताल गई ॥
बिगसित लता सुभाइ आपनैं छाया सघन भई।
अब कैसे निरवारौं सजनी सब तन पसरि छई ॥
को जानै काहू के जिय की, छिन छिन होत नई।
सूरदास स्वामी के बिछुरैं लागी प्रेम जई ।।१३६९।

मन बसि काहे बोल सही।
इन लोभी नैननि के काजैं परबस भइ जो रही ॥

बिसरि जाइ गई सुधि नहिं तन की, अब धौं कहा कहौं।
मेरे जिय मैं ऐसी आवति, जमुना जाइ बहौं।
इक बन ढूँढ़ि, सकल बन ढूँढ़ौं, कहूँ न स्याम लहौं।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं इहिं दुख अधिक दहौं ।।१२७०।

री, वा दिन कजरा मैं दैहौं।
जा दिन नंदनँदन के नैननि, अपने नैन मिलैहौं।
सुनि री सखी, यहै जिय मेरैं भूलि न और चितैहौं।
अब हठ सूर यहै ब्रत मेरौ कौकिर खै मरि जैहौं ।।१२७१।

कहा इन नैननि कौ अपराध।
रसना रटत, सुनत जस स्रवननि, इतनी अगम अगाध।
भोजन करै भूख क्यौं भाजति बिनु खाएँ कह स्वाद।
इकटक रहत सुरति नहिं कबहूँ हरि देखन की साध।
ये दृग दुखी बिना वह मूरति कहौ कहा अब कीजै।
एक बेर ब्रज आनि कृपा करि, सूर सुदरसन दीजै ।।१२७२।

बितवत ही मधुबन दिन जात।
नैननि नींद परति नहिं सजनी सुनि सुनि बातनि मन अकुलात।
अब वे भवन देखियत सूने, धाइ धाइ हमकौं ब्रज खात।
कैसै प्रतीत करै मोहन की जिन त्यागे जिय जननी तात।
मधुरितु नैन तपत बरसन कौं, हरद समान देखियत गात।
सूरदास स्वामी के बिछुरे, ऐसी भई हमारी घात ।।१२७३।

देखि सखी, उत है वह गाउँ।
जहाँ बसत नँदलाल हमारे, मोहन मथुरा नाउँ।
कालिंदी कै कूल रहत हैं, परम मनोहर ठाउँ।
जौ तन पंख होइँ सुनि सजनी अबहिं वहाँ उड़ि जाउँ।
होनी होइ होइ सो अबही इहिं ब्रज अन्न न खाउँ।
सूर नंदनंदन सौं हित करि लोगनि कहा डराउँ ।।१२७४।

लिखि नहिं पठवत हैं द्वै बोल।
द्वै कौड़ी के कागद-मसि कौ, लागत है बहु मोल ?
हम इहिं पार, स्याम पैले तट, बीच बिरह कौ जोर।
सूरदास प्रभु हमरे मिलन कौं हिरदै कियौ कठोर ॥१३७४॥

सुपनेहूँ मैं देखिये जौ नैन नींद परै।
बिरहिनी ब्रजनाथ बिनु कहि कहा उपाइ करै ॥
चंद मंद समीर सीतल सेज सदा जरै।
कहा करौं किहूँ भाँति मेरौ मन न धीर धरै ॥
करै जतन अनेक बिरहिनि कछु न पार परै।
सूर सीतल कृष्न बिनु, तन कौन ताप हरै ॥१३७५॥

सुपनैं हरि आए, हौं किलकी।
नींद जु सौति भई रिपु हमकौं सहि न सकी रति तिल की।
जौ जागी तौ कोऊ नाहीं रोके रहति न हिलकी।
तन फिरि जरनि भई नख-सिख तैं दिया-बाति जनु सिलकी।
पहिली दसा पलटि लीन्ही है त्वचा तचकि तनु पिलकी।
अब कैसैं सहि जाति हमारी भई सूर गति सिल की ॥१३७६॥

बहुरी भूलि न आँखि लगी।
सुपनें के सुख न सहि सकी नींद जगाइ भगी ॥
बहुत प्रकार निमेष लगाए छुटी नहीं अटगी।
मनु हीरा हरि लियौ हाथ तैं ढोल बजाइ ठगी ॥
कर मींड़ति पछिताति बिचारति इहिं बिधि निसा जगी।
वह मूरति वह सुख दिखरावै सोई सूर सगी ॥१३७७॥

सखी री काहे रहति मलीन।
मन सिंगार कछू देखति नहिं बुधि-बल ब्याकुल-हीन ॥
मुख सरोज, नैननि नहिं अंजन सिथिल सँवारि न दीन।
पुलकित गात कलपि कहि सखी हिरिदय है तन दीन ॥

प्रेम-सुधा पीवहिं जन जानैं बियही, चातक मीन ।
सूरदास पीवति सु हृदय मैं बिन जिय परवस कीन ॥११७४॥

हमकौं सपनेहु मैं सोच ।
जा दिन तैं बिछुरे नँदनंदन, ता दिन तैं यह पोच ॥
मनु गुपाल आए मेरैं गृह, हँसि करि भुजा गही ।
कहा करौं, बैरिनि भइ निंदया, निमिष न और रही ॥
ज्यौं चकई प्रतिबिंब देखि कै, आनंदै पिय जानि ।
सूर पवन मिसि निठुर बिधाता, चपल कियौ जल आनि ॥११८०॥

सुनहु सखी ते धन्य नारि ।
जे आपने प्रान बल्लभ की सपनैं हूँ देखहिं अनुहारि ॥
कहा करौं री चकत स्याम के, पहिलैहिं नींद गई दिन चारि ।
देखि सखी, कछु कहत न आवै मीजि रही अपमानति मारि ॥
जा दिन तैं नैननि अंतर भए अनुदिन अति बाढ़त हैं वारि ।
मनहु सूर दोउ सुभग सरोवर, उमँगि चले मरजादा टारि ॥११८१॥

हमकौं जागत रैनि बिहानी ।
कमल-नैन, जग-जीवन की सखि गावत अकथ कहानी ।
बिरह अथाह होत निसि हमकौं, बिनु हरि समुद समानी ।
क्यौं करि पावहिं बिरहिनि पारहिं बिनु केवट अगवानी ॥
उदित सूर चकई मिलाप निसि अलि जु मिले अरबिंदहिं ।
सूर हमैं दिन-राति दुसह दुख, कहा कहैं गोबिंदहिं ॥११८२॥

पिय बिनु नागिनि कारी राति ।
जौ कहुँ जामिनि उवति जुन्हैया, डसि उलटी ह्वै जाति ॥
जंत्र न फुरत, मंत्र नहिं लागत, प्रीति सिरानी जाति ।
सूर स्याम बिनु बिकल बिरहिनी मुरि-मुरि लहरैं खाति ॥११८३॥

मोकौं माई, जमुना जम ह्वै रही ।
कैसे मिलौं स्यामसुंदर कौं बैरिनि बीच बही ॥

कितिक बीच मथुरा अरु गोकुल, आवत हरि जु नहीं।
हम इतनी कछु मरम न जान्यौ, चलत न फेंट गही॥
अब पछितानि, प्रान दुख पावत, जाति न बात कही।
सूरदास-प्रभु सुमिरि-सुमिरि गुन दिन-दिन सूल सही।१३८४

नैन सलोने स्याम बहुरि कब आवहिंगे।
वै जो देखत राते-राते, फूलनि फूली डार॥
हरि बिनु फूल झरी सी लागत झरि झरि परत अँगार॥
फूल बिनन नहिं जाउँ सखी री हरि बिनु कैसे बीनौं फूल।
सुनि री सखी, मोहिं राम दुहाई लागत फूल त्रिसूल॥
जब मैं पनघट जाउँ सखी री, वा जमुना कैं तीर।
भरि-भरि जमुना उमड़ि चलति है, इन नैनन कै नीर॥
इन नैननि के नीर सखी री, सेज भई घरनाउँ।
चाहति हौं ताही पै चढ़ि कै, हरि जू कैं ढिग जाउँ॥
लाल पियारे प्रान हमारे रहे अधर पर आइ।
सूरदास प्रभु कुंज बिहारी, मिलत नहीं क्यौं धाइ।१३८५

सखी री, हरि आवहिं किहिं हेत।
वै राजा तुम ग्वारि बुलावन यहै परेखौ लेत॥
अब सिर छत्रछाँह राजत है मोर पंख नहिं भावत।
सुनि ब्रजराज पीठि दै बैठत जदुकुल बिरद बुलावत।
द्वारपाल अति पौरि विराजत, दासी महल अपार।
गोकुल गाइ दुहत दुख को सी सूर कहै इक बार।१३८६।

जतन न माधौ की गही बाहैं।
बार बार बंदिजननि नृपहि मैं यहै सूप मन माहैं॥
पर-धन कछु न चुराइ रैनि-दिन, मनहु मृगी इव डाहैं।
निरखि न नयननि बिना धन स्यामहिं, कोटि धनी धन दाहैं॥

पिसपति चलि पछिताति मनहिं मन चंद गहें जनु राहैं।
सूरदास-प्रभु दूरि सिधारे, दुख कहिये किहिं पाहैं।।१२८७।।

मेरी मन वैसीयै सुरति करै।
मृदु मुसकानि बंक अवलोकनि हिरदै तैं न टरै।।
बन गुपाल गोपन सँग आवत मुरली अधर धरै।
मुख की रेनु झारि अंचल सौं अनुमति अंक भरै।।
संध्या समय चोप की डोलनि, यह सुधि क्यौं बिसरै।
सूरदास प्रभु दरसन कारन, नैननि नीर ढरै।।१२८८।।

मति कोउ प्रीति कैं फंग परै।।
स्वारद स्वाँति देखि मन मानै, पंछी प्रान हरै।।
देखि पतंग कहा क्रम कीन्यौ जीव कौ त्याग करै।
अपने मरिबे तैं न डरत है, पावक पैठि जरै।।
भौंर सनेही तोहिं बताऊँ, केतिक प्रेम परै।
सारँग सुनत नाद रस मोह्यौ, मरिबे तैं न डरै।।
जैसे चकोर चंद कौ चाहत जल बिनु मीन मरै।
सूरदास प्रभु भौ ऐसैं करि मिलै तौ काज सरै।।१२८९।।

प्रीति करि, काहू सुख न लह्यौ।
प्रीति पतंग करी पावक सौं आपै प्रान दह्यौ।।
अलि सुत प्रीति करी जल-सुत सौं, संपुट माँझ गह्यौ।
सारंग प्रीति करी जु नाद सौं सन्मुख बान सह्यौ।।
हम जो प्रीति करी माधव सौं, चलत न कछू कह्यौ।
सूरदास प्रभु बिनु दुख पावति नैननि नीर बह्यौ।।१२९०।।

प्रीति तौ मरिबौऊ न बिचारै।
निरखि पतंग ज्योति-पावक ज्यौं जरत न आपु सँभारै।।
प्रीति कुरंग नाद मन मोहित बधिक निकट ह्वै मारै।
प्रीति परेवा उड़त गगन तैं गिरत न आपु सँभारै।।

सावन मास पपीहा बोलत, पिय पिय करि जु पुकारै ।
सूरदास प्रभु दरसन कारन, ऐसी भाँति बिचारै ॥१२६१॥

जनि कोउ काहू कैं बस होहि ।

ज्यौं चकई दिनकर बस डोलत, मोहिं फिरावत मोहि ।
हम तौ रीझि लटू भईं लालन, महा प्रेम तिय जानि ।
बंधन अवधि भ्रमति निसि-बासर, को सुरझावत आनि ।
तरके संग अंग-अंगनि प्रति, बिरह-बेलि की नाईं ।
मुकुलित कुसुम नैन निद्रा तजि, रूप-सुधा सियराई ।
अति आधीन हीन-मति ब्याकुल, कहँ लौं कहौं बनाई ।
ऐसी प्रीति-रीति-रचना पर सूरदास बलि जाई ॥१२६२॥

अब बरषा कौ आगम आयौ ।

ऐसे निठुर भए नँदनंदन, संदेसहु न पठायौ ।
बादर घोरि उठे चहुँ दिसि तें जलधर गरजि सुनायौ ।
एकै सूल रही मेरैं जिय बहुरि नहीं ब्रज छायौ ।
दादुर मोर पपीहा बोलत कोकिल सब्द सुनायौ ।
सूरदास के प्रभु सौं कहियौ, नैननि है झर लायौ ॥१२६३॥

ए दिन रूसिबे के नाहीं ।

कारी घटा पौन झकझोरै, लता तरुन लपटाहीं ।
दादुर मोर चकोर मधुप पिक बोलत अमृत बानी ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु बैरिनि रितु नियरानी ॥१२६४॥

सोभनि मधुबन कूप भरे ।

अपने तौ पठवत नहिं मोहन हमरे फिरि न फिरे ।
लिखे पथिक पठए मधुबन कौं बहुरि न सोध करे ।
कै वे स्याम सिखाइ प्रबोधे, कै कहुँ बीच मरे ।
कागद गरे मेघ, मसि खूटी सर दव लागि जरे ।
सेवक सूर लिखन कौ आँधौ, पलक कपाट अरे ॥१२६५॥

देखियत चहुँ दिसि तैं घन घोरे।
मानौ मत्त मदन के हथियनि, बल करि बंधन तोरे।
स्याम सुभग तन, चुवत गंडमद, बरषत थोरे-थोरे।
रुकत न पवन महावतहू पै, मुरत न अंकुस मोरे।
मनौ निकसि बग पंक्ति दंत उर-अवधि-सरोवर फोरे।
बिनु बेला बल निकसि नयन-जल कुच-कंचुकि-बँद बोरे।
तब तिहिं समय आनि ऐरावति ब्रजपति सौं कर जोरे।
अब सुनि सूर कान्ह-केहरि बिनु, गरत गात जैसे ओरे ॥१३६६॥

ब्रज पर सजि पावस दल आयौ।
धुरवा धुंध उठी चहुँ दिसि, गरज निसान बजायौ।
चातक, मोर, इतर पैदरगन, करत अवाजैं कोयल।
स्याम घटा गज असनि बाजि रथ, चित बगपाँति सँजोयल।
दामिनि कर करवाल, बूँद सर, इहिं बिधि साजे सैन।
निधरक भयौ चल्यौ ब्रज आवत अब फौजपति मैन।
हम अबला जानियै तुमहिं बल कहौ कौन बिधि कीजै।
सूर स्याम अबकै इहिं अवसर, आनि राखि ब्रज लीजै ॥१३६७॥

बरु ए बदरौ बरषन आए।
अपनी अवधि जानि नँदनंदन गरजि गगन घन छाए।
कहियत हैं सुर-लोक बसत सखि, सेवक सदा पराए।
चातक कुल की पीर जानि कै, तेउ तहाँ तैं धाए।
द्रुम किए हरित हरषि बेली मिलि, दादुर मृतक जिवाए।
साजे निबिड़ नीड़ तृन सँचि-सँचि पंछिनहूँ मन भाए।
समुझति नहीं चूक सखि, अपनी, बहुतै दिन हरि लाए।
सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि मधुबन बसि बिसराए ॥१३६८॥

बहुरि हरि आवहिंगे किहिं काम।
रितु बसंत अरु ग्रीषम बीते, बादर आए स्याम।

छिन मंदिर छिन द्वारें ठाढ़ी यौं सूखति है घाम।
तारे गनत गगन के सजनी च हैं चारौ जाम॥
पीरा कथा भयौ बिसराई लेत तुम्हारा नाम।
सूर स्याम सौं जिन तैं बिछुरे आन्य रहे कै धाम।।१३९९।

किधौं घन गरजत नहिं उन देसनि।
किधौं हरि हरषि इंद्र हठि बरजे दादुर खाए सेषनि॥
किधौं उहिं देस बगनि मग छाँड़े धरनि न बूँद प्रवेसनि।
चातक मोर कोकिला उहिं बन बधिकनि बधे बिसेषनि॥
किधौं उहिं देस बाल नहिं झूलति गावति सखि न सुदेसनि।
सूरदास-प्रभु पथिक न चलत्यौ कासौं कहौं सँदेसनि।।१४००।

आजु घन स्याम की अनुहारि।
आए उनइ साँवरे सजनी देखि रूप की आरि॥
इंद्र धनुष मनु पीत बसन छबि दामिनि दसन बिचारि॥
जनु बगपाँति माल मोतिनि की, चितवत चित्त निहारि।
गरजत गगन गिरा गोबिंद मनु, सुनत नयन भरे बारि।
सूरदास गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भई ब्रजनारि।।१४०१।

ऐसैं बादर ता दिन आए जा दिन स्याम गोबर्धन धारयौ।
गरजि-गरजि घन बरषन लागे मानौ सुरपति बैर सम्हारयौ॥
नयौ सँजोग जुरे हैं सजनी बादर ढठ करि धीर पखारयौ।
अब को सात दिवस राखैगौ दूरि गयौ ब्रज को रखवारौ॥
अब बलराम दुहूँ या ब्रज मैं काहू देख न ऐसौ हारयौ।
अब यह भूमि भयानक लागी बिधना बहुरि पंथ अनुसारयौ॥
अब यह सुरनि करैं को हमारी, या ब्रज मैं कोउ नाहिं हमारौ।
सूरदास अति बिकल बिरहिनी गोपिनि पदिकी दुख सँभारयौ॥

मानौ माई घननि घरे हैं भावन।
अब नहिं देखे स्याम सुंदर बहैं, चोर न सखी गुनावन॥

बरत न बन नव पत्र फूल-फल, पिक बसंत नहिं गावत।
मुदित न सर सरोज अलि गुंजत, पवन पराग उड़ावत।।
पावस बिबिध बरन बर बादर, उमड़ि न अंबर छावत।
दादुर मोर कोकिला चातक बोलत बचन सुहावत।।
ज्यौं ही प्रगट निरंतर निसि दिन, हठ करि बिरह बढ़ावत।
सूर स्याम पर-पीर न जानत कत सरबस बहावत।।१४०३।।

सखि कोउ नई बात सुनि आई।
यह ब्रजभूमि सकल सुरपति सौं, मदन मिलिक करि पाई।
घन धावन, बगपाँति पटौसिर, बैरख तड़ित सुहाई।
बोलत पिक चातक ऊँचे सुर, फेरत मनौ दुहाई।
दादुर मोर चकोर मधुप सुक, सुमन समीर सुहाई।
चाहत बास कियौ बृंदावन, बिधि सौं कछु न बसाई।
सीव न चाँपि सक्यौ तब कोऊ, हुते बल-कुँवर कन्हाई।
सूरदास गिरिधर बिनु गोकुल पे करिहैं ठकुराई।।१४०४।।

सिखिनि सिखर चढ़ि टेर सुनायौ।
बिरहिनि, सावधान ह्वै रहियौ सजि पावस दल आयौ।
नव बादर बानैत पवन ताजी चढ़ि, चुटक दिखायौ।
चमकत बीजु, सेल कर मंडित गरज निसान बजायौ।
चातक पिक झिल्लीगन, दादुर, सब मिलि मारू गायौ।
मदन सुभट कर बान पंच लै ब्रज सन्मुख ह्वै धायौ।
जानि बिदेस नंदनंदन कौं अबलनि त्रास दिखायौ।
सूर स्याम पहिले गुन सुमिरैं, प्रान जात बिरमायौ।।१४०५।।

हमारे माई मोरवा बैर परे।
घन गरजत बरज्यौ नहिं मानत त्यौं त्यौं रटत खरे।
करि करि प्रगट पंख हरि इनके, लै लै सीस धरे।
याही तें न बदत बिरहिनि कौं मोहन ढीठ करे।

को जाने काहे तें सजनी, हमसौं रहत अरे।
सूरदास परदेस बसे हरि, ये बन तें न टरे ।१४०६।

बहुरि पपीहा बोल्यौ माई।
नींद गई, चिंता चित बाढ़ी, सुरति स्याम की आई ॥
सावन मास मेघ की बरषा, हौं उठि आँगन आई।
चहुँदिसि गगन दामिनी कौंधति तिहिं जिय अधिक डराई ॥
काहूँ राग मलार अलाप्यौ मुरली मधुर सुर गाई।
सूरदास बिरहिनि भइ ब्याकुल धरनि परी मुरझाई ।१४०७।

सारँग स्यामहिं सुरति कराउ।
पौढ़े होहिं जहाँ नँदनंदन ऊँचे टेरि सुनाउ ॥
गई ग्रीषम पावस रितु आई सब काहूँ चित चाउ।
तुम बिनु ब्रजबासी यौं जीवैं ज्यौं करिया बिन नाउ ॥
तुम्हरी कही मानिहैं मोहन चरन पकरि लै आउ।
अबकी बेर सूर के प्रभु कौं नैननि आनि दिखाउ ।१४०८।

सखी री, चातक मोहिं जियावत।
जैसेंहि रैनि रटति हौं पिय-पिय, तसैंहिं वह पुनि गावत ॥
अतिहिं सुकंठ दाह प्रीतम कैं, तारू जीभ न लावत।
आपुन पियत सुधा रस अंमृत बोलि बिरहिनी प्यावत ॥
यह पंछी जु सहाइ न होतौ प्रान महा दुख पावत।
जीवन सुफल सूर ताही कौ काज पराए आवत ।१४०९।

बहुत दिन जीवौ पपिहा प्यारौ।
बासर रैनि नाम लै बोलत भयौ बिरह जुर कारौ ॥
आपु दुखित पर दुखित जानि जिय, चातक नाम तुम्हारौ।
देख्यौ सकल बिचारि सखी जिय बिछुरन कौ दुख न्यारौ।
जाहि लगै सोई पै जानै प्रेम बान अनियारौ।
सूरदास प्रभु स्वाति बूँद लगि, तज्यौ सिंधु करि खारौ ।१४१०।

(हौं तौ मोहन के) बिरह जरी रे तू कत जारत।
रे पापी, तू पंखि पपीहा पिय-पिय करि अधराति पुकारत॥
करी न कछु करतूति सुभट की, मूठि गहत अपबसि सर मारत।
रे सठ, तू सु सतावत औरनि, जानत नहिं अपने जिय आरत॥
सब जग सुखी, दुखी तू जल बिनु, तऊ न उर की व्यथा बिचारत।
सूर स्याम बिनु ब्रज पर बोलत काहैं अगिलौ जनम बिगारत॥१४११

कोकिल हरि कौ बोल सुनाउ।
मधुबन तैं उपटारि स्याम कौं, इहिं ब्रज कौं लै आउ॥
जा जस कारन देत सयाने, तन-मन-धन सब साउ।
सुजस बिकात बचन के बदलैं, क्यौं न बिसाहतु आउ॥
कीजै कछु उपकार परायौ, इहै सयानौ काज॥
सूरदास पुनि कहँ यह अवसर, बिनु बसंत रितुराज॥१४१२

ऐसौ सुनियत है, द्वै सावन।
वहै सूल फिरि फिरि सालत जिय स्याम कह्यौ ही आवन॥
तब कत प्रीति करी अब त्यागी, अपनी कीन्ही पावन।
इहिं दुख सस्यौ, निकसि यहँ जइये जहँ सुनियै कोउ नावँ न॥
चकहिं बैर सखी मधुकर ज्यौं लागी नेह बढ़ावन।
सूर सुरति क्यौं होति हमारी, लागी मीठी भावन॥१४१३

अब यह बरषौ बीति गई।
अनि सोचहि, सुम भामि सयानी सखी रितु सरद भई॥
फूल्यौ सरोज सरोवर सुंदर, नव बिधि नलिनि नई।
उदित चारु चंद्रिका किरन, उर अंतर अमृत मई॥
घटी घटा अभिमान मोह-मद तमिता तेज हई।
सरिता संजम स्वच्छ सलिल सब फाटी काम कई॥
यहै भरद संदेस सूर सुनि करुना कहि पठई।
यह सुनि सखी सयानी आ॰ हरि-रति अवधि हई॥१४१४

सरद समै हूँ स्याम न आए।
को जानै काहे तैं सजनी किहिं बैरिनि बिरमाए।
अमल अकास कास कुसुमित छिति, लच्छन स्वच्छ जनाए।
सर सरिता सागर जल-उज्ज्वल अति कुल कमल सुहाए।
अहि मयंक मकरंद कंज अलि, दाहक गरल जिवाए।
प्रीतम रंग अंग मिलि सुन्दरि, रचि सचि सींचि सिराए॥
सूनी सेज तुषार जमत चिर बिरह-सिंधु उपजाए।
अब गई आस सूर मिलिबे की भए मधुनाथ पराए।।१४१५।

सबै रितु औरै लागति आहि।
सुनि सखि, वा ब्रजराज बिना सब, फीकी लागत चाहि॥
वै घन देखि नैन बरषत हैं, पावस गयें सिरात।
सरद सनेह सँचे सरिता उर, मारग है बह जात॥
हिम हिमकर देखे उपजत अति, निसा दहति इहिं आग।
सिसिर बिकल काँपत सु कमल उर सुमिरि स्याम रस भोग॥
निरखि बसंत बिरह बेली तन, पै सुख फुल है फूलत।
ग्रीषम काम निमिष छाँड़त नहिं देह दसा सब भूलत॥
षट् रितु है इक ठाम कियौ तनु, उठे त्रिदोष जुरे।
सूर अवधि उपचार आजु लौं, राखे प्रान जुरे।।१४१६।

हरि बिनु मुरली कौन बजावै।
सुंदर स्याम कमल लोचन बिनु, को मधुरे सुर गावै।
ये दोउ स्रवन सुधा-रस पीये को ब्रज फेरि बसावै।
ऐसी निठुर कियौ हरि जू मम पंछी पंथ न आवै।
छाँड़ी सुरति नंद-जसुमति की हमरी कौन चलावै।
सूर स्याम की प्रीति पाछिली, को अब सुरति करावै।।१४१७।

सखि, कर धनु लै चंदहि मारि।
तब ती पै कछुवै न खिरैहै, जब अति गुर मैंहि तनु झारि।

उठि हरबाइ आइ मंदिर पहि, मसि सनमुख दरपन बिस्तारि।
ऐसी भाँति बुलाइ मुकुर मैं अति बल खंड-खंड करि डारि॥
सोई अवधि निकट आई है चलत तोहिं जो दई मुरारि।
सूरदास बिरहिनि यौं तलफति जैसें मीन बीन बिनु बारि॥१४१८

या बिनु होत कहा अब सूनी।
लै किन प्रगट कियौ प्राची दिसि, बिरहिनि कौ दुख दूनी॥
सब निरदै सुर असुर सैल सखि, सागर सर्प समेत।
काहू न कृपा करी इतननि मैं त्रिन तन-धन दुख देत॥
धन्य कुहू बरषा रितु, तमचुर, अरु कमलनि कौ हेत।
जुग जुग जीवै जरा बापुरी मिलैं राहु भी केत॥
चिते चंद तन सुरति स्याम की बिकल भई ब्रजबाल।
सूरदास अबहूँ इहिं औसर काहे न मिलत गुपाल॥१४१९

दूरि करहि बीना कर धरिबौ।
रथ थाक्यौ, मानौ मृग मोहे, नाहिंन होत चंद कौ ढरिबौ।
बीतै जाहि सोइ पै जाने, कठिन सु प्रेम पास कौ परिबौ।
प्राननाथ संगहिं तैं बिछुरे, रहत न नैन-नीर कौ झरिबौ।
सीतल चंद अगिनि सम लागत कहिए धीर कौन बिधि धरिबौ।
सूर सु कमलनयन के बिछुरें झूठी सब जतननि कौ करिबौ।

कोउ माई, बरजै री या चंदहिं।
अतिहीं क्रोध करत है हम पर, कुमुदिनि-कुल आनंदहिं॥
कहाँ कहाँ बरषा रबि तमचुर कमल बलाहक कारे।
चलत न चपल रहत थिर कै रथ, बिरहिनि के तन जारे॥
निंदति सैल उदधि पन्नग कौं, श्रीपति कमठ कठोरहिं।
देति असीस जरा देवी कौं राहु केतु किन जोरहिं॥
ज्यौं जल-हीन मीन तन तलफति ऐसी गति ब्रजबालहिं
सूरदास अब आनि मिलावहु, मोहन मदन गुपालहिं॥१४२१॥

माई मोकौं चंद लग्यौ दुख दैन।
कहँ वे स्याम, कहाँ वे बतियाँ, कहँ वै सुख की रैन।
तारे गनत-गनत हौं हारी, टपकन लागे नैन।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु बिरहिनि कौं नहिं चैन।।१४७२

अब हरि कौने सौं रति जोरी।
घर के मद, कौन के ह्वै हैं, बँधे कौन की डोरी।
त्रेता जुग इक पतिनी-ब्रत कियौ, सीऊ बिलपत छोरी।
सूपनखा बन ब्याहन आई, नाक निपात बहोरी।
पय पीवत जिन हती पूतना, सु कहि मरजादा थोरी।
बहुतै प्रीति जसोदा महरि सौं, बिनक माँझ दै तोरी।
आरजपंथ छुड़ाइ गोपकनि, अपने स्वारथ भोरी।
सूरदास हरि काम आपनौं, गुड़ी डोर ज्यौं तोरी ।।१४७३।।

अब या तनहिं राखि कह कीजै।
सुनि री सखी स्यामसुन्दर बिनु बाँटि बिषम बिष पीजै।
कै गिरियै गिरि चढ़ि सुनि सजनी सीस संकरहिं दीजै।
कै दहियै दारुन दावानल जाइ जमुन धँसि लीजै।
दुसह बियोग-बिरह माधौ के, को दिन ही दिन छीजै।
सूर स्याम प्रीतम बिनु राधे सोचि सोचि कर मीजै ।।१४७४

काहे कौं पिय पियहिं रटति हौ, पिय कौ प्रेम तेरौ प्रान हरैगौ।
काहे कौं लेति नयन जल भरि-भरि नैन भरे कैसैं सूल टरैगौ।
काहे कौ स्वास उसाँस लेति हौ बैरी बिरह कौ दवा बरैगौ।
छार सुगंध सेज पुहुपावलि हार छुवैं, हिय हार जरैगौ।
चदन चुराइ बैठि मंदिर मैं बहुरि निसापति उदय करैगौ।
सूर सखी, अपने इन नैननि, चंद चितै जनि, चंद जरैगौ ।।१४७५

स्याम बिनोदी रे मधुबनियाँ।
अब हरि गोकुल काहे कौ आवत भावति नव जोबनियाँ।

वै दिन माधौ भूलि गए जब, लिये फिरावति कनियाँ।
अपनैं कर जसुमति पहिरावति तनक काँच की मनियाँ।
दिना चारि तैं पहिरन सीखे, पट पीतांबर तनियाँ।
सूरदास प्रभु वाकैं बस परि, अब हरि भए चिकनियाँ ॥१४२५॥

कहौ री जो कहिबे की होइ।
प्रान-नाथ बिछुरे की बेदन और न जानै कोइ।
सब हम अधर-सुधा-रस लै-लै, मगन रहीं सुख सोइ।
जा रस सिव-सनकादिक दुरलभ, सा रस बैठीं खोइ।
कहा कहौं कछु कहत न आवै सुख सपनौ भयौ सोइ।
हमसौं कठिन भए कमलापति काहि सुनाऊँ रोइ।
बिरह बिथा अंबर की बेदन, सो जानै जिहिं होइ।
सूरदास सुख-मूरि मनोहर, लै जु गए मन गोइ ॥१४२७॥

बिछुरे री मेरे बाल सँघाती।
निकसि न जात प्रान ये पापी, फाटति नाहिंन छाती।
हौं अपराधिनि यहौ मथति ही भरी जोबन मदमाती।
जौ हौं जानति हरि कौ चलिबौ लाज छाँड़ि सँग जाती।
ढरकत नीर नैन भरि सुंदरि कछु न सोह दिन-राती।
सूरदास-प्रभु दरसन कारन, सखियनि मिलि लिखी पाती ॥

हमारे हिरदैं कुलिसहुँ जीत्यौ।
फटत न सखी अजहुँ उहिं आसा, बरष दिवस पर बीत्यौ।
हमहुँ समुझि परी नीकैं करि, यह असितनि की रीत्यौ।
यहुरि न जीवन मरन सौं सामौ, ज्यौं मधुप की प्रीत्यौ।
अब सौं यात घरी-पहरन की, ज्यौं उड़पत की भीत्यौ।
सूर स्याम दासी सुख सोवहु, भयौ उभै मन चीत्यौ ॥१४२६॥

पर चौम कुंजनि मैं आई।
नाना कुसुम लेइ अपनैं कर, दिए मोहिं, सो सुरति न जाई।

इतने मैं घन गरजि वृष्टि करी, तनु भीज्यौ मो भई जुड़ाई।
कंपत देखि उढ़ाइ पीत पट, लै करुनामय कंठ लगाई॥
कहँ वह प्रीति-रीति मोहन की, कहाँ अब धौं एती निठुराई।
अब बलबीर सूर प्रभु सखि री, मधुबन बसि सब रति बिसराई॥

मोहिनै मन भज नंद कुमार।
परम चतुर सुन्दर सुजान सखि, या तनु की मतिहार।
रूप लकुट रोके जु रहत अलि, मनु दिन नैननि द्वार।
ता दिन तैं उर-भवन भयौ सखि सिव रिपु कौ संचार॥
दुख पावत कछु कहत न मानत सूनी देखि अगार।
अंसु धसनि जात अंतर तैं करत न कछू बिचार॥
निसि निमेष कपाट लगे बिनु सखि सूझत नव सार।
सूर प्रान रहि जात न औचट सुमिरि अवधि-आधार ।१४२१।

मेरे मन इतनी सूल रही।
वे बतियाँ छतियाँ लिखि राखी जे नँदलाल कही॥
एक द्यौस मेरे गृह आए हौं ही मथत दही।
रति माँगत मैं मान कियौ सखि, सो हरि गुसा गही॥
सोचति अति पछिताति राधिका मुरछित धरनि ढही।
सूरदास-प्रभु के बिछुरे तैं, बिथा न जाति सही ।१४२२।

सुरति करि हाँ की रोइ दियौ।
पंथी एक देखि मारग मैं राधा बोलि लियौ॥
कहि धौं बीर कहाँ तैं आयौ हम जु प्रनाम कियौ।
या लागी मंदिर पग धारौ सुनि दुखियान हियौ॥
गदगद कंठ, हियौ भरि आयौ बचन कह्यौ न दियौ।
सूर स्याम अभिराम ध्यान मग, मरि-मरि सोच दियौ ।१४२३।

हरि कौ मारग दिन प्रति जोवति।
चितवत रहत चकोर चंद ज्यौं, सुमिरि-सुमिरि गुन रोवति॥

पतियाँ पठवति मसि नहिं खूँटति लिखि लिखि मानहु धोवति ।
भूख न दिन, निसि नींद हिरानी, एकौ पल नहिं सोवति ॥
जे जे बसन स्याम सँग पहिरे, ते अजहूँ नहिं धोवति ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, वृथा जनम सुख खोवति ॥१४३४॥

बिनु माधौ, राधा तन सजनी सब बिपरीत भई ।
गई छपाइ छपाकर की छबि, रही कलंकमई ॥
अलक जु हुती भुअंगम हू सी बट-लट मनहु भई ।
तनु-तरु लाइ बियोग अग्यो तनु, तनुता सकल दई ॥
अँखियाँ हुती कमल-पँखुरी सी, सुबदनि निचोरि लई ।
चौंच लगैं ज्यौनो सानी मौं पी तनु घातु भई ॥
कदली दल सी पीठि मनोहर, मानौ उलटि ठई ।
संपति सब हरि हरी सूर प्रभु बिपदा देह दई ॥१४३५॥

इहिं दुख तन तरफत मरि जैहै ।
कबहुँ न सखी, स्याम-सुंदर-घन, मिलिहैं आइ अंक भरि लैहैं ।
कबहुँ न बहुरि सखा सँग ललना, ललित त्रिभंगी छबिहिं दिखैहैं ।
कबहुँ न बेनु अधर धरि मोहन, यह मति लै लै नाम बुलैहैं ।
कबहुँ न कुंज-भवन सँग बैठे, कबहुँ न दूती सैन पठैहैं ।
कबहुँ न पकरि भुजा रस-बस ह्वै, कबहुँ न पग परि मान मिटैहैं ।
याही तैं पर प्रान रहत हैं, कबहुँक फिरि दरसन हरि दैहैं ।
सूरदास परिहरत न यातैं प्रान तजैं नहिं पिय ब्रज ऐहैं ॥१४३६॥

सबै सुख लै जु गए ब्रजनाथ ।
बिलखि बदन चितवति मधुबन तन, हम न गईं उठि साथ ॥
वह मूरति चित तैं बिसरति नहिं, देखि साँवरे गात ।
मदन गोपाल ठगौरी मेलि, कहत न आवै बात ॥
नंद नँदन जु बिदेस गवन कियौ, बैठी मीजति हाथ ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे बिछुरे, हम सब भईं अनाथ ॥१४३७॥

उनकौं ब्रज बसिबौ नहिं भावै।
वै भूप भए त्रिभुवन के, ह्याँ कत ग्वाल कहावैं॥
ह्वाँ पै छत्र सिंहासन राजत, ह्याँ बछरनि सँग धावैं।
ह्वाँ ती विविध बसन पाटंबर, ह्याँ कमरी सचु पावैं॥
नंद जसोदा हूँ कौ बिसारयौ, हमरो कौन चलावै।
सूरदास प्रभु निठुर भए री, पातिहुँ लिखि न पठावैं॥१४२८॥

— (卐) —

(ठ) कृष्ण और उद्धव

जदुपति जानि उद्धव-रीति ।
जिहिं प्रगट निज सखा कहियत करत भाव अनीति ।
बिरह दुख जहँ नाहिं नैकहु तहँ न उपजै प्रेम ।
रेख रूप न बरन जाकैं, इहिं धरयौ वह नेम ॥
त्रिगुन तन करि लखत हमकौं ब्रह्म मानत और ।
बिना गुन क्यौं पुहुमि उधरै यह करत मन डौर ॥
बिरह रस किहिं मंत्र कहियै, क्यौं चलै संसार ।
कछु कहत यह एक प्रगटत, अति भरयौ अहंकार ॥
प्रेम भजन न नैकु याकैं, जाइ क्यौं समुझाइ ।
सूर प्रभु मन यहै आनी ब्रजहिं देउँ पठाइ ।१४१६।

ऊधौ संग मिलि कह्यौ आसी बात ।
यह तौ कहत जोग की बातैं जामैं रस जरि जात ॥
कहत कहा, पितु-मातु कौन के, पुरुष-नारि कह नात ।
कहाँ जसोदा सी है मैया कहाँ नंद सम तात ॥
कहँ वृषभानु-सुता सँग कौ सुख यह बासर यह प्रात ।
सखी सखा सुख नहिं त्रिभुवन मैं नहिं बैकुंठ सुहात ॥
ये बातैं कहियै किहिं आगैं, यह गुनि हरि पछितात ।
सूरदास प्रभु ब्रज महिमा कहि, सिथिल भए सब गात ।१४२०

कहाँ सुख ब्रज कौ सौ संसार।
कहाँ सुखद बंसीबट जमुना यह मन सदा बिचार।
कहँ बन धाम कहाँ राधा सँग, कहाँ सँग ब्रज-बाम।
कहँ रस-रास बीच अंतर सुख, कहाँ नारि तन ताम॥
कहाँ लता तरु-तरु प्रति झूमनि, कुंज-कुंज नव धाम।
कहाँ बिरह सुख बिन गोपिनि सँग, सूर स्याम मन काम १४४१

याहि और नहिं कछू उपाइ।
मेरी प्रगट कही नहिं मानिहै, ब्रजहीं देउँ पठाइ॥
गुप्त प्रीति जुवतिनि की करि कै, याकौ करौं महंत।
गोपिनि के परमोधन कारन, ऐहै सुनत तुरंत॥
अति अभिमान करैगी मन मैं ज्ञानिनि की यह भाँति।
सूर स्याम यह निहचै करिकै, बैठत हैं मिलि पाँति।१४४२।

तबहिं उपँगसुत आइ गए।
सखा सखा कछु अंतर नाहीं भरि भरि अंक लए॥
अति सुंदर तन स्याम सरीखौ, देखत हरि पछिताने।
ऐसे कैं वैसी बुधि होती ब्रज पठऊँ मन आने॥
या आगैं रस कथा प्रकासौं जोग-कथा प्रगटाऊँ।
सूर ज्ञान याकौ दृढ़ करिकै, जुवतिन्ह पास पठाऊँ॥

जबही यह कहौगी ताहि।
मोहिं पठवत गोपिकनि पै हरष ह्वै है ताहि॥
जोग कौ अभिमान करिहै, ब्रजहिं जैहै धाइ।
कहैगी मोहिं स्याम जानत करी यह चतुराइ॥
आइ गए तिहिं समै ऊधौ सखा कहि लियौ बोलि।
कंध धरि भुज भए ठाढ़े, करत बचन निठोलि॥
बार-बार प्रसंस करत कहत ब्रज की बात।
सूर प्रभु के बचन सुनि-सुनि उपँग-सुत मुसकात।१४४३।

हरि गोकुल की प्रीति चलाई ।
सुनहु उपँग-सुत मोहिं न बिसरत, ब्रज-बासी सुखदाई ॥
यह चित होत जाउँ मैं अबहीं, इहाँ नहीं मन लागत ।
गोपी-ग्वाल गाइ-बन चारन अति दुख पायौ त्यागत ॥
कहँ माखन-रोटी कहँ जसुमति जेंवहु कहि-कहि प्रेम ।
सूर स्याम के बचन हँसत सुनि थापत अपनो नेम ॥१४४२॥

जदुपति लख्यौ तिहिं मुसुकात ।
कहत हम मन रही जोई भई सोई बात ॥
बचन परगट करन कारन प्रेम कथा चलाइ ।
सुनहु ऊधौ-मोहिं ब्रज की सुधि नहीं बिसराइ ॥
रैनि सोवत दिवस जागत नाहिंनै मन आन ।
नंद जसुमति, नारि नर-ब्रज तहाँ मेरौ प्रान ॥
कहत हरि, सुनि उपँग-सुत यह, कहत हौं रस-रीति ।
सूर चित तैं टरति नाहीं राधिका की प्रीति ॥१४४३॥

सखा, सुनि एक मेरी बात ।
वह लता गृह संग गोपिनि सुधि करत पछितात ॥
बिधि लिखी नहिं टरत क्यौंहूँ, यह कहत अकुलात ।
हँसि उपँग-सुत बचन बोले, कहा हरि, पछितात ॥
सदा हित यह रहत नाहीं, सकल मिथ्या बात ।
सूर प्रभु यह सुनौ मोसौं एक ही सौं नात ॥१४४४॥

जब ऊधौ यह बात कही ।
तब जदुपति अति ही सुख पायौ मानी प्रगट सही ॥
श्रीमुख कह्यौ जाहु तुम ब्रज कौं, मिलहु जाइ ब्रज लोग ।
मो बिन बिरह भरी ब्रज-बाला जाइ सुनावहु जोग ॥
प्रेम मिटाइ ज्ञान परबोधहु तुम हौ पूरन ज्ञानी ।
सूर उपँग-सुत मन हरषाने, यह महिमा हम जानी ॥१४४५॥

ऊधौ, तुम यह निहचै जानौ।
मन बच क्रम मैं तुमहिं पठावत ब्रज कौ तुरत पलानौ।
पूरन ब्रह्म सकल अबिनासी, ताके तुम हौ ज्ञाता।
रेख न रूप, जाति कुल नाहीं, जाके नहिं पितु-माता।
यह मत दै गोपिनि कौं आवहु, बिरह नदी मैं भासत।
सूर तुरत तुम जाइ कहौ यह, ब्रह्म बिना नहिं आसत।।१४४९।

ऊधौ, बेगिहीं ब्रज जाहु।
सुरति सँदेस सुनाइ मेटौ बल्लभिनि कौ दाहु।
काम पावक, तूल तन मैं, बिरह स्वाँस समीर।
जरि भसम नहिं होन पावै लोचननि के नीर।।
अजहुँ लौं इहिं भाँति ह्वै है, कछुक सजग सरीर।
इते पर बिनु समाधानहिं, क्यौं धरै तिय धीर।
बार-बार कहा कहौं तुम सखा, साधु प्रबीन।
सूर सुमति बिचारियै, जिहिं जियें जल बिनु मीन।।१४५०।

ऊधौ मन अभिमान बढ़ायौ।
जदुपति जोग जानि जिय साँचौ नैन अकास चढ़ायौ।
नारिनि पै मोकौं पठवत हैं, कहत सिखावन जोग।
मन ही मन अब करत प्रसंसा यह मिथ्या सुख-भोग।
आयसु मानि लियौ सिर ऊपर, प्रभु आग्या परमान।
सूरदास प्रभु गोकुल पठवत, मैं क्यौं कहौं कि आन।।१४५१।

तुम पठवत गोकुल कौं जैहौं।
जौ मानिहैं ब्रह्म की बातैं तौ उनसौं मैं कैहौं।
गदगद बचन कहत मन मुदित बार-बार समुझैहौं।
आजु नहीं जौ करौं काज तुव, कौन काज पुनि ऐहौं।
यह मिथ्या संसार सदाई, यह कहिकै उठि ऐहौं।
सूर दिना द्वै ब्रज-जन सुख दै, आइ चरन पुनि गैहौं।।१४५२।

सुनु सखा हित प्रान मेरे माहिंनै सम सोहिं ।
कैसेहूँ कर धरिन कीजै, गोपिकनि सौं मोहिं ।
रैनि दिन मम भक्ति उनकैं, कछु करत न आन ।
और सरबस मोहिं अरप्यौ तरुनि-तन-धन प्रान ।
ब्याज मैं ये रवन कीन्हे, तृथा गोपकुमारि ।
सालोक्यता समीपता सारूपता सुख चारि ।
इक रही सायुज्यता सो सिद्ध नाहिं बिनु ज्ञान ।
सोइ तुम उपदेसियौ जिहिं लहैं पद निर्बान ।
जौ न अंगीकृत करैं वै, होउगौ रिन साध ।
सूर गाइ चराइहौं मैं, बहुरि बसि ब्रजबास ।।१४२३।।

तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत आजु ।
ज्ञान बुझाइ अबहि दै आवहु एक पंथ है काज ॥
जब तैं मधुबन कौं हम आए, फेरि गयौ नहिं कोइ ।
जुवतिनि पै ताही कौं पठवौं जो तुम लायक होइ ॥
इक प्रवीन अरु सखा हमारे ज्ञानी तुम सरि कौन ।
सोइ कीजौ जातैं ब्रज-बाला साधन सीखैं पौन ॥
श्रीमुख स्याम कहत यह बानी ऊधौ सुनत सिहात ।
आयसु मानि सूर प्रभु कैहौं नारि मानिहैं बात ।।१४२४।।

हलधर कहत प्रीति जसुमति की ।
कहा रोहिनी इतनी पावै यह बोलनि अति हित की ॥
एक दिवस हरि खेलत मो सँग, झगरौ कीन्हौ पेलि ।
मोकौं दौरि गोद करि लीन्हौं, इनहिं दियौ कर ठेलि ।
नंद बबा तब कान्ह गोद करि, खीझन लागे मोकौं ।
सूर स्याम माख्यौ तेरी मैया छोह न आवत तोकौं ।।१४२५।।

जसुमति करति मोकौं हेत ।
सुनौ ऊधौ, कहत बनत न, नैन भरि-भरि लेत ।

दुहुँनि की कुसलात कहियौ, तुमहिं भूलत नाहिं।
स्याम-हलधर सुत तुम्हारे, और के न कहाहिं।
आइ तुमकौं धाइ मिलिहैं, कछुक कारज और।
सूर हमकौं तुम बिना सुख कौ नहीं कहुँ ठौर ॥१४२६॥

स्याम कर पत्री लिखी बनाइ।
नंद बबा सौं बिनै कर जोरि जसुदा माइ।
गोप-ग्वाल सखानि कौं हिलि मिलन कंठ लगाइ।
और ब्रज-नर-नारि जे हैं, तिनहिं प्रीति जनाइ।
गोपिकनि लिखि जोग पठयौ, भाव जानि न जाइ।
सूर प्रभु मन और यह कहि, प्रेम लेत दिढ़ाइ ॥१४२७॥

पतंग-सुत-तात दई हरि पाती।
यह कहियौ जसुमति मैया सौं नहिं बिसरत दिन-राती।
कहत कहा बसुदेव देवकी, तुमकौ हम हैं जाये।
कंस त्रास सिसु भखिहिं जानिकै, ब्रज मैं राखि दुराये।
कहै बनाइ कोटि जो बातैं, कहौ बलराम कन्हाई।
सूर काज करिकै दिन कछु मैं बहुरि मिलैंगे आई ॥१४२८॥

ऊधौ, इतनी कहियौ जाइ।
हम आवैंगे दोऊ भैया, मैया जनि अकुलाइ।
याकौ बिलग बहुत हम मान्यौ जो कहि पठयौ धाइ।
वह गुन हमकौं कहा बिसरिहै, बड़े किए पय प्याइ।
अरु जब मिलियौ नंद बबा सौं तब कहियौ समुझाइ।
तौ लौं दुखी होन नहिं पावैं धौरी-धूमरि गाइ।
जद्यपि इहाँ अनेक भाँति सुख तदपि रह्यौ नहिं जाइ।
सूरदास देखौं ब्रजबासिनि, तबहीं हियौ सिराइ ॥१४२९॥

मीठैं कहियौ जसुमति मैया।
आवैंगे दिन चारि-पाँच मैं हम हलधर दोउ भैया।

नोई बैंत, बिषान, बाँसुरी, द्वार अबेर सबेरौ।
लै जनि जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरौ।
जा दिन तैं हम तुमतैं बिछुरे कोउ न कहत कन्हैया।
उठि न सबेरे कियौ कलेऊ, साँझ न चाखी पैया।
कहियै कहा नंद बाबा सौं जितौ निठुर मन कीन्हौ।
सूरदास पहुँचाइ मधुपुरी, फेरि न सोधौ लीन्हौ ॥१४६०॥

ऊधौ, जननी मेरी कौं मिलि, अरु कुसलात कहौगे।
बाबा नंदहिं पालागन कहि, पुनि-पुनि चरन गहौगे।
जा दिन तैं मधुबन हम आए, सोध नहीं तुम लीन्हौ।
दै-दै सौंह कहौगे हित करि, कहा निठुरई कीन्हौ।
यह कहियौ बलराम स्याम अब आवैंगे दोउ भाई।
सूर करम की रेख मिटै नहिं, यहै कहौ जदुराई ॥१४६१॥

बिधना यहै लिख्यौ संजोग।
कहाँ तैं मधुपुरी आए, तज्यौ माखन भोग।
कहाँ वै ब्रज के सखा सब, कहाँ मथुरा लोग।
देवकी-बसुदेव-सुत सुनि जननि करिहै सोग।
रोहिनी माता कृपा करि सकँग सेवी रोग।
सूर प्रभु मुख यह बचन कहि, लिखि पठायौ जोग ॥१४६२॥

ऊधौ बात ब्रजहिं सुनै।
देवकी-बसुदेव सुनि कै, हरे देव गुने।
मधु सौं पाती लिखी कहि धन्य जसुमति-नंद।
सुत हमारे पालि पठए, अति दियौ आनंद।
जाइकै मिलि बात कबहूँ न स्याम अरु बलराम।
इहौ कहत पठाइहौं अब, तबहिं तन बिस्राम।
बाल-सुख सब तुमहिं लूट्यौ मोहिं मिले कुमार।
सूर यह उपकार तुम तैं, कहत बारंबार ॥१४६३॥

पाती लिखि ऊधौ कर दीन्ही ।
नंद जसोदहिं हित करि दीजौ हँसि अपंग-सुख कीन्ही ॥
मुख बचननि कहि हेत जनायौ तुम ही हितू हमारे ।
बालक जानि पठए नृप घर सौं तुम प्रति-पालनहारे ॥
कुबिजा सुन्यौ आज ब्रज ऊधौ, महलनिहिं लियौ बुलाइ ।
अपने कर पाती लिखि राधेहिं, गोपिनि सहित पठाइ ॥
मोकौं तुम अपराध लगावहिं, कृपा भई अनयास ।
कुबरि कहा मो पर ब्रज-नारी सनहु न सूरजदास ।१४६४।

हम पर काहैं कुकहिं ब्रजनारी ।
सांचे भाग नहीं काहू कौ हरि की कृपा निनारी ॥
कुबिजा लिख्यौ सँदेस सबनि कौं, अरु कीन्ही मनुहारी ।
हौं तौ दासी कंसराइ की देखौ मनहिं बिचारी ॥
कतनि मौन बपी बकज तोमरि, रहत पुरे पग कारी ।
अब तौ हाथ परी जंत्री के, बाजत राग दुलारी ॥
तनु तैं टेढ़ी सब कोउ जानत परसि भई अधिकारी ।
सूरदास स्वामी करुनामय, अपुने हाथ सँवारी ।१४६५।

ऊधौ ब्रजहिं जाहु पालागौं ।
यह पाती राधा कर दीजौ यह मैं तुमसौं माँगौं ॥
गारी देहिं प्रात उठि मोकौं सुनति रहति घर पानी ।
राजा भए जाइ नँदनंदन मिली कूबरी रानी ॥
मो पर रिस पावनि काहे कौं, पकरि स्याम नहिं राख्यौ ?
लरिकाई तैं पोषति जसुमति कहा जु माखन चाख्यौ ।
[illegible] से सबै हजूर होहिं तुम सहित सुता-वृषभानु ।
सूर स्याम बहुरौ ब्रज जैहैं, ऐसे भए अजान ।१४६६।

ऊधौ यह राधा सौं कहियौ ।
जैसी कृपा स्याम मोहिं कीन्ही आप करम सोइ रहियौ ॥

मो पर रिस पावति बिनु कारन, मैं ही तुम्हरी दासी ।
तुमहीं मन मैं गुनि धौं देखौ, बिनु तप पायौ कासी ।।
कहाँ स्याम की तुम अरधंगिनि, मैं तुम सरि कोउ नाहीं ।
सूरज प्रभु कौ यह न बूझिये, क्यौं न जहाँ की ताहीं ।।१४५७

सुनियत, ऊधौ जात सँदेसी, तुम गोकुल कौं जात ।
पाछैं करि गोपिनि सौं कहियौ एक हमारी बात ।।
मातु पिता कौ नेह समुझि कै स्याम मधुपुरी आए ।
नाहिंन कान्ह तुम्हारे प्रीतम ना जसुदा के जाए ।।
देखौ बूझि आपने जिय मैं, तुम धौं कौन सुख दीन्हे ।
ये बालक तुम मत्त ग्वालिनी सबै मूँड़ करि लीन्हे ।।
तनक दही-माखन के कारन, जसुदा त्रास दिखावै ।
तुम हँसि सब बाँधन कौ दौरीं, काहू दया न आवै ।।
जो वृषभानु-सुता तब कीन्ही सो सब तुम जिय जानी ।
ताही लाज तज्यौ ब्रज मोहन अब काहे दुख मानी ।।
सूरदास-प्रभु सुनि-सुनि बातैं रहे भूमि सिर नाए ।
इत कुबिजा उत प्रेम गोपिकनि कहत न कछु बनि आए ।।१४५८

तब ऊधौ हरि निकट बुलायौ ।
लिखि पाती दोउ हाथ दई तिहिं, श्री मुख बचन सुनायौ ।
ब्रजबासी जावत नारी नर जल थल द्रुम बन-पात ।
जो जिहिं बिधि तासौं तैसैंही, मिलि कहियौ कुसलात ।।
जो सुख स्याम तुमहिं तैं पावत, सो त्रिभुवन कहुँ नाहिं ।
सूरज प्रभु यह मौज आपुनी समुझत हौ मन माहिं ।।१४५९

पहिलैं प्रनाम नँदराइ सौं ।
ता पाछैं मेरौ पालागन कहियौ जसुमति माइ सौं ।।
बार एक तुम बरसाने लौं जाइ सबै सुधि लीजौ ।
कहि वृषभानु महर सौं मेरी, समाचार सब दीजौ ।।

श्रीदामाऽदि सकल ग्वालनि कौं मेरी कोरी भेंट्यौ ।
सुख संदेस सुनाइ सबनि कौं, दिन-दिन कौ दुख मेट्यौ ।
मित्र एक मन बसत हमारैं, ताहि मिलैं सुख पाइहौ ।
करि करि समाधान नीकी बिधि, मोकौं माथौ नाइहौ ।
डरपहु जनि तुम सघन कुंज मैं, हैं तहँ के तरु भारी ।
वृंदावन मति रहति निरंतर, कबहुँ न होति निनारी ।
ऊधौ सौं समुझाइ प्रगट करि, अपने मन की बीती ।
सूरदास स्वामी यौं जस सों कही सकल ब्रज-प्रीती ॥१४७०

गहरु जनि लावहु गोकुल जाइ ।
तुमहिं बिना ब्याकुल हम ह्वैहैं, जदुपति करी चतुराइ ।
अपनौ ही रथ तुरत मँगायौ, दियौ तुरत पलनाइ ।
अपने अंग अभूषन करि-करि, आपुन ही पहिराइ ।
अपनौ मुकुट पितंबर अपनौ, देत सबै सुख पाइ ।
सूर स्याम तद्रूप उपंगसुत, भृगुपद एक बचाइ ॥१४७१॥

जबहिं चले ऊधौ मधुबन तैं गोपिनि मनहिं जनाइ गई ।
बार-बार अलि लागे स्रवननि कछु दुख कछु हिय हर्ष भई ।
जहँ तहँ काग उड़ावन लागीं हरि आवत उड़ि जाहिं नहीं ।
समाचार कहि मनहिं मनावति उहि बैठत सुनि औचकहीं ।
सखी परस्पर यह कहीं बातैं आजु स्याम कै आवत हैं ।
किधौं सूर कोउ ब्रज पठयौ, आजु खबरि कै पावत हैं ॥१४०२॥

आजु कोउ नीकी बात सुनावै ।
कै मधुबन तैं नंद-लाड़िलौ कैऊ दूत कोउ आवै ।
भौंर एक चहुँ दिसि तैं उड़ि उड़ि स्रवनन लगि लगि गावै ।
उत्तम भाषा ऊँचै चढ़ि चढ़ि, अंग-अंग सगुनावै ।
भामिनि एक सखी सौं दिखावै, नैन नीर भरि आवै ।
सूरदास कोऊ अब ऐसौ जो ब्रजनाथ मिलावै ॥१०७३॥

सौ तू उठि न आइ रे काग।
जौ गुपाल गोकुल कौं आवैं, तौ ह्वै है बड़भाग।
दधि-ओदन भरि दोनी दैहौं, अरु अंचल की पाग।
मिलिहौं हृदय सिराइ स्रवन सुनि, मेटि बिरह के दाग।
जैसैं मातु-पिता नहिं जानत अंतर की अनुराग।
सूरदास प्रभु करैं कृपा अब, तब तैं [illegible] सुहाग ॥१४७४॥

है कोउ वैसी ही अनुहारि।
मधुबन तन तैं आवति सखि री, देखौ नैन निहारि।
वैसोइ मुकुट मनोहर कुंडल, पीत बसन रुचिकारि।
वैसैंहिं बात कहत सारथि सौं नभ तन बाहँ पसारि।
कैथिक बीच कियौ हरि अंतर, प्रभु बीते जुग चारि।
सूर सकल आतुर अकुलानी जैसैं मीन बिनु बारि ॥१४७५॥

घर घर हरै सब्द परयौ।
सुनत जसुमति धाइ निकसी हरष हियौ भरयौ।
नंद हरषित चले आगैं, सखा हरषित अंग।
सुत-सुरभि नारि हरषित, चली उदधि तरंग।
गाइ हरषित है सबनि थन, बोलत गौ-बाल।
उमँगि अंग न मात कोऊ, बिरह बड़नऽव पाल।
कोउ कहत, बलराम नाहीं स्याम रथ पर एक।
कोउ कहत, प्रभु-सूर दोऊ, रचित बात अनेक ॥१४७६॥

सुनी ब्रज लोग आवत स्याम।
जहाँ तहाँ तैं सबै धाए, सुनत दुर्लभ नाम।
मनु मृगी बन चरत व्याकुल तुरत बरस्यौ नीर।
बचन गदगद प्रेम व्याकुल धरति नाहिं मन धीर।
पल इक पल जुग सबनि कौं, मिलन कौ अतुरात।
सूर सबनी मिलि परस्पर, भई हरषित गात ॥१४७७॥

आगु कोउ स्याम की अनुहारि।
आवत उठी उमँग सो सबही, देखि रूप की पारि॥
इंद्र धनुष की उर बनमाला चितवत चित्त हरै।
मनु दामिनि अम्बुज मोहन के स्रवननि सम्प परै॥
गई चलि निकट न ऐसे मोहन, प्रान किये बलिहारि।
सूर सकल गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भई ब्रजनारि॥१४८०॥

कोउ माई, आवत है तनु स्याम।
वैसे पट, वैसिय रथ-बैठनि, वैसीये उर दाम॥
जो जैसें तैसें उठि धाई छाँड़ि सकल गृह धाम।
पुलक रोम गद्गद तेहीं छन, सोभित अँग अभिराम॥
इतने बीच आइ गए ऊधौ, रहीं ठगी सब बाम।
सूरदास प्रभु ह्याँ क्यों आवैं, बँधे कुबिजा रस-दाम॥१४८१॥

उमँगि ब्रज देखन कौ सब आए।
एकहि एक परस्पर पूछति, मोहन दूलह आए॥
सोई ध्वजा पताका सोई, जा रथ चढ़ि जु सिधाए।
स्रुति-कुंडल अरु पीत बसन छबि, वैसोइ साज बनाए॥
आइ निकट पहिचाने ऊधौ, नैन जलज जल छाए।
सूरदास मिटी दरसन आसा, भूषन बिरह बनाए॥१४८२॥

कबहि कह्यौ, य स्याम नहीं।
परी मुरछि धरनी ब्रजबाला, जो जहँ रही सु तहीं॥
सपने की रजधानी ह्वै गइ जो जागी कछु नाहीं।
बार बार रथ ओर निहारहिं, स्याम बिना अकुलाहीं॥
कहा आइ करिहैं ब्रज मोहन, मिली कूबरी नारी।
सूर कहत सब, ऊधौ आए, गईं काम-सर मारी॥१४८३॥

सजनी गईं सब बिसराइ।
जबहिं आए सुने ऊधौ अतिहिं गईं मुराइ॥

परी ब्याकुल जहाँ जसुमति गई तहँ सब धाइ।
नीर नैननि बहति धारा, गई पोंछि उठाइ॥
इक गई जब चली मारग सखा पठयौ स्याम।
सुनी हरि कुसलात ब्यायौ, महरि सौं कहै बाम॥
अबहिं ह्वौ रथ निकट आयौ तबहुँ तें परितीति॥
वह मुकुट-कुंडल-पितंबर, सूर प्रभु अँग रीति॥१४८२।

भली भई हरि सुरति करी।
कही महरि कुसलात बूझिये आनँद उमँग भरी॥
मुख महै गोपी परबोधति, मानहु सुफल घरी।
पाती लिखि कछु स्याम पठायौ, यह सुनि मनहिं हरी
निकट उपँगसुत आइ तुलाने मानौ रूप हरी।
सूर स्याम कौ सखा भयै री, स्रवननि सुनी परी॥१४८३।

देखौ नंद-द्वार रथ ठाढ़ौ।
बहुरि सखी सुफलकसुत आयौ परयौ सँदेह जिय गाढ़ौ॥
प्रान हमारे तबहिं लै गयौ, अब किहिं कारन आयौ।
मैं जानी यह बात सुनत प्रभु, कृपा करन उठि धायौ।
इतने अंतर आइ उपँगसुत तेहिं छन दरसन दीन्हौ।
तब पहिचानि सखा हरि जू कौ, परम सुचित मन कीन्हौ।
तिहिं परनाम कियौ अति रुचि सौं अरु सबहिनि कर जोरे।
सुमिरत सुधि तैसेई देखे परम सुदर चित भोरे॥
तुम्हरौ दरसन पाइ आपनौ जनम सुफल करि मान्यौ।
सूर सु ऊधौ मिलत भयौ सुख ज्यौं झख पायौ पान्यौ॥१४८४।

निरखत ऊधौ कौ सुख पायौ।
भँवर सुभग सुबंस देखियत, जातैं स्याम पठायौ॥
मोकौं हरि-सँदेस कहैगौ सजन सुनत सब पैहैं।
यह जानति हरि तुरत आइहैं, यह कहि हरै सिरैहैं॥

घेरि लिए रथ पास पहुँचा, नंद-गोप-ब्रजनारी ।
महर लिवाइ गए निज मंदिर, हरषित निमी उतारी ।
पाच देत भीतर लिहिं लीन्ही, धनि धनि दिन कौ आज
धनि धनि सूर उपंगसुत आए, सुमिरन करत समाज ॥१४८५॥

कबहुँ सुधि करत गुपाल हमारी ।
पूछत पिता नंद ऊधौ सौं अरु जसुदा महतारी ।
बहुतै चूक परी अनजानत कहा अबकैं पछिताने ।
बासुदेव घर भीतर आए मैं अहीर करि जाने ।
पहिलैं गर्ग कह्यौ हुतौ हमसौं संग दुख गयौ भूल ।
सूरदास-स्वामी के बिछुरैं राति दिवस भयौ सूल ॥१४८६॥

कहौ कान्ह सुनि जसुदा मैया ।
आवहिंगे दिन चारि पाँच मैं हम हलधर दोउ भैया ॥
मुरली बेंत बिषान हमारी कहूँ अबेर सबेरी ।
मति लै जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरी ।
जा दिन तैं हम तुम सौं बिछुरे काहु न कह्यौ कन्हैया ।
प्रात न कियौ कलेऊ कबहूँ, साँझ न पय पियौ धैया ।
कहा कहौं कछु कहत न आवै जननी जो दुख पायौ ।
अब हमसौं बसुदेव-देवकी कहत आपनौ जायौ ।
कहियै कहा नंद बाबा सौं बहुत निठुर मन कीन्हौ ।
सूर हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी बहुरि न सोधौ लीन्हौ ॥१४८७॥

हमतैं कछु सेवा न भई ।
भोरैं ही भोरैं जु रहे हम जाने नाहिं त्रिलोकमई ।
चरन पकरि कर बिनती करियौ सब अपराध छमा कीजै ।
ऐसौ भाग होइगौ कबहूँ स्याम गोद पुनि लै लीजै ।
कहै नंद आगैं ऊधौ कै, एक बेर दरसन दीजै ।
सूरदास स्वामी मिलि अबकैं सबै दोष निज गनि लीजै ॥१४८८

ऊधौ, कहौ साँची बात।
दधि, मही, नवनीत माखन, कौन के घर खात।
किन सखा सँग संग खीझे, गहे लकुटी हाथ।
कौन की गैयाँ चरावत, आत को धौं साथ।
कौन गोपी कूल-जमुना, रहत गहि-गहि घाट।
दान हठ कै लेत कापैं, रोकि किनकी बाट॥
कौन के माखन चुरावत, जात उठिकै प्रात।
इतौ बूझत माइ जसुमति, परी मुरछित गात॥
सूरदास किसोर मिलवहु, मेटि हिय की तात।।४८८।

—(०)—

गोपी, सुनहु हरि-संदेस।
गए संग अक्रूर मधुबन, हत्यौ कंस नरेस।
रजक मार्यौ बसन पहिरे, धनुष तोर्यौ जाइ।
कुबलया चानूर मुष्टिक, दिए धरनि गिराइ।
मातु पितु के बंद छोरे बासुदेव कुमार।
राज दीन्हौ उग्रसेनहिं चौंर निज कर ढार।
कह्यौ तुमकौं ब्रह्म ध्यावन छाँड़ि बिषय बिकार।
सूर पाती दई लिखि मोहिं पढ़ौ गोप-कुमारि ।।१४८३।।

पाती मधुबन ही तैं आई।
सुंदर स्याम आपु लिखि पठई, आइ सुनौ री माई।
अपने अपने गृह तैं दौरीं लै पाती उर लाई।
नैननि निरखि निमेष न खंडित प्रेम-तृषा न बुझाई।
कहा करौं सूनौ यह गोकुल हरि, बिनु कछु न सुहाई।
सूरदास ब्रज कौन चूक तैं स्याम सुरति बिसराई ।।१४८४।।

निरखति अंक स्याम सुंदर के बार-बार लावति लै छाती।
लोचन जल कागद मसि मिलिकै ह्वै गइ स्याम, स्याम जू की पाती।
गोकुल बसत नंदनंदन के, कबहुँ बयारि न लागी ताती।
अरु हम उतौ कहा करैं ऊधौ, जब सुनि बेनु-नाद सँग जाती।
उनकैं लाड़ बदति नहिं काहूँ निसि दिन रसिक-रास-रस राती।
प्रान-नाथ तुम कबहिं मिलौगे, सूरदास-प्रभु बाल-सँघाती ।।१४८५।।

पाती मधुबन तैं आई।
ऊधौ हरि के परम सनेही ताकैं हाथ पठाई।
कोउ पढ़ति, कोउ धरति नैन पर काहूँ हृदै लगाई।
कोउ पूछत फिरि फिरि ऊधौ कौं, आपुन लिखी कन्हाई?
बहुरौ दइ फेरि ऊधौ कौं, तब उन बाँचि सुनाई।
मन मैं ध्यान हमारौ राख्यौ सूर सदा सुखदाई ।।१४८६।।

लिखि आई ब्रजनाथ की छाप।
ऊधौ बाँधि फिरत मोम पर, बाँचत आवै ताप।
उलटी रीति नंदनंदन की घर-घर भयौ सँताप।
कहियो आइ जोग आराधैं, अविगत अकथ अमाप।
हरि आगैं कुबिजा अधिकारिनि, को जीवै इहिं दाप।
सूर सँदेस सुनावन लागे कहौ कौन यह पाप ।।१४९७।

कोउ ब्रज बाँचत नाहिन पाती।
कत लिखि-लिखि पठवत नँद-नंदन कठिन बिरह की काँती।
नैन सजल कागद अति कोमल कर अँगुरी अति ताती।
परसैं जरैं बिलोकैं भीजैं दुहूँ भाँति दुख छाती।
को बाँचै ये अंक सूर प्रभु कठिन मदन-सर घाती।
सब सुख लै गए स्याम मनोहर हमकौं दुख दै थाती ।।१४९८।

ऊधौ कहा करैं लै पाती।
जौ लौं मदनगुपाल न देखैं बिरह जरावत छाती।
निमिष निमिष मोहि बिसरत नाहीं, सरद सुहाई राती।
पीर हमारी जानत नाहीं तुम हौ स्याम-सँघाती।
यह पाती लै जाहु मधुपुरी जहँ वै बसैं सुजाती।
मन जु हमारे उहाँ लै गए, काम कठिन सर घाती।
सूरदास प्रभु कहा चहत हैं, कोटिक बात सुहाती।
एक बेर मुख बहुरि दिखावहु रहैं चरन-रज-राती ।।१४९९।

हरि की ब्रज तन दीठि रुखौंही।
याही तैं लिखि पठवत आखर बातैं प्रेम उनौंही।
नागर कहा करै हमसौं तब, लिखि लिखि बात सलौंही।
कै अब मगन करी कुबिजा पर या रँग चरन हँसौंही।
कै पुनाइ लीन्हे हम पर तैं, सरम मीड़ मुसकौंही।
कै अब दासि भई मन-बच-क्रम चरननि चपति जुरौंही॥

जहाँ रही तहँ कौति बरष लगि, लियौ स्याम सुख लौही।
पै कुबिजा बस हम जु जोग बस, सूर आपनी गौ ही ॥१२००॥

आए नंद-नंदन के भेष।
गोकुल माँझ जोग बिस्तारयौ, भली तुम्हारी टेव॥
जब बृन्दावन रास रच्यौ हरि तबहिं कहा तुम देव।
अब यह ज्ञान सिखावन आए भसम अधारी भेव।
अबलनि कौ तुम सी ब्रत ठान्यौ जो जोगिनि कौ जोग।
सूरदास यह सुनत दुसह दुख आतुर बिरह बियोग ॥१२०१॥

इहिं अंतर मधुकर इक आयौ।
निज स्वभाव अनुसार निकट ह्वै सुंदर सब्द सुनायौ।
पूछन लागी ताहिं गोपिका, कुबिजा तोहिं पठायौ।
कीधौं सूर स्याम सुंदर कौं हमैं सँदेसौ लायौ ॥१२०२॥

(मधुप, तुम) कहौ कहाँ तैं आए हौ।
जानति हौं अनुमान आपनें तुम जदुनाथ पठाए हौ।
वैसेइ बसन,बरन तन सुंदर, वेइ भूषन सजि ल्याए हौ।
लै सरबसु सँग स्याम सिधारे, अब का पर पहिराए हौ।
अहो मधुप एकै मन सबकौ, सु तौ वहाँ लै छाए हौ।
अब यह कौन सयान बहुरि ब्रज ता कारन उठि धाए हौ।
मधुबन की मानिनी मनोहर तहीं जात जहँ भाए हौ।
सूर जहाँ लौं स्याम गात हैं, जानि भले करि पाए हौ ॥१२०३

सुनौ गोपी, हरि कौ संदेस।
करि समाधि अंतर-गति ध्यावहु, यह उनकौ उपदेस।
वै अबिगति अबिनासी पूरन, सब घट रहे समाइ।
तत्व ज्ञान बिनु मुक्ति नहीं है, बेद पुराननि गाइ।
सगुन रूप तजि निरगुन ध्यावहु, इक चित इक मन लाइ।
यह उपाइ करि बिरह तरौ तुम, मिलैं ब्रह्म तब आइ।

दुसह सँदेस सुनत माधौ कौ, गोपीजन बिलखानी ।
सूर बिरह की कौन चलावै बूड़ति मनु बिनु पानी ।।१५०४।

मधुकर, हमहीं क्यौं समुझावत ।
बारंबार ज्ञान गीता कौ, अबलनि आगैं गावत ।।
नँद-नंदन बिनु, कपट कथा कत कहि कहि रुचि उपजावत ।
एक चंदन अरु अंग सुधा-रस, कहि कैसैं सचु पावत ।।
देखि बिचारि तुहीं जिय अपनैं नागर है जु कहावत ।
सब सुमननि फिरि-फिरि जु निरस करि काहैं कमल बँधावत ।।
चरन कमल कर-नयन-बदन-छबि, कहैं कमल मन भावत ।
सूरदास मन अलि अनुरागी, कहि कैसैं सुख पावत ।।१५०५।

रहे रे मधुकर मधु मतवारे ।
कौन काज या निरगुन सौं चिर जीवहु कान्ह हमारे ।।
लोटत पीत पराग कीच मैं नीच न अंग सँम्हारे ।
बारंबार सरक मदिरा की, अपरस रटत उघारे ।।
तुम जानत हौ वैसी ग्वारिनि, जैसे कुसुम तिहारे ।
घरी पहर सबहिनि बिरमावत, जैसे आवत कारे ।।
सुंदर बदन कमल-दल लोचन जसुमति नंद-दुलारे ।
तन-मन सूर अरपि रहीं स्यामहिं, कापै लेहिं उधारे ।।१५०६।

मधुकर काके मीत भए ।
द्यौस चारि करि प्रीति-सगाई रस लै अनत गए ।।
डहकत फिरत आपने स्वारथ, पाखँड काम ठए ।
चाँड़ सरें पहिचानत नाहीं प्रीतम करत नए ।।
मूड़ कपाट मेलि बीराए, मन हरि हरि लै गए ।
सूरदास प्रभु पूति धर्म ढिग, कुल के बीज बए ।।१५०७।

मधुकर, हम न होहिं वे बेलि ।
जिन भजि तजि तुम फिरत और रँग, करत कुसुम-रस केलि ।।

धारे तैं धर बारि बही हैं, अब पीवौ पिय पानि।
बिनु पिय परस प्रात उठि फूलत, होति सदा हित हानि॥
ये बेली बिरही बृंदाबन, उरझीं स्याम तमाल।
प्रेम-पुहुप-रस-बास हमारे, बिलसत मधुप गोपाल॥
जोग समीर धीर नहिं डोलति, रूप डार दृढ़ लागीं।
सूर पराग न तजति हिये तें श्री गुपाल अनुरागी॥१५०८॥

मधुकर कहाँ पढ़ी यह नीति।
लोक बेद स्रुति ग्रंथ रहित यह कथा कहत बिपरीति॥
जनमभूमि ब्रज, सखा राधिका केहिं अपराध तजी।
अति कुलीन गुन रूप अमित सुख दासी जाइ भजी॥
जोग समाधि बेद-मुनि मारग क्यौं समुझैं जु गँवारि।
जौ पै गुन अतीत ब्यापक हैं, तौ हम कहाँ न्यारि॥
रहि अलि, ढीठ कपट स्वारथ हित, तजि बहु बचन बिसेषि।
मन-क्रम-बचन बसति इहिं नातें, सूर स्याम तन देखि॥१५०९॥

जोग माई मधुबन तें आयौ।
सखी सिमिटि सब सुनौ सयानी, हित करि कान्ह पठायौ॥
जो मोहन बिछुरे तें गोकुल इते दिवस दुख पायौ।
सो इन कमलनैन करुनामय हिरदै माँझ बतायौ॥
जाकौं जोगी जतन करत हैं, नैकहुँ ध्यान न आयौ।
सो इन परम उदार मधुप ब्रज-बीथिनि माँझ पढ़ायौ॥
अति कृपालु आतुर अबलनि कौं, ब्यापक अगह गहायौ।
समुझि सूर सुख होत स्रवन सुनि नेति जु निगमनि गायौ॥१५१०

परी पुकार द्वार गृह-गृह तें, सुनी सखी इक जोगी आयौ।
पवन सधावन भवन छँड़ावन रवन रसाल गोपाल पठायौ॥
आसन बाँधि परम ऊरध चित पलक न तिमहिं कहा हित ल्यायौ।
अलक पेलि, कामिनि ब्रजबाला, जोग अगिनि दहिबे कौं धायौ॥

भव-भय हरन, असुर मारन हित कारन कान्ह मधुपुरी आयौ ।
जादव मैं ब्रज एकौ नाहीं, काहैं बकदी बस बिसरायौ ॥
सुफलक सु स्याम थान मैं पैठौ, भक्तनि प्रति अधिकार जनायौ ।
सूर बिसारी प्रीति साँवरे भली चतुरता जगत हँसायौ ।।१५११।

देन आए ऊधौ मत नीकौ ।
आवहु री, मिलि सुनहु सयानी, लेहु सुजस कौ टीकौ ॥
तजन कहत अंबर आभूषन, गेह नेह सुत ही कौ ।
अंग भसम करि सीस जटा धरि, सिखवत निरगुन फीकौ ॥
मेरे जान यहै जुवतिनि कौ देत फिरत दुख पी कौ ।
ता सराप तैं भयौ स्याम तन, तउ न गहत डर जी कौ ॥
जाकी प्रकृति परी जिय जैसी, सोच न भली बुरी कौ ।
जैसे सूर ब्याल रस चाखै, मुख नहिं होत अमी कौ ।।१५१२।

ऊधौ, स्याम-सखा तुम साँचे ।
कै करि लियौ स्वाँग बीचहि तैं वैसहिं लागत काँचे ॥
जैसी कही हमहिं आवत ही, औरनि कहि पछिताते ।
अपनौ पति तजि और बतावत, महिमानी कछु खाते ॥
तुरत गमन कीजै मधुबन कौं यहाँ कहाँ यह लाए ।
सूर सुनत गोपिनि की बानी ऊधौ सीस नवाए ।।१५१३।

ऊधौ, बेगि मधुबन जाहु ।
जोग लेहु सँभारि अपनौ बेचियै जहँ लाहु ॥
हम बिरहिनी नारि, हरि बिनु कौन करै निबाहु ।
तहाँ दीजै मूर पूरै नफौ तुम कछु खाहु ॥
जौ नहीं ब्रज मैं बिकानौ, नगर नारि बिसाहु ।
सूर वै सब सुनत लैहैं, जिय कहा पछिताहु ।।१५१४।

ऊधौ और कछू कहिबे कौं ?
मन मानै सोऊ कहि डारौ, हम सब सुनि सहिबे कौं ।

यह उपदेस आजु लौं ऐसौ कानन सुन्यौ न है ऊधौ।
नीरस कटुक लगत अति दारुन, चाहत हम पर मेल्यौ॥
निसि-दिन बसत नैकु नहिं निकसत, हृदय मनोहर मैन।
याही यहाँ ठौर नाहीं है, लै राखौ जहँ चैन॥
ब्रजबासी गोपाल उपासी, हमसौं बातैं छाँड़ि।
सूर जोग धन राखि मधुपुरी, कुबिजा के घर गाड़ि॥१२१४॥

ऊधौ, कही कहन जौ पारौ।
नाहीं बसि, कछु दोष तिहारौ सकुचि साथ जनि मारौ॥
नाहीं ब्रज बसि नंदलाल की बाल-बिनोद निहारौ।
नाहीं रास-रसिक-रस चाख्यौ तौऊ लई सो धारयौ॥
जौ नहिं गयौ सूर प्रीतम सँग प्रान त्यागि तन न्यारौ।
तौ अब बहुत देखिबे, सुनिबे कहा करम सौं चारौ॥१२१५॥

ऊधौ आजु तुमहिं हम जाने।
स्याम तुमहिं ह्याँ कौ नहिं पठयौ, तुम ही बीच भुलाने॥
ब्रजनारिनि सौं जोग कहत हौ, बात कहत न लजाने।
बड़े लोग न बिबेक तुम्हारे, ऐसे भए अयाने॥
हमसौं कही लई हम सहि कै, जिय गुनि लेहु सयाने।
कहँ अबला कहँ दसा दिगंबर, मष्ट करौ पहिचाने॥
साँच कहौ तुमकौं अपनी सौं, बूझति बात निदाने।
सूर स्याम जब तुमहिं पठायौ, तब नैंकहुँ मुसकाने॥१२१६॥

कहति कहा ऊधौ सौं बौरी।
जाकौ सुनति, रहे हरि के ढिग, स्याम-सखा यह सो री।
कहा कहति री, मैं पत्याति नहिं, सुनी तुहीं भरमावति॥
हमकौं जोग सिखावन आए, यह तेरैं मन आवति।
करनी भली भलेई जानै, कुटिल कपट की खानि॥
हरि कौ सखा नहीं री माई, यह मन निहचै जानि।

कहाँ रास-रस कहाँ जोग भरि, इतने अंतर माधव।
सूर सबै तुम भई बावरी, याकी पति कह राखति ॥४५१८॥

ऐसेई जन दूत कहावत।
मोको एक अचंभौ आवत, यामैं ये कहा पावत।
बचन कठोर कहत कहि दाहत, अपनी महत गँवावत।
ऐसी प्रकृति परी काहू की जुवतिनि ज्ञान बतावत।
आपुन निलज रहत नख सिख लौं, एते पर पुनि गावत।
सूर करत परसंसा अपनी, हारेहुँ जीति कहावत ॥४५१९॥

प्रकृति जो जाकैं अंग परी।
स्वान पूँछ कोउ कोटिक लागै, सूधी कहुँ न करी।
जैसैं काग भच्छ नहिं छाँड़ै जनमत जौन घरी।
धोए रंग जात नहिं कैसेहुँ ज्यौं कारी कमरी।
ज्यौं अहि डसत उदर नहिं पूरत ऐसी धरनि धरी।
सूर होइ सो होइ सोच नहिं, तैसेइ एऊ री ॥४५२०॥

ऊधौ, होउ आगै तैं न्यारे।
तुम देखत तन अधिक जरत है, अरु नैननि के तारे।
अपनौ जोग सैंति किन राखहु, इहाँ देत कत डारे।
सी को ला अपने मुख खैहै, मीठे तजि, फल खारे।
हम गिरिधर के नाम गुननि बस, और काहि उर धारे।
सूरदास हम सबै एकै मत, तुम सब खोटे कारे ॥४५२१॥

काहु काहु आगे तैं ऊधौ [illegible] तो पति राखति [illegible] मेरी।
काहे कौं अब रोष दिखावत, देखत आँखि बरति है मेरी।
तुम जु कहत, संतत हैं गोबिंद, सुमिरत है कुबिजा बन घेरी।
दोउ मिले जैसेई तैसे, वै अहीर, वह कंस की चेरी।
तुम सारिखे बसीठ पठाए, कहिए कहा बुद्धि उन केरी।
सूर-स्याम वह सुधि बिसराई, देत फिरत ग्वालनि सँग टेरी॥

समुझि न परति तिहारी ऊधौ।
ज्यौं त्रिदोष उपजैं जक लागत, बोलत बचन न सूधौ।
आपुन कौ उपचार करौ अति, तब औरनि सिख देहु।
बड़ौ रोग उपज्यौ है तुमकौं, भवन सबारैं लेहु।
हौं भेषज नाना भाँतिनि के, अरु मधु-रिपु से बैद।
हम कातर डरपतिं अपनैं सिर, यह कलंक है खेद।
साँची बात छाँड़ि अलि, तेरी, झूठी को अब सुनिहै।
सूरदास-मुक्ताफल भोगी, हंस ज्वारि क्यौं चुनिहै ॥१४९३॥

ऊधौ, हम आजु भई बड़ भागी।
जिन अँखियनि तुम स्याम बिलोके, ते अँखियाँ हम लागीं।
जैसैं सुमन बास लै आवत, पवन मधुप अनुरागी।
अति आनंद होत है तैसैं, अंग-अंग सुख रागी।
ज्यौं दरपन मैं दरस देखियत, दृष्टि परम रुचि लागी।
तैसैं सूर मिले हरि हमकौं बिरह बिथा तन-त्यागी ॥१४९४

बिलग जनि मानौ हमरी बात।
डरपतिं बचन कठोर कहत अलि मति बिनु पति उठि जात।
जो कोउ कहै करै कछु अपनैं, फिरि पाछैं पछितात।
जो प्रसाद पावत तुम ऊधौ, कृष्न नाम लै खात॥
मन जु तिहारौ हरि चरननि तर, अचल रहत दिन-रात।
सूर स्याम तैं जोग अधिक है, कत कहि आवै बात ॥१४९५॥

(अलि, हौं) कैसैं कहौं, हरि के रूप-रसहि।
अपने तन मै भेद बहुत बिधि रसना न जानै नैन-दसहि।
जिन देखे ते आहि बचन बिनु, जिनहिं बचन दरसन न तिसहि।
बिनु बानी ये उमँगि प्रेम जल, सुमिरि-सुमिरि वा रूप जसहि।
बार-बार पछितात यहै कहि, कहा करौं जो बिधि न बसहि।
सूर सकल अंगनि की यह गति, क्यौं समुझावैं छपद पसुहि॥

हम तौ सब बातनि सचु पायौ।
गोद खिलाइ, पियाइ देह-पय, पुनि पालनैं झुलायौ।
देखति रही फनिग की मनि ज्यौं, गुरुजन ज्यौं न भुलायौ।
अब महिं समुझति कौन पाप तैं बिधना सौ उलटायौ।
बिनु देखैं पल-पल महिं छन-छन यौ ही चित ही भायौ।
अबहिं कठोर भए ब्रजपति सुत, रोवत मुँह न धुवायौ।
तब हम दूध दही के कारन, घर-घर बहुत खिझायौ।
सो अब सूर प्रगट ही लाग्यौ जोग-ज्ञान पठयौ ॥४२४७॥

मधुकर, कहिऐ काहि सुनाइ।
हरि बिछुरत हम जिते सहे दुख जिते बिरह के घाइ।
बरु माधौ मधुबन ही रहते कत जसुदा कैं आए।
कत प्रभु गोप-भेष ब्रज धरि कै, कत ये सुख उपजाए।
कत गिरि धरयौ, इंद्र मद मेट्यौ कत बन रास रचाए।
अब कहा निठुर भए अबलनि कौं लिखि-लिखि जोग पठाए।
तुम परवीन सबै जानत हौ, तातैं यह कहि आई।
अपनी या काछे सुनि सूरज पिता, जननि बिसराई ॥४२४८॥

कहौं तौ दुख आपनौ सुनाऊँ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की सामग्री कहँ पाऊँ।
ऊधौ कहँ सुगी अरु सेली, कैसी भसम चढ़ाऊँ।
सोरह सहस मुद्री चाहै, मृगछाला कहँ पाऊँ।
रूप न रेख बरन बपु जाकै, कैसे ध्यान धराऊँ।
सूरदास स्वामी बिनु गुन तैं, कहौ, काके गुन गाऊँ ॥४२४९॥

जानि करौ बावरी जनि कोउ।
तत्त मथे जैसी है जैसी, पारस परसै सोउ।
मेरौ बचन सत्य करि मानौ, छाँड़ौ सबकौ मोहु।
तौ लगि सब पानी की पुपरी, जौ लगि अस्थित दोउ।

अरे मधुप ! बातैं ये ऐसी, क्यौं कहि आवति तोहि ।
सूर सुबस्ती छाँड़ि परम सुख हमैं बतावत जोह ॥१२१०॥

तुम जो कहत सँदेसौ आनि ।
कहा करैं वा नंदनंदन सौं, होत नहीं हित हानि ।
जुगुति मुकुति किहिं काज हमारैं, जदपि महा सुख खानि ।
सनी सनेह स्यामसुंदर सौं, हिलि-मिलि कै मन मानि ।
सोहत लोह परसि पारस कौं ज्यौं सुबरन पर बानि ।
पुनि वह कहा चाह चुंबक सौं, लटपटाइ लपटानि ।
रूप रहित निरगुन नीरस नित, निगमहु परत न जानि ।
सूरजदास कौन बिधि तासौं अब कीजै पहिचानि ॥१२११॥

ऊधौ हम हैं हरि की दासी ।
काहे कौं कटु बचन कहत हौ, करत आपनी हाँसी ।
हमरे गुनहिं गाँठि किन बाँधौ, हम कहँ कियौ पिगार ।
जैसी तुम कीन्ही सो सबही, जानत है संसार ।
जो कुछ भली-बुरी तुम कहिहौ, सो सब हम सहि लैहैं ।
आपन कियौ आपही भुगतहिं, दोष न काहू दैहैं ।
तुम तौ बड़े, बड़े कुल जनमे, अरु सबके सरदार ।
यह दुख भयौ सूर के प्रभु सौं, कहत लगावन खार ॥१२१२॥

ऊधौ, हरि गुन, हम चकडोर ।
गुन सौं ज्यौं भावै त्यौं फेरौ, यहै बात कौ ओर ।
पैंड़-पैंड़ चलियै तौ चलियै, ऊबट रपटैं पाइँ ।
चकडोरी की रीति यहै फिरि, गुन ही सौं लपटाइ ।
सूर सहज गुन ग्रंथि हमारैं दई स्याम उर माहिं ।
हरि के हाथ परे तौ छूटै, और जतन कछु नाहिं ॥१२१३॥

मधुकर, छाँड़ि अटपटी बातैं ।
फिरि फिरि बार-बार सोइ सिखवत, हम दुख पावतिं जातैं ।

हम बिन देहिं असीस प्रात उठि, बार लसी मत न्हावैं।
तुम निसि दिन उर अंतर सोचत, ब्रज-जुवतिनि की बातैं॥
पुनि-पुनि तुमहिं कहत कत आवैं, कछुक सकुच है नातैं।
सूरदास वै रँगी स्याम रँग, फिरि न चढ़ै रँग घातैं॥१२३४।

उलटी रीति तिहारी ऊधौ, सुनै सो ऐसी को है।
अलप बयस अबला अहीरि, सठ तिनहिं जोग कत सोहै॥
चूची खुभी, आँधरी काजर नकटी पहिरै बेसरि।
मुंडली पटिया पारौ चाहै, कोढ़ी लावै केसरि॥
बहिरी पति सौं मतौ करै सौ तैसोइ उत्तर पावै।
सो गति होइ सबै ताकी जो, ग्वारिनि जोग सिखावै॥
सिखई कहत स्याम की बतियाँ तुमकौं नाहीं दोष।
राज-काज तुम तैं न सरैगी काया अपनी पोष॥
जाते भूलि सबै मारग मैं, इहाँ आनि का कहते।
भली भई सुधि रही सूर नतु मोह धार मैं बहते॥१२३५।

मधुकर, हम अजान मति भोरी।
यह मत आइ यहाँ उपदेसौ नागरि नवल किसोरी॥
कंचन को मृग कौनैं देख्यौ, किन बाँध्यौ गहि डोरी।
कहि धौं मधुप बारि तैं माखन, कौनैं भरी कमोरी॥
बिनुहीं भीत चित्र किन कीन्हौ किन नभ बाँध्यौ झोरी।
कहौ कौन पै कढ़त कनूका जिन हठि भुसी पछोरी॥
निरगुन ग्यान तुम्हारौ ऊधौ हम अबला मति थोरी।
चाहति सूर स्याम-मुख चंदहिं, अँखियाँ तृषित चकोरी॥१२३६

मधुकर ब्रज कौ बसिबौ नीकौ॥
बछरा धेनु चरावत बन मैं, कान्ह सखनि कौ टीकौ॥
बृंदावन मैं होत कुलाहल, गरजत सुर मुरली कौ।
ठाढ़ी आइ कदम की छहियाँ माँगत दान मही कौ॥

उपजत प्रेम प्रीति अँगरगत, गावत अस हरि पो की।
सूरदास प्रभु इतनीइ सेवी, मान हमारे जी की ।१२३७

अँखियाँ हरि-दरसन की भूखी।
कैसें रहति रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखी ॥
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनी नहिं झूखी।
अब यह जोग-सँदेसौ सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखी ॥
बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिवत पतूखी।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखी ।१२३८

नैननि कहैं रूप जौ देखौं।
तौ ऊधौ यह जीवन जग कौ, साँच सुफल करि लेखौं ॥
लोचन चपल चारु खंजन मन-रंजन हृदय हमारे।
सुरँग कमल-मृग-मीन मनोहर, सेत, अरुन अरु कारे ॥
रत्नजटित कुंडल स्रवननि वर, परति कपोलनि झाईं।
मनु दिनकर प्रतिबिंब मुकुर महँ, दूँढ़त यह छबि पाई ॥
मुरली अधर विकट भौंहैं करि, ठाढ़ौ होत त्रिभंग।
मुक्त-माल उर-नील-सिखर तैं धँसी धरनि जनु गंग ॥
और भेष कौ कहै बरनि सब अँग-अँग केसरि खौर।
देखें बने, कहत रसना सौं, सूर बिलोकत्त और ।१२३९।

नैननि नंद-नंदन-ध्यान।
तहाँ यह उपदेस दीजै जहाँ निरगुन ग्यान ॥
पानि-पल्लव-रेख गनि गुन, अवधि बिबिध बिधान।
इते पर इन कटुक बचननि, क्यौं रहैं तन प्रान ॥
चंद कोटि प्रकास मुख, अवतंस कोटिक भान।
कोटि मन्मथ वारि छबि पर, निरखि दीजत दान ॥
भृकुटि कोटि कोदंड रुचि, अवलोकनी संधान।
कोटि वारिज बंक नैन कटाच्छ कोटिक बान ॥

मनि कंठ हार, उदार उर, अतिसय बन्यौ निरमान।
संख, चक्र, गदा धरे कर पद्म सुधा निधान॥
स्याम तनु पट पीत की छबि करै कौन बखान।
मनहुँ नृत्यत नील घन मैं, तड़ित दैती भान॥
रास-रसिक गुपाल मिलि, मधु अधर करती पान।
सूर ऐसे स्याम बिनु को इहाँ रच्छक आन॥१५४०॥

जब तैं सुंदर बदन निहारयौ।
ता दिन तैं मधुकर, मन अटक्यौ, बहुत करी निकरै न निकारयौ॥
मातु पिता पति, बंधु,सुजन नहिं, तिनहुँ कौ कहिबौ सिर धारयौ।
रही न लोक-लाज मुख निरखत, दुसह क्रोध फीकौ करि डारयौ॥
हौंनी होइ सु होइ कर्मबस, अब जी की सब सोच निवारयौ।
दासी भई जु सूरदास-प्रभु, भली पोच अपनी न बिचारयौ॥१५४१॥

ऊधौ, क्यौं राखौं ये नैन।
सुमिरि-सुमिरि गुन अधिक तपत हैं, सुनत तुम्हारे बैन।
ये जु मनोहर बदन इंदु के, सारंग कुमुद चकोर।
परम तृषारत सजल स्याम-घन-तन के चातक मोर॥
मधुप-मराल सु पद-पंकज के, गति-बिलास-जल मीन।
चक्रवाक दुति-मनि दिनकर के, मृग मुरली आधीन॥
सकल लोक सूनी लागत है, बिनु देखे वह रूप।
सूरदास प्रभु नंद-नँदन के, नख-सिख अंग अनूप॥१५४२॥

और सकल अंगनि तैं ऊधौ, अँखियाँ अधिक दुखारी।
अतिहिं पिरातिं, सिरातिं न कबहूँ, बहुत जतन करि हारी॥
मग जोवत पलकौ नहिं लावतिं बिरह बिकल भईं भारी।
भरि गइ बिरह बयारि दरस बिनु, निसि दिन रहतिं उघारी॥
ते अलि अब ये ज्ञान-सलाकैं, क्यौं सहि सकतिं तिहारी।
सूर सु अंजन आँजि रूप-रस, आरति हरहु हमारी॥१५४३॥

बिनु पावस पावस करि राखी देखत ही बिद्मान।
अब धौं कहा कियौ चाहत हौ, छाँड़ौ निरगुन ज्ञान॥
तुम हौ सखा स्यामसुंदर के, जानत सकल सुभाइ।
जैसैं मिलैं सूर के स्वामी सोई करहु उपाइ॥१४४७।

सखी री, मथुरा मैं द्वै हंस।
वे अक्रूर और ये ऊधौ जानत नीकैं गंस॥
ये दोउ नीर गँभीर पैरिया इनहिं बचायौ कंस।
इनकै कुल ऐसी चलि आई, सदा उजागर बंस॥
अब इन कृपा करी ब्रज आए, जानि आपनौ अंस।
सूर सुज्ञान सुनावत अबलनि सुनत होत मति भ्रंस॥१४४८।

मनौ दोउ एकहिं मते भए।
ऊधौ अरु अक्रूर बधिक मति, ब्रज आखेट ठए।
बचन फँद बाँधे मग-माची बन रथ आइ छए।
इनहीं हेरि मृगी-गोपी सब सायक-ज्ञान हए।
जोग-अगिनि की दवा देखियत, चहुँदिसि लाइ दए
अब धौं कहा कियौ चाहत हैं करि उपचार नए।
परमारथी परम कैतव चित बिरहिनि प्रेम रए।
कैसैं जियैं सूर के प्रभु बिनु, चातक मेघ गए॥१४४९।

सब खोटे मधुबन के लोग।
जिनके संग स्याम सुंदर सखि सीखे हैं अपजोग।
आए हैं ब्रज के हित ऊधौ, जुवतिनि कौं लै जोग।
आसन, ध्यान, नैन मूँदे सखि, कैसैं कटै बियोग।
हम अहीरि इतनी का जानैं, कुबिजा सौं संजोग।
सूर सुबैद कहा लै कीजै, कहै न जानै रोग॥१४५०।

मधुबन लोगनि कौ पतियाइ।
मुख औरै, अंतरगति औरै, पतियाँ लिखि पठवत जु बनाइ।

ज्यौं कोइल-सुत काग जियावै, भाव-भगति भोजन जु खवाइ।
कुहुकि-कुहुकि आऐं बसंत रितु, अंत मिलै अपने कुल जाइ।
ज्यौं मधुकर अंबुज रस चाख्यौ, बहुरि न बूझै बातैं आइ।
सूर जहाँ लगि स्याम गात हैं, तिनसौं कीजै कहा सगाइ ।।१५५१।।

मधुबन सब कृतज्ञ धरमीले।
अति उदार पर-हित डोलत हैं, बोलत बचन सुसीले।
प्रथम आइ गोकुल सुफलक-सुत लै मधुपुरिहिं सिधारे।
उहाँ कंस, इहाँ हम दीननि कौं, दूनौ काज सँवारे।।
हरि कौ सिखै, सिखावन हमकौं, अब ऊधौ पग धारे।
ह्वाँ दासी-रति की कीरति कै, इहाँ जोग बिस्तारे।
अब तिहिं बिरह-समुद्र, सबै हम बूड़ी चहुँ तन ही।
लीला सगुन नाव ही सुनु अलि, तिहिं अवलंबन रही।
अब निरगुनहिं गहैं जुबतीजन, पारहिं कहा गई।
सूर अक्रूर छपद के मन मैं नाहिंन त्रास दई ।।१५५२।।

ऊधौ, ऐसौ काम न कीजै।
एकहिं रंग रँगे तुम दोऊ, बीर सीख कहि दीजै।
फिरि फिरि दुख अवगाहि हमारे, हम सब करी अचेत।
जिन पट पर गीता भारत हौ आप मूड़ कै सेत।
आपुन कपट, कपट तुम जान्यौ, कहा भलाई जानै।
फोरत बाँस काटि बाँसनि सौं बार-बार अकुलानैं।।
छाँड़ि देत कमलिनि सौं अपनी, तू चित अनतहिं जाइ।
लंपट ढीठ मधुप अपराधी, कैसैं मन पतिआइ।
यहै जु बात कहति हैं तुम सौं, हरि ब्रज फिरि मति आवै।
एक बार समुझावहु सूरज, अपनी नाम सिरावैं ।।१५५३।।

याकी सीख सुनै ब्रज को रे।
जाकी रहनि-कहनि अनमिल अलि कहत समुझियत थोरे।

आपुन पद-मकरंद सुधा-रस हृदय रहत नित बोरे।
हमसौं कहत बिरह-स्रम जैहै, गगन कूप खनि खोरैं।
धान कौ गाँव पयार तैं जानौ ज्ञान बिषय रस भोरे।
सूर सु बहुत कहैं न रहै रस, गूलर कौ फल फोरे ॥१५५४॥

ऊधौ जोग सिखावन आए।
सृंगी भस्म अधारी मुद्रा दै ब्रजनाथ पठाए।
जो पै जोग लिख्यौ गोपिनि कौं, कत रस-रास खिलाए।
तबहीं क्यौं न ज्ञान उपदेस्यौ, अधर सुधा-रस प्याए।
मुरली सब्द सुनत बन गवनीं सुत, पति गृह बिसराए।
सूरदास सँग छाँड़ि स्याम कौ हमहिं भए पछिताए ॥१५५५॥

आए जोग सिखावन पाँड़े।
परमारथी पुराननि लादे ज्यौं बनजारे टाँड़े।
हमरे गति-पति कमल-नयन की जोग सिखैं ते राँड़े।
कहौ मधुप कैसे समाहिंगे, एक म्यान दो खाँड़े।
कहु षटपद, कैसैं खैयतु है, हाथिनि कैं सँग गाँड़े।
काकी भूख गई बयारि भखि बिना दूध घृत माँड़े।
काहे कौ मथका लै मिलवत कौन चोर तुम डाँड़े।
सूरदास तीनौं नहिं उपजत धनियाँ धान, कुम्हाँड़े ॥१५५६॥

ज्ञान बिना कहुँवै सुख नाहीं।
घट घट ब्यापक दारु अगिनि ज्यौं सदा बसै उर माहीं।
निरगुन छाँड़ि सगुन कौं दौरति, सुधौ कहौ किहिं पाहीं।
तत्व भजौ जो निकट न छूटै, ज्यौं तनु तैं परछाहीं।
तिहिं तैं कहौ कौन सुख पायौ जिहिं अबलौं अवगाहीं।
सूरदास ऐसें करि लागत ज्यौं कृषि कीन्हे पाहीं ॥१५५७॥

ऊधौ, कहौ सु फेरि न कहिऐ।
जौ तुम हमैं जिवायौ चाहत अनबोले ह्वै रहिऐ।

प्रान हमारे घात होत हैं, तुम्हरे भाऐं हाँसी।
या जीवन तैं मरन भली है, करवत लैहैं कासी।
पूरब प्रीति सँभारि हमारी, तुमकौं कहन पठायौ।
हम तौ जरि-बरि भस्म भईं, तुम आनि मसान जगायौ।
कै हरि हमकौं आनि मिलावहु, कै लै चलियै साथै।
सूर स्याम बिनु, प्रान तजति हैं, दोष तुम्हारे माथैं ॥१४४८॥

ऊधौ, तुम अपनी जतन करौ।
हित की कहति कुहित की लागति, कत बेकाज ररौ।
जाइ करौ उपचार आपनौ, हम जु कहति हैं जी की।
कछू कहत कछुवै कहि आवत, धुनि सुनियत नहिं नीकी।
साधु होइ तिहिं उत्तर दीजै तुमसौं मानी हारि।
याहै जिय जानि नंद-नंदन तुम इहाँ पठाए धारि।
मथुरा गहौ बेगि हम पाइनि, उपज्यौ है तन रोग।
सूर सु बैद बेगि टोहौ किन भए मरन के जोग ॥१४४९॥

घर ही के बाढ़े रावरे।
नाहिन मीत-वियोग बस परे, अनब्यौहै अलि बावरे।
बरु मरि जाइ चरै नहिं तिनुका, सिंह कौ यहै स्वभाव रे।
स्रवन सुधा मुरली के पोषे जोग जहर न खवाव रे।
ऊधौ हमहिं सीख कह दैहौ हरि बिनु अनत न ठाँव रे।
सूरजदास कहा लै कीजै, थाही नदिया नाव रे ॥१४५०॥

तुम अलि कासी कहत बनाइ।
बिनु समुझैं हम फिरि-फिरि बूझतिं बारक बहुरौ गाइ।
कहु, किहिं गमन कियौ स्यंदन चढ़ि सुफलक-सुत के संग।
किहिं रिपु रजक किए नाना पट पहिरे अपने अंग।
किहिं हति चाप, निदरि गज निज पक्ष, किहिं मल्लनि मथि जाने।
उग्रसेन बसुदेव देवकी किहिंऽब निगड़ तैं आने।

जाकी करत प्रसंसा निसि दिन, कीन्हैं धोप पठाए।
जिहिं मातुल हति कियौ जगत जस, कौन मधुपुरी छाए॥
माथे मोर-मुकुट, उर गुंजा, मुख मुरली, कर बाजै।
सूरदास जसुदा नँद-नंदन गोकुल कान्ह बिराजै ।१२६१।

हमकौं हरि की कथा सुनाउ।
ये आपनी ज्ञान-गाथा अलि मथुरा ही लै जाउ॥
नागरि नारि भलैं समझैंगी, तेरो बचन बनाउ।
पा लागौं ऐसी, इन बातनि उनहीं जाइ रिझाउ॥
जौ सुचि सखा स्याम सुंदर कौ अरु जिय मैं सति भाउ।
तौ कोउ कोटि करौ कैसेहुँ बिधि बल-बिद्या-ब्यवसाउ।
तउ सुनि सूर मीन कौं जल बिनु, नाहिन और उपाउ ।१२६२।

(ऊधौ) हरि बिनु सब रिपु बहुरि जिए।
जे हमरे केसव नँद-नंदन, हति-हति हुते सु दूरि किए॥
निसि कौ रूप बकी बनि आवति, अति भय करति सु कंप हिए।
तापहिं तैं तन प्रान हमारे रबिहूँ दिनकर दँवाइ लिए॥
घर ऊधे उतपात तृनावर्त, तिहिं सुख सकल उड़ाइ दिए।
कोकिल कागी सम कालिंदी परसत सलिल न आव पिए॥
बन बक-रूप अघासुर सम गृह जिन्हहूँ कौ न जिवै सखिए।
ऐसी कठिन करम कैसौ बिनु, काकौ सूर सरन तकिए ।१२६३।

ऊधौ तुम ब्रज की दसा बिचारी।
ता पाछैं यह सिद्धि आपनी, जोग कथा बिस्तारी॥
जा कारन तुम पठए माधौ सो सोचौ जिय माहीं।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं॥
तुम परबीन चतुर कहियत हौ संतत निकट रहत हौ।
जल बूड़त अवलंब फेन कौ, फिरि-फिरि कहा गहत हौ॥

वह मुसकान मनोहर चितवनि कैसैं उर तैं टारौं।
जोग, जुक्ति अरु मुक्ति परम निधि, वा मुरली पर वारौं॥
जिहिं उर कमल-नयन जुबसत हैं, तिहिं निरगुन क्यौं आवै
सूरदास सो भजन बहाऊँ, जाहि दूसरौ भावै।१२६४।

यौं तुम कहत कौन की बातैं।
अहो मधुप, हम समुझति नाहीं फिरि बूझति हैं तातैं॥
को नृप भयौ, कंस किन मारयौ को बसुद्यौ-सुत आहि।
यौं बसुधासुत परम मनोहर जीवतु हैं मुख चाहि॥
दिन प्रति जात धेनु बन चारन गोप सखनि कैं संग।
बासरगत रजनीमुख आवत, करत नैन गति पंग॥
को अबिनासी अगम अगोचर, को बिधि बेद अपार।
सूर बृथा बकवाद करत कत, इहिं ब्रज नंदकुमार।१२६५।

ऊधौ, हरि काहे के अंतरजामी।
अजहुँ न आइ मिलत इहिं अवसर अवधि बतावत लामी॥
अपनी चोप आइ उड़ि बैठत अलि ज्यौं रस के कामी।
तिनकौ कौन परेखौ कीजै जे हैं गरुड़ के गामी॥
आई उघरि प्रीति कलई सी जैसी खाटी आमी।
सूर इते पर अनखनि मरियत, ऊधौ पीवत मामी।१२६६।

निरगुन कौन देस कौ बासी?
मधुकर, कहि समुझाइ सौंह दै बूझति, साँच, न हाँसी।
को है जनक, कौन है जननी कौन नारि, को दासी?
कैसो बरन, भेष है कैसौ, किहिं रस मैं अभिलाषी?
पावैगौ पुनि कियौ आपनौ, जो रे करैगौ गाँसी।
सुनत मौन ह्वै रह्यौ बावरौ, सूर सबै मति नासी।१२६७।

कहियौ, ठकुराइति हम जानी।
अब दिन चारि चलहु गोकुल मैं, सेवहु आइ बदरि रजधानी॥

हमकौं हौंस बहुत देखन की, संग लियैं कुबिजा पटरानी ।
पहुनाई ब्रज की दधि माखन, बड़ी पलँग पर तातौ पानी ।।
तुम जनि डरौ जसमति तौ तोरथी, सौतिनहु अब भई पुरानी ।
यह अब कहौं जसोमति कैं कर दैहु राधरैं सीस बुझानी ।।
मुरली पाँटि दई ग्वालनि कौं मोरचंद्रिका सबै छहानी ।
सूर नंद जू के पाछागी देखहु आइ राधिका स्यानी ।।१२६८।।

ऊधौ अब कछु कहत न आवै ।
सिर पर सौति हमारैं कुबिजा, चाम के दाम चलावै ।।
कछु इक मंत्र कह्यौ बंधन मैं तातैं स्यामहिं भावै ।
अपनैं ही रँग रचे साँवरे सुक ज्यौं बैठि पढ़ावै ।।
तब तौ कहत मथुर की दासी अब कुल-बधू कहावै ।
नग्निनी लौं कर लिए लकुटिया कपि ज्यौं नाच नचावै ।।
टूट्यौ नातौ या गोकुल कौ लिखि लिखि जोग पठावै ।
सूरदास प्रभु हमहिं निदरि, दाह पर लौन लगावै ।।१२६९।।

सुनि-सुनि ऊधौ, आवति हाँसी ।
कहँ वे ब्रह्मादिक के ठाकुर कहाँ कंस की दासी ।
इंद्रादिक की कौन चलावै, संकर करत खवासी ।
निगम आदि बंदीजन जाके, सेष सीस के वासी ।।
जाकैं रमा रहति चरननि तर, कौन गनै कुबजा सी ।
सूरदास प्रभु दृढ़ करि बाँधे प्रेम-पुंज की पासी ।।१२७०।।

काहे कौं गोपीनाथ कहावत ।
जौ मधुकर, वे स्याम हमारे क्यौं न इहाँ लौं आवत ।।
सपने की पहिचानि मानि जिय, हमहिं कलंक लगावत ।
जौ पै कृस्न कूबरी रीझे, सोइ किन बिरद बुलावत ।।
ज्यौं गजराज काज के औसर औरै दसन दिखावत ।।
ऐसैं हम कहिबे-सुनिबे कौं सूर अनत बिरमावत ।।१२७१।।

साँवरी माँवरी रैनि की जायी।
आधी राति कंस के त्रासनि बसुधौ गोकुल ल्यायी॥
नंद पिता अरु मातु जसोदा माखन मही खवायी।
हाथ लकुटि, कामरि काँधे पर, बछरुन साथ डुलायी॥
कहा भयौ मधुपुरी अवतरे, गोपीनाथ कहायी।
ब्रज बधुननि मिलि साँट कटीली,कपि ज्यौं नाच नचायी॥
अब लौं कहाँ रहे हो ऊधौ लिखि लिखि जोग पठायी।
सूरदास हमैं यहै परेखौ कुबरि हाथ बिकायी॥१२०८॥

ऊधौ, बाके मायैं भाग।
बिकपत छाँड़ि मधव गोपीजन, बेरी चपरि सुहाग॥
आप जोग की बेलि लगावन, काटि प्रेम कौ बाग।
कुबिजा की पटरानी कीन्ही, हमैं देत बैराग॥
कौवी की कौड़ी जग जानी बढ़यौ स्याम अनुराग।
निलज भए बोलत हैं, बारहमासी फाग॥
ओरी भली बनी है उनकी, राजहंस अरु काग।
सूरदास-प्रभु ऊख छाँड़ि कै, चातुर चचोरत आग॥१२०९॥

ऊधो कहा हमारी चूक।
वे गुन, वे अवगुन सुनि हरि के, हृदय उठति है हूक॥
जिनकी काज छाँड़ि गए मधुबन हम घटि कहा करी।
तन,,मन धन आतमा-निवेदन, सौं तन बिरहिं मरी॥
रीझे जाइ सुंदरी कुबिजा ह्राँहि दुख आवति हाँसी।
जदपि कूर, कुरूप, कुदरसन, तदपि हम ब्रजबासी॥
पते ऊपर प्रान रहत घट, कहौ कौन सी कहिये।
पूरब कर्म लिखी बिधि अच्छर, सूर सबै मा सहिये॥१२१०॥

याह आलि, हमैं अँदेसो आवै।
कौन गुनाह जोग लिखि पठयौ, सो तू कहि समुझावै॥

जे अँग रचे बसन आभूषन, कैसे भस्म चढ़ावैं।
कबरी केस सुमन गहि राखे, सो क्यौं जटा बनावैं।
सब बिपरीत कहत तू हमसौं, सो कैसे चित आवैं।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, सूरदास मोहिं भावैं ।।१४७५।।

ऊधौ, आवै यहै परेखौ।

जप मारे तप आस बड़े की, यहै भयें यह देखौ।
जोग जज्ञ, जप, नेम, दान व्रत यहै करत सब जात।
क्यौंहूँ बालक बड़ै कुसल सौं, कठिन मोह की बात।
करी जु प्रगट कपट पिय की रति आपु आप लगि पीर।
काग सरैं जदि मिलै आपु कुल, कहा पायस की पीर।
जहँ जहँ रही राज करी तहँ-तहँ, बहु कीन्हि सिर भार।
यहै असीस सूर प्रभु सौं कहि न्हात खसै जनि बार ।।१४७६

ऊधौ, तुम ब्रज में पैठ करी।

लै आए हौ भण्ड जानि कै, सबै बस्तु अकरी।
हम अहीर माखन दधि बेचैं, सगुन टेक पकरी।
यह निर्गुन निरमोल गाठरी अब किन करत खरी।
यह ब्यौपार कहाँ जु समातौ, दूरी बड़ी नगरी।
सूरदास गाहक नहिं कोऊ, देखियत गरे परी ।।१४७७।

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै।

मूरी के पातनि के बदलैं को मुक्ताहल दैहै।।
यह ब्यौपार तुम्हारौ ऊधौ, ऐसे ही धरयौ रैहै।
जिन पै तें लै आए ऊधौ तिनहिं के पेट समैहै।
दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी को अपने मुख खैहै।
गुन करि मोही सूर साँवरे को निरगुन निरवैहै ।।१४७८।

मीठी बातनि मैं कहा लीजै।

जौ पै वे हरि होहिं हमारे, करन कहैं सोइ कीजै।।

जिन मोहन अपनैं कर कानननि करनफूल पहिराए।
तिन मोहन माटी के मुद्रा, मधुकर हाथ पठाए।
एक दिवस बेनी वृंदावन, रचि-पचि विविध बनाइ।
ते अब कहत जटा माथे पर, बदलौ नाम कन्हाइ।
लाइ सुगंध, बनाइ अभूषन अरु कीन्हीं अरधंग।
सो वै अब कहि कहि पठवत हैं, भसम चढ़ावन अंग।
हम कहा करैं दूरि नँद नंदन तुम जु मधुप मधुपावी।
सूर न होहिं स्याम के मुख की जाहु न जारहु छावी।।१६४४

ऊधौ, तुम हौ निकट के वासी।
यह निरगुन लै तिनहिं सुनावहु, जे मुड़िया बसैं कासी।
मुरलीधरन सकल अँग सुंदर रूप सिंधु की रासी।
जोग बटोरे लिए फिरत हौ ब्रजवासिनि की फाँसी।
राजकुमार भलैं हम जाने, घर मैं कंस की दासी।
सूरदास जदुकुलहिं लजावत ब्रज मैं होति है हाँसी।।१६८७

जा दिन तैं गोपाल चले।
ता दिन तैं ऊधौ या ब्रज के, सब स्वभाव बदले।
घटे अहार-बिहार हरष-हित सुख-सोभा गुन-गान।
ओज-तेज सब रहित सकल विधि आरति असम समान।
बाढ़ी निसा बलय आभूषन, उर-कंचुकी उसास।
नैननि जल, अंजन अंचल प्रति, आवन अवधि की आस।
अब यह दसा प्रगट या तन की, कहियौ जाइ सुनाइ।
सूरदास प्रभु सो कीजौ जिहिं, बेगि मिलहिं अब आइ।।१६८८

सुनि रे मधुकर चतुर सयाने।
सुख की सींव चढ़ी ता दिन तैं पठए स्याम बिनाने॥
नैननि तेज गयौ ता दिन तैं, सावन ज्यौं बरसाने।
घर तैं दास बिसाम दोऊ बिधि ये दुरि कहूँ सुखाने॥

ता दिन तैं पंछी भए बैरी भाषा बैर भुलाने।
बन के बास निवास सकल ये, भए भयानक बाने ॥
मोहन प्रान हरे ता दिन तैं, फेरि न यह गति आने।
बिरह-अनंग अनल तन दाहत को या पीरहिं जाने ॥
अब ये अंक देखियत ऐसे, रहे जु चित्र लिखाने।
सूर सँजीवन होहिं सु नव तन, रूप माधुरी साने ।।१४८२।

हम तौ कान्ह-केलि की भूखी।

कहा करें लै निर्गुन तुम्हरी बिरहिनि बिरह बिदूषी ॥
कहिये कहा यहौ नहिं जानत कहौ, जोग किहिं जोग।
पालागौं तुमहीं-से वा पुर बसत बावरे लोग ॥
चंदन अभरन चीर चारु बर, नैकु आपु तन कीजै।
दंड, कमंडल, भसम अधारी, जब जुवतिनि कौं दीजै ॥
सूर देखि दृढ़ता गोपिनि की ऊधौ इह ब्रत पायौ।
करी कृपा जदुनाथ मधुप कौं प्रेमहिं पढ़न पठायौ ।।१४८३।

गोपी, सुनहु हरि संदेस।

कह्यौ पूरन ब्रह्म ध्यावहु, त्रिगुन मिथ्या भेष ॥
मैं कहौं सो सत्य मानहु सगुन डारहु नाखि।
पंच त्रय गुन सकल देही, जगत ऐसौ भाषि ॥
ज्ञान बिनु नर मुक्ति नाहीं यह बिषया-संसार।
रूप-रेख न नाम जल थल बरन अबरन-सार ॥
मातु पितु कोउ नाहिं नारी जगत मिथ्या लाइ।
सूर सुख-दुख नहीं जाकैं, भजौ ताकौं जाइ ।।१४८४।

ऐसी बात कहौ जनि ऊधौ।

कमलनैन की कानि करति हैं, आवत बचन न सूधौ ॥
बातनि ही उड़ि जाहिं और ज्यौं त्यौं नाहीं हम कौंधौ।
मन-बच-कर्म सोधि एकै मत नँद-नंदन रँग-रौंधौ ॥

सो कछु जतन करौ पालागौं मिटै हिये की सूल।
मुरलीधरहिं आनि दिखरावहु ओढ़े पीत दुकूल॥
इनहीं बातनि भए स्याम तनु, मिलवत हौ गढ़ि छोलि।
सूर बचन सुनि रही ठगौसी, बहुरि न आयौ बोलि॥१४८३॥

फिरि फिरि कहा बनावत बात।
प्रातकाल उठि खेलत ऊधौ, घर घर माखन खात॥
जिनकी बात कहत तुम हमसौं सो है हमसौं दूरि।
ह्याँ है निकट जसोदा नंदन, प्रान सँजीवन-मूरि॥
बालक संग लिये दधि चोरत खात खवावत डोलत।
सूर सीस नीचौ कत नावत अब काहैं नहिं बोलत॥१४८६॥

फिरि-फिरि कहा सिखावत मौन।
बचन तुम्हारे लागत अलि ऐसे ज्यौं पजरे पर लौन॥
सिंगी मुद्रा, भस्म, त्वचा-मृग अरु अवराधन पौन।
हम अबला अहीरि, सठ मधुकर, धरि जानहिं कहि कौन॥
यह मत जाइ तिनहिं तुम सिखवहु, जिनहिं आजु सब सोहत।
सूरदास कहुँ सुनी न देखी पोत सूतरी पोहत॥१४८७॥

ऊधौ हमहिं न जोग सिखैये।
जिहिं उपदेस मिलैं हरि हमकौं सो ब्रत-नेम बतैये॥
मुक्ति रही घर बैठि आपने, निगुन सुनि दुख पैये।
जिहिं सिर केस कुसुम भरि गूँदे कैसै भसम चढ़ैये॥
जानि जानि सब मगन भई हैं, आपुन आपु लखैये।
सूरदास-प्रभु सुनहु नवौ निधि बहुरि की इहिं ब्रज अइयै॥१४८८॥

ऊधौ करि रहीं हम जोग।
कहा एती बात आम्यौ, देखि गोपी भोग॥
सीस सेल्ही-केस, मुद्रा, कनक-बीरी बीर।
बिरह भस्म चढ़ाइ बैठीं सहज कंथा चीर॥

हृदय सिंगी टेर मुरली, नैन खप्पर हाथ।
चाहती हरि-दरस-भिच्छा देहिं दीनानाथ।
जोग की गति जुगति हम पै, सूर देखी जोइ।
कहत हम सौं करन जोग सु जोग कैसो होइ ॥१४८९॥

ऊधौ जोग तबहिं तैं जान्यौ।

जा दिन तैं सुफलक-सुत कै सँग रथ ब्रजनाथ पलान्यौ।
ता दिन तैं सब छोह-मोह गयौ सुत-पति हेत भुलान्यौ।
तजि माया संसार सबनि कौ ब्रज-जुवतिनि ब्रत ठान्यौ।
नैन मूँदि मुख मौन रही धरि तन तप तेज सुखान्यौ।
नंद-नँदन मुरली मुख धारैं यहै ध्यान उर आन्यौ।
सोइ रूप जोगी जिहिं सूझै जो तुम जोग बखान्यौ।
ब्रह्मा हूँ पचि मुए ध्यान करि, अंतहुँ नहिं पहिचान्यौ।
कहौ सु जोग कहा लै कीजै निरगुन जो नहिं जान्यौ।
सूर वहै निज रूप स्याम कौ, है मन माहँ समान्यौ ॥१४९०॥

ए अलि, कहा जोग मैं नीकौ।

तजि रस-रीति नंद-नंदन की सिखवत निरगुन फीकौ।
देखत-सुनत नाहिं कछु स्रवननि ज्योति-ज्योति करि ध्यावत।
सुंदर स्याम कृपालु दयानिधि, कैसैं हौ बिसरावत।
सुनि रसाल मुरली की सुर धुनि सुर-मुनि कौतुक भूले।
अपनी भुजा ग्रीव पर मेली, गोपिनि के मन फूले।
लोक-लाज कुल के भ्रम छाँड़े प्रभु सँग घर-बन खेली।
अब तुम सूर खवावन आए, जोग-जहर की बेली ॥१४९१॥

ऊधौ किहिं बिधि कीजै जोग।

जे रस रसी स्याम सुंदर कै, ते क्यौं सहैं बियोग।
पूछहु जाइ चकोर चंद हित, दरसन कौ सुख पावत।
चातक स्वाँति-बूँद चित दीन्यौ जलनिधि मनहिं न भावत।

मद गज-कमल सिलीमुख जानत, कंटक सूल सहै जो।
जानैं रसिक मीन बिछुरन दुख, मरतहुँ प्रीति लहै जो।
तुमहूँ रसिक कहावत मधुकर आपु स्वारथी जैसी।
कहा करै ये सूर प्रेम-बस, बिनु हित जीवन कैसी ॥१४५२॥

ऊधौ, हम कह जानैं जोग।

नंद-नँदन कारन जिन छाँड्यौ, कुल-लज्जा अरु लोग।
जो आसन सम बैठे ऊधौ प्रान वायु को साधै।
जो धरि ध्यान धारना मधुकर, निरगुन पथ आराधै।
जाके हिय मैं नेम-तपस्या, जाकैं मन संतोष।
जाकै सब आचार फली पद की चाहत है मोष।
निसि दिन कछु चित चेत न आनौ नंद-नँदन की आस।
को खनि कूप मरै न [illegible], छाँड़ि सूर सरि पास ॥१४५३॥

मधुकर स्याम हमारे ईस।

तिनकौ ध्यान धरैं निसि-बासर, औरहिं नवै न सीस।
जोगिनि जाइ जोग उपदेसहु जिनके मन दस-बीस।
एक चित, एकै वह मूरति, तिन चितवति दिन बीस।
काहै निरगुन ग्यान आपनी जित तित डारत खीस।
सूरदास-प्रभु, नंदनँदन बिनु, हमरे को जगदीस ॥१४५४॥

सतगुरु-चरन भजे बिनु बिद्या कहु कैसैं कोउ पावै।
उपदेसक हरि दूरि रहे हैं क्यौं हमरे मन आवै।
जो हित कियौ तौ अधिक कराहि किन, आपुन आनि सिखावै।
जोग-जोम तैं चलि न सकैं तौ हमहीं क्यौं न बुलावैं।
जोग ज्ञान मुनि नगर तजे पद सघन गहन बन धावैं।
आसन मौन नेम मन संजम बिपिन मध्य बनि आवैं।
आपुन कहैं करैं कछु औरै, हम सबहिनि बहकावैं।
सूरदास ऊधौ सौं स्यामा, अति संकेत जनावै ॥१४५५॥

जोग-बिधि मधुबन सिखिहैं जाइ।

मन-बच-क्रम सपथ सुनि ऊधौ, संगहिं चली सिधाइ।
सब आसन, रेचक अरु पूरक कुंभक सीखहिं भाइ।
बिनु गुरु निकट सँदेसनि कैसैं, यह अवगाह्यौ जाइ।
हम जो करत देखिहैं कुबिजहिं, तेई करब उपाइ।
कन्या-सहित ध्यान एकहिं मग, कहत जाहिं मधुराइ।
सूर-सुभट की आपर रुचि है सो हम करिहैं आइ।
आज्ञा-भंग करैं हम क्यौं करि, जौ पतिव्रत बिनसाइ।।१२६६

जोग सँदेसौ ब्रज मैं लावत।

थाके चरन तुम्हारे ऊधौ बार-बार के धावत।
सुनिहै कथा कौन निरगुन की रचि पचि बात बनावत।
सगुन सुमेर प्रगट देखियत तुम तृन की ओट दुरावत।
हम जानतिं परपंच स्याम के, बातनि ही बौरावत।
देखी-सुनी न अब लगि कबहूँ जल मथि माखन आवत।
जोगी जोग अपार सिंधु मैं ढूँढ़ेहूँ नहिं पावत।
ह्याँ हरि प्रगट प्रेम जसुमति कैं ऊखल आपु बँधावत।
चुप करि रहौ, ज्ञान ढँकि राखौ कत ही बिरह बढ़ावत।
नंदकुमार कमल-दल-लोचन कहि को जाहि न भावत।
काहे की बिपरीत बात कहि सबके प्रान गवाँवत।
सीतल चित सूरज अपननि कौं निगम नेति जिहिं गावत।।१२६७

मधुकर, यह निहचै हम जानी।

खोयौ गयौ नेह नग उनपै प्रीति कापरी भई पुरानी।
पहिलैं अधर सुधा-रस सींचे दियौ पोष पटु आइ सयानी।
पहुँची गैल कियौ सिसु कैसौ गृह-रचना ज्यौं बालक पिछानी।
ऐसे हित की प्रीति दिखाई पन्नग केंचुरि ज्यौं लपटानी।
पहुँचे सुरति लई नहिं जैसैं भ्रमर लता त्यागत हूँ सिरानी॥

बहुरंगी जित जाइ तितहिं सुख, इकरंगी दुख देह दिवानी।
सूरदास पसुधनी चोरि कै, लायौ चाहत चारा-पानी ।।१५५८

ऊधौ, मन नहिं हाथ हमारैं।

रथ चढ़ाइ हरि संग गए लै, मथुरा जबहिं सिधारे।
नातरु कहा जोग हम छाँड़हिं अति रुचि कै तुम ल्याए।
हम तौ झँकतिं स्याम की करनी मन लै जोग पठाए।
अजहूँ मन अपनौ हम पावैं तुम तैं होइ तौ होइ।
सूर सपथ हमैं कोटि तिहारी, कही करैंगी सोइ ।।१५५९।

मुक्ति आनि मंदे मैं मेली।

समुझि सगुन लै चले न ऊधौ यह तुम पै सब पूँजी अकेली।
कै लै जाहु अनत ही बेचौ, कै लै जाहु जहाँ विष-बेली।
याहि लागि को मरै हमारैं वृंदावन पाइनि सौं ठेली।
धरे सीस घर घर डोलत हौ एकै मति सब भई सहेली।
सूरदास गिरिधरन छबीलौ जिनकी भुजा कंठ धरि झेली ।।१५६०

ऊधौ, मन तौ एकहिं आहि।

सो तौ हरि लै संग सिधारे, जोग सिखावत काहि।
सुनि सठ, कुटिल बचन रस-लंपट, अबलनि तन धौं चाहि।
अब काहे कौं लौन लगावत, बिरह-अनल कैं दाहि।
परमारथ उपचार कहत हौ बिरह-ब्यथा है जाहि।
जाकौं राजरोग कफ ब्यापत, दह्यौ खवावत ताहि।
सुंदर स्याम सलोनी मूरति, पूरि रही हिय माहिं।
सूर ताहि तजि निरगुन-सिंधुहिं, कौन सकै अवगाहि ।।१५६१

ऊधौ मन न भए दस-बीस।

एक हुतौ सो गयौ स्याम सँग को अवराधै ईस ।।
इंद्री सिथिल भईं केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस।
आसा लागि रहति तन स्वाँसा जीवहिं कोटि बरीस।

तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस।
सूर हमारैं नंदनंदन बिनु, और नहीं जगदीस ॥१६०२॥

इहिं उर माखन-चोर गड़े।
अब कैसैं निकसत, सुनि ऊधौ तिरछे ह्वै जु अड़े।
जदपि अहीर जसोदा नंदन कैसैं जात छँड़े।
ह्याँ जादौपति प्रभु कहियत हैं, हमैं न लगत बड़े॥
को बसुदेव देवकी-नंदन, को जानै, को बूझै।
सूर नंद-नंदन के देखत, और न कोऊ सूझै ॥१६०३॥

मन मैं रह्यौ नाहिंन ठौर।
नंद-नंदन अछत कैसैं आनियै उर और॥
चलत, चितवत, दिवस जागत स्वप्न सोवत राति।
हृदय तें वह मदन मूरति छिन न इत उत जाति॥
कहत कथा अनेक ऊधौ लोग लाभ दिखाइ।
कहा करौं मन प्रेम पूरन घट, न सिंधु समाइ।
स्याम गात सरोज आनन ललित मृदु मुख हास।
सूर इनकैं दरस कारन, मरत लोचन प्यास ॥१६०४॥

मधुकर, स्याम हमारे चोर।
मन हरि लियौ तनक चितवनि मैं चपल नैन की कोर॥
पकरे हुते हृदय उर अंतर, प्रेम प्रीति कैं जोर।
गए छँड़ाइ तोरि सब बंधन, दै गए हँसनि अँकोर॥
चौंकि परी, जागत निसि बीती दूत मिल्यौ इक भौंर।
सूरदास प्रभु सरबस लूट्यौ, नागर नवल-किसोर ॥१६०५॥

अब दिन रातिहिं से नाहिं होते।
तब अलि, ससि सीरौ अब तातौ भयौ बिरह अरि मो तें।
तब पट मास रास-रस अंतर एकहु निमिष न जानै।
अब औरै गति भई कान्ह बिनु, पल पूरन जुग मानै॥

कहा भयौ जोग ज्ञान भाखत श्रुति, ते किन कहे घनेरे।
अब कछु और सुहाइ सूर नहिं, सुमिरि स्याम गुन केरे ।।१६०६

ऊधौ, अब नहिं स्याम हमारे।

मधुरा गए पलटि से लीन्हे, माधौ, मधुप तुम्हारे ।।
अब मोहिं भावत यह पछितावौ कबौं गुन आठ बिसारे।
कपटी कुटिल काक अरु कोकिल अंत भए सहि न्यारे ।।
फिरि-फिरि मौह मगन ब्रजबासी प्रेम प्रान-धन वारे।
सूर स्याम को कौन पत्यैहै, कुटिल गात तन कारे ।।१६०७

सखी री स्याम सबै इक सार।

मीठे बचन सुहाए बोलत, अंतर जारनहार ।।
भँवर-कुरंग-काक अरु कोकिल कपटिन की चटसार।
कमलनैन मधुपुरी सिधारे, मिटि गयौ मंगलचार ।।
सुनहु सखी री, दोष न काहू, जो बिधि लिख्यौ लिलार।
यह करतूति उनहिं की नाहीं, पूरब बिबिध बिचार ।।
कारी घटा देखि बादर की, सोभा देति अपार।
सूरदास सरिता सर पोषत, चातक करत पुकार ।।१६०८

बिलग जनि मानौ ऊधौ प्यारे।

यह मथुरा काजर की ओबरि, जे आवैं ते कारे ।।
तुम कारे, सुफलक-सुत कारे, कारे कुटिल सँवारे।
कमलनैन की कौन चलावै, सबहिनि मैं मनियारे ।।
मानौ नील माट तैं काढ़े, जमुना आइ पखारे।
तातैं स्याम भई कालिंदी सूर स्याम गुन न्यारे ।।१६०९

मोहन माँग्यौ अपनौ रूप।

इहिं ब्रज बसत अँचै तुम बैठी, ता बिनु उहाँ निरूप ।।
मेरौ मन मेरे अलि, लोचन, लै जु गए धपि-धूप।
ता ऊपर तुम जोग पठाए, भली बन्यौ करि सूप ।।

अपनी काज सँवारि सूर सुनि, हमैं बतावत कूप।
सेवा-रहि पराभरि नैं है, कौन रंक को भूप ॥१६१०॥

ऊधौ स्याम इहाँ लै आवहु।
ब्रजजन चातक मरत पियासे, स्वाति-बूँद बरसावहु।
घर तैं आहु बिलंब करौ जनि हमरी दसा जनावहु।
घोष-सरोज भयौ है संपुट ह्वै दिनकर बिगसावहु।
जौ ऊधौ हरि इहाँ न आवहिं तौ हमैं उहाँ बुलावहु।
सूरदास प्रभु हमहिं मिलावहु तौ तिहुँपुर जस पावहु ॥१६११॥

बिरहा कहै सौं आपु सँभारे।
जब तैं गंग परी हरि-पग तैं बहिबौ नहीं निवारे।
नैननि तैं बिछुरे जु कमल है ससि कबहूँ बन गारे।
धाम तैं बिछुरि, पवन केहरि भए सिंधु भए जल खारे।
बैन तैं बिछुरि कोकिला बिधिहुँ भई बैनहि का निरवारे।
सूरदास ऐ सब अँग बिछुरी तिनहि दीन उपचारे ॥१६१२॥

ऊधौ भली भई ब्रज आए।
बिधि-कुलाल कीन्हे काँचे घट ते तुम आनि पकाए।
रँग दीन्हौ हो कान्ह साँवरे, अँग अँग चित्र बनाए।
गातैं गरे न नैन-नेह तैं अवधि अटा पै छाए।
ब्रज करि अँवा जोग ईंधन करि, सुरति आगि सुलगाए।
फूँक-उसास बिरह प्रजरनि सँग ध्यान-दरस सियराए।
भरे सपूरन सकल प्रेमजल छुवन न काहूँ पाए।
राज काज तैं गए सूर प्रभु नंद-नंदन कर लाए ॥१६१३॥

जब लगि ज्ञान हृदै नहिं आवै।
तब लगि कोटि जतन करै कोऊ, बिनु बिबेक नहिं पावै।
बिना बिचार भयौ सुपनौ सो मैं देख्यौ जग जोइ।
मानो हाथ लगी रस पावत, जागत भये तैं खोइ।

तुमही कहत सकल घट व्यापक, और सबहिं तैं निवरे।
नख-सिख लौं तन जरत निसा दिन निकसि करत किन नियरे।
सौंधी बात सबै सीतल ही, मुख मैं मेले तुरसी।
सूर सु औषध हमैं बतावहु, पित-जुर ऊपर गुर-सी ॥१६१४॥

जौ पै हिरदै माँझ हरी।
तौ कहि इती अवज्ञा उनपै कैसैं सही परी।
तब दावानल दहन न पायौ, अब इहिं बिरह जरी।
उर तैं निकसि नंद-नंदन हम, सीतल क्यौं न करी।
दिन प्रति नैन इंद्र जल बरसत, घटत न एक घरी।
अति ही सीत-भीत तन भीजत, गिरि अंचल न धरी।
कर-कंकन दरपन लै देखौ, इहिं अति अनख मरी।
क्यौं अब जियहिं जोग सुनि सूरज बिरहिनि बिरह भरी ॥१६१५॥

ऐसौ जोग न हम पै होइ।
आँखि मूँदि कह पावैं ढूँढ़े अँधरे ज्यौं टकटोइ।
भसम लगावन कहत जु हमकौ अंग कुंकुमा धोइ।
सुनि कै बचन तुम्हारे ऊधौ, नैना आवत रोइ।
कुंतल कुटिल मुकुट-कुंडल छबि रही जु चित मैं पोइ।
सूरज प्रभु बिनु प्रान रहैं नहिं, कोटि करौ किन कोइ ॥१६१६॥

ऊधौ हमहिं कहा समुझावहु।
पसु-पंछी सुरभी ब्रज की सब देखि, स्रवन सुनि आवहु।
तृन न चरत गौ पियत न सुत पय ढूँढ़त बन-बन डोलैं।
अलि कोकिल के आदि बिहंगम, भाँति भयानक बोलैं।
जमुना भई स्याम स्यामहिं बिनु, इंदु छीन छय रोगी।
तरुवर पत्र बसन न सँभारत, बिरह बृच्छ भए जोगी।
गोकुल के सब लोग दुखित हैं, नीर बिना ज्यौं मीन।
सूरदास प्रभु प्रान न छूटत अवधि आस मैं लीन ॥१६१७॥

हमसौं उनसौं कौन सगाई ।
हम अहीर अबला ब्रजबासी, वै जदुपति जदुराई ॥
कहा भयौ जु भए जदुनंदन, अब यह पदवी पाई ।
सकुच न आवत घोष बसत की तजि ब्रज गए पराई ॥
ऐसे भए वहाँ जादौपति गए गोप बिसराई ।
सूरदास यह ब्रज कौ नातौ भूलि गए बलभाई ।।१६१८।।

तौ हम मानैं बात तुम्हारी ।
अपनौ ब्रह्म दिखावहु ऊधौ, मुकुट पितांबर धारी ॥
भजिहैं तब ताकौ सब गोपी सहि रहिहैं बरु गारी ।
भूत समान बतावत हम कौं डारहु स्याम बिसारी ॥
जे मुख सदा सुधा अँचवत हैं, ते बिष क्यौं अधिकारी ।
सूरदास-प्रभु एक अंग पर रीझि रहीं ब्रजनारी ।।१६१९।।

(ऊधौ) जौ कोउ यह तन फेरि बनावै ।
तौऊ नंद-नंदन तजि मधुकर और न मन मैं आवै ॥
जौ या तन की त्वचा काढ़ि कै लै करि दुंदुभि साजै ।
मधुर स्वांग सात सुर निकसैं कान्ह-कान्ह करि बाजै ॥
निकसैं प्रान परैं जिहिं माटी द्रुम लागैं तिहिं ठाम ।
अब सुनि सूर पत्र फल-साखा, लेत उठैं हरि नाम ।।१६२०।।

ऊधौ जाइ बहुरि सुनि आवहु कही जो नँदकुमार ।
यह न होइ उपदेस स्याम कौ कहत लगावन छार ॥
निरगुन जोति कहाँ उन पाई सिखवत बारंबार ।
काल्हिहिं करत हुते हमरे अँग, अपनैं हाथ सिंगार ॥
व्याकुल भई गोपालहिं बिछुरैं गयौ गुन-ज्ञान-सँभार ।
तातैं जो आवै सो बकत हौ नाहिन दोष तुम्हार ॥
बिरह सहन कौं हम सिरजी हैं, पाहन हृदय हमार ।
सूरदास अंतरगति मोहन, जीवन प्रान अधार ।।१६२१।।

ऊधौ, जोग बिसरि जनि जाहु।
बाँधौ गाँठि, छूटि परिहै कहुँ, फिरि पाछैं पछिताहु॥
ऐसी बस्तु अनूपम मधुकर, मरम न जानै और।
ब्रज-बनितनि के नहीं काम की, है तुम्हरेई ठौर॥
जो हित करि पठयौ मन मोहन, सो हम तुमकौं दीनी।
सूरदास ज्यौं बिप्र नारियर करहीं बंदन कीनी॥१६२२

ऊधौ काहे कौं भक्त कहावत।
जु पै जोग लिखि पठयौ हमकौं, तुमहूँ न भस्म चढ़ावत॥
सिंगी मुद्रा भस्म अधारी, हमहीं कहा सिखावत।
कुबिजा अधिक स्याम की प्यारी, ताहि नहीं पहिरावत॥
यह तौ हमकौं तबहिं न सिखयौ जब तैं गाइ चरावत।
सूरदास-प्रभु कौ कहियौ अब लिखि-लिखि कहा पठावत॥१६२३

(ऊधौ) ना हम बिरहिनि, ना तुम दास।
कहत-सुनत घट प्रान रहत हैं, हरि तजि भजहु अकास॥
बिरही मीन मरै जल बिछुरैं, छाँड़ि जियन की आस।
दास-भाव नहिं तजत पपीहा, बरसत मरत पियास॥
पंकज परम कमल मैं बिहरत, बिधि कियौ नीर निरास।
राजिव रवि कौ दोष न मानत, ससि सौं सहज उदास॥
प्रगट प्रीति दसरथ प्रतिपाली, प्रीतम कैं बनबास।
सूर स्याम सौं दृढ़ ब्रत राख्यौ, मेटि जगत उपहास॥१६२४

हमतौ दुहूँ भाँति फल पायौ।
जौ गोपाल मिलैं तौ नीकौ, नातरु जगत जस गायौ॥
कहँ हम वा गोकुल की गोपी, बरनहीन घटि जाति।
कहँ वै श्री कमला के स्वामी मिलि बैठीं इक पाँति॥
निगम ज्ञान मुनि ध्यान अगोचर, ते भए घोष निवासी।
ता ऊपर अब कहौ देखि धौं, मुक्ति कौन की दासी॥

जोग कथा ऊधौ, पालागौं, मति कहौ बारंबार।
सूर स्याम तजि आन भजै जो, ताकी जननी छार ॥१६२५॥

ऊधौ सौ पल, सौ पल।
जहँ वै सुंदर स्याम बिहारी, हमकौ तहँ सौ थल॥
आवन-आवन कहि गए ऊधौ करि गए हम सौं छल।
हृदय की प्रीति स्याम जू जानत कितिक दूरि गोकुल॥
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, जहाँ रहे हिलि-मिल।
सूरदास स्वामी के बिछुरैं नैननि नीर प्रबल ॥१६२६॥

गुप्त मते की बात कहौं जो, कहौ न काहू आगैं।
कै हम जानैं, कै जानि, तुमहूँ, इतनी पावहिं मागैं॥
एक बेर खेलत बृंदावन कंटक चुभि गयौ पाइँ।
कंटक सौं कंटक लै काढ़यौ अपनैं हाथ सुभाइ॥
एक दिवस बिहरत बन भीतर, मैं जु सुनाई भूख।
पाके फल वै देखि मनोहर चढ़े कृपा करि रूख॥
ऐसी प्रीति हमारी उनकी बसतैं गोकुल बास।
सूरदास प्रभु सब बिसराई मधुबन कियौ निवास ॥१६२७॥

ऊधौ, हम लायक सिख दीजै॥
यह उपदेस अगिनि तैं तातौ कहौ, कौन बिधि कीजै॥
तुमही कहौ इहाँ इतननि मैं सीखनहारी को है।
जोगी-जती रहित माया तैं, तिनही यह मत सोहै॥
कहा सुनति, बिपरीति लोक मैं, यह सब कोऊ कैहै।
देखौ धौं अपने मन सब कोउ तुमही दूषन दैहै॥
चंदन चंदन बनिता-बिनोद-रस, कहीं बिभूति बपु माँजै।
सूरदास सोभा क्यौं पावति, आँखि आँधरी आँजै ॥१६२८॥

सब जल तजे प्रेम के नातें।
चातक स्वाँति-बूँद नहिं छाँड़त, प्रगट पुकारत तातें॥

समुझत मीन नीर की बातैं, तऊ प्रान हठि हारत।
सुनत कुरंग, प्रेम नहिं त्यागत, जदपि ब्याध सर मारत।
निमिष चकोर नैन नहिं लावत, ससि जोवत जुग बीते।
ज्योति पतंग देखि बपु जारत भए न प्रेम घट रीते॥
कहि अलि, क्यौं बिसरति वै बातैं संग जु करि ब्रजराज।
कैसे सूरस्याम हम छाँड़ैं, एक देह के काज॥१५२६॥

ऊधौ, जौ हरि हितू तुम्हारे।
तौ तुम कहियौ जाइ कृपा करि, ए दुख सबै हमारे॥
तन-तरिवर उर स्वास-पवन मैं बिरह-दवा अति जारे।
नहिं सिरात, नहिं जात छार ह्वै, सुलगि-सुलगि भए कारे।
जदपि प्रेम उमँगि जल सींचैं, बरषि-बरषि घन हारे।
जौ सीचैं इहिं भाँति जतन करि, तौ एतैं प्रतिपारे॥
कीर कपोत कोकिला चातक बधिक बियोग बिडारे।
क्यौं जीवैं इहिं भाँति सूर प्रभु, ब्रज के लोग बिचारे॥१५३०॥

मधुकर, कौन मनायौ मानै।
अबिनासी अति अगम तुम्हारौ, कहा प्रीति रस जानै॥
सिखवहु जाइ समाधि-जोग-रस जे सब लोग सयाने।
हम अपनैं ब्रज ऐसेहिं रहिहैं, बिरह बाइ बौराने॥
जागत सोवत सपन रैन दिन, उहै रूप परवाने।
बालमुकुंद किसोरी लीला, लीला सिंधु समाने॥
जिनके तन-मन-प्रान सूर सुनि,मृदु मुसकानि बिकाने।
परी जु पयनिधि बुंद अलप जल सु पुनि कौन पहचाने॥१५३१॥

बिलग हम मानैं ऊधौ, काकौ।
तरसत रहे बसुदेव-देवकी, नहिं हित मात-पिता कौ॥
उनके मातु-पिता को काकौ दूध पियौ हरि जाकौ।
नंद-जसोदा लाड़ लड़ायौ, नाहिं भयौ हरि ताकौ॥

कहियौ जाइ बनाइ बात यह, को हित है अबला कौ ।
सूरदास प्रभु प्रीति है कासौं, कुटिल मीत कुबिजा कौ ।।१६७२।

जीवन मुख देखे कौ नीकौ ।।
दरस-परस दिन-राति पाइयत, स्याम पियारे पी कौ ।।
सूनौ जोग कहा लै कीजै, जहाँ ज्यान है जी कौ ।
नैननि मूँदि मूँदि कह देखौं, बँध्यौ ज्ञान पोथी कौ ।
आछे सुंदर स्याम हमारे, और जगत सब फीकौ ।।
खाटी मही कहा रुचि मानै, सूर खवैया घी कौ ।।१६७३।

अपने सगुन गोपालहिं माई, इहिं बिधि काहैं देति ।
ऊधौ की इन मीठी बातनि, निर्गुन कैसैं लेति ।।
धर्म अर्थ-कामना सुनावत, सब सुख मुक्ति समेति ।
काकी भूख गई मन लाड़ू, सो देखहु चित चेति ।।
जाकौ मोच्छ बिचारत बरनत, निगम कहत हैं नेति ।
सूर स्याम तजि को भुस फटकै, मधुप तुम्हारे हेति ।।१६७४।

वै हरि सकल ठौर के बासी ।
पूरन ब्रह्म अखंडित मंडित, पंडित मुनिनि बिलासी ।
सप्त पताल ऊरध अध पृथ्वी, तल नभ बरुन बयारी ।।
अभ्यंतर दृष्टि देखन कौं, कारन रूप मुरारी ।
मन-बुधि-चित्त अहंकार दसेंद्रिय प्रेरक थंभनकारी ।
ताकै काज बियोग बिचारत, ये अबला-ब्रजनारी ।।
जाकौ जैसौ रूप मन रुचै, सो अपबस करि लीजै ।
आसन बैसन ध्यान धारना, मन आरोहन कीजै ।।
षट दल अष्ट द्वादस दल निरमल, अजपा जाप जपाली ।
त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि, यौं मिलिहैं बनमाली ।।
एकादस गीता स्रुति साखी, जिहिं बिधि मुनि समुझाए ।
वै संदेस श्रीमुख गोपिनि कौ, सूर सु मधुप सुनाए ।।१६७५।

मधुकर ल्याए जोग सँदेसौ।
भली स्याम-कुसलात सुनाई सुनतहिं भयौ अँदेसौ॥
आस रही जिय कबहुँ मिलन की, तुम आवत ही नासी।
जुवतिनि कहत जटा सिर बाँधौ, तौ मिलिहैं अबिनासी॥
तुमकौं जिन गोकुलहिं पठाए, ते बसुदेव कुमार।
सूर स्याम हमतैं कहुँ न्यारे होत न, करत बिहार॥१६६॥

ऊधौ, हमरी सौं, तुम जाहु।
यह गोकुल पूनौ कौ चंदा, तुम ह्वै आए राहु॥
ग्रह के ग्रसे गुसा परगास्यौ अब लौं करि निरबाहु।
सब रस लै नँदलाल सिधारे, तुम पठए, बड़ साहु॥
जोग बेचि कै तंदुल लीजै बीच बसेरे जाहु।
सूरदास जबहीं उठि जैहौ मिटिहै मन कौ दाहु॥१६७॥

ऊधौ, मौन साधि रहे।
जोग कहि पछितात मन-मन बहुरि कछु न कहे॥
स्याम कौ यह नहीं बूझैं, अतिहिं रहे खिसाइ।
कहा मैं कहि-कहि अजानी, भार रही नवाइ॥
प्रथम ही कहि बचन एकै, रही गुरु करि मान।
सूर प्रभु मोकौं पठायौ, यहै कारन जानि॥१६८॥

कहा मति दीन्ही हमहिं गुपाल।
आवहु री सखि सब मिलि सोचैं, ज्यौं पावैं नँदलाल॥
घर बाहर तैं बोलि लेहु सब, जावदेक ब्रज-बाल।
कमलासन बैठहु री माई, मूँदहु नैन बिसाल॥
षटपद कही, सोउ करि देखी, हाथ कछू नहिं आई।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन नैकु न देत दिखाई॥
फिरि भईं मगन बिरह सागर मैं काहुँ सुधि न रही।
पूरन प्रेम देखि गोपिनि कौ, मधुकर मौन गही॥

स्रवनन सुनि पुनि पुनि चातक की, प्रान पलटि तन आए।
सूर सु अबकै टेरि पपीहा बिरहिनि मरत जिवाए ।१६३९।

मधुकर भली करी तुम आए।
ये बातैं कहि-कहि या दुख मैं, ब्रज के लोग हँसाए।
मोर मुकुट मुरली पीतांबर, पठवहु सौंज हमारी।
आपुन जटाजूट मुद्रा धरि, लीजै भस्म अधारी।।
कौन काम वृंदावन कौ सुख, दही-भात की छाक।
अब वै स्याम कूबरी दोऊ, बने एक ही ताक।।
वै प्रभु बड़े सखा तुम उनके जिनकैं सुगम अनीति।
या जमुना-जल कौ सुभाव यह, सूर बिरह की प्रीति ।१६४०।

काहे कौ रोकत मारग सूधौ।
सुनहु मधुप निरगुन कंटक तैं राजपंथ क्यौं रूँधौ।।
कै तुम सिखि पठए हौ कुबिजा कह्यौ स्यामघनहूँ धौं।
बेद-पुरान-सुमृति सब ढूँढ़ौ जुवतिनि जोग कहूँ धौं।।
ताकौ कहा परेखौ कीजै, जानै छाँछ न दूधौ।
सूर मूर अक्रूर गयौ लै ब्याज निबेरत ऊधौ ।१६४१।

ऊधौ, कोउ नाहिंन अधिकारी।
लै न जाहु यह जोग आपनौ, कत तुम होत दुखारी।।
यह तौ बेद उपनिषद मत है महा पुरुष ब्रतधारी।
हम अबला अहीर ब्रज-बासिनि नाहीं परत सँभारी।।
को है सुनत, कहत हौ कासौं कौन कथा बिस्तारी।
सूर स्याम कैं संग गयौ मन, अहि केंचुली उतारी ।१६४२।

ऊधौ धनि तुम्हरौ ब्यौहार।
धनि वै ठाकुर, धनि तुम सेवक, धनि हम बर्तनहार।।
काटहु अंब, बबूर लगावहु, चंदन कौ करि बारि।
हमकौ जोग, भोग कुबिजा कौ, ऐसी समुझ तुम्हारि।।

तुम हरि पढ़ै चातुरी विद्या, निपट कपट चटसार।
पकरौ साह, चोर कौ छाँड़ौ, चुगलनि कौ इतबार॥
समुझि न परै तिहारी मधुकर, हम ब्रज नारि गँवारि।
सूरदास ऐसी क्यों निबहै, अंध धुंध सरकार॥१६४३॥

हरि बिनु इहिं बिधि है ब्रज रहियतु।
पर-पीरहिं तुम जानत ऊधौ, तातैं तुमसौं कहियतु॥
चंदन चंद-किरनि पावक सम, इन मिलि कै तनु दहियतु।
रजनी जाति गनत ही तारे, जतन नहीं निरबहियत॥
बासर हूँ या बिरह-सिंधु कौ क्यौंहूँ पार न लहियत।
फिरि-फिरि कहै अवधि अवलंबन बूड़त ज्यौं तृन गहियत॥
एक जु हरि-दरसन की आसा, ता लगि यह दुख सहियत।
मन-क्रम-बचन सपथ सुनि सूरज, और नहीं कछु चहियत॥१६४४॥

वै बातैं जमुना-तीर की।
कबहुँक सुरति करत हैं मधुकर हरन हमारे चीर की।
लीन्हे बसन देखि ऊँचे द्रुम, रवकि चढ़न बलबीर की।
देखि देखि सब सखी पुकारति अधिक जुड़ाई नीर की।
दोउ हाथ जोरि करि माँगैं दुहाई नंद अहीर की।
सूरदास-प्रभु सब सुख-दाता, जानत हैं पर-पीर की॥१६४५॥

प्रेम न रुकत हमारे बूतैं।
किहिं गयंद बाँध्यौ, सुनि मधुकर, पदुम नाल के काँचे सूतैं?
सोवत मनसिज आनि जगायौ, पठै सँदेस स्याम के दूतैं।
बिरह-समुद्र सुखाय कौन बिधि रंचक जोग-अगिनि के लूतैं।
सुफलक सुत अरु तुम, दोऊ मिलि, लीजै मुकुति हमारे हूतैं।
चाहति मिलन सूर के प्रभु कौं क्यौं पतियाहिं तुम्हारे धूतैं॥१६४६॥

ऊधौ, अब हम समुझि भई।
नँद-नँदन के अंग-अंग-प्रति, उपमा न्याय दई॥

कुंतल कुटिल भँवर भामिनि वर, मालति भुरै लई ॥
तजत न गहरु कियौ उन कपटी जानी निरस भई ।
आनन इंदु बिमुख संपुट तजि करषे तें न नई ।
निर्मोही नव नेह कुमुदिनी, अंतहु हेम हई ॥
तन घन-सजल सेइ निसि-बासर, रटि रसना छिजई ।
सूर बिबेक-हीन चातक मुख बूँदौ तौ न सई ॥१६४७॥

ऊधौ सुनहु नैंकु जौ बात ।
अबलनि कौं तुम जोग सिखावत, कहत नहीं पछितात ॥
ज्यौं ससि बिना मलीन कुमुदिनी रबि बिनुहीं जलजात ।
त्यौं हम कमलनैन बिनु देखे तलफि-तलफि मुरझात ॥
जिन स्रवननि मुरली सुर अँचयौ, मुद्रा सुनत डरात ।
जिन अधरनि अमृत फल चाख्यौ ते क्यौं कटु फल खात ॥
कुसुम चंदन घसि तन लावति तेहि न बिभूति सुहात ।
सूरदास प्रभु बिनु हम यौं हैं, ज्यौं तरु जीरन पात ॥१६४८॥

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं ।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं कैसैं ध्यान धराहीं ॥
तेई मूँदन नैन कहत हौ हरि मूरति जिन माहीं ।
ऐसी कथा कपट की मधुकर हमतैं सुनी न जाहीं ॥
स्रवन चीरि सिर जटा बँधावहु बिरह अनल अति दाही ।
चंदन तजि अँग भस्म बतावत बिरह अनल अति दाही ॥
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले सो तौ है अप माहीं ।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं ॥१६४९॥

हम तौ नंद-घोष की बासी ।
नाम गुपाल, जाति-कुल गोपक, गोप गुपाल उपासी ॥
गिरिवर धारी गोधन चारी, बृंदाबन अभिलाषी ।
राजा नंद जसोदा रानी सजल नदी जमुना सी ॥

मीत हमारे परम मनोहर, कमलनैन सुखरासी।
सूरदास-प्रभु कहौं कहाँ लौं, अष्ट महा-सिधि दासी ॥१६५०॥

यह गोकुल गोपाल उपासी।
जे गाहक निरगुन के ऊधौ, ते सब बसत ईस-पुर कासी।
जद्यपि हरि हम तजी अनाथ करि, तदपि रहतिं चरननि रस-रासी।
अपनी सीतलता नहिं छाँड़त, जद्यपि बिधु भयौ राहु-गरासी॥
किहिं अपराध जोग लिखि पठवत प्रेम-भगति तैं करत उदासी।
सूरदास ऐसी को बिरहिनि माँगि मुक्ति छाँड़ै गुन रासी ॥१६५१॥

हम तन सकल स्याम ब्रत धारी।
बिना गुपाल और जिहिं भावै, तिहिं कहियै ब्यभिचारी।
जोग मोट सिर बोझ आनि तुम, कत धौं घोष उतारी।
इतनिक दूरि जाहु चलि कासी जहाँ बिकत है प्यारी॥
यह संदेस सुनै को मधुकर प्रीति अनन्य हमारी।
जो रस-रीति करी हरि हमसौं, सो क्यौं जाति बिसारी॥
महा मुक्ति कोऊ नहिं बूझै, जदपि पदारथ चारी।
सूरदास-स्वामी मनमोहन मूरति की बलिहारी ॥१६५२॥

ऐसी सुनियत द्वै बैसाख।
देखति नहीं ब्यौंत जीबे कौ, जतन करौ कोउ लाख॥
मृगमद मलय कपूर कुमकुमा केसर मलियै साख।
जरत अगिनि मैं ज्यौं घृत नायौ तन जरि ह्वै है राख॥
ता ऊपर लिखि जोग पठावत, खाहु नीम, तजि दाख।
सूरदास ऊधौ की बतियाँ सब उड़ि बैठीं साख ॥१६५३॥

इहिं बिधि पावस सदा हमारे।
पूरब पवन स्वाँस उर ऊरध, आनि मिले इकठारे॥
बादर स्याम सेत नैननि मैं, बरसि आँसु जल ढारे।
अरुन प्रकास पलक दुति दामिनि, गरजनि नाम पियारे॥

चातक दादुर मोर प्रगट अब, बरषत निरंतर धारैं ।
ऊधव, ये सब तैं भटके अब, स्याम धों किन हारे ॥
कहिये काहि सुनै अब कोऊ या ब्रज के ब्यौहारे ।
तुमही सौं कहि-कहि पछितानी, सूर बिरह के मारे ।१६५४।

ऊधौ, कोकिल कूजत कानन ।
तुम हमकौ उपदेस करत हौ भस्म लगावन आनन ॥
औरौ सिखी सखा सँग लै लै टेरत चढ़े पखानन ।
पहुँची आइ पपीहा कै मिस, मदन हनत निज बानन ।
हमतौ निपट अहीरि बावरी जोग दीजियै ज्ञानन ।
कहा कथत मामी के आगैं जानत नानी नानन ॥
तुम तौ हमैं सिखावन आए जोग होइ निरबानन ।
सूर मुक्ति कैसैं पूजति है वा मुरली के तानन ।१६५५।

हमतैं हरि कबहूँ न उदास ।
राते खिलाइ, पिवाइ अधर रस क्यौं बिसरत ब्रज-बास ।
तुमसौं प्रेम कथा कौ कहिबौ, मनौ काटिबौ घास ।
बहिरौ तान स्वाद कह जानै, गूँगौ बात-मिठास ।
सुनि री सखी, बहुरि हरि ऐहैं, वह सुख, वहै बिलास ।
सूरदास ऊधौ अब हमकौं भयौ तेरहौं मास ।१६५६।

तेरौ बुरौ न कोऊ मानै ।
रस की बात मधुप नीरस सुनि, रसिक होइ सो जानै ।
दादुर बसै निकट कमलनि कै, जनम न रस पहिचानै ।
अलि अनुराग उड़न मन बाँध्यौ कहैं सुनत नहिं कानै ॥
सरिता चली मिलन सागर कौं, कूल मूल द्रुम भानै ।
कायर बकै लोह तैं भाजै, लरै सो सूर बखानै ।१६५७।

आयौ घोष बड़ौ ब्यौपारी ।
खेप लादि गुन ज्ञान जोग की ब्रज मैं आनि उतारी ॥

तुम चंचल, वै चोर सकल अँग, बातन कौं पतियात।
सूर बिधाता धोखैं रचे हैं, मधुप-स्याम इक गात ॥१६६१॥

ऊधौ, तुम अति चतुर सुजान।
जे पहिलैं मन रँगे स्याम रँग, तिन न चढ़ै रँग आन।
ए दोऊ लोचन बिराट के, स्रुति कहैं एक समान।
भेद चकोर कियौ तिहूँ मैं, बिधु प्रीतम, रिपु भान।
बिरहिनि बिरह भजैं पा लागौं, तुम हौ पूरन ज्ञान।
दादुर जल बिनु जियै पवन भखि, मीन तजै हठि प्रान।
बारिज बदन नैन मेरे षटपद, कब करिहैं मधुपान।
सूरदास गोपिनि-परतिज्ञा, छुवहिं न जोग बिरान ॥१६६२॥

ऊधौ बिरहौ प्रेम करै।
ज्यौं बिनु पुट पट गहत न रँग कौं, रँग न रसै परै।
ज्यौं धर दहैं बीज अंकुर गिरि, तौ सत फरनि फरै।
ज्यौं घट अनल दहत तन अपनौ, पुनि पय अमी भरै।
ज्यौं रन सूर सहै सर सन्मुख, तौ रबि-रथहुँ अरै।
सूर गुपाल-प्रेम पथ चलि करि, क्यौं दुख सुखनि डरै ॥१६६३

मधुकर, प्रीति किये पछितानी।
हम जानी ऐसैंहि निबहैगी, उन कछु औरै ठानी।
वा मोहन कौ कौन पतीजै, बोलत मधुरी बानी।
हमकौं लिखि-लिखि जोग पठावत, आपु करत रजधानी।
सूनी सेज सुहाइ न हरि बिनु, जागत रैनि बिहानी।
जब तैं गवन कियौ मधुबन कौं, नैननि बरसत पानी।
कहियौ जाइ स्याम-सुंदर कौं, अंतरगत की बानी।
सूरदास प्रभु मिलि कै बिछुरे, तातैं भई बिरानी ॥१६६४॥

हमारैं हरि हारिल की लकरी।
मन-क्रम-बचन नंद-नंदन उर, यह दृढ़ करि पकरी।

जागत-सोवत स्वप्न दिवस-निसि, कान्ह-कान्ह जक री।
सुनत जोग लागत है ऐसौ ज्यौं करुई ककरी।
सु तौ ब्याधि हमकौं लै आए, देखी, सुनी, न करी।
यह तौ सूर तिनहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी॥१६६०॥

हरि हैं राजनीति पढ़ि आए।
समुझी बात कहत मधुकर के, समाचार सब पाए।
इक अति चतुर हुते पहिलैं ही, अब गुरु ग्रंथ पढ़ाए।
बढ़ी बुद्धि जानी जो उनकी, जोग सँदेस पठाए।
ऊधौ, भले लोग आगे के, पर हित डोलत धाए।
अब अपने मन फेर पाइहैं, चलत जु हुते चुराए।
ते क्यौं अनीति करैं आपुन, जे और अनीति छुड़ाए।
राज-धरम तौ यहै सूर, जो प्रजा न जाहिं सताए॥१६६१॥

कहा होत जौ हरि हित चित धरि एक बार ब्रज आवते।
तरसत ब्रज के लोग दरस कौं निरखि-निरखि सुख पावते।
मुरली सब्द सुनावत सबहिनि, हरते तन की पीर।
मधुरे बचन बोलि अमृत मुख बिरहिनि देते धीर।
सब मिलि संग अंस गावत उनकौ, हरष मानि उर आनत।
नासत बिथा ब्रज-बनितनि की, अगम सुगम करि आनत।
दुरी-दुरा की टोक न कोऊ, खेलत हैं ब्रज गलियौं।
बाल-दसा अपटाइ गहत हैं हँसि-हँसि हमरी बहियौं।
हम दासी बिनु मोल की उनकी, हमहिं जु चित बिसारी।
इत तैं उन हरि रमि रहे अब तौ कुबिजा भई पियारी।
हिय मैं पाऊँ समुझि-समुझि कै, लोचन भरि-भरि आए।
सूर सनेही स्याम प्रीति के, ते अब भए पराए॥१६६२॥

मधुकर, आपुन होहिं बिराने।
बाहर हेत हितू कहवावत, भीतर काज सयाने।

ज्यौं सुक पिंजर माहिं उचारत, ज्यौं-ज्यौं कहत बखाने।
छूटत ही उड़ि मिले अपुन कुल, प्रीति न पल ठहराने।
यद्यपि मन नहिं तजत मनोहर, तद्यपि कपटी जाने।
सूरदास प्रभु कौन काज कौ, माखी मधु लपटाने ॥१६६८॥

मधुकर, तुम हौ स्याम सखाई।
पा लागौं यह दोष बकसियौ सनमुख करत ढिठाई।
कौनैं रंक संपदा बिलसी सोवत सपनैं पाई।
किहिं सोने की उड़त चिरैया डोरी बाँधि खिलाई।
धाम धुआँ के कहौ कौन के, बैठी कहाँ अथाई।
किहिं अकास तैं तारि तरैया आनि धरी घर माई।
कालनि की माला कर अपनैं कौनैं गूँथि बनाई।
किहिं कागद की तरनी कीन्ही कौन तरयौ सर जाई।
कौनैं अबला नैन मूँदि कै, जोग-समाधि लगाई।
इहिं उर आन रूप देखन की आगि उठी अकुलाई।
सुनि ऊधौ, तुम फिरि फिरि गावत यामैं कौन बड़ाई।
सूरदास-प्रभु ब्रज-जुवतिनि कौ प्रेम कह्यौ नहिं जाई ॥१६६९॥

ऊधौ क्यौं बिसरत वह नेह।
हमरैं हृदय आनि नँद-नंदन, रचि-रचि कीन्हे गेह।
एक दिवस गई गाइ दुहावन, वहाँ जु बरस्यौ मेह।
लिए उढ़ाइ कामरी मोहन, निज करि मानी देह।
अब हमकौं लिखि-लिखि पठवत हैं, जोग-जुगुति तुम लेहु।
सूरदास बिरहिनि क्यौं जीवैं, कौन सयानप एह ॥१६७०॥

ऊधौ मन माने की बात।
दाख-छुहारा छाँड़ि अमृत फल बिष-कीरा बिष खात।
ज्यौं चकोर कौं देइ कपूर कोउ, तजि अँगार अघात !
मधुप करत घर कोरि काठ मैं बँधत कमल के पात।

ज्यौं पतंग हित जानि आपनी, दीपक सौं लपटात।
सूरदास जाकौ मन जासौं, सोई ताहि सुहात ॥१६७१॥

हरि अब बहुरि न गोकुल आए।
सुनि री सखी, हमारी करनी समुझि मधुपुरी छाए।
अधरातक तैं उठि सब बालक, मोहिं टेरैंगे आइ।
मातु-पिता मोकौ पठवैंगे बनहिं चरावन गाइ।
सूने भवन आइ रोकैंगी, दधि चोरत नवनीत।
पकरि जसोदा पै लै जैहैं, नाचहु गावहु गीत।
ग्वारिनि मोहिं बहुरि बाँधैंगी, केतव वचन सुनाइ।
वै दुख सूर सुमिरि मन ही मन, बहुरि सहै को जाइ ॥१६७२॥

जौ कोउ बिरहिनि कौ दुख जानै।
तौ तजि सगुन साँवरी मूरति क्यौं उपदेसै आनै।
कुमुद चकोर मुदित बिधु निरखत, कहा करै लै भानै।
चातक सदा स्वाति कौ सेवक, दुखित होत बिनु पानैं।
भौंर कुरंग काग, कोइल कौं कबिजन कपट बखानै।
सूरदास जौ सरबस दीजै कारे कृतहिं न मानैं ॥१६७३॥

ऊधौ, सुधि नाहीं या तन की।
जाइ कहौ तुम कित ही भूले हमऊ भई बन-बन की।
इक बन ढूँढि सकल बन ढूँढे बन-बेली मधुबन की।
हारी परी वृंदावन ढूँढत, सुधि न मिली मोहन की।
किए बिचार उपचार न लागत, कठिन बिथा भइ मन की।
सूरदास कोउ कहै स्याम सौं, सुरति करै गोपिनि की ॥१६७४॥

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसैं छूटत।
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत।
वह चितवनि, वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर-भेष नंद-नंदन कौ वह बिनोद, वह बन तैं आवनि।

चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं बिष सौं लागत ।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन-मूरति सोवत जागत ॥१६७५

हरि-रस तौ ब्रजबासी जानैं ।

पन्न-सुधा-रस पियत मधुप ज्यौं, चरन कमल रुचि मानैं ॥
ब्रह्म-लोक सिव-लोक माहिं सुख निगम जु नेति बखानैं ।
सो रस गिरिवरधारी कैं सँग, बिहरत सिव बखानैं ॥
नैन बिसाल स्याम-सुन्दर के, रंजन भृकुटी तानैं ।
सूरदास प्रभु छबि सीमा की मैन अवधि मनुमानैं ॥१६७६॥

मधुकर यह सुख तुमसे दूरि ।

देख्यौ सुन्यौ न परस्यौ रंचक, रबिहु न लागी धूरि ॥
अब तौ जोग सिखावन आए, तजि हरि जीवन मूरि ।
चितवनि मंद हँसनि गति परसनि हृदय रही भरिपूरि ।
सो मन जो घट हाथ तिहारे, मुक्ति चलै पग धूरि ।
मथुरा जाइ सूर-प्रभु पूछहि, मागिहौ नपहिं बिसूरि ॥१६७७॥

मैं ब्रजबासिनि की बलिहारी ।

जिनके संग सदा क्रीड़त हैं श्री गोवरधन धारी ॥
जिनहूँ कैं घर माखन चोरत, जिनहूँ कैं सँग दानी ।
जिनहूँ कैं सँग धेनु चरावत हरि की अकथ कहानी ॥
जिनहूँ कैं सँग जमुना कैं तट बंसी टेरि सुनावत ।
सूरदास बलि-बलि चरननि की, यह सुख मोहिं नित भावत ॥

हौं इन मोरनि की बलिहारी ।

जिनकी सुभग चंद्रिका माथे, धरत गोवरधन धारी ॥
बलिहारी वा बाँस-बंस की बंसी सी सुकुमारी ।
सदा रहति है कर जु स्याम कैं, नैंकहुँ होति न न्यारी ॥
बलिहारी वा गुंज-जाति की, उपजी जगत उज्यारी ।
सुंदर हृदय रहत मोहन कैं, कबहूँ [illegible]

बलिहारी कुंज-सैल-सरित, जिहिं कहत कलिंद-कुमारी।
निसि-दिन कान्ह-अंग-आलिंगन आपुनहूँ भई कारी॥
बलिहारी वृंदावन भूमिहिं, सुनी भाग की सारी।
सूरदास-प्रभु नाँगे पाइनि, दिन प्रति गैयाँ चारी॥१६८४॥

इम पर हेत किए रहिबौ।
या ब्रज की ब्यौहार सखा तुम, हरि सौं सब कहिबौ॥
देखी बात आपनी अखियनि, या तन की दहिबौ।
तन की बिथा कहा कहौं तुमसौं, यह हमकौं सहिबौ॥
तब न कियौ प्रहार प्राननि कौ, फिरि फिरि क्यौं चहिबौ।
अब न देह जरि जाइ, सूर इनि नैननि कौ बहिबौ॥१६८५॥

स्वामी, पहिलौ प्रेम सँभारौ।
ऊधौ, जाइ चरन गहि कहियै, जी तैं हित न बिसारौ॥
सो तुम मधुबन राज-काज गए, गोकुल हम न बिचारौ।
कमल-नयन सो चैन न देखौ, निसि उठि गोधन चारौ॥
ये ब्रज-लोग सखा के सेवक, तिनसौं क्यौं न बिहारौ।
सूरदास-प्रभु एक बार मिलि, सकल बिरह-दुख टारौ॥१६८६॥

कर-कंकन तैं भुज-टॉड भई।
मधुबन चलत स्याम मनमोहन आवन अवधि जु निकट दई॥
पूजत गौरि, मनावत संकर, बासर-निसि मोहिं गनत गई।
पाती लिखत बिरह तन ब्याकुल कागर गयौ नीर मई॥
ऊधौ मुख के बचननि कहियौ, हरि की सुख नित-प्रति जु भई।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, मानौ बंसी मीन दई॥१६८७॥

ऊधौ जू, कहियौ तुम हरि सौं जाइ हमारे हिय कौ दरद।
दिन नहिं चैन, रैन नहिं सोवतिं पावक भई जुन्हाई सरद॥
जब तैं लै अक्रूर गए हैं, भई बिरह तन बाइ बरद।
काम प्रबल अति ऊधौ, सीतल भइ जस सीत दरद॥

सदा प्रवीन निरंतर हरि पै, तातैं कहति हैं ग्वालि परद।
स्यामहिं रूप दरस तजि हरि कौ सूर मूरि बिनु हानि सुरद।

ऊधौ इक पतिया हमरी लीजै।
चरन लागि गोबिंद सौं कहियौ लिख्यौ हमारौ दीजै॥
हम तौ कौन रूप-गुन आगरि जिहिं गुपाल जू रीझैं।
निरखत नैन-नीर भरि आए, अरु कंचुकि पट भीजैं॥
तलफत रहति मीन चातक ज्यौं जल बिनु तृषा न छीजै।
अति व्याकुल अकुलाति बिरहिनी सुरति हमारी कीजै॥
अँखियाँ रही निहारति मधुबन हरि बिनु कब लगि जीजै।
सूरदास प्रभु कबहिं मिलैंगे देखि-देखि मुख जीजै॥१६८७॥

हम मतिहीन कहा कछु जानैं ब्रजबासिनी अहीरि।
वै जु किसोर सकल सागर नग बहुत भूप की भीर॥
बचन की लाज सुरति करि राखौ,तुम अलि हमरी कहियौ।
मथी सद जो दूत पठायौ, इनकी कोप निबहियौ॥
इक बार तौ मिलौ कृपा करि जो अपनी ब्रज जानौ।
यहै रीति संसार सबनि की कहा रंक, कह रानौ॥
हम अनाथ तुम नाथ गुसाँ , राखौ क्यौ नहिं माई।
पग रिनु ब्रज पै ब्याति पुकारैं सूरदास अब सोई॥१६८८॥

मदनमोहन सौं हमरी कहियौ।
जदपि ब्रज अनाथ करि डारयौ तदपि सुरति किए बिन रहियौ।
तिनका-तोर करहु जनि हम सौं एक बास की लाज निबहियौ।
गुन औगुननि दोष नहिं कीजहु हम दासिनि की इतनी सहियौ।
तुम बिनु प्रान, कहा हम करिहैं यह अवलंब न सुपनेहु लहियौ।
सूरदास पाती लिखि पठई, जहौ प्रीति नहीं और निबहियौ॥१६८९॥

ऊधौ, इतनी जाइ कहौ।
सबै बिरहिनी पा लागति हैं, मथुरा कान्ह रहौ॥

सुमिरहु बनि आवहु हरि गोकुल, तपति तरनि ज्यौं चंद।
सुंदर-बदन स्याम कोमल तन क्यौं सहिहैं नँदनंद॥
मधुकर, मोर, प्रबल पिक, चातक, बन उपबन चढ़ि बोलत
मनहु सिंह की गरज सुनत गो-बच्छ दुखित तन डोलत॥
आसन असन बसन बिष, अहि-सम भूषन बिबिध बिहार
जित तित फिरत दुसह द्रुम-द्रुम प्रति धनुष धरे सत मार
तुम ही संत सदा उपकारी, जानत हौ सब रीति।
सूर स्याम कौं क्यौं बोलैं ब्रज, बिनु टारे यह ईति॥१६८७।

बिनु गुपाल बैरिनि भई कुंजैं।
तब ये लता लगति तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं॥
वृथा बहति जमुना खग बोलत वृथा कमल फूलनि, अलि-गुंजैं।
पवन, पान, घनसार सजीवन दधि-सुत-किरनि भानु भईं भुंजैं॥
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौं मग-जोवत अँखियाँ भईं पुंजैं॥१६८८

ऊधौ, इतनी कहियौ बात।
मदन-गुपाल बिना या ब्रज मैं होन लगे उतपात॥
तृनावर्त, बक, बकी, अघासुर, धेनुक फिरि फिरि आत।
ब्योम, प्रलंब, कंस केसी इत, करत जिअनि की घात॥
काली काल-रूप दिखियत है जमुना जलहिं अन्हात।
बरुन फाँस फाँस्यौ चाहत है सुनियत अति मुरझात॥
इन्द्र आपने परिहँस कारन बार बार अनखात।
गोपी गाइ गोप गोसुत सब थर-थर काँपत गात॥
अंचल फारनि जननि जसोदा पाग लिए कर भ्रात।
लागी बेगि गुहारि सूर-प्रभु गोकुल बैरिनि घात॥१६८९।

ऊधौ इतनी कहियौ जाइ।
अति कृस गात भईं ये तुम बिनु परम दुखारी गाइ॥

जल-समूह बरषति दोउ अँखियाँ, हूँकति लीन्हैं नाउँ ।
जहाँ जहाँ गो दोहन कीन्हौ, सूँघति सोई ठाउँ ॥
परति पछार खाइ छिन ही छिन, अति आतुर ह्वै दीन ।
मानहु सूर काढ़ि डारी है, बारि मध्य तैं मीन ।।१९६०।

अति मलीन वृषभानु-कुमारी ।
हरि-स्रम-जल भीज्यौ उर अंचल तिहिं लालच न धुवावति सारी ।
अध मुख रहति अनत नहिं चितवति ज्यौं गथ हारे थकित जुवारी ।
छूटे चिहुर, बदन कुम्हिलाने ज्यौं नलिनी हिमकर की मारी ॥
हरि-सँदेस सुनि सहज मृतक भइ, इक बिरहिनि, दूजे अलि जारी ।
सूरदास कैसैं करि जीवै ब्रज-बनिता बिन स्याम दुखारी ।।१९६१।

ऊधौ, तुमहिं स्याम की सौंहैं ।
मुख दैसन कहियौ तुम उनसौं छिन-छिन लगी मदन की भौंहैं ॥
जो मन जोग जुगुति आराधै सो मन तौ सबकौ उन पै है ।
जैसैं पवन उड़त है पन्नग सो गति करी कान्ह हमकौं है ॥
हम बावरी ज्यौं न पति जान्यौ ज्यौं गज चलत आपनी गौंहैं ।
सूरदास कपटी बिन माधव कुबिजा मिली कपट की सौंहैं ।।१९६२

मधुकर कहियौ सुनि सँदेसी ।
समय पाइ समुझाइ स्याम सौं हम जिय बहुत अँदेसी ॥
एक बार रस-रास हमारे मन मुरली सौं हरे सी ॥
तब बन धेनु बजाइ बुलाई अब निरगुन उपदेसी ॥
और बार बन जोग-जुगुति कौ, भेद न कबहूँ परे सी ।
तब पतिव्रत तुम परम पढ़त अब उपरौ ज्ञान गरे सी॥
और कहौं सौं हम कहैं ऊधौ अबलनि कौं दुख ऐसी ।
सूरदास इन पर हम मरियत, कुबिजा के बस कैसी ।।१९६३।

अब अति चकितवंत मन मेरौ ।
आयौ हौ निरगुन उपदेसन, भयौ सगुन कौ चेरौ ।

कहियौ जसुमति की आसीस।
जहाँ रहौ तहँ नंद-लाड़िले, जीवौ कोटि बरीस।
मुरली दई दोहनी घृत भरि, ऊधौ धरि लइ सीस।
यह घृत उनहीं सुरभिनि कौ, जे प्यारी जगदीस।
ऊधौ चलत सखा मिलि आए, ग्वाल-बाल दस-बीस।
अबकै यह ब्रज फेरि बसावहु, सूरदास के ईस ॥१७०३॥

(ऊधौ) देखत हौ जैसे ब्रजबासी।
लेत उसाँस नैन-जल पूरत, सुमिरि-सुमिरि अबिनासी।
भूलि न उठति जसोदा जननी, मनौ भुवंगम-डासी।
छूटत नहीं प्रान क्यौं अटके, कठिन प्रेम की फाँसी।
आवत नहीं नंद-मंदिर मैं, भयौ फिरत बनबासी।
परम मलीन धेनु दुर्बल भईं, स्याम-बिरह की त्रासी।
गोपी-ग्वाल-सखा बालक सब कहूँ न सुनियत हाँसी।
काहैं दियौ सूर सुख मैं दुख, कपटी कान्ह बिलासी ॥१७०४

(ट) आश्वासन

ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ।
तब की कथा कृपा करि कहियै, हम सुनिहैं मन लाइ।
बाबा नंद जसोदा मैया मिले कौन हित आइ।
कबहूँ सुरति करत माखन की, किधौं रहे बिसराइ।
गोप-सखा दधि-भात खात बन, अरु चाखते चखाइ।
गाइ-बच्छ मुरली सुनि उमहत, अब जु रहत किहिं भाइ॥
गोपिनि गृह-ब्यवहार बिसारे, मुख सन्मुख सुख पाइ।
पलक ओट निमि पर अनखातीं यह दुख कहौं समाइ॥
एक सखी उनमैं जो राधा, हेति मनहिं जु पुराइ।
सूर स्याम यह बार-बार कहि, मनही मन पछिताइ।।१७०५।

ब्रज के निकट, आइ फिरि आयौ।
गोपिनि-नैन-नीर-सरिता तैं पार न पहुँचन पायौ।
तुम्हरौ सीस सु नाव बैठि कै, जादव पार गयौ।
ज्ञान-ध्यान-ब्रत नेम जोग कौ, सँग परिवार लयौ॥
इहिं तट तैं चलि जात मैं कुबजा बिरह-पवन झकझोरै।
सुरति-सुरुख की मारि चाबुकन, टूक-टूक करि तोरै॥
हौ हूँ बूड़ि चल्यौ या गहिरैं, देखिक बुड़ती हाई।
ना जानौं यह जोग बापुरौ, कहूँ धौं गयौ गुमाई॥

जानत हुती थाह या जल की, भी तरिबे की पीर।
सूर कहा जु कहा कहीं उनकी परयौं प्रेम की भीर ।१७०५।

ब्रज मैं ह्वाँ तैं जु गयौ।
तब ब्रजराज सकल गोपीजन, आगैं होइ लयौ।
उतरे आइ नंद बाबा कैं सबहीं सीस नयौ।
मेरी सौं, मौसौं साँची कहि, मैया कहा कह्यौ?
बारंबार कुसल पूछी मोहिं लै लै तुम्हरौ नाम।
ज्यौं जल सूखे बहत बालक-बिच कृष्न-कृष्न-बलराम॥
सुंदर परम बिचित्र मनोहर, यह मुरली दै पाली।
सई ल्याइ सुख मानि सूर प्रभु, प्रीति जानि उर साली ।१७०

सुनियै ब्रज की दसा गुसाईं।
रथ की धुजा, पीत-पट, भूषन देखत ही उठि धाईं॥
जो तुम कही जोग की बातैं सो हम सबै बताईं।
स्रवन मूँदि गुन-कर्म तुम्हारे, प्रेम-मगन मन गाईं॥
औरौ कछू सँदेस सखी इक, कहत दूरि लौं आईं।
हुतौ कछू हमहूँ सौं नातौ निपट कहा बिसराईं॥
सूरदास प्रभु बन बिनोद करि जे तुम गाइ चराईं।
ते गाईं अब ग्वाल न घेरत मानौ भईं पराईं ।१७०८।

ब्रज के बिरही लोग दुखारे।
बिनु गोपाल ठगे से ठाढ़े अति दुर्बल तन कारे॥
नंद-जसोदा मारग जोवति, निसि-दिन साँझ-सकारे॥
चहुँ दिसि कान्ह-कान्ह कहि टेरति अँसुवन बहत पनारे।
गोपी ग्वाल गाइ, गो-सुत सब, अतिहीं दीन बिचारे।
सूरदास-प्रभु बिनु यौं देखियत, चंद बिना ज्यौं तारे ।१७०६

चित दै सुनौ स्याम प्रबीन।
हरि तुम्हारैं बिरह राधा मैं जु देखी छीन।

तज्यौ तेल-तमोल भूषन, अंग बसन मलीन।
कंकना कर रहत नाहीं, टाँड भुज गहि लीन॥
जब सँदेसौ कहन सुंदरि गवन मो तन कीन।
छुटी छुद्रावलि, चरन अरुझी, गिरी बलहीन॥
कंठ बचन न बोलि आवै, हृदय परिहस भीन।
नैन जल भरि रोइ दीन्हौ, ग्रसित आपद दीन॥
उठी बहुरि सँभारि भट ज्यौं, परम साहस कीन।
सूर हरि के दरस कारन, रही आसा लीन॥१०१६॥

फिरि ब्रज बसौ नंदकुमार।
हरि तिहारे बिरह राधा भई तन जरि छार॥
बिनु अभूषन मैं जु देखी, परी है बिकरार।
रहई रट रटत भामिनि पीय पीय पुकार॥
सजल लोचन चुवत उनके, बहति जमुना-धार।
बिरह अगिनि प्रचंड उनकें, जरे हाथ लुहार॥
दूसरी गति और नाहीं रटति बारंबार।
सूर प्रभु कौ नाम उनकै, लकुट अंध अधार॥१०११॥

तुम्हरे बिरह ब्रजनाथ राधिका नैननि-नदी बढ़ी।
लीने जात निमेष कूल दोउ, एते मान चढ़ी॥
पथिक न सकत गोकुल नौका ली, नील-पलक दल बोरति।
ऊरध स्वास समीर तरंगनि तेज तिलक-तरु तोरति॥
कज्जल-कीच कुचील किए तट, अंचल अधर कपोल।
रहे पथिक जु जहाँ सु तहाँ थकि, हस्त चरन मुख-बोल॥
नाहीं और उपाय रमापति बिनु दरसन क्यौं जीजै।
आँसु-सलिल बूड़त सब गोकुल, सूर सु कर गहि लीजै॥१०१०

ब्रज तैं द्वै रितु पै न गई।
ग्रीषम अरु पावस प्रबीन हरि, तुम बिनु अधिक भई॥

ऊर्ध उसाँस समीर नैन घन, सब जल जोग जुरे।
बपि प्रगट कीन्हे दुख दादुर, हुते जो दूरि दुरे।
बिषम बियोग जु बृष दिनकर सम, हिय अति उदौ करै।
हरि पद बिमुख भए सुनि सूरज, को तन ताप हरै।।१७११।

कहाँ लौं कहिये ब्रज की बात।
सुनहु स्याम, तुम बिनु उन लोगनि, जैसैं दिवस बिहात॥
गोपी-ग्वाल-गाइ-गोसुत सब, मलिन बदन, कृस गात।
परम दीन जनु सिसिर हेम हत, अंबुजगन बिनु पात॥
जो कोउ आवत देखि दूरि तैं, उठि पूछत कुसलात।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरननि लपटात॥
पिक-चातक बन बसन न पावत, बायस बलि नहिं खात।
सूर स्याम संदेसनि कैं डर, पथिक न उहिं मग जात॥१७१४॥

कहि न परति हरि, ब्रज की बात।
नर नारी पंछी द्रुम बेली, दरसन कौं अकुलात॥
सब द्रुम हे तब बनफल फलते, यहँ अब पुहुप न पात।
कोकिल नाहिं कपोत कुलाहल करत नहीं उठि प्रात॥
गो-मृग निकसि नवाइ नैन-मुख, अति दुख तृन नहिं खात।
गोपी-ग्वाल उसाँस हुतासन बिरह ज्वाल अकुलात॥
गोकुल की यह बिपति कहा कहौं, तुम बिनु हो जदुनाथ।
सूरदास-स्वामी-दरसन की, करत सुरति दिन-रात॥१७१५॥

दिन दस घोष चलहु गोपाल।
गाइन की अवसेरि मिटावहु, मिलहु आपने ग्वाल॥
नाचत नहीं मोर ता दिन तैं, रटत न बरषा-काल।
मृग दूबरे तुम्हरे दरसन बिनु, सुनत न बेनु रसाल॥
बृंदाबन हर्यौ होत न भावत, देख्यौ स्याम तमाल।
सूरदास मैया अनाथ है घर चलियै नँदलाल॥१७१६।

ऊधौ भली ज्ञान समुझायौ।
तुम मोसौं अब कहा कहत हौ, मैं कहि कहा पठायौ॥
कहावत हौ अति चतुर पै यहाँ न कछु कहि आयौ।
सूरदास ब्रज-बासिनि कौ हित हरि हिय माहँ दुरायौ॥१५०९॥

मैं समुझायौ अति अपनौ सौ।
तदपि उन्हैं परतीति न उपजी, सबै लख्यौ सपनौ सौ॥
कही तुम्हारी सबै कही मैं और कही कछु अपनी।
स्रवननि बचन सुनत भइ उनकैं, ज्यौं घृत नाएँ अगिनी॥
कोऊ कहौ बनाइ पचासक उनकी बात जु एक॥
धन्य धन्य ब्रजनारि बापुरी जिनकी और न टेक॥
देखत उमग्यौ प्रेम हहाँ कौ धरे रहे सब ऊधौ।
सूर स्याम हौं रह्यौ ठग्यौ सौ ज्यौं मृग चौकि भूलौ॥१५१०॥

तातैं सुनहु हौ स्याम सुनाऊँ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की क्यौं न इतौ दुख पाऊँ।
हौं पचि एक कही निरगुन की, ताहू मैं अटकाऊँ।
वै उमड़ें बारिधि के जल ज्यौं क्यौंहूँ थाह न पाऊँ॥
कौन कौन कौ उत्तर दीजै तातैं भज्यौ अगाऊँ।
वै मेरे सिर पटिया पारैं कंथा काहि उढ़ाऊँ॥
एक आँधरी, हिय की फूटी, दौरत पहिरि खराऊँ।
सूर सकल षटदरसन वै हौं बारहखरी पढ़ाऊँ॥१५११॥

कहिबे मैं न कछू सक राखी।
बुधि-बिबेक-अनुमान आपनैं मुख आई सो भाषी॥
हौं मरि एक कही पहरक मैं वै छन माहिं अनेक।
हारि मानि उठि चल्यौ दीन ह्वै, छाँड़ि आपनी टेक॥
हौं पठयौ कछही बेकायौ, सठ मूरख जु अयानौ।
तुमहिं बूझ बहुतै बातनि की, कहौं जाहु ही जानी॥

श्री मुख के सिखए ग्रंथारिक, वे सब भए कहानी ।
एक होइ तौ उत्तर दीजै, सर सु मठी अफ़ानी ।।१७२०।।

कोऊ सुनत न बात हमारी ।
मानैं कहा जोग जादवपति, प्रगट प्रेम ब्रजनारी ।।
कोउ कहति हरि गए कुंज-बन, सैन धाम मैं देत ।
कोऊ कहति इंद्र बरषा तकि, गिरि गोबर्धन लेत ।।
कोऊ कहति नाग काली सुनि, हरि गए जमुना तीर ।
कोऊ कहति, अघासुर मारन, गए संग बलबीर ।।
कोऊ कहत, ग्वाल-बालनि सँग खेलत बनहिं लुभाने ।
सूर सुमिरि गुन नाथ तुम्हारे, कोऊ कह्यौ न माने ।।१७२१।।

माधौ जू, कहा कहौं उनकी गति ।
देखत बनै कहत नहिं आवै अति प्रतीति तुम तैं रति ।।
अब ए ही पद नाम रटौ दिन, लही नहीं उनकी मति ।
दासी कहौं, सबै एकै बुधि परबोधी नहिं मानति ।।
तुम कृपालु करुनामय कहियत तातैं मिलत कहा क्षति ।
सूरदास प्रभु सोई कीजै जातैं तुम पावहु पति ।।१७२२।।

कहत न बनै ब्रज की रीति ।
कहा मौं सठ कौं पठायौ, देखि उनकी प्रीति ।।
जुवति-बल्लभ कत कहावत, करत सबहि अनीति ।
मोहिं सौं यह कठिन लागत क्यौं करौं परतीति ।।
सुनी भौ ही कान अपनी लोक-लोकनि भीति ।
सूर प्रभु अपनी सचाई रही निगमनि जीति ।।१७२३।।

सबै ब्रज घर-घर एकै रीति ।
ज्यौं कुररीत गाढ़े की लीनी त्यौं प्रभु तुम्हरी प्रति ।।
वे सब परम बिचित्र सयानी अरु सबहीं सग प्रीति ।
उनकौ ग्यान सुनत ही सठ भयौ, ज्यौं बारू की भीति ।।

एकै गहन गह्यौ प्रन हठ करि, मेटि बेद-बिधि नीति ।
गोप बेष भजि सूर स्याम कौं, रही त्रिबिध बर जीति ।१७२४।

ब्रज मैं एकै धरम रह्यौ ।
स्रुति-सुमृति औ बेद-पुराननि, सबै गोबिंद कह्यौ ॥
बालक बृद्ध-तरुन अबलनि कौ, एक प्रेम निबह्यौ ।
सूरदास-प्रभु छाँड़ि जमुन जल, हरि की सरन गह्यौ ।१७२५।

तब तैं इन सबहिनि सचु पायौ ।
जब तैं हरि संदेस तुम्हारौ सुनत ताँवरौ आयौ ॥
फूले ब्याल दुरे ते प्रगटे, पवन पेट भरि खायौ ।
खोले मृगनि चौक चरननि के, हुतौ जु जिय बिसरायौ ॥
ऊँचे बैठि बिहँग सभा मैं सुक बनराइ कहायौ ।
किलकि किलकि कुल सहित आपनैं, कोकिल मंगल गायौ ॥
निकसि कंदराहू तैं केहरि पूँछ मूँड़ पर ल्यायौ ।
गहबर तैं गजराज आइकै, अंगहिं गर्व बढ़ायौ ॥
अब जनि गहरु करहु हो मोहन जौ चाहत हौ ज्यायौ ।
सूर बहुरि ह्वैहै राधा कौ सब बैरिनि कौ भायौ ।१७२६।

माधौ जू सुनौ ब्रज कौ प्रेम ।
साधि मैं षट मास देख्यौ, गोपिकनि कौ नेम ॥
हृदय तैं नहिं टरत टारे, स्याम राम समेत ।
आँसु-सलिल प्रवाह मानौ, अर्घ नैननि देत ॥
चँवर अंचल, कुच कलस बर पानि-पदुम चढ़ाइ ।
सुमिरि तुम्हरौ प्रगट लीला-कर्म उठतीं गाइ ॥
देह गेह सनेह अर्पन, कमल-लोचन ध्यान ।
सूर उनकौ प्रेम देखैं फीकौ लागत ग्यान ।१७२७।

माधौ जू, सुनियै ब्रज ब्यौहार ।
मेरौ कह्यौ पवन कौ भुस भयौ, गावत नंदकुमार ॥

एक ग्वाल गोसुत ह्वै रेंगत एक लकुट कर लेत ।
एक मंडली करि बैठारत छाँक बाँटि इक देत ॥
एक ग्वाल नटवर बपु लीला एक कर्म गुन गावत ।
बहुत भाँति करि मैं समुझायौ, एक न उर मैं आवत ॥
तिमि मापर येही ढँग सब ब्रज, दिन दिन नव तन प्रीति ।
सूर सकल फीकी लागत है, देखत वह रस-रीति ।।१७२८॥

बातैं बूझति यौं बहरावति ।
सुनहु स्याम वै सखी सयानी पावस रितु राधेहिं न सुनावति ॥
घन देखत, गिरि कहति कुसल मति गरजन, गुहा सिंह समुझावति ।
नहिं दामिनि द्रुम-दवा सैल चढ़ि करि बयारि उलटी भर लावति ।
नाहिन मोर बकत पिक-दादुर, ग्वाल-मंडली खगनि खिलावति ।
नहिं नभ-बूंदि भरत सरिता जल परि परि बूंद उचटि इत आवति ।
कबहुँक प्रगट पपीहा बोलत कहि कुपच्छि करतारि बजावति ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, सो बिरहिनि इतनी दुख पावति ।

माधौ जू मैं अतिहीं सचु पायौ ।
अपनी जानि सँदेस ब्याज करि, ब्रज जन मिलन पठायौ ॥
छमा करी तौ करी बीनती, उनहिं देखि जौ आयौ ।
श्रीमुख ग्यान-पंथ जो उचरयौ सो पै कछु न सुहायौ ॥
सकल निगम-सिद्धांत जन्म-क्रम स्यामा सहज सुनायौ ।
नहिं स्रुति, सेष, महेस, प्रजापति जो रस गोपिनि गायौ ॥
कटुक कथा लागी मोहिं मेरी वह रस-सिंधु उमहायौ ।
उत तुम देखे और भाँति मैं, सकल तृषा जु बुझायौ ॥
तुम्हरी अकथ कथा तुम जानौ, हम जन नाहिं बसायौ ।
सूर स्यामसुंदर यह सुनि कै, नैननि नीर बहायौ ।।७३०।

ब्रज मैं संभ्रम मोहिं भयौ ।
तुम्हरौ ग्यान सँदेसौ प्रभु जू, सबै जु भूलि गयौ ॥

तुमही सौं बालक, किसोर वपु मैं घर-घर प्रति देख्यौ।
मुरलीधर घनस्याम मनोहर, अद्भुत नटवर पेख्यौ॥
कौतुक रूप ग्वाल बृंदनि सँग, गाइ चरावन जात।
साँझ-प्रभातहिं गो दोहन मिस चोरी माखन खात॥
नँद-नंदन अनेक लीला करि, गोपिनि चित्त चुरावत।
वह सुख देखि प्रभु नैन हमारे, अब न देख्यौ आवत॥
करि करुना उन दरसन दीन्हौ मैं पचि जोग कही।
घन मानहु पतमास सूर प्रभु देखत मूसि रही ।।१७३१।।

व्रज मैं एक अचंभौ देख्यौ।
मोर मुकुट पीतांबर धारे तुम गाइनि सँग पेख्यौ॥
गोप-बाल सँग धावत तुम्हरैं तुम घर-घर प्रति जात।
दूध दहीउख मही लै डारत चोरी माखन खात॥
गोपी सब मिलि पकरति तुमकौं तुम छुड़ाइ कर भागत।
सूर-स्याम नित प्रति यह सोभा देखि-देखि मन लागत ।।१७३२।।

सुनि ऊधौ मोहिं नैंकु न बिसरत वै व्रजवासी लोग।
हम उनकौं कछु भली न कीन्ही निसि दिन दियौ बियोग॥
अब बसुदेव देवकी मथुरा सकल राज सुख भोग।
तदपि मनहिं बसत बंसी बट बन, जमुना संजोग॥
वै उत रहत प्रेम अवलंबन इत तैं पठयौ जोग।
सूर उसाँस छाँड़ि भरि लोचन बढ़्यौ बिरह-ज्वर-सोग ।।१७३३।।

ऊधौ मोहिं व्रज बिसरत नाहीं।
बृंदाबन-गोकुल-बन-उपबन सघन कुंज की छाहीं।
प्रात समय माता जसुमति अरु नंद देखि सुख पावत।
माखन रोटी दह्यौ सजायौ अति हित साथ खवावत।
गोपी-ग्वाल-बाल सँग खेलत, सब दिन हँसत सिरात।
सूरदास धनि-धनि व्रजबासी जिनसौं हित जदु-तात ।।१७३४।।

ऊधौ, मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंस-सुता की सुंदर कगरी अरु कुंजनि की छाँहीं॥
वै सुरभी, वै बच्छ दोहिनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल-बाल मिलि करत कुलाहल नाचत गहि-गहि बाहीं।
यह मथुरा कंचन की नगरी, मनि-मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की जिय उमगत, तन नाहीं।
अनगन भाँति करी बहु लीला जसुदा-नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि-कहि पछिताहीं।१७२४।

जो जन ऊधौ मोहिं न बिसारत, तिहिं न बिसारौं एक घरी।
मेटौं जनम जनम के संकट, राखौं सुख आनंद भरी॥
जो मोहिं भजै, भजौं मैं ताकौं, यह परमिति मेरे पाइँ परी।
सदा सहाइ करौं वा जन की, गुप्त हुती सो प्रगट करी।
ज्यौं भारत भरुही के अंडा, राखे गज के घंट तरी।
सूरदास ताहि डर काकौ निसि बासर जो जपत हरी।१७२५।

— ❀ —

(ग) द्वारिका-चरित

बार सत्रह जरासंध जब मथुरा पै चढ़ि आयौ।
गयौ सो सब दिन हारि, जात घर बहुत लजायौ।
तब खिस्याइ कै कालजवन अपनैं सँग ल्यायौ।
हरि जू कियौ बिचार, सिंधु-तट नगर बसायौ॥
उग्रसेन सब लै कुटुँब ता ठौर सिधायौ।
अमरपुरी तैं अधिक तहाँ सुख लोगनि पायौ॥
कालजवन मुचकुंदहिं सौं, हरि भसम करायौ।
बहुरि आइ भरमाइ अचल रिपु बारि जरायौ॥
जरासंधहूँ हाँ तैं पुनि निज देस सिधायौ।
गए द्वारिका स्याम राम जस सूरज गायौ।।१७२७।

देखौ री सखि, आजु नैन भरि हरि के रथ की सोभा।
जोग, जज्ञ जप, तप तीरथ-ब्रत कीजत है जिहि लोभा।
चारु चक्र मनि-खचित मनोहर, चंचल चँवर-पताका।
सीस छत्र ज्यौं ससि प्राची दिसि, उदय कियौ निसि राका॥
स्याम सरीर सुदेस पीत-पट, सीस मुकुट उर माल।
मनु दामिनि घन रबि तारा-गन, प्रगट एक ही काल॥
उपजति छबि अति अमर संत मिलि सुमिरत सब्द प्रसंस।
मानहु अरुन कमल मंडल मैं कूजत हैं कल हंस॥

भवन सुपासहिं देखत [illegible] भय, सब दुख-सोक बिसारे।
बैठे हैं सुफलकसुत गोकुल तौन सु जहाँ सिधारे॥
आनंदित नर-नारि नगर के, भवन बिमल जस गायौ।
सूरदास द्वारिका निवासी, प्राननाथ प्रभु पायौ।।१७३८

मनमोहन खेलत चौगान।
द्वारावती कोट कंचन मैं, रच्यौ रुचिर मैदान॥
जादवबीर बटाइ बटाई, हरि-बल इक-इक ओर।
निकसे सबै कुँवर असवारी उच्चैस्रवा के पोर॥
नीले सुरँग कुमैत स्याम, तेहि पर दै सब मन रंग।
बरन अनेक भाँति-भाँतिनि के, चमकत चपला ढंग॥
जीन जराइ सु जगमगात रहि, देखत दृष्टि भ्रमाइ।
सुर, नर, मुनि कौतुक सब लागे, इकटक रहे लुभाइ॥
जबहीं हरि लै गोइ चलावत, कंदुक कर मैं लाइ।
तबहीं चौगानहीं करि धावत हलधर हरि के पाँइ॥
कुँवर सबै घोरे फेरे पै जीतत नहिं गोपाल।
पचे बहुत छल-बल करि जीते, सूरदास प्रभु लाल।।१७३९।

द्विज पाती दै कहियौ स्यामहिं।
कुंडिनपुर की कुँवरि रुकमिनी, जपति तिहारे नामहिं।
पालागौं, तुम जाहु द्वारिका नंद-नँदन के धामहिं।
कंचन चीर-पटंबर देहौं, कर कंकन जु इनामहिं॥
यह सिसुपाल असुचि अज्ञानी हरत पराई बामहिं।
सूर स्याम-प्रभु तुम्हरौ भरोसौ लाज करौ किन नामहिं।।१७४०

पाती दीन्ही स्याम सुजानहिं।
मुख संदेस सुनाइ दीजियौ, मोहिं दीन करि मानहिं॥
श्री हरि जोग रुकमिनी लिखियौ, बिनय सुनौ प्रभु कानहिं।
चौपत बेगि आइयौ माधौ, पठी, आव [illegible] प्रानहिं॥

समुझत नाहिं दीन दुख कोऊ, हरि मन अंबुज-पानिहिं।
मनि मरकट कौं देत मुख मति, मृग-मद रज मैं सानहिं।
कब लौं दुख सहौं दरसन बिनु, भई मीन बिनु पानिहिं।
सूरदास प्रभु अधर-सुधाधर बरपि, देहु जिय दानहिं ॥१७४१॥

द्विज पठियौ जदुपति सौं बात।
बेद-बिरुद्ध होत कुंडिनपुर, हंस के अंस काग नियरात।
जनि हमरे अपराध बिचारहु, कन्या लिख्यौ मेटि गुरु तात।
तन-आत्मा समरप्यौ तुमकौं, उपजि परी तातैं यह बात।
कृपा करहु, उठि बेगि चढ़हु रथ, लगन समै आवहु परभात।
कन्न सिंह बलि धरी तुम्हारी, लैबे कौं जंबुक अकुलात।
तातैं मैं द्विज बेगि पठायौ, नेम धरम मरजादा जात।
सूरदास सिसुपाल पानि गहै, पावक रचौं करौं अपघात ॥१७४२

सुनत हरि रुकमिनि कौ संदेस।
चढ़ि रथ चले बिप्र कौं सँग लै कियौ न गेह प्रवेस।
बारंबार बिप्र कौं पूछत, कुँवरि बचन सो सुनावत।
दीनबंधु करुनानिधान सुनि नैन नीर भरि आवत।
कह्यौ हलधर सौं आवहु दल लै मैं पहुँचत हौं धाइ।
सूरज प्रभु कुंडिनपुर आए बिप्र सौं बात सुनाइ ॥१७४३॥

देखि रूप सब नगर के लोग।
बारंबार असीस देत हैं, हरि बर जन्यौ रुकमिनी जोग।
जौ बिधि करि आनत चतुराई, और समुझि जग की सब रीति।
तौ अबहूँ ये राज-सुता कौ, लै जैहैं सिसुपालहिं जीति।
ये राजा कौतुक चलि आए, ये मुख निरखि कहत हैं बात।
परत न पलक चकोर चंद ज्यौं अवलोकत लोचन न अघात।
मनसा के दाता पूरन हैं, सुंदर बर बसुदेव कुमार।
सूरदास जाके जिय जैसी, हरि कीन्हौ तैसौ ब्यौहार ॥१७४४॥

सोच पोच निवारि री, उठि देखि, दीनदयाल आयौ।
निरखि लोचन बिपति-मोचन, कुँवरि फल चौगुनौ सो पायौ।
सुनत भई अकुलाइ ठाढ़ी, ज्यौं मृतक मधु दै जिवायौ।
चढ़ि सदन या चपल की छबि, निरखि दानव दल दुखायौ।
लै बुलाइ जु हिय लगायौ, हरषि मंगल चार गायौ।
नैन आरत, अरघ आँसू, मेलि तन-मन-धन चढ़ायौ।
जानिहौं ब्रजनाथ जी कौ, कियौ सो जो तुम बतायौ।
अघ-हरन पुनि परन-बस हरि, जानि हौं किहिं जोग भायौ।
कृपासागर गुननि आगर, दासि दुख चित ही पठायौ।
भक्त के बस भक्त-बत्सल, बिदुर सात् साग खायौ।
मुदित ह्वै गई गौरि मंदिर, गौरि कर बहु बिधि मनायौ।
प्रगट तिहिं छिन सूर के प्रभु, बाँह गहि लियौ बाम भायौ।।१०४२

रुकमिनि देवी-मंदिर आई।
धूप-दीप पूजा-सामग्री, सखी संग सब ल्याई।
रखवारी की बहुत महाभट, दीन्हे रुक्म पठाई।
ते सब सावधान भए चहुँदिसि, पंछी तहाँ न जाई।
कुँवरि पूजि गौरी, बिनती करी, वर दैउ जादवराई।
मैं पूजा कीन्ही इहिं कारन, गौरी सुनि मुसकाई।
पाइ प्रसाद अंबिका-मंदिर रुकमिनि बाहर आई।
सुभट देखि सुंदरता मोहे, धरनि गिरे मुरझाई।
इहिं अंतर जादवपति आए, रुकमिनि रथ बैठाई।
सूरज प्रभु पहुँचे दल अपनैं, तब सुभटनि सुधि पाई।।१०४३

देखहिं पौरि द्वारिकावासी।
सुनत सकल रिपु जीति, रुक्मिनी लै आए जदुपति अबिनासी।
नगर निकट रथ आनि अगमने, राजत रुधिर रूप दल रासी।
प्रभु पाछैं बैठी भी सोभित, जनु घन मैं चंदिका प्रकासी।

देत पसाइ, करत न्यौछावरि, लखि मुख-चंद तिलक धरि आसी ।
नर-नारिनि के नैन निरखि भए, चातक रितु बरषा की प्यासी ॥
सजि आरती कलस लै धाईं, कीन्हि परछि कुलबधू न दासी ।
हँसि-हँसि कह्यौ रहस सूर प्रभु, जरासंध सिसुपाल की हाँसी ॥१७४७॥

आवहु री मिलि मंगल गावहु ।
हरि रुकमिनी लिए आवत हैं यह आनँद जदुकुलहिं सुनावहु ॥
बाँधहु बंदनवार मनोहर कनक कलस भरि नीर धरावहु ।
दधि-अच्छत फल फूल परम रुचि आँगन चंदन चौक पुरावहु ॥
कदली-खंभ अनूप किसलय-दल सुरग सुमन लै मंडप छावहु ।
हरद-दूब केसर मग छिरकहु, भेरि मृदंग निसान बजावहु ॥
जरासंध सिसुपाल नृपति तैं जीते हैं उठि अरघ चढ़ावहु ।
बधू समेत तन कुसल सूर प्रभु आए हैं, आरती बनावहु ॥१७४८॥

\+ × × ×

कहि न सकति सकुचति इक बात ।
केतिक दूरि द्वारिका नगरी क्यौं नाहीं जदुपति लौं जात ॥
जाके सखा स्याम सुंदर से श्रीपति सकल सुखनि के दात ।
तिनहिं जाहु तुम अपने आलस काहे रहत दुखित कृस गात ॥
कहियत परम उदार कृपानिधि अंतरजामी त्रिभुवन तात ।
सर्बस देत रीझि भक्तनि कौं रुचि मानत तुलसी के पात ॥
छाँड़ौ सकुच बाँधि पट-तंदुल सूरज सखी चली उठि प्रात ।
लोचन सफल करौ पिय अपने हरि-मुख-कमल देखि बिकसात ॥

कंत, सिधारौ मधुसूदन पै सुनियत हैं, वे मीत तुम्हारे ।
बाल सखा अरु बिपति-बिभंजन, संकट-हरन मुकुंद, मुरारे ॥
और जु अतिसय प्रीति देखिये निज तन-मन की प्रीति बिसारे ।
सरबस रीझि देत भक्तनि कौं रंक-नृपति काहूँ न बिचारे ॥

यद्यपि तुम संतोष भजत हौ, दरसन सुख तैं होय जु न्यारे।
सूरदास प्रभु मिले सुदामा सब सुख दे पुनि अटल न टारे ।।१०२०

सुदामा सोचत पंथ चले।
कैसे करि मिलिहैं मोहिं श्रीपति भए सब सगुन भले।
पहुँच्यौ जाइ राजद्वारे पर, काहूँ नहिं अटकायौ।
इत-उत चितै धँस्यौ मंदिर मैं, हरि कौ दरसन पायौ।।
मन मैं अति आनंद कियौ हरि, बाल-मीत पहिचान।
धाए मिलन नगन पग आतुर, सूरज प्रभु भगवान ।।१०२१।

दूरहिं तैं देख्यौ बलबीर।
अपने बालसखा जु सुदामा मलिन बसन अरु छीन सरीर।।
पौढ़े हे परजंक परम रुचि रुकमिनि चौर डुलावति तीर।
उठि अकुलाइ अगमने लीन्हें, मिलत नैन भरि आए नीर।।
निज आसन बैठारि स्याम घन पूछी कुसल, कह्यौ मतिधीर।
ल्याए हौ सु देहु किन हमकौं कहा दुरावत आगैं चीर।।
दरस परस हम भए सभागे रही न मन मैं एकौ पीर।
सूर सुमति तंदुल चाबत हीं, कर पकर्‌यौ कमला भई भीर ।।१०२२।

ऐसी प्रीति की बलि जाऊँ।
सिंहासन तजि चले मिलन कौं, सुनत सुदामा नाऊँ।।
कर जोरे हरि बिप्र जानि कैं, हित करि चरन पखारे।
अंकमाल दै मिले सुदामा, अर्धासन बैठारे।।
अर्धंगी पूछति मोहन सौं, कैसे हितू तुम्हारे।
तन अति छीन मलीन देखियत, पाउँ कहाँ तैं धारे।।
संदीपन कैं हमऽरु सुदामा पढ़े एक चटसार।
सूर स्याम की कौन चलावै भक्तनि कृपा अपार ।।१०२३।

गुरु-गृह हम जब बन कौं जात।
तोरत हमरे बदलें लकरी, सहि सब दुख निज गात।।

एक दिवस घरणा भई पन मैं, रहि गए ताहीं ठौर।
इतकी कृपा भयौ नहिं मोहिं सम, गुरु आप भऐं मीर॥
सो दिन मोहिं बिसरत न सुदामा जो कीन्ही उपकार।
प्रति उपकार कहा करौं सूरज भाषत आप मुरार।१७५४।

सुदामा गृह कौं गमन कियौ।
प्रगट विप्र कौं कछु न जनायौ, मन मैं बहुत दियौ।
वेई चोर, कुचील वहै विधि मोकौं कहा भयौ।
घरिहौं कहा जाइ तिय आगैं भरि-भरि लेत हियौ॥
भी संतोष मानि मन ही मन, आदर बहुत लियौ।
सूरदास कीन्हे करनी बिनु, को पतियाइ वियौ।१७५५।

सुदामा मंदिर देखि डरयौ।
इहाँ हुती मेरी तनक मड़ैया को नृप आनि छयौ॥
सीस धुनै दोऊ कर मीड़ै अंतर सोच पर्यौ।
ठाढ़ी तिया सु मारग जोवै ऊँचैं चरन धर्यौ॥
ताहि आदरयौ त्रिभुवन कौ नायक अब क्यौं जात फिरयौ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, दारिद दुःख हर्यौ।१७५६।

देखत भूलि रह्यौ द्विज दीन।
मन सुधि परै, समुझि नहिं आवै, मेरी गृह प्राचीन।
किधौं देवमाया मति मोहौ, किधौं भलन ही आयौ।
तनकु की छाँह गई मिधि माँगत बहुत जतन हीं छायौ।
चितवत चकित चहूँ दिसि बाम्हन अद्भुत लीला रीति।
ऊँचे भवन मनोहर छाजे, मनि-कंचनि की भीति।
चली कंत यह सब हरि किरपा पाँउ धारिए धाम।
तब पहिचानि पैंसे मंदिर मैं सूर सकल अभिराम।१७५७।

हौं फिरि बहुरि द्वारिका आयौ।
समुझि न परी मोहिं मारग की कोउ यूझै न बतायौ॥

कहिहैं स्याम सत्य इन लायौ छवी राँक कहायौ ।
तन की दारिद मिटी निधि माँगत, कौन कुमति सौं आयौ ॥
सागर नहीं समीप कुमति कैं, बिधि कह भ्रम भ्रमायौ ।
चितवत चित्त बिचारत मेरौ मन सपनें डर आयौ ॥
सुर-तरु, दासी, दास, अस्व गज बिभौ बिनोद बनायौ ।
सूरज-प्रभु नँद-सुवन मित्र है मच्छनि छाँह करायौ ।।१०५८।।

कहा भयौ मेरौ गृह माटी कौ ।
हौं तौ गयौ गुपालहिं भेंटन, और खरच तंदुल गाँठी कौ ।
बिनु मीत्रा कछु सुभग न आन्यौ दुरौ कर्मदंड काठी कौ ।
धुनी बाँस सुत बुनी खटोला काहु कौ पलँग कनक पाटी कौ ॥
नूतन छीरोदक सुरभी पै भूषन हुतौ न छोर माटी कौ ।
सूरदास प्रभु कहा निहोरौ मानत रंक त्रास टाटी कौ ।।१०५९।।

कैसे मिले पिय स्याम सँघाती ।
कहियै कंत, कौन बिधि परसे बसन कुचील छीन अति गाती ॥
उठिकै दैरि अंक भरि लीन्हौ, मिलि पूछी कुल-सब कुसलाती ।
पट तैं छोरि लिए कर तंदुल, हरि समीप रुकमिनी जहाँ ती ॥
देखि सकल तिय स्यामसुँदर-गुन, पट दै ओट सबै मुसक्याती ।
सूरदास-प्रभु नवनिधि दीन्ही, [illegible] और जो तिय न रिसाती ।।१०६०।।

हरि बिनु कौन दरिद्र हरै ।
कहत सुदामा सुनि सुंदरि, हरि मिलन न मन बिसरै ॥
और मित्र ऐसी गति देखत, को पहिचान करै ।
बिपति परैं कुसलात न बूझै, बात नहीं बिचरै ॥
उठि भेंटे हरि तंदुल लीन्हे, मोहिं न बचन फुरै ।
सूरदास लछि दई कृपा करि, टारी निधि न टरै ।।१०६१।।

— (ॐ) —

(ख) पुनर्मिलन

स्याम-राम के गुन नित गाऊँ, स्याम-राम ही सौं चित लाऊँ।
एक बार हरि निज पुर छए, हलधर जी वृन्दावन गए।
रथ देखत लोगनि सुख पाए, जान्यौ स्याम-राम दोउ आए।
नंद-जसोमति जब सुधि पाई, देह-गेह की सुरति भुलाई।
आगें ह्वै लैबे कौं धाए, हलधर दौरि चरन लपटाए।
बल कौं हित करि गरें लगाए, दै असीस बोले या भाए।
तुम तौ भली करी बलराम, कहाँ रहे मनमोहन स्याम।
ऐसी कान्हर की निठुराई, कबहूँ पातीहूँ न पठाई।
आपु जाइ ह्वाँ राजा भए, हमकौं बिछुरि बहुत दुख दए।
कहौ, कबहुँ हमरी सुधि करत, हम तौ उन बिनु बहु दुख भरत'।
कहा करैं ह्वाँ कोउ न जात, उन बिनु पल पल जुग सम जात।
हरि हित आए सब ग्वार, कीन्हे सबनि जथा ब्यौहार।
नमस्कार काहू कौ कियौ, काहू कौं अंकम भरि लियौ।
पुनि गोपी जुरि मिलि सब आई, तिन हित साथ असीस सुनाई।
हरि सुधि करि सुधि-बुधि बिसराई, तिनकौ प्रेम कह्यौ नहिं जाई।
कोउ कहै, हरि ब्याही बहु नार, तिनकौ बढ़्यौ बहुत परिवार।
उनकौं यह हम देति असीस, सुख सौं जीवें कोटि बरीस।
कोउ कहै, हरि नाहीं हम चीन्ही, बिनु चीन्हें उनकौ मन दीन्ही।
निसि दिन रोवत हमें बिहाइ, कहौ करैं अब कहा उपाइ।
कोउ कहै, ह्याँ चरावत गाइ, राजा भए द्वारिका जाइ।

काहे कौं वै आवैं इहाँ भोग बिलास करत नित उहाँ।
कोउ कहै, हरि रिपु छै किए, अरु मित्रनि कौं बहु सुख दिए।
बिरह हमारौ मारैं रहि गयौ, जिन हमकौं अतिहीं दुख दयौ।
कोउ कहै, ऊ हरि की रानी, कौन भाँति हरि कौं पतियानी।
कोउ चतुर नारि जो होइ, कहै नहीं पतियारी सोइ।
कोउ कहै, हम तुम सब पतियाईं, उनकैं हित कुलकानि गँवाईं।
हरि कछु ऐसौ टोना जानत, सबकौ मन अपनैं बस आनत।
कोउ कहै, हरि हम मन बिसराईं, कहा कहैं, कछु कह्यौ न जाई।
हरि कौं सुमिरि नयन जल ढारैं, नैकु नहीं मन धीरज धारैं।
यह सुनि हलधर, धीरज धारि, कह्यौ आइहैं हरि निरधारि।
सब जन यह संदेस सुनायौ, तब कछु इक मन धीरज आयौ।
बल तहँ बहुरि रहे द्वै मास, ब्रज बासिनि सौं करत बिलास।
सब सौं मिलि पुनि निजपुर आए, सूरदास हरि के गुन गाए॥

× × ×

तब तैं बहुरि न कोऊ आयौ।
वहै जु एक बेर ऊधौ सौं, कछु संदेसौ पायौ॥
छिन छिन सुरति करत जदुपति की, परत न मन समुझायौ।
गोकुलनाथ हमारैं हित लगि, लिखि हूँ क्यौं न पठायौ॥
यहै बिचार करौ धौं सजनी, इतौ गहरु क्यौं लायौ।
सूर स्याम अब बेगि न मिलहु, मेघनि अंबर छायौ॥१०६१॥

बहुरौ हो ब्रज बात न चाली।
वहै जु एक बेर ऊधौ कर कमल नयन पाती दै घाली॥
पथिक, तिहारे पा लागति हौं, मथुरा जाहु जहाँ बनमाली।
कहियौ प्रगट पुकारि द्वार ह्वै, कालिंदी फिरि आयौ काली॥
तब वह कृपा हुती नँदनंदन रुचि रुचि रसिक प्रीति प्रतिपाली।
माँगत कुसुम देखि ऊँचे द्रुम, लेत उछंग गोद करि आली॥

जब यह सुरति होति उर अंतर लागति काम बान की भाली।
सूरदास-प्रभु प्रीति पुरातन सुमिरत, दुसह सूल उर साली ॥१७६४

तुम्हरे देस कागद-मसि खूटी।
भूख प्यास अरु नींद गई सब बिरह लयौ तन लूटी।
दादुर मोर पपीहा बोलै, अवधि भई सब झूठी।
पाछैं आइ तुम कहा करौगे जब तन जैहै छूटी।
राधा कहति सँदेस स्याम सौं, भई प्रीति की टूटि।
सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु सखी करति हैं कूटि ॥१७६५

पथिक कह्यौ ब्रज जाइ सुने हरि जात सिंधु-तट।
सुनि सब अंग भए सिथिल गयौ नहिं बज्र हियौ फट।
नर-नारी घर-घरनि सबै यह करहिं बिचारा।
मिलिहैं कैसी भाँति हमैं अब नंद-कुमारा।
निकट बसत हुती आस किया अब दूरि पयाना।
बिना कृपा-भगवान उपाइ न सूरज आना ॥१७६६॥

हमारे हरि चलन कहत हैं दूरि।
मधुबन बसत आस हुती सजनी अब तौ मरिहैं झूरि।
कौनैं कह्यौ, कौन सुनि आई किहिं रुख रथ की धूरि।
संगहिं सबै चली माधौ के, नातरु मरहु बिसूरि।
दच्छिन दिसि इक नगर द्वारिका सिंधु रह्यौ भरिपूरि।
सूरदास अबला क्यौं जीवै जात सजीवन मूरि ॥१७६७॥

हम तैं कमल नयन भए दूरि।
चलन कहत मधुबनहु तैं सजनी, इन नयननि की मूरि।
चलत कान्ह सब देखन लागीं, उड़त न रथ की धूरि।
सूरदास प्रभु उतर न आवै, नयन रहे जल पूरि ॥१७६८॥

मैना भए अनाथ हमारे।
मदनगुपाल वहाँ

वै समुद्र, हम मीन बापुरी कैसैं जीवें न्यारे।
हम चातक, वै जलद स्याम-घन, पियति सुधा-रस प्यारे।
मधुरा बसत आस दरसन की जोइ नैन मग हारे।
सूरदास हमकौं उलटी बिधि, मृतकहुँ तैं पुनि मारे ॥१०६१

सखी दूर तैं को आवै री।
जासौं कहि संदेस पठाऊँ, सो कहि कहन कहा पावै री।
सिंधु-कूल इक देस बसत है, देख्यौ-सुन्यौ न मन भावै री।
तहँ नव नगर जु रच्यौ नंद-सुत द्वारावति पुरी कहावै री।
कंचन के बहु भवन मनोहर, रंक तहाँ नहिं तृन छावै री।
ह्याँ के बासी लोगनि कौं, क्यौं ब्रज कौ बसिबौ मन भावै री।
यहु बिधि करति बिलाप बिरहिनी बहुत उपावनि चित लावैरी।
कहा करौं, कहँ जाउँ सूर प्रभु को हरि पिय पै पहुँचावै री ॥१०७०

हौं कैसैं के दरसन पाऊँ।
सुनहु पथिक, वहिं देस द्वारिका जौ तुम्हरैं सँग आऊँ।
बाहर भीर बहुत भूपनि की बूझत बदन दुराऊँ।
भीतर भीर भाग भामिनि की, तिहि ठाँ काहि पठाऊँ।
बुधि-बल जुक्ति-जतन करि वहिं पुर हरि पिय पै पहुँचाऊँ।
अब बन बास निसि कुंज रसिक बिनु, कौनैं दसा सुनाऊँ।
स्रम कै सूर जाउँ प्रभु पासहिं मन मैं भलैं मनाऊँ।
नव-किसोर मुख मुरलि बिना इन नैननि कहा दिखाऊँ ॥१०७१

तातैं अति मरियति अपसोसनि।
मथुरा हू तैं गए सखी री, अब हरि कारे कोसनि।
यह अचरज सु बड़ी मेरैं जिय, यह छाँड़नि, वह पोषनि।
निपट निकाम जानि हम छाँड़ी, ज्यौं कमान बिन गोसनि।
इक तौ हरि-दरसन बिनु मरियति, अरु कुबिजा के ठोसनि।
सूर सुप्रभु कहा उपजी जा, दूरि होति करि जोसनि ॥१०७२॥

माइ री, कैसे बनै हरि कौ ब्रज आवन ।
कहियत है, मधुबन तें सजनी, कियौ स्याम कहुँ अनत गवन ॥
अगम जु पंथ दूरि दच्छिन दिसि तहँ सुनियत सखि, सिंधु-सयन ।
सब हरि हौं परिवार सहित गए, मग मैं मारयौ कालजवन ॥
निकट बसत मतिहीन भई हम मिलिहैं न आई सुत्यागि भवन ।
सूरदास नरभत मन निसि-दिन जदुपति की ही आइ कवन ।१०७३

सुनियत कहुँ द्वारिका बसाई ।
दच्छिन दिसा तीर सागर कैं, कंचन कोट, गोमती खाई ॥
पंथ न चलै, सँदेस न आवै इती दूरि नर कोउ न जाई ।
सत जोजन मथुरा तें कहियत यह सुधि एक पथिक पै पाई ॥
सब ब्रज दुखी नंद जसुदाहू इकटक स्याम-राम लव लाई ।
सूरदास प्रभु के दरसन बिनु भइ बिहित ब्रज बाम दुहाई १०७४

बीर बटाऊ, पाती लीजौ ।
जब तुम जाहु द्वारिका नगरी, हमरे रमानाथ गुपालहिं दीजौ ।।
रंगभूमि रमनीक मधुपुरी, रजधानी ब्रज की सुधि कीजौ ।
खार समुद्र छाँड़ि किन आवत, निरमल जल जमुना को पीजौ ।
या गोकुल की सकल ग्वालिनी, देति असीस बहुत जुग जीजौ ।
सूरदास प्रभु हमरे कहें, नंद सदन के पा परीजौ ।१०७५।

स्याम बिनु भई सरद निसि भारी ।
हमैं छाँड़ि प्रभु गए द्वारिका, ब्रज की भूमि बिसारी ।
निरमल जल जमुना को छाँड्यौ, सेवत समुद्र जल खारी ।
कहियौ जाइ पथिक, जैसैं आवै बरननि की बनिहारी ।
अबला बपुरा कौन की जानैं, ब्रजबासिनि जु बिचारी ।
सूरदास प्रभु सुन्दर दरस की रुचि राधिका प्यारी ।१०७६।

× × × ×

द्वारामिनि बूझति हैं गोपालहिं ।
कहौ बात अपने गोकुल की, [illegible]

तब तुम गाइ चरावन जाते उर धरते बनमालहिं।
कहा देखि रीझे राधा सौं, सुंदर नैन बिसालहिं॥
इतनी सुनत नैन भरि आए प्रेम बिबस नँदलालहिं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, घोष बात जनि चालहिं॥१७७७॥

रुकमिनि मोहिं निमेष न बिसरत वे ब्रजबासी लोग।
हम उनसौं कछु भली न कीन्ही, निसि दिन मरत बियोग।
जदपि कनक-मनि रची द्वारिका, बिषय सकल संजोग।
तदपि मन जु हरत बंसी-बट, ललिता कैं संजोग।
मैं ऊधौ पठयौ गोपिनि पै, दैन सँदेसौ जोग।
सूरदास देखत उनकी गति किहिं उपदेसै लोग।१७७८॥

रुकमिनि, मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
वह क्रीड़ा, वह केलि जमुन-तट सघन कदम की छाहीं।
गोप-बधुनि की भुजा कंध धरि, बिहरत कुंजनि माहीं।
और बिनोद कहाँ लगि बरनौं, बरनत बरनि न जाहीं॥
जदपि सुख-निधान द्वारावति गोकुल कैं सम नाहीं।
सूरदास घन-स्याम मनोहर, सुमिरि सुमिरि पछिताहीं॥१७७९॥

रुकमिनि, चलौ जन्म भूमि जाहिं।
जदपि तुम्हरौ बिभव द्वारिका, मथुरा कैं सम नाहिं॥
जमुना कैं तट गाइ चरावत, अमृत जल अँचवाहिं।
कुंज-केलि अरु भुजा कंध धरि, सीतल द्रुम की छाहिं॥
सरस सुगंध मंद मलयानिल, बिहरत कुंजन माहिं।
जो क्रीड़ा श्री बृंदाबन मैं तिहूँ लोक मैं नाहिं॥
सुरभी ग्वाल नंद अरु जसुमति मम चित तैं न टराहिं।
सूरदास प्रभु चतुर सिरोमनि, तिनकी सेव कराहिं॥१७८०॥

सुनि सतभामा, नींद सिरानी।
जब जब मोहिं घोष सुधि आवति, नैननि बहत पनारी॥

या जमुना, ये सखा हमारे नित नव केलि-बिहारी।
वृंदावन की गुल्म-लता हैं, मन-मधुकर की प्यारी।
बीथी, वृच्छ, गोप के मंदिर, उपमा कहीं कहा री।
मानौ मधुर सरोवर बासे, जमुना-सी महतारी।
माखन खान फेन दुहि पीवन भोजन सुपति बिहारी।
सूरदास प्रभु उनहिं मिले तैं मैं सुरपुरी बिसारी ।।१४८१।।

ब्रज-बासिनि कौ हेत हृदय मैं राखि मुरारी।
सब आदर सौं कही बैठि कै सभा मँझारी।
बड़ौ परब रबि-ग्रहन, कहा कहौं तासु बड़ाई।
चलौ सकल कुरुखेत तहाँ मिलि न्हैये जाई।
तात, मात निज नारि लिए हरि जू सब संगा।
चले नगर के लोग साजि रथ, तुरग तुरंगा।
कुरुच्छेत्र मैं आइ दियौ इक दूत पठाई।
नंद जसोमति गोपि-ग्वाल सब सूर बुलाई ।।१४८२।।

बायस गहगहात सुनि सुंदरि, बानी बिमल पूर्ब दिसि बोली।
आजु मिलावा होइ स्याम कौ तू सुनि सखी राधिका भोली।
कुच-भुज-नैन अधर फरकत हैं, बिनहिं बात अंचल-ध्वज डोली।
सोच निवारि, करौ मन आनँद मानौ भाग दसा बिधि खोली।
सुनत बात सजनी के मुख की पुलकित प्रेम तरकि गइ चोली।
सूरदास अभिलाष नंदसुत हरषी सुभग नारि अनमोली ।।१४८३।।

माधव आवनहार भए।
अंचल उड़ि मन होत गहगही, फरकत नैन खए।
देई देखि सोचि जिय अपनें परगट सगुन दए।
रितु बसंत फूली मन-बेली, उलहे पात नए।
अपनी अपनी अवधि जानि कै, सबनि सिंगार ठए।
सूरदास-प्रभु मिली कृपा करि, अवधि-आस पुजए ।।१४८४।।

हौं इहाँ तेरेहिं कारन आयौ।
तेरी सौं सुनि जननि जसोदा, मोहिं गोपाल पठायौ।
कहा भयौ जो लोग कहत हैं, देवकि माता जायौ।
खान पान-परिधान सबै सुख तैंही लाड़-लड़ायौ।
इतौ हमारौ राज द्वारिका मोंकौ कछू न भायौ।
जब-जब सुरति होति उहिं हित की, बिछुरि बच्छ ज्यौं धायौ।
अब हरि कुरुच्छेत्र मैं आए सो मैं तुम्हैं सुनायौ।
सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु, हित करि उहाँ बुलायौ॥[illegible]

राधा नैन नीर भरि आए।
कब धौं मिलैं स्यामसुंदर सखि, जदपि निकट हैं आए।
कहा करौं किहिं भाँति जाहुँ अब पंख नहीं तन पाए।
सूर स्यामसुंदर घन दरसैं तन के ताप नसाए॥[illegible]॥

अब हरि आइहैं जनि सोचै।
सुनु बिधुमुखी, बारि नैननि तैं अब तू काहैं मोचै।
लै लेखनि-मसि लिखि अपने सँदेसहिं, छाँड़ि सँकोचै।
सूर सु बिरह जनाउ करत कत प्रगट मदन रिपु पोचै॥[illegible]

पथिक, कहियौ हरि सौं यह बात।
भक्त-बछल है बिरद तुम्हारौ, हम सब किए सनाथ।
प्रान हमारे संग तिहारैं, हमहूँ हैं अब आवत।
सूर स्याम सौं कहत सँदेसौ नैननि नीर बहावत॥[illegible]॥

नंद, जसोदा, सब ब्रज-बासी।
अपने-अपने सकट साजिकै, मिलन चले अबिनासी।
कोउ गावत, कोउ बेनु बजावत, कोउ उतावल धावत।
हरि दरसन आसा के कारन, बिबिध मुदित सब धावत
दरसन कियौ आइ हरि जू कौ कहत स्वप्न कै साँची।
प्रेम-मगन कछु सुधि न रही अँग, रहे स्याम-रँग राँची।

जासौं जैसी प्रीति चाहिए, ताहि मिलै त्यौं धाइ ।
देस देस के नृपति देखि यह प्रीति रहे अरगाइ ॥
उमँग्यौ प्रेम समुद्र दुहूँ दिसि परिमिति कही न जाइ ।
सूरदास यह सुख सो जानै जाकै हृदय समाइ ।१७८६।

मेरी जीवन-मूरि मिलहि किन माई ।
महाराज जदुनाथ कहावत तबहिं हुते सिसु कुँवर कन्हाई ॥
पानि परे मुख धरे कमल मुख पेखत पूरब कथा चलाई ।
परम उदार पानि अवलोकत दीन जानि कछु कहत न जाई ॥
फिरि फिरि अब सनमुख ही चितवति, प्रीति सकुच जानी जदुराई ।
आप हँसि भेंटहु करि मोहिं निज-जन, बाल बिहारी नंद दुहाई ॥
रोम पुलक गद-गद तन, लोचन, जलधारा नैननि बरषाई ।
मिले सु तात, मात, बांधव सब कुसल कुसल करि प्रस्न चलाई ॥
आसन देइ बहुत करी बिनती, सुत धोखैं तन बुधि हिराई ।
सूरदास प्रभु कृपा करी अब, चितहिं धरे पुनि करी बड़ाई ।१७८७।

माधव या लगि है जग जीजत ।
जातैं हरि सौं प्रेम पुरातन बहुरि नयौ करि लीजत ॥
कहँ हौं तुम जदुनाथ सिंधु तट, कहँ हम गोकुल बासी ।
वह बियोग, यह मिलन कहाँ अब, काल चाल चौरासी ॥
कहँ रवि राहु कहाँ यह अवसर बिधि संजोग बनायौ ।
उहिं उपकार आजु इन नैननि हरि दरसन सचु पायौ ॥
तब अरु अब यह कठिन परम अति निमिषहुँ पीर न जानी
सूरदास प्रभु जानि आपने सबहिनि सौं रुचि मानी ।१७८८।

हरि सौं बूझति रुकमिनि, इनमैं को वृषभानुकिसोरी ।
बारक हमैं दिखावहु अपने बालापन की जोरी ॥
जाको हेत निरंतर लीन्हे, डोलत ब्रज की खोरी ।
अति आतुर ह्वै गाइ दुहावन जाते पर घर चोरी ॥

हाँ इहाँ तेरेहिं कारन आयौ।
तेरी सौं सुनि जननि जसोदा, मोहिं गोपाल पठायौ।
कहा भयौ जौ लोग कहत हैं देवकि माता जायौ।
खान पान-परिधान सबै सुख तैंही लाड़-लड़ायौ।
इयौ हमारौ राज द्वारिका, मो कौ कछू न भायौ।
जब-जब सुरति होति वहिं हित की बिछुरि बच्छ ज्यौं धायौ।
अब हरि कुरुच्छेत्र मैं आए सो मैं तुम्हैं सुनायौ।
सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु हित करि यहाँ बुलायौ ॥१८८२

राधा नैन नीर भरि आए।
कब धौं मिलैं स्यामसुंदर सखि जदपि निकट हैं आए।
कहा करौं किहिं भाँति जाउँ अब पंख नहीं तन पाए।
सूर स्यामसुंदर घन दरसैं, तन के ताप नसाए॥१८८३॥

अब हरि आइहैं जनि सोचै।
सुनु बिधुमुखी बारि नैननि तैं अब तू काहैं मोचै।
लै लेखनि-मसि, लिखि अपने सँदेसहिं, छाँड़ि सँकोचै।
सूर सु बिरह जनाउ करत कत प्रगट मदन रिपु पोचै ।१८८४

पथिक, कहियौ हरि सौं यह बात।
भक्त-बछल है बिरद तुम्हारौ, हम सब किए सनाथ।
प्रान हमारे संग तिहारैं, हमहूँ हैं अब आवत।
सूर स्याम सौं कहत सँदेसौ, नैननि नीर बहावत ॥१८८५॥

नंद, जसोदा, सब ब्रज-बासी।
अपने-अपने सकट साजिकै, मिलन चले अबिनासी।
कोउ गावत, कोउ बेनु बजावत, कोउ उतावल धावत।
हरि दरसन आसा के कारन, बिबिध मुदित सब धावत
दरसन कियौ आइ हरि जू कौ कहत स्वप्न कै साँची।
प्रेम-मगन कछु सुधि न रही अँग, रहे स्याम-रँग राँची।

रचते सेज स्वकर सुमननि की नव-पल्लव पुट तोरी।
बिन देखैं ताके मन तरसै छिन बीतै जुग कोरी॥
सूर सोच सुख करि भरि लोचन अंतर प्रीति न थोरी।
सिथिल गात मुख बचन फुरत नहिं ह्वै जु गई मति भोरी।१७५२

बूझति है रुकुमिनि पिय इनमैं को वृषभानु-किसोरी।
नैंकु हमैं दिखरावहु अपनी बालापन की जोरी॥
परम चतुर जिन कीन्हे मोहन, अल्प बैस ही थोरी।
बारे तैं जिहिं यहै पढ़ायौ बुधि बल कल बिधि चोरी॥
जाके गुन गनि ग्रंथित-माला, कबहुँ न उर तैं छोरी।
मनसा सुमिरत, रूप ध्यान धर, दृष्टि न इत-उत मोरी॥
वह लखि जुवति वृंद मैं ठाढ़ी नील बसन तन गोरी।
सूरदास मेरौ मन वाकी चितवनि बंक हरयौ री।१७५३।

हरि जू इते दिन कहाँ लगाए।
तबहिं अवधि मैं कहत न समुझी गनत अचानक आए॥
भली करी जु बहुरि इन नैननि, सुंदर दरस दिखाए।
जानी कृपा राज काजहु हम निमिष नहीं बिसराए॥
बिरहिनि बिकल बिलोकि सूर प्रभु धाइ हृदै करि लाए।
कछु इक सारथि सौं कहि पठयौ, रथ के तुरँग छुड़ाए।१७५४।

हरि जू वै सुख बहुरि कहाँ।
जदपि नैन निरखत वह मूरति फिरि मन जात तहाँ॥
मुख मुरली सिर मोर पखौवा, गर घुँघचिनि कौ हार।
आगैं धेनु रेनु तन मंडित, तिरछी चितवनि चार॥
राति दिवस सब सखा लिए सँग, हँसि मिलि खेलत खात।
सूरदास प्रभु इत उत चितवत कहि न सकत कछु बात।१७५५।

रुकमिनि राधा ऐसैं भेंटी।
जैसैं बहुत दिननि की बिछुरी एक बाप की बेटी॥

एक सुभाव एक वय दोऊ दोऊ हरि की प्यारी।
एक प्रान मन एक दुहुनि कौ तन करि दीसति न्यारी॥
निज मंदिर लै गई रुकमिनी, पहुनाई बिधि ठानी।
सूरदास प्रभु तहँ पग धारे, जहँ दोऊ ठकुरानी॥१७५६॥

राधा माधव भेंट भई।
राधा माधव, माधव राधा, कीट भृंग गति ह्वै जु गई॥
माधव राधा के रँग राँचे राधा माधव रंग रईं।
माधव राधा प्रीति निरंतर, रसना करि सो कहि न गई॥
बिहँसि कह्यौ, हम तुम नहिं अंतर यह कहिकै उन ब्रज पठई।
सूरदास प्रभु राधा माधव ब्रज-बिहार नित नई नई॥१७५७॥

करत कछु नाहीं आजु बनी।
हरि आए, हौं रही ठगी सी जैसें चित्र धनी॥
आसन हरषि हृदय नहिं दीन्हौ कमल कुटी अपनी।
न्यौछावर उर, अरघ न नैननि, जलधारा जु बनी॥
कंचुकि तैं कुच कलस प्रगट ह्वै टूटि न तरक तनी।
अब उपजी अति लाज मनहिं मन समुझत निज करनी॥
मुख देखत न्यारी सी रहि गई बिनु बुधि मति सजनी।
तदपि सूर मेरी यह जड़ता, मंगल माहिं गनी॥१७५८॥

ब्रजबासिनि सौं कह्यौ सबनि तैं ब्रज-हित मेरैं।
तुमसौं नाहीं दूरि रहत हौं निपटहिं नेरैं॥
भजै मोहिं जो कोइ, भजौं मैं तेहिं या भाई।
मुकुर माहिं ज्यौं रूप आपनैं सम दरसाई॥
यह कहि कै समुझे सकल, नैन रहे जल छाइ।
सूर स्याम कौ प्रेम कछु, मो पै कह्यौ न जाइ॥१७५९॥

सखिहिनि तैं हित है जन मेरौ।
जनम जनम सुनि सुबल सुदामा निबाहौं यह प्रन मेरौ॥

ब्रह्मादिक इंद्रादिक सेऊ, जानत बल सब केरौ।
एकहिं साँस उसाँस त्रास तहिं, चलतै तजि निज खोरौ॥
कहा भयौ जो देस द्वारिका कीन्हौ दूरि बसेरौ।
आपुन ही या ब्रज के कारन, करिहौं फिरि-फिरि फेरौ॥
इहाँ-उहाँ हम फिरत साधु हित करत असाधु अहेरौ।
सूर हृदय तैं टरत न गोकुल अंग छुवत हौं तेरौ॥१८००॥

हम तौ इतनै ही सचु पायौ।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, बहुरौ दरस दिखायौ॥
कहा भयौ जो लोग कहत हैं कान्ह द्वारिका आयौ।
सुनिकै बिरह दसा गोकुल की अति आतुर ह्वै धायौ॥
रजक-धेनु-गज कंस मारि कै, कीन्हौ जन कौ भायौ।
महाराज ह्वै मातु-पिता मिलि तऊ न ब्रज बिसरायौ॥
गोपी-गोपउपनंद चले मिलि, प्रेम-समुद्र बढ़ायौ।
अपने बाल-गुपाल निरखि मुख, नैननि नीर बहायौ॥
जद्यपि हम सकुचे जिय अपनैं, हरि हित अधिक जनायौ।
वैसेइ सूर बहुरि नँदनंदन, घर घर माखन खायौ॥१८०१॥

— (*) —

अब अति चकितवंत मन १६६४
अबकैं नाथ मोहिं उधारि ५६
अब कैं राखि लेहु गोपाल ५१६
अब कैं राखि लेहु भगवान ५८
अब कैसैं दूजैं हाथ बिकाउँ ७१४
अब कैसैं पैयत सुख माँगे १ १४
अब घर काहू कैं जनि जाहु ४२४
अब जानी पिय बात तुम्हारी ८७
अब तुम कही हमारी मानो १ ५१
अब तुम नाम गहौ मन नागर ५४
अब तौ प्रकट भई जग ११६६
अब तौ यहै बात मनमानी ५१
अब नँद गाइ लेहु सँभारि १२७५
अब बरषा कौ आगम ११६१
अब मुरली पति क्यौं न ९८१
अब मैं जानी देह बुढ़ानी ११६
अब मैं तोसौं कहा दुराऊँ ८११
अब मैं नाच्यौ बहुत गोपाल ८१
अब मोहिं मजत क्यौं न ९०
अब यह बरषौ बीति गई १४१४
अब या तनहिं राखि कहा १४९४
अब वै मूठहु बोलन लोग १७८
अब वो ही लागे दिन ११५१
अब वे बातैं इहाँ रहीं १२८१
अब वे बिपदा हू न रहीं १६७
अब वे बातैं उलटि गईं ११४५
अब सिर परी ठगौरी देव [illegible]
अब हरि आइहैं जनि सोचै १४८०
अब हरि कौन सौं रति १४२१
अबहीं तैं हम सबनि बिसारी १५१
अबहीं देखे नवल किसोर १ ९४
अब हौं कौन कौ मुख हेरौं ९४
अब हौं माया हाथ बिकानौ २१
अब हौं सब विधि हेरि रह्यौ १०५
अबिगति-गति कछु कहत २
अबिगति-गति जानी न परै ११
अमर-नारि अस्तुति करैं ११८४
अरी अरी सुंदर नारि सुहागिनि ११७
अरी मेरे लालन की आजु २६७
अलकनि की छबि अलि-कुल १५
अहो पति सो उपाइ कछु २११

आ

आँखिनि मैं बसै जिय मैं बसै ७८०
आँगन मैं हरि सोइ गए री १५५
आँगन स्याम नचावहीं १०६
आए जोग सिखावन पाँड़े १५५१
आए नंद-नँदन के नैन १५ १
आछो गात अकारथ गार्‌यौ ९१
आजु कन्हैया बहुत बचौरी ५२६
आजु कोउ नीकी बात १५०१
आजु कोउ स्याम की १५७८
आजु घन स्याम की १४ १
आजु बरसावन जाइ मनौ ५४८
आजु जसोदा जाइ कन्हैया ४७८

आजु आइ देखौं वे चरन १२५८
(माई) आजु तौ बधाइ बाजै २७२
आजु दसरथ कैं आँगन भीर १८१
आजु दीपति दिव्य दीप- ५७२
आजु नंद के द्वारैं भीर २७
आजु बन कोऊ वै जनि जाइ २६७
आजु बन बनु बनावत १ ४
आजु बने बन तैं ब्रज आवत ४६१
आजु भोर तमचुर के रोल २६५
आजु मैं गाइ चरावन जैहौं ४१५
आजु रघुनाथ पयानो देत १६४
आजु राधिका भोरहीं जसुमति१७५
आजु रैनि नहिं नींद परी १९८१
आजु सखि ऐसे स्याम नए ११८
आजु सखी अरुनोदय भेरे ८२४
आजु सखी मनि खंभ निकट १६५
आजु हौं एक-एक करि टरिहौं७१
आनँद सहित सबै ब्रज आए ४०१
आनँदे आनँद बढ़्यो अति २६६
आपु गए हरुएँ सूनें घर ३०१
आपु चढ़े ब्रज-ऊपर काग ४८६
आपुन भई काम घर भाई ११९९
आयौ घोष बड़ौ ब्यौपारी १६५८
आवत उरप मारि स्याम ५०८
आवहु मिलि किसोर-कुमारि१ ११
आवहु री मिलि मंगल १०४८
आस अनि छीरहु स्याम १ ६

इ

इक दिन नंद चलाई बात ११९८
इत-उत देखत जनम गयौ १ ७
इत तैं राधा जाति जमुन ७६१
इन अँखियन आगैं तैं मोहन१७६
इनकौं ब्रज्मी क्यौं न [illegible]२६
इन नैननि की कथा सुनावैं १२१८
इन नैननि मोहिं बहुत १२१४
इन बातनि कहु पावति री ८१७
इम बातनि कहूँ होति १२११
इनहूँ मैं पटतरि कीन्हीं ७६६
इहिं अंतर मधुकर इक १५ २
इहिं अंतर हरि आइ गए १ २१
इहिं उर माखनचोर गड़े १६ १
इहिं डर बहुरि न गोकुल १६७२
इहीं दुख तन तरफत १४१६
इहिं बिधि कहा घटैगो तेरौ १ ६
इहिं बिधि पावस सदा १६५४
इहिं बिधि बन बसे रघुराइ २ ०
इहिं बिधि बेद-मारग सुनौ १ ५१
इहिं बिरियाँ बन तैं ब्रज १६४६
इहिं राजस को को न बिगोयो २८
इहै सोच अक्रूर पर्यौ १९८५

उ

उग्रसेन कौं दियौ हरि राज १६ १
उपरत स्याम नृसिंह मारि १ ७३
उठी सखी सब मंगल गाइ २६५

उठे कहि माधौ इतनी बात १११२
उत नहिं सपनौ भयौ १९५७
उती दूर तैं को आवैं री १७७
उनकौं ब्रज बसिबौ नहिं १४१८
उनहीं कौ मन राखैं काम ८२१
उपँग-सुत हाथ दई हरि १४५८
उपमा धीरज तज्यौ निरखि ११७
उपमा नैन न एक रही १५४५
उपमा हरि-तनु देखि लजानी ११८
उमग्यौ स्याम, महरि २१
उमँगि ब्रज देखन कौं सब १७८
उरग लियौ हरि कौं लपटाइ ५ १
उलटि पग कैसैं दीन्हौ नंद १११७
उल्टी रीति तिहारी ऊधौ १५१५

ऊ

ऊधौ अँखियाँ अति १५४७
ऊधौ अब कछु कहत न १५११
ऊधौ अब कान्ह न ऐहैं १०
ऊधौ अब नहिं स्याम हमारे १५ ७
ऊधौ अब यह समुझि भई १६४०
ऊधौ आवै भई परेखौ १५७९
ऊधौ इक पतिया हमरी १६८४
ऊधौ इतनी कहियौ १७१६,१६१
ऊधौ इतनी कहियो बात १६८२
ऊधौ इतनी जाइ कहौ १६८०
ऊधौ ऐसो काम न कीजै १५५१
ऊधौ और कछू कहिबे कौं १५१५
ऊधौ करि रहीं हम जोग १५८६
ऊधौ कहा करैं लै पाती १५९९
ऊधौ कहा हमारी चूक १५७४
ऊधौ कही सु फेरि न कहिये १५५८
ऊधौ कहौ सहम जो पारो १५२१
ऊधौ कहौ साँची बात १५८६
ऊधौ कहौ हरि कुसलात १५९१
ऊधौ काहे कौं भक्त १६२१
ऊधौ किहिं विधि कीजै १५६१
ऊधौ कोउ नाहिंन १६४२
ऊधौ कौकिल कूजत कानन १६५५
ऊधौ क्यौं बिसरत वह नेह १६७
ऊधौ क्यौं राखैं ये नैन १६४१
ऊधौ जननी मेरी कौ मिलि १७११
ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ १७ ५
ऊधौ जाय बहुरि सुनि १६२१
ऊधौ जाके माथैं भाग १६७१
ऊधौ जात अबहिं सुने १७११
ऊधौ जाहु तुमहिं हम जाने १५१७
ऊधौ जू कहियो तुम हरि १६११
ऊधौ जोग कहा है कीजतु १६५६
ऊधौ जोग जोग हम नाहीं १६४९
ऊधौ जोग तबहिं तैं जान्यो १५६
ऊधौ जोग बिसरि जनि १६१२
ऊधौ जोग सिखावन आए १५१५
ऊधौ जो हरि हितू तुम्हारे १६१
ऊधौ तिहारे पा लागति हौं १६१५

गौरी पति पूजति ब्रजनारि १ १४
ग्वारनि कही ऐसी आइ ११२५
ग्वारिनि जब देखे नँद-नंदन ११२५
ग्वालनि कर तें कौर छुड़ावत ४५७
ग्वालनि खेलन दई तब स्याम ११५६
ग्वाल सखा कर जोरि कहत ४५१
ग्वालिनि अपने चीरहिं लै १ २९
ग्वालिनि तुम कत उरहन ९६६
ग्वालिनि है घर ही की १ २२

घ

घट भरि दियौ स्याम उठाइ ११२१
घट भर देहु लकुट तब ११२२
घर गोरस जनि जाहु पराए १८२
घर-घर हरैं सब पाछौ १७०१
घर तनु मन बिना नहिं ११८८
घरनि-घरनि ब्रज होत बधाई ४११
घरहिं चली जमुना-जल ११४२
घरहिं जाति मन हरष बढ़ायौ७१५
घरही की इक ग्वारि बुलाई ४५१
घर ही के बाढ़े रावरे १५१

च

चकई री, चलि चरन-सरोवर१२९
चकित देखि यह कहौं नर ४२९
चकित भई ग्वालिनि तन ११८
चतुर नारि सब कहति १ १
चरन-कमल बंदौं हरि-राइ १
चरन गहे अँगुठा मुख मेलत २८
चरावत वृंदावन हरि धेनु ४७६
चलत गुपाल के सब चले १११८
चलत जाति थिरचति ब्रज११९२
चलत देखि जसुमति मुख १ १
चलत न माधौ की गही १०८७
चलन चलन स्याम कहत १२११
चलि सखि, तिहिं सरोवर १११
चली बन धेनु दुहत जब १ ४४
चली ब्रज-घर घरनि यह बात१७
चले नँद ब्रज की समुदाइ १११५
चले ब्रज-घरनि कौं नर-नारि४४१
चले सब गाइ चरावन ग्वाल४१७
चले सब माखन पछिताइ ९६६
चलौ किन मानिनि कुंज ८८
चारु चितौनि सु चंचललोचन१२४
चित दै सुनो अंबुज-नैन १ ११
चित दै सुनो स्याम प्रबीन १७१
चितवत ही मधुबन दिन ११०१
चितवनि रोकैं हूँ न रही ७७५
चितैबौ छाँड़ि दै री राधा ९८
चितै रही राधा हरि कौ मुख७४९
चूक परी मोतें मैं जानी ८७१
चूक परी हरि की सेवकाई११९९
चोरी करत कान्ह धरि पाए१८
चौंकि परी तन की सुधि पाइ९

छ

छाँड़ि देहु सुरपति की पूजा५१९

जसुमति जबहिं कह्यौ १२८
जसुमति टेरति कुँवर कन्हैया १
जसुमति तेरो बारो कान्ह १६१
जसुमति दधि मथन करति १११
जसुमति दौरि लिए हरि ४४
जसुमति बार-बार पछितानी ५७५
जसुमति भाग-सुहागिनी, हरि २८५
जसुमति मन अभिलाष करै २८८
जसुमति मन-मन कहै ११७
जसुमति यह कहि कै रिस ११९५
जसुमति राधाकुँवरि सँवारति ९७
जसुमति लै पलिका पौढ़ावति ११५
जसुमति सुनि-सुनि चकित ४७९
जसोदा एतौ कहा रिसानी ४
जसोदा, तेरौ चिरजीवहु ११
जसोदा बार-बार यौं भाखै १२१८
जसोदा हरि पालनैं झुलावै २०१
जहाँ तहाँ तुम हमहिं उबारयो ५१२
जाइ सबै कहहिं गुपालहु ११९२
जाको दीनानाथ निवाजैं १४
जाकौं मनमोहन अंग करै १५
जाकौ हरि अंगीकार कियौ १६
जागहु-जागहु नंद-कुमार ४११
जागि उठे तब कुँवर कन्हाई ४७८
जागिए,ब्रजराज कुँवर कमल ११८
जागौ, जागौ हे गोपाल १४
जा दिन तैं गोपाल चले १५८१
जा दिन तैं हरि दृष्टि परे १७७
जा दिन मन पंछी उड़ि जैहै ९
जा दिन संत पाहुने आवत ११६
जानि करि बावरी जनि होहु १९१
जापर दीनानाथ ढरै ११
जाहि लगी मैं जानति सोई ७१८
जाहु चली अपनैं-अपनैं घर ४२
जाहु जाहु आगे तैं ऊधौ १५२२
जाहु तहीं मोहिकरी गँवारि ८०८
(तुम) जाहु बालक, छाँड़ि ५१४
जिन जिनहीं केसव उर गायौ ९५
जीती जीती है रन बंसी ६५४
जीवन मुख देखे कौ नीकौ १६११
जुवति अंग छबि निरखति १७१
जुवति इक आवत देखी ११२१
जुवति ओपि सब घरहिं ११३४
जुवती जुरि राधा-हित मारें ७१
जुवती भ्रम धर नाम ११६१
जैंवत कान्ह नंद इकठौरे २५
जैंवत स्याम नंद की कनिया २५१
जे लोभी ते देहिं कहा री १२२२
जैसैं तुम गज कौ पाउँ छुड़ायौ ११
जैसैं राखहु तैसैं रहौं ८१
जैहै कहाँ ओछि करि मीठी ८१
जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै १५७८
जोग-बिधि मधुबन सिखिहैं १५६१
जोग सँदेसौ ब्रज मैं लावत १५६७

जो मन ऊधौ मोहिं न १०११
जो सुख ब्रज मैं एक घरी २८४
जो सुख होत गुपालहिं गाएँ १६५
जो अपनो मन हरि सौं राँचे ४७
जो कोउ बिरहिनि को दुख१६०१
(ऊधौ) जो कोउ यह तन १६२
जो तुम सुनहु जसोदा गोरी १७५
जो तू राम-नाम-धन धरतौ ११२
जो देखैं द्रुम के तरैं, मुरली१ ६१
जो पै राखति हौ पहिचानि ११६६
जो पै हिरदै माँझ हरी १६१५
जौ प्रभु जू को भावनु पाऊँ २२७
जो प्रभु मेरे दोष बिचारैं ६१
जौ बिधना अपबस करि ७६१
जौ मेरे दीनदयाल न होते १६१
जौ लौं मन-कामना न छूटे १४१
जौ लौं माई हौं जीवन भर ६१२
जौ लौं सत सरूप नहिं १७४
जौ हरि नाहिंनैं अब १६५
जौ हम भले-बुरे तौ तेरे ८८
जौ हरि ब्रत निज उर न धरैगौ४१
ज्ञान बिना कहुँवै सुखनाहीं१५६७

झ

झाँई न मिटनै पावै आप १७४
झिरकि कै नारि दै गारि ५ २
झुनक स्याम की पैजनियाँ १ ८
झूमक सारी तन गोरैं हो ६२१
झूठहिं सुतहिं लगावति ११६७
झूठ ही लगि जनम गँवायौ ११६
झूलत नंदनंदन डोल ६४१
झूलत स्याम स्यामा संग ६२७

ठ

ठाढ़ी कुँअरि राधिका लोचन१५७
ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैं ९१
ठाढ़े देखत हैं ब्रजबासी ५११
ठाढ़े स्याम जमुना-तीर ११११

ड-ढ

डर पावन लागे देखी ६१९
ढोटा कौन को यह री १२९

त

तजौ मन हरि-बिमुखन कौ११
तनक कनक की दोहिनी ४१९
(माधव) तनक सौ बदन ११४
तन मन नारि वारति गारि १४५
तब ऊधौ हरि निकट १४६६
तब तुम मरे काहे कौं ११६७
तब तू मारिबौई करति ११२१
तब तैं इन सबहिन १०२६
तब तैं बाम सरीर सुभाइ १७ १
तब तैं नैन रहे इकटक ही१२१२
तब तैं बहुरि न कोऊ १७६१
तब तैं मिटे सब आनँद ११२७
तब नागरि जिय धरी १४८७
तब नागरि मन हरष भई ७११

तब बसुदेव हरषित गात ११ १
तब रिस कियौ महावत १२६०
तब राधा सखियन पै आई ७४
तब लगि सबै सयान रहै ५१२
तब लगि हौं बैकुंठ न जैहौं १७१
तब हरि कौं टेरति नँदरानी७ १
तब हरि भए अंतरधान ' ८९
तबहिं उपंगसुत आइ गए १४४१
तबहिं स्याम इक बुधि उपाई४२१
तब हौं नगर अयोध्या जैहौं २१६
तरुनी गई सब बिलखाइ १४८२
तरुनी निरखि हरि प्रतिअंग ५ १
तरुनी स्याम-रस मतवारि ११६१
तहँइ आजु क्यौं रैनि बसे ८८१
तातैं अति मरियत १०७२
तातै सेइयै श्री जदुराइ १ ५
तिहारौ कृष्न कहत कह जात१२१
तुम अलि कासौं कहत १५५१
तुम कत गाइ चरावन जात ४७२
तुम कबके जु भए हौ दानी ११४८
तुम क्यौं देखेस्याम बिहारी१०८१
तुम कुल बधू निलज जनि ७६
तुमकौं कैसे स्याम लगे ७५१
तुम जानकी जनकपुर जाहु १६
तुम जानति राधा है छोटी ७८१
तुम तजि और कौन पै जाउँ ८८१
तुम तौ कहत सँदेसौ आनि १५११
तुम पठवत गोकुल कौं १४५२
तुम पावत हम घोष न १ ५८
तुम पै कौन दुहावै गैया १८०
तुम बिनु भूलोइ भूलो डोलत ६
तुम रीझे की उनहिं रिझाए ८८७
तुम लछिमन निज पुरहिं १९२
तुम लछिमन या कुस-कुटी २११
तुम सौ कहा कहौं सुंदरघन ७ ५
तुमहिं कहत कोउ करै ४८८
तुमहिं बिना मन धिक ११६
तुमहिं बिमुख रघुनाथ, कौन२ १
तुम्हरे देस कागद मसि १०६५
तुम्हरे बिरह ब्रजनाथ १७१२
तुम्हरी भक्ति हमारे प्रान ८७
तुम्हैं पहिचानति नाहीं बीर२१०
तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत १४५४
तू जननी जाय बुझ जनि २२२
तू मोही कौं मारन जानति ११११
तू री चौंह किए हरि राससिन्द११
तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी ८४
तेरी भौंह-भूरि मिलिनि १०६
तेरी कौं सुन सुनु मेरी मैया १६५
तेरैं आवैंगे आजु सखी हरि११
तेरी सुरो न कोऊ मानै ११५७
(जसोदा) तेरौ भलौ हियौ ४११
तेरौ लाल गोपाला धन-सूरी ५५४
तें कत तोरयौ हार नौसरि१५५१

देखे नंद चले घर आवत ४९५
देखौ कपिराज, भरत वे ९९१
देखौ नंद-द्वार रथ ठाढ़ौ १४८४
देखौ माई कान्ह हिलकिनि ४ ४
देखौ माई रूप सरोवर १ ७२
देखौ माई सुन्दरता कौ सागर ५९७
देखौ री जसुमति बौरानी १५९
देखौ री हरि खातु मैन १७१८
देन आए ऊधौ मत नीकौ १५१२
देवकी मन-मन चकित भई २१
देह धरे कौ यह फल प्यारी ७११
दोउ ढोटा गोकुल-नायक १११८
द्वारे ठाढ़े हैं द्विज बामन २७१
द्विज कहियौ जदुपति सौं १७४१
द्विज पाती दै कहियौ १७४
द्वै मैं एकौ तौ न भई ११४
द्वै लोचन तुम्हरैं द्वै मेरैं १२१

ध

धनि जननी जो सुभटहिं २४४
धनि वृषभानु सुता बड़ ८७९
धनि यह वृंदावन की रेनु ४९८
धनुही-बान लए कर डोलत १८४
धन्य धन्य मैंढ़ियौं १२५९
धन्य धन्य बड़भागिनि ७९७
धन्य धन्य वृषभानु ८९७, ९ ८
धीर धरहु, फल पावहुगे ८८८
धेनु दुहत अतिही रति बाढ़ी ६८८
धेनु दुहन दै मेरे स्वामी १६८१
धोखैं ही धोखैं डहकायौ १९८

न

नंद करत पूजा, हरि देखत ११
नंद कह्यौ हो कहँ छाँड़े १११६
नंद चल्यौ घर आइ कन्हाई ६१
नंद गए खरिकहिं हरि लीन्हे ११३
नंद-घरनि ब्रजनारि ४८९
नंद-घरनि यह कहति पुकारे ५२
नंद-घरनि सुत भलौ पढ़ायौ १६८
नंद घरनि सौं पूछत बात ४९१
नंद जसोदा सब ब्रजबासी १७८९
नंद जू के बारे कान्ह छाँड़ि ११२
नंद नंदन उनकौं हम १ ९७
नंद नँदन तिय छबि तनु ८५१
नंद नँदन वृंदावन चंद १२५
नंद-नंदन वृषभानु किसोरी ६१८
नंद-नँदन मुख देखौ नीकैं ६१६
नंद नँदन मुख देखौ माई ५९५
नंद नँदन सुखदायक हैं ७८
नंद नँदन सौं इतनी ११८४
नंद नँदन हँसे नागरी-मुख ८५९
नंद बाबा की बात सुनौ हरि ६११
नंद बुलावत हैं गोपाल १९६
नंद ब्रज लीजै ठोंकि बजाइ १११२
नंद महर घर के पिछवारैं ८११

नैन न मेरे हाथ रहे १९ ७
नैननि रहै रूप की वेलौं १५३६
नैननि ध्यान नंद-कुमार ६४८
नैननि नंद-नंदन ध्यान १५४
नैननिबानि परी मंहिनीकी १२८६
नैननि सौं झगरौ करिहौंरी १२३६
नैननि हरि कौं निठुर कराए १२७३
नैन परे रस-स्याम-सुधा मैं १९ ३
नैन भए बस मोहन तैं १२२८
नैन भए बोहित के काग १२३५
नैन सफल अब भए हमारे१ ४६
नैन सलोने स्याम बहुरि ११८५
नैन स्याम-मुख दूरत हैं १९४२
नैना अतिहीं लोभ भरे १९९
नैना पूंघट मैं न समात १९४७
नैना नाहिनै पै रहत १५४६
नैना मीठैं ठनहिं रए १२ ८
नैना बहुत भाँति हटके १९५
(मेरे)नैना बिरह की बेलि१३१६
नैना भए अनाथ हमारे १७६६
नैना भए बजाइ गुलाम १९११
नैना भरे बर के चोर १९३१
नैना (माई) भूलें घमत न१३२
नैना मानऽपमान सह्यौ १२३७
नैना रहै न मरे घरके १२८
नैना हरि अंग-रूप लुब्धे री१२९१
नैना है री ये बटपारी १९१

नौका हौ नाहीं लै आऊँ १७५
न्याय सभी स्यामा गोपाल ११ १

प

पंथी इतनी कहियौ बात ११३४
पकौ माइ, राम-मुकुंद-मुरारि १७१
पतित पावनहरि,बिरदतुम्हारो७२
पथिक, कहियौ हरि सौंबह१७८८
पथिक कह्यौ ब्रज आइ सुने१७३६
पनघट रोके रहत कन्हाई ११२
परम चतुर वृषभानु-कुमारी ८२
परसुराम तेहिं औसर आए ८६
परी पुकार द्वार गृह-गृह तैं १५११
परेखी कौन बोल को कीजे१३४१
पलना झूलौ मेरे लाल ११६
पहिले प्रनाम नँदराइ कौं १४७
पाई पाई हैं है मैया, कुम ४७
पाछैंरी चितवत मेरे लोचन १९८१
पाती दीजो स्याम सुजानहिं ७४१
पाती बाँचत नैन झराने ४८१
पाती मधुबन तें आई १४६१
पाती मधुबन ही तें आई १४६४
पाती सिसिर ऊधौ कर १४५४
पावै कौन सिरैं बिनु मास ७५४
पिउ चद-कमल कौ मकर११७८
पिय तरैं बन पौ री माई ८३
पिय प्यारी खेलैं जमुना तीर१३११
पिय बिनु नागिनि कारी ११८१

पियहि निरखि प्यारी हँसि ८५६
पुनि-पुनि कहति हैं ब्रज-नारि७५६
पूछो स्याम तात सों बात ४८७
प्यारी चितै रही मुख पिय कौ ८८२
प्यारी पीतांबर उर अरुझ्यो ११६६
प्रकृति जो जाकैं अंग परी १५२
प्रगट भए नँद नंदन आई ११ ४
प्रथम करी हरि माखनचोरी १६६
प्रथम सनेह दुहुनि मन ६६६
प्रभु कौ देखौ एक सुभाइ ८
प्रभु जू, बिपदा भली बिचारी १६६
प्रभु, तुमकौं मैं बदन न्यारी १२६५
प्रभु, मोहि राखियै इहिं ठौर ६
प्रभु हौं बड़ी बेर कौ ठाढ़ौ ७५
प्रभु, हौं सब पतितनि कौ ७६
प्रात गई नीकैं उठि घर तैं ६६५
प्रात भयौ, जाग्यौ गोपाल ११६
प्राननाथ हो, मेरी सुरति किन ८ १
प्रीतम जानि लेहु मन माहीं ४६
प्रीति करि काहू सुख न ११६
प्रीति करि दीन्ही गरें छुरी ११४
प्रीति के बस्य मे हैं मुरारी ८२१
प्रीति तौ मरिबौऊ न ११६१
प्रेम न रुकत हमारे बूतें ११४६
प्रेम बिबस सब ग्वालि भई १ १६
प्रेम सहित हरि तेरें आए ७७४
फ
फन-फन प्रति निरतत नँद ६ ६
फिरत प्रभु पूछत बन-द्रुम २१
फिरतजोग जहँ तहँ बितताये ५४६
फिर करि नँद न उत्तर १११४
फिरि फिर देखौ करत २६
फिर फिरि कहा बनावत १५८६
फिरि फिरि कहा सिखावत १५८७
फिरि फिर नृपति बतावत १६१
फिरि ब्रज आइवै गोपाल १६६
फिरि ब्रज बसौ गोकुलनाथ ११६१
फिरि ब्रज बसौ नंदकुमार १७११
फूली फिरति ग्वालि मन मैं ६६४
फेंट छाँड़ि मेरी देहु श्रीदामा ७६१
ब
बंदौं चरन-सरोज तिहारे ६५
बंधु करिबौ राज सँभारे २ ४
बंसी बनराज आजु आई रन ८४६
बंसी री बन कान्ह बजावत ६४४
बड़ी है राम नाम की ओट ६६
बड़े की मानियै जो कानि ६७७
बड़े भाग हैं महर महरि के ५२६
बड़ो निठुर बिधना यह देख्यौ ६
बड़ौ मैन कियौ कुंवर कन्हाई७ ४
बतियाँ कहति हैं ब्रजनारि ५५१
बन कुंजनि बसी ब्रजनारि १०८६
बनचर कौन देस तैं आयौ २१८

बन पहुँचत सुरभी सई गाई ४८७
बनी मोतिनि की माल ६१६
बने बिसाल अति लोचन ५६८
बने बिसाल कमल-दल नैन ६२
बरनौं बाल बेष मुरारि ५८६
बरषि-बरषि हहरे सब बादर ५६
बरु मेरी परतिज्ञा जाउ ११४
बरु वे बदरौ बरषन आए ११६८
बलि गइ बाल-रूप मुरारि १ १
बलि-बलि जाऊँ मधुर सुर १२१
बसन हरे सब कदम १ १
बसुधौ कुंज-प्योहार ११ ४
बहुत दिन जीवौ पपीहा १४१
बहुत फिरी तुम काज ७५४
बहुरि नागरी मान कियौ ८२६
बहुरि पपीहा बोल्यौ माई १४ ७
बहुरि स्याम सुख-रास कियौ ११ ९
बहुरि हरि आवहिंगे किहि ११६६
बहुरो देखिबौ हरि भाँति ११५१
बहुरौ भूलि न आँखिन आयौ ११७८
बहुरो ही ब्रज बात न १०१४
बाँबी बासु कौन तोहि डोरे ४ १
बाँसुरी बजाइ आछे रंग सौं ६४५
बाँसुरी बिधिहूँ तैं परबीन ६६६
बाढ़ैं बर द्रुम देखि ठाढ़ी १ ६
बाजति नंद अवास बधाई ५१६
बात कहौ जो लहै बहै री १ २१
बात यह तुमसौं कहत ७ १
बातैं बूझति यौं बहरावति १०६६
बातैंसुनहु तौ स्याम सुनाऊँ १०११
बाबा मोकौं दुहन सिखायौ ४११
बालक गहगहात मुनि १०८३
बारक जाइयौ मिलि माधौ ११६२
बार बार जनि तू याँ आवै १६८२
बार-बार बलराम कहौ १२८७
बार-बार मुख जोवति माता १११९
बार सखार बरासंध १०१७
बाल गुपाल खेलौ मेरे तात १८
बासुदेव की बड़ी बड़ाई १
बिछुरत [illegible] लागे दिन जान १८
बिछुरत श्रीब्रजराज आजु १२५२
बिछुरी मनो संग तैं हिरनी २११
बिछुरी रे मेरे बाल-सँघाती १४९८
बिधना अति ही पोच कियौ १५१
बिधना चूक परी मैं जानी ६२२
बिधना मुरली कौन बनाई ६८५
बिधना हमैं मिलवौ संजोग १४११
बिनती करत नंद कर जोरैं ५४१
बिनती करत मरत हौं लाज ४७
बिनती करत मदन गहीर ५१७
बिनती किहि बिधि प्रभुहि २५७
बिनती सुनहु देव जगपालित ५४५
बिनती सुनौ दीन की चित १८
बिनवै चतुरानन करजोरैं ४१५

ब्रजबासिनि के सरबस १२६५
ब्रजबासिन को हेत, हृदय १७८२
ब्रज-बासिनि मोकौं बिसरायौ५४१
ब्रजबासिनि सौं कह्यौ ७६६
ब्रज-बासी पटतर कोउ नाहिं४५८
ब्रज-बासी यह सुनि सब ४६८
ब्रज-बासी सब सोवत पाए १११५
ब्रज मैं एक अचंभौ देख्यौ१७१२
ब्रज मैं एकै धरम रह्यौ १७२५
ब्रज मैं को उपज्यौ यह भैया ४४४
ब्रज मैं वे उनहार नहीं ११६१
ब्रज मैं संभ्रम मोहि भयौ १७११
ब्रजहिं चलौ आई अब साँझ ४५६
ब्रजहिं बसैं आपुहिं बिसरायौ ७२
ब्रज ब्रिनहिं यह आयसु ११८१
ब्रह्मा बालक बच्छ हरे ४११

भ

भए सखि नैन सनाथ १२६९
भक्त अमुने सुगम अगम १५१
भक्त हेतु अवतार धरौं ११६८
भक्ति कब करिहौ, जनम १९६
भजन बिनु कूकर-सूकर जैसो १६८
भली भई हरि सुरति करी १४८१
भवन नहीं अब जाहिं १ ५६
भवन रवन सबही बिसरायौ१ ११
महराउ महराउ कथा (मत्त) ५२१
भादौं की अध-रात अँधियारी६११
भाबी काहू सौं न टरै १४
भीतर तैं बाहर लौं आवत १५
(भेरैं) सुमनि बहुत बल ११५
भुज भरि लई हिरदय लाइ ८४४
भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हौं७६४
भूलौ भयौ आजु मेरौ बारौ४२१
भूलि नहीं अब मान करौ ८४
भाव-भुज निरखि राम २ १

म

मैथिलि नीकी मैं बिचारयौ२११
मति कोउ प्रीति कै फँग १८८९
मथुरा जाति हौं बेचन १८४
मथुरा तैं पै आई हैं ८८५
मथुरा दिन-दिन अधिक११ ७
मथुरापति जिय अतिहिं १८८
मथुरा पुर मैं सोर परयौ १९८८
मथुरा मैं बस बास तुम्हारो ८८७
मथुरा हरषित आजु भई १९८८
मधुकर आपुन होहिं १६६८
मधुकर, कहौं पढ़ी यह १५
मधुकर कहिए काहि १५२८
मधुकर कहियौ तुचित १६६१
मधुकर जाके मीत भए १५०७
मधुकर जोग मनापी मानै१६११
मधुकर छाँडि कपटी बातें१६१४
मधुकर तुम रस-लंपट लोग१६६१
मधुकर, तुम ही स्याम १६६६

माधौ जू, मन हठ कठिन १
माधौ जू, मैं अति ही सचु १७१
माधौ जू, मोहि काहे की ७९
माधौ जू, यह मेरी इक गाइ ९५
माधौ जू, सुनिये ब्रज १७२८
माधौ जू सुनौ ब्रज कौ प्रेम१७२७
माधौ, यहाँ बुलाई राधे ६९
माधौ नैंकु हटकौ गाइ १
माधौ मोहिं करौ बृंदावन ४९१
मान करौ तुम और सवारें ८७७
मान बिना नहिं प्रीति रहै ८१७
मानिनि मानहि क्यौं न ६२१
मानो माई घन-घन अंतर १ ७९
मानो माई सघनि कौ है १४ १
माया देखत ही जु गई २९
मिलहु स्याम मोहिं चूक १ ६८
मिलि बिछुरन की बेदन ११७८
मिलि हनु पूछी प्रभु यह २१२
मीठी बातनि मैं कहा लीजै १५७९
मुकुर छाँह निरखि देह की ८११
मुख आनि मोहे मैं मेली ११
मुख छबि कहा कहौं बनाइ ५८९
मुख छबि कहौं कहाँ लगि १ ५
मुख-छबि देखि हो नँदघरनि४ १
मुख पर चंद डारौं वारि ६५१
मुरलिया एकै बात कही १ ७
मुरलिया कपट चतुराई ठनी६६
मुरलिका मोकौं लागति १ १
मुरलिया स्यामहिं और कियौ६८
(माई री) मुरली अति गर्ब६४९
मुरली चली अति इतराइ ६७५
मुरली एमे पर अति प्यारी६७१
मुरली कहै सु स्याम करै री६६४
मुरली की हरि कौन करै ६७८
मुरली की हरि प्रति करो १ १
मुरली कैं बस स्याम भए री६४८
मुरली कौन सुकृत फल पाए६५१
मुरली को मन हरि मौ६८२
मुरली जैसैं तप कियौ तैसैं१ २
मुरली तक गुपालहिं भावति६५१
मुरली तप कियौ तनु गारि१ १
मुरली तै हरि हमहिं ६६६
मुरली तौ अधरनि पर १
मुरली दिन दिन भली १ ११
मुरली धुरि कराएँ बनि६६२
मुरली-धुनि करी बलबीर १ ४५
मुरली-धुनि बैकुंठ गई १ ७८
मुरली-धुनि श्रवन सुनत ६७८
मुरली नहिं करत स्याम ६६७
मुरली भई सौति बजाइ ६६१
मुरली मोहिनी अब भई ६७६
मुरली मोह कुँवर कन्हाई ६५
मुरली लई कर तैं छीनि ८७९
मुरली शब्द सुनि ब्रज १ ४१

मैं बरज्यौ जमुना-तट जात ४७९
मैं बलि जाउँ कन्हैया की ८१५
मैं बलि जाउँ स्याम मुख ६१४
मैं ब्रजबासिनि की बलिहारी ११७८
मैं मन बहुत भाँति समुझायौ ७७८
मैं मोही तेरैं लाल री ५८१
मैं समुझाई अति अपनौ सौ ७१८
मैं हरि सौं हो मान कियौ ८८२
मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी ३२१
मैया बहुत बुरौ बलदाऊ ४१२
मैया, मैं तौ चंद खिलौना ३११
मैया मैं नहिं माखन खायौ ३६४
मैया, मोहिं दाऊ बहुत २४१
मैया मोहिं बड़ौ करि लै री २१४
मैया री, मोहिं दाऊ टेरत ४४२
मैया री मोहिं माखन भावै ११२
मैया, हौं गाइ चरावन जैहौं ४१६
मैया हौं न चरैहौं गाइ ४०१
मोकौं माई जमुना जम ११८४
मो सम कौन कुटिल खल ७८
मोसौं कहा दुरावति राधा ७१६
मोसौं बात सकुच तजि कहियै ७४
मोसौं बात सुनहु ब्रज-नारी ११६५
मोहन इतौ मोह चित ११६६
मोहन काहैं न उगिलौ माटी २५१
(माई) मोहन की मुरली १ १२
मोहन गए, जाहु तुम जाहु ६१७
(मेरे) मोहन अब प्रभात ५६४
मोहन आ बिन बनहिं न ११४७
(मेरे) मोहन, तुमहिं बिना १११
मोहन, नैंकु बदन-तन हेरौ १२७५
मोहन-बदन बिलोकत ६२१
मोहन माँग्यौ अपनौ रूप १६१
मोहन मानि मनायौ मेरौ १४४
मोहन हौं तुम ऊपर वारी ४११
मोहन-कर तैं दोहनि लीन्हीं ६८५
मोहिं कहति जुबती सब ४२७
मोहिं छुवौ जनि दूरि रहौ ८०१
मोहिं दोहनी दै री मैया ६११

य

यह अति हमैं अँदेसौ आवै १५७५
यह आशा पापिनी दहै २७
यह रितु रूसिबे की नाहीं ६११
यह कछु नौखी बात ८७५
यह कमरी कमरी करि ११६४
यह छवि दै तिय नाम भई ८८५
यह गति ऐसे बात सँदेसौ २२
यह गोकुल गोपाल उपाधी १६५१
यह अति बड़ी घोष-कुमारि १ ४६
यह आमति तुम नँद महर ११६६
यह जिय हौंस पै जु रही ११५५
यह जुवतिनि कौ धरम न १ ५२
यह बल केतिक जादौराइ ७६५
यह वृषभानु-सुता वह कौ १८५१

राधा माधव भेंट भई १०९७
राधा ये ढँग है री तेरे १०८
राधा सखिनि लई बुलाइ ११४१
राधा सखी देखि हरषानी ९ ४
राधा सों माखन हरि ११७६
राधा स्याम की प्यारी ७६२
राधा हरि कैं गर्व गहीली ७५२
राधिका बस्य करि स्याम ६२१
राधिका मौन व्रत किनि ७११
राधिका हृदय तैं धोखा टारी ८२९
राधे छिरकति छींट छबीली ११११
राधे, तेरे नैन किधौं बटपारे ६१५
राधे, तेरे नैन किधौं जगवारे६१४
राधे तेरो बदन बिराजत ७२
राधे हरि तेरो नाम बिचारैं६ १
राधेहिं मिलेहुँ प्रतीति न ८७१
राधेहिं स्याम देखी आइ ६११
राम जू कहाँ गए री माता २ १
राम धनुष अरु सायक २ ६
राम न सुमिर्‍यौ एक घरी ४१
राम भक्तवत्सल निज बानौ १
रामहिं राखौ कोऊ जाइ १६९
रावन मार्‍यौ हनुमान भर्‍यौ ९१८
रास-मंडल बने स्याम १ ६७
रास-रस मुरली ही तैं जान्यौ१०८
रास-रस लीला गाइ १११८
रास-रस श्रमित भई ११९
रास-रुचि जबहिं स्याम १ ६५
रिस करि लीन्ही फेंट छुड़ाइ१०६१
रीझत ग्वाल रिझावत स्याम ६५५
रीती मटुकी सीस धरें ११६२
रुकमिनि, चलौ जन्मभूमि १०८
रुकमिनि देखी मंदिर आई १०४१
रुकमिनि बूझति हैं १०७७
रुकमिनि,मोहिं निमेष न १०७८
रुकमिनि, मोहिं ब्रज १०७६
रुकमिनि राधा ऐसैं भेंटी १०८१
रुदन करति बृषभानु कुँ १ ६१
रूप मोहिनी धरि ब्रज आई २७०
रे कपि क्यौं पितु-बैर २१४
रे पिय लंका बनचर आयौ२११
रे मन, अजहूँ क्यौं न सम्हारै ६१
रे मन, गोबिंद के ह्वै रहियै ६५
रे मन छाँड़ि बिषय ११
रे मन जग पर जनि ठगायौ१२
रे मन मूरख, जनम गँवायौ १११
रे मन, राम सौं करि हेत १२
रे सठ, बिन गोबिंद सुख १२०
रोम रोम ह्वै नैन गए री ११११
रोमावली-रेख अति राजति ९ ४
रोवति महरि फिरति ७ १

ल

लंकपति इ इच्छित चौ २१६
लछिमन, रचौ हुतासन २६

ललिमन सीता देखी जाइ २४९	सखनि सँग जैवत हरि छाक८५६
ललिता को प्रेम कह्यो १३०५	सखा कहत हैं स्यामखिसाने १४२
ललकत स्यामसन ललगात १११४	सखा सुनि एक मेरी बात १४७०
ललिता प्रेम विवस भई आरी८७५	सखि, कर धनु लै चरहिं १४१८
(माईमेरे) लाल हो ऐसी १११	सखि, कौतुक नई बात सुनि १४ ४
लिखि आई ब्रजनाथ की १४२७	सखियन बीच नागरी आवै १ ४१
लिखि नहिं पठवत हैं ११७५	सखियन मिलि राधा घर ६६४
लै धावहु गोकुल गोपालहिं१११	सखियनि यहै विचार परयौ ७२६
लै लै मोहन चंदा लै ११४	सखी इन नैननि तैं घन ११११
लोक-सकुच कुल-कानि ११६५	सखी कहति तू बात गँवारी७८८
लोचन चोर बाँधे स्याम १२२४	सखी तू राधेहि दोष लगावति७१२
लोचन टेक परे सिसु जैसे १२४८	सखी मौहिं हरि-दरस-रस १२
लोचन भए पखेरू माई १२२५	सखी री काहे रहतिमलीन११७९
लोचन मेरे मृग भए री १२२६	सखी री काहैं गहरु लगावति२६१
लोचन लालच तैं न टरैं ११३८	सखी री चातक मोहिं १४ ९
व	सखी री नँद-नंदन देखु ५८६
वा पट पीत की फहरानि ११५	सखी री, मथुरा मैं द्वै हंस १२४८
वे हरि सकलठौर के वासी११२५	सखी री, माधोहिं दोष न ६६२
वै बातैं जमुना-तीर की १६७५	सखी री, मुरली लीजै चोरि ६६२
श	सखी री बहु बिबोरन बात १९८
श्रीदामा गोपिनि समुझावत११७४	सखी री सुंदरता को रंग ९ ६
स	सखी री, स्याम सबै इक १६०८
संग मिलि कहाँ काहौं बात१४४	सखी री हरियाहिंनिहिं११८६
सँग राजति वृषभानु-कुमारी ८८२	सजनी अब हम समुझि परीह८४
सँदेसनि मधुवन कूप भरे १३६५	सजनी नख-सिख तैं हरि ६८८
सँदेसो देवकी सौं कहियौ १३१५	सजनी, निरखि हरि को रूप६४७
सकत तजि, भजि मन चरन१४०	सजनी स्याम सदाई ऐस ९८१

सोधि सिय पवन-पूत २२४
सौ दिन बिखरी कछु कम २१४
सोभा कहत कही नहिं आवै ५९२
सोभा सिंधु न अंत रही री २०१
सोभित कर नवनीत लिए २९८
सोवत नींद आइ गई ४०६
स्याम अंग जुवती निरखि ६१
स्याम अचानक आए री ७७५
स्याम-उर प्रीति मुख-कपट १ ५६
स्याम करत हैं मन की चोरी ७८
स्याम कर पत्री लिखी १०५७
स्याम कर मुरली अतिहिं ६११
स्याम कुंज बैठारि गई ८७१
स्याम कौन कारे की गोरे ७१८
स्याम गये सखि प्रान रहैंगे १२११
स्याम गरीबनि हूँ के गाहक १
स्याम छबि निरखि भामिनि ११ ५
स्याम-तनु राजति पीत १ ७४
स्याम तिया सम्मुख नहिं ८५२
स्याम धरयौ तियमोहन रूप ६११
स्याम नारि कैं बिरह भरे ८०८
स्याम निरखि प्यारी अँग ८४०
स्याम बलराम गए मथुरा १२६१
स्याम बलराम रंगभूमि १२९९
स्याम बिनु भई सरद निसि१७०६
स्याम बिनोदी रे मधुबनियाँ१४१६
स्याम बियोग सुनो हो १५४४
स्याम भए वृषभानु-सुता-बस८२२
स्याम भए राधा बस ऐसे ८९८
स्याम भुजनि की सुंदरताई १ ७
स्याम मुरली कै रंग ढरे ६६
स्याम मातुमसौं क्यौ मकरौं ७
स्याम-राम के गुन नित १७६२
स्याम लियौ गिरिराज उठाइ ५५६
स्याम सखा कौं गेंद चलाई ४९
स्याम सखि नीकैं देखे नाहिं७५८
स्याम सिधारे कौनें देस ११५८
स्याम सुनहु इक बात ११८६
स्याम हँसि बोले प्रभुता १ ६६
स्यामहिं दोष कहा कहि [illegible]१
स्यामहिं मैं कैसें पहिचानौं ७६४
स्याम-हृदय जल-सुत की ६११
स्यामा तू अति स्यामहिं ८२६
स्यामा स्याम कुंज बन ८५१
स्रम करिहौ अब मेरी ही ११६
स्वामी बहिसौ प्रेमसैंमारे ११८१

ह

हँसत कहौ मैं दोसौं प्यारी ६८१
हँसत सखनि सब घरत ११५१
हँसत स्याम ब्रज-घर कौं १ १८
हँसि जननी सौं बात करत ५७०
हँसि बोले गिरधर रस-बानी७०८
हम अहीर ब्रजबासी लोग ७८२
हमकौं जागत रैनि बिहानी ११८२

हमकौं नृप हाँहि हेत बुलाए १२९४
हमसौं बिधि ब्रज-बधू न १ ७
हमकौ सपनेहू मैं सोच ११८
हमकौंहरि की कथा सुनाउ १५६२
हम अनति घेर ढूँबर ११७५
हम तप करि तनु गारयौ ६७१
हम तैं कछु सेवा न भई १४८८
हम तैं कमल नयन भए १०६८
हम तैं तब मुरली न करे १ ६
हम तैं बिदुर कहा है नीको १५६
हम तैं हरि कबहूँ न उदास १५५६
हम तौ इतनैं ही सचु पायौ १८ १
हम तौ कान्ह केलि की १५८१
हम तौ दुहूँ भाँति फल १६२५
हम तौ नंद-घोष के बासी १६५
हम तौ तब बातनि सचु १५२०
हम पर कहैं कुकति १४६५
हम पर हेत किए रहिबो १६८
हम भई डीठि भले तुम ११०
हम भक्तन के, भक्त हमारे १६२
हम मति-हीन कहा कछु १६८५
हमारी सुरति बिसारी ८३८
हमसौं उनतौ कौन सगाई १६१८
हमहिं कहौ हौ स्याम ७४०
हमहिं अर कौन को रे मैया ५७६
हमारी जन्म-भूमि यह गाऊँ ५१२
हमारी तुमकौं लाज हरी ६२
हमारे भीतर देहु मुरारी १ ११
हमारे देहु मनोहर चीर १ १४
हमारे प्रभु, अवगुन चित न ६८
हमारे माई, मोरवा बैर १४ ६
हमारे हरि चलन कहत हैं१७६७
हमारे हिरदै कुलिसहु १४९९
हमारे हरि हारिल की १६६२
हमें नँदनंदन मोल लिये ८२
हर घर बाढ़ करै हरि आवत१७१
हरत नर-नारि मथुरा-पुरी११ १
हरषि स्याम तिय ६ ६, ६१
हरि अपनैं आँगन कछु २६५
हरि बिलपत कछुरा २६१ २६१
हरि की [illegible] तन दीठि १५
हरि की सरन महँ तू आउ१२१
हरि के जन सब तैं अधिकारी१२
हरि के बाल-चरित अनूप५८०
हरि को बिमल जस गावत१ १
हरि की मारग दिन प्रति १४१४
हरि पावली तहाँ तब आए ७ २
हरि गोकुल की प्रीति १७६५
हरि-छबि देखि नैन १२६५
हरि जू इते दिन कहाँ १७६४
हरि जू की आरती बनी१४६
हरि जू की बाल छबि कहौं ५८
हरि जू, तुमतैं कहा न होइ ५६
हरि जू मैं सुख बहुरि कहौं१७२५

धार्मिक और सामान्य विश्वासों के साथ-साथ शकुन अपशकुन और स्वप्न-संबंधी विश्वासों के अतिरिक्त भारतीय कवियों में प्रसिद्ध बातों और भारतीय संस्कृति के प्रमुख अंगों—पर्वोत्सवों, संस्कारों और कला-कौशल—पर भी प्रकाश डाला गया है। सूर-साहित्य के ही नहीं हिंदी के किसी भी एक कवि के काव्य के इतने विशद सांस्कृतिक अध्ययन का हिंदी में यह प्रथम प्रयास है। रायल अठपेजी साइज। सजिल्द प्रति, मूल्य ५)

सूर-सारावली एक अप्रामाणिक रचना

'सारावली' को प्रामाणिक माननेवालों सूर-साहित्य के विद्वानों के मतों का सोदाहरण खंडन करके लगभग सौ वर्षों से फैले एक बड़े भ्रम का निवारण किया गया है। मूल्य १२॥) उक्त ग्रन्थ का संक्षिप्त संस्करण भी प्रकाशित किया गया है। मू० १॥)

सूर विनय-पदावली

सूरदास के १११ विनय-पदों का सुंदर संकलन जिसमें ५२ पृष्ठों में कवि-काव्य-परिचय और ४८ पृष्ठों में विस्तृत टिप्पणियाँ हैं। मूल्य १॥)

रास-पंचाध्यायी

कविवर नंददास के प्रसिद्ध काव्य का सुंदर संस्करण जिसके